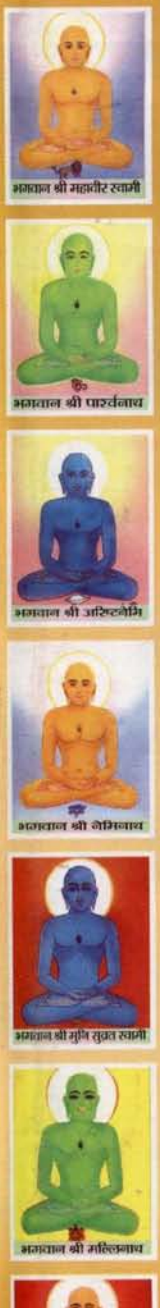

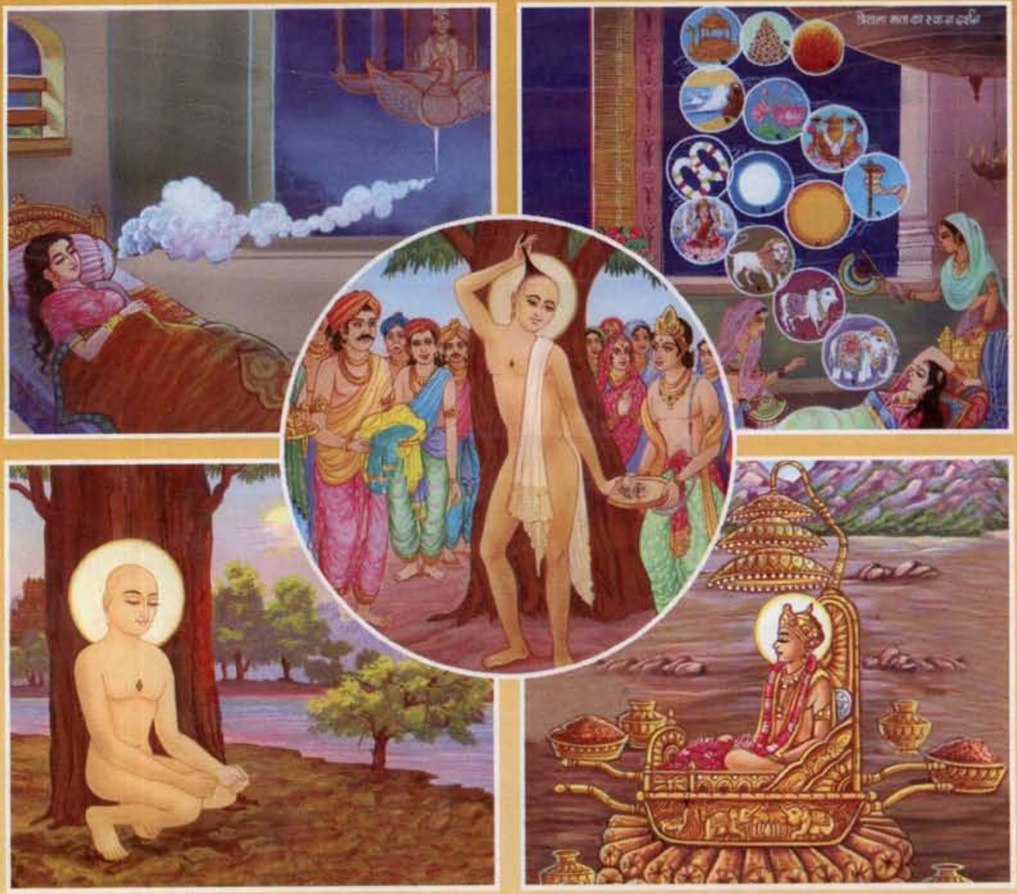

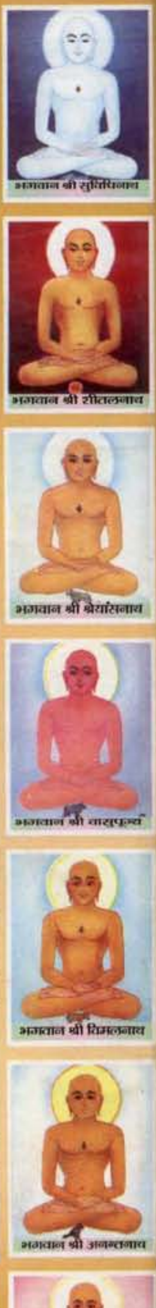

सचित्र

श्री कल्पसूत्र

प्रवर्त्तक अमर मुनि

Illustrated

KALPASUTRA

Pravartak Amar Muni

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री कल्पसूत्र

श्रमण वर्ग की आचार-मर्यादाओं, परम्पराओं एवं समाचारी आदि का सूचन एवं प्ररूपण करने वाला सूत्र-शास्त्र कल्पसूत्र कहा जाता है। इसके 1215 श्लोक प्रमाण होने से बारह सौ सूत्र (बारसा कल्प) भी इसका नाम प्रसिद्ध हो गया है।

कल्पसूत्र श्रुत केवली भद्रबाहुस्वामी द्वारा विरचित है। उन्होंने प्रत्याख्यान प्रवाद, बृहत्कल्प, आचारदशा आदि शास्त्रों से चुन-चुनकर इसमें दस कल्पों तथा साधु-समाचारी आदि का निरूपण किया है। वैसे यह दशाश्रुत स्कंध नामक छेद सूत्र का आठवाँ अध्ययन माना जाता है।

कल्पसूत्र में तीन विषयों का प्रतिपादन किया गया है—

1. तीर्थंकर चरित्र-कल्प मर्यादाओं के प्रेरक एवं निर्देशक श्रमण भगवान महावीर आदि 24 तीर्थंकरों का जीवन-चरित्र।

2. स्थविरावली-कल्प-मर्यादा में स्वयं स्थिर रहने और अपने गण के साधु वर्ग को स्थिर रखने वाले ज्ञान एवं चारित्र गुणों में श्रेष्ठ स्थविरों का परिचय एवं उनकी परम्परा।

3. समाचारी-साधु वर्ग के लिए पालनीय पर्युषण (वर्षावास) कल्प एवं साधु-व्रत, नियम समाचारी आदि का निरूपण।

SHREE KALPASUTRA

The scripture that details and prescribes the code of conduct, the rules of discipline and the traditional norms to be followed by the ascetic community is known as the Kalpasutra. As it is a volume in size equivalent to 1215 couplets it is also popularly known as 'Baraha Sau Sutra' (Barasa Kalpa) or Twelve Hundred Aphorisms.

The author of Kalpasutra was Shrut-kevali Bhadrabahu Swami. He selected important material from Pratyakhyan Pravad, Brihatkalpa, Achardasha and other such works and framed the ten Kalpas and Sadhu-samachari parts of this work. It is generally believed that this work is the eighth section of the Chheda Sutra (a classification of Jain scriptures) named the Dsshashrut Skandha.

Mainly three topic have been dealt with in the Kalpasutra-

1. Tirthankar Charitra-The biographical sketches of the Tirthankars-the propagators and teachers of the code of conducts-including Shraman Bhagavan Mahavir.

2. Sthaviravali-The profiles and chronological lineage of the Sthavirs, in Mahavir's tradition. The Sthavirs are those senior monks who immaculately follow the code of conduct and as the leaders of the organization ensure that the ascetics of their group strictly observe the prescribed code.

3. Samachari-The rules of ascetic discipline during the monsoon stay (Paryushan and otherwise)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्राकृत भारती पुष्प : 239

चरम श्रुतकेवली श्री भद्रबाहु स्वामी प्रणीत

सचित्र श्री कल्पसूत्र

शुद्ध मूल पाठ, हिन्दी-अंग्रेजी अनुवाद तथा संक्षिप्त कथा विस्तार

प्रधान सम्पादक

उत्तर भारतीय प्रवर्त्तक भण्डारी श्री पद्मचन्द्र जी म. के सुशिष्य

प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि

सह-सम्पादक

श्रीचन्द सुराना 'सरस'

सह-सम्पादक

श्री वरूण मुनि "अमर शिष्य"

अंग्रेजी अनुवादक

श्री सुरेन्द्र बोथरा

प्रकाशक

पद्म प्रकाशन, पद्म धाम, नरेला मण्डी, दिल्ली-40

श्री दिवाकर प्रकाशन, आगरा

प्राकृत भारती अकादमी, जयपुर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सचित्र आगम माला का तृतीय पुष्प

प्रथम संस्करण

आगम रत्नाकर आचार्य सम्राट् पूज्य श्री आत्माराम जी म. के दीक्षा शताब्दी वर्ष तथा उत्तर भारतीय प्रवर्त्तक गुरुदेव भण्डारी श्री पद्मचन्द्र जी म. के दीक्षा स्वर्ण जयन्ती वर्ष के अवसर पर प्रकाशित

द्वितीय संस्करण

आगम रत्नाकर आचार्य सम्राट् पूज्य श्री आत्माराम जी म. एवं उत्तर भारतीय प्रवर्त्तक गुरुदेव भण्डारी श्री पद्मचन्द्र जी म. की पुण्य स्मृति में प्रकाशित

चरम श्रुतकेवली श्री भद्रबाहु स्वामी प्रणीत : सचित्र श्री कल्पसूत्र

❐ *प्रधान सम्पादक* : प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि

❐ *सह-सम्पादक* : श्रीचन्द सुराना 'सरस'

❐ *सह-सम्पादक* : श्री वरुण मुनि "अमर शिष्य"

❐ *अंग्रेजी अनुवादक* : श्री सुरेन्द्र बोथरा, जयपुर

❐ *चित्रकार* : सरदार पुरुषोत्तमसिंह, सरदार हरविंदरसिंह

❐ *प्रकाशक* : ***पद्म प्रकाशन***

पद्म धाम, नरेला मण्डी, दिल्ली-110 040

श्री दिवाकर प्रकाशन, आगरा

ए-7, अवागढ हाउस, अंजना सिनेमा के सामने,

एम. जी. रोड, आगरा-282 002 फोन : (0562) 2851165

E-mail : sansuman21@rediffmail.com

प्राकृत भारती अकादमी, जयपुर

13-ए, मेन मालवीय नगर, जयपुर-302 003 फोन : 2524827

E-mail : prabharati@datainfosys.net

❐ *प्रथम आवृत्ति* : चैत्र, वि. सं. 2057, मार्च, ईस्वी सन् 2001

❐ *द्वितीय आवृत्ति* : वि. सं. 2065, ईस्वी सन् 2008

❐ *मूल्य* : छह सौ रुपया मात्र (600/-) US $ 30

❐ ISBN : 978-81-89698-47-8

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Prakrit Bharti Pushp - 239

Last Shrutakevali Shri Bhadrabahu Swami's

ILLUSTRATED SHRI KALPASUTRA

Original Text, Hindi and English Translations with Brief Narrative Elaboration

❐ EDITOR-IN-CHIEF ❐

Pravartak Shri Amar Muni

(the disciple of Uttar Bharatiya Pravartak Bhandari Shri Padmachandra Ji Maharaj)

❐ CO-EDITOR ❐

Srichand Surana 'Saras'

❐ CO-EDITOR ❐

Shri Varun Muni "Amar Shishya"

❐ ENGLISH TRANSLATOR ❐

Shri Surendra Bothara

PUBLISHERS

PADMA PRAKASHAN, PADMA DHAM, NARELA MANDI, DELHI-40
SHREE DIWAKAR PRAKASHAN, AGRA
PRAKRIT BHARATI ACADEMY, JAIPUR

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Illustrated Agam Publication Series : Book Three

First Edition

Published on the occasion of the Diksha centenary year of Agam Ratnakar Acharya Samrat Shri Atmaram Ji M. and the Diksha Golden Jubilee year of Uttar Bharatiya Pravartak Gurudev Bhandari Shri Padam Chandra Ji M.

Second Edition

Published in pious memory of Agam Ratnakar Acharya Samrat Shri Atmaram Ji M. and Uttar Bharatiya Pravartak Gurudev Bhandari Shri Padam Chandra Ji M.

ILLUSTRATED SHRI KALPASUTRA
(Last Shrutakevali Shri Bhadrabahu Swami's)

- ***Editor-in-Chief*** : Pravartak Shri Amar Muni
- ***Co-Editor*** : Srichand Surana 'Saras'
- ***Co-Editor*** : Shri Varun Muni "Amar Shishya"
- ***English Translator*** : Shri Surendra Bothara, Jaipur
- ***Illustrations*** : Sardar Purushottam Singh, Sardar Harvinder Singh
- ***Publishers*** : **Padma Prakashan**
  Padma Dham, Narela Mandi, Delhi-110 040

  Shree Diwakar Prakashan, Agra
  A-7, Awagarh House, Opp. Anjna Cinema.
  M. G. Road, Agra-282 002
  Ph. (0562) 2851165,
  E-mail : sansuman21@rediffmail.com

  Prakrit Bharati Academy, Jaipur
  13-A, Main Malviya Nagar, Jaipur-302 003
  Ph. : 2524827 E-mail : prabharati@datainfosys.net
- ***First Edition*** : 2057 V., 2001 A.D.
- ***Second Edition*** : 2065 V., 2008 A.D.
- ***Price*** : Six Hundred Rupees only (Rs. 600/-) US $ 30
- **ISBN** : 978-81-89698-47-8

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकाशकीय

आगम रत्नाकर आचार्य सम्राट् श्री आत्माराम जी म. ने जैन आगमों के प्रचार/प्रसार एवं अध्ययन-अध्यापन की दृष्टि से जो अविस्मरणीय कार्य सम्पादन किया, वह जैन आगम साहित्य के इतिहास में सदा अमर रहेगा। उनकी प्रेरणा से तथा उन्हीं के कृत कार्य को आगे बढ़ाने में उनकी सुविज्ञ शिष्य परम्परा सदा अग्रणी रही है। उनके आगम रहस्यवेत्ता विद्वान शिष्यों ने जिनवाणी के अध्यात्मज्ञान को जनव्यापी बनाने में अपने जीवन का बहुत बड़ा योगदान किया है। इसी पावन परम्परा में आचार्य सम्राट् के विद्वान शिष्य पंडित-रत्न श्री हेमचन्द्र जी महाराज के सुशिष्य उत्तर भारतीय प्रवर्त्तक गुरुदेव भण्डारी श्री पद्मचन्द्र जी महाराज का नाम भी सदा स्वर्णाक्षरों में अंकित रहेगा।

प्रवर्त्तक गुरुदेव श्री भण्डारी जी म. की प्रेरणा से एवं आपश्री के विद्वान् शिष्य प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि जी म. के सम्पादन में सूत्रकृतांग (दो भाग), प्रश्न-व्याकरण (दो भाग), भगवती सूत्र (चार भाग) आदि विशाल आगमों का हिन्दी व्याख्या के साथ जो सुन्दर जनोपयोगी प्रकाशन हुआ है वह सर्वत्र समादृत हुआ है। आगम पाठकों को उससे बहुत लाभ मिला है। आगम प्रकाशन की इसी महान् श्रृंखला में गुरुदेव श्री भण्डारी जी म. की भावना के अनुरूप प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि जी म. ने जैन आगमों का चित्रमय प्रकाशन करने की एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण तथा सर्वथा अभिनव योजना का प्रारम्भ किया है।

चित्र-दर्शन से विषय-वस्तु का बोध शीघ्र हो जाता है। इसलिए ज्ञान वृद्धि में चित्रों का एक विशेष महत्त्व है। आगमों का सचित्र प्रकाशन जहाँ एक बहुत विशाल और व्ययसाध्य कार्य है, वहाँ इसका ऐतिहासिक महत्त्व भी है। यह निस्संदेह कहा जा सकता है कि आने वाले युगों में तथा जहाँ पर जैन श्रमण-श्रमणियाँ नहीं पहुँचते हैं, वहाँ इन चित्रमय आगमों से जनता जैन धर्म व संस्कृति की समृद्ध परम्परा और तत्त्वस्वरूप को बहुत ही सरलता/सहजता से समझ सकेगी। इसी दूरदृष्टि को और भविष्य के सुन्दर परिणाम को ध्यान में रखकर गुरुदेवश्री की कृपा से हमने जैन आगम शास्त्रों का चित्रमय प्रकाशन प्रारम्भ किया है।

हमने भगवान महावीर की अन्तिम देशना श्री उत्तराध्ययन सूत्र का चित्रमय भव्य प्रकाशन किया।

हमने भगवान महावीर की अन्तिम देशना श्री उत्तराध्ययन सूत्र का चित्रमय भव्य प्रकाशन किया। इस प्रकाशन को सभी ने बहुत पसन्द किया, मुक्त-कण्ठ से प्रशंसा भी की है। उसके बाद अष्टम अंग श्रीमद् अन्तकृद्दशा सूत्र का सचित्र प्रकाशन हुआ, वह भी सर्वत्र प्रशंसित हुआ है। अब अपेक्षा है कि इस प्रकार का श्रेष्ठ और मूल्यवान साहित्य प्रत्येक पुस्तकालय, स्थानक, उपाश्रय और मन्दिर में पहुँचे। लोग इसे अपनी आलमारी में सजाकर ही न रखें, समय-समय पर स्वाध्याय करके लाभान्वित भी हों। आज

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नहीं तो कल ऐसा समय आयेगा, जब शास्त्रप्रेमी श्रावक, साधु-साध्वी इस प्रकार के भव्य मनोरम साहित्य को पढ़ने के लिए मँगाने की प्रेरणा देंगे और इसके व्यापक प्रचार में सहयोगी बनेंगे।

हम इस वर्ष श्री कल्पसूत्र का चित्रमय प्रकाशन कर रहे हैं। सामान्य प्रकाशन से चित्रमय प्रकाशन लगभग दस गुना अधिक महँगा पड़ता है, इस कारण उसका मूल्य भी अधिक रखना पड़ता है। किन्तु फिर भी हम लागत मूल्य पर ही इसे घर-घर पहुँचाने का प्रयास करते हैं।

इस आगम सम्पादन में श्रद्धेय प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि जी म. ने बहुत ही श्रम किया है। उन्हीं के निर्देशन में प्रसिद्ध विद्वान् तथा जैन चित्रमय साहित्य के मर्मज्ञ श्री श्रीचन्द जी सुराना 'सरस' ने एक वर्ष के सुदीर्घ परिश्रमपूर्वक इस भव्य कृति को परिपूर्ण किया है तथा श्री सुरेन्द्रकुमार जी बोथरा ने सम्पादन सहयोग के साथ ही मूलानुसारी, सरल भाषा और प्रवाहपूर्ण शैली में अंग्रेजी भाषा में अनुवाद किया है। उनके श्रम के प्रति हमारी संस्था सदा कृतज्ञ रहेगी।

उपप्रवर्तिनी विदुषी-रत्न श्री सरिता जी म. की प्रेरणा एवं मार्गदर्शन तो मिला ही है, उनकी सत्प्रेरणा से उदार सद्गृहस्थों ने प्रसार में सहयोग भी प्रदान किया है। गुरुदेवश्री के अनेक भक्त सद्गृहस्थों ने भी अपनी भावना के अनुसार बड़ी प्रसन्नता और सहज श्रद्धा के रूप में सहयोग प्रदान कर हमारे कार्य को सुलभ बनाया है, हम उन सबके प्रति हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करते हैं।

चित्रकार सरदार पुरुषोत्तमसिंह व सरदार हरविंदरसिंह तथा मुद्रक निर्मल चित्रण, आगरा का भी धन्यवाद करते हैं, जिनका सहयोग हमें प्राप्त होता रहा है।

आशा है सचित्र आगम प्रकाशन की योजना का समाज में, देश-विदेश में स्वागत होगा और यह आगम अपने आप ही अपनी उपयोगिता से जनग्राह्य बनेगा।

द्वितीय आवृत्ति— कल्पसूत्र के सचित्र होने के कारण इसके पठन-पाठन में स्वाध्यायियों की रुचि निरन्तर बढ़ती ही जा रही है। इसलिये इसका प्रथम संस्करण अब प्रायः समाप्त होने को ही है। प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि जी म. सा. की भावना है कि यह सचित्र कल्पसूत्र स्वाध्यायियों को सतत उपलब्ध रहे। इसलिए संस्था ने इसके पुनः मुद्रण कराने का निश्चय किया है। इस कार्य में प्राकृत भारती अकादमी (जयपुर) और श्री दिवाकर प्रकाशन (आगरा) ने सहयोगी प्रकाशक के रूप में अपना सहयोग प्रदान किया, हम उनके आभारी हैं।

—महेन्द्रकुमार जैन
अध्यक्ष : पद्म प्रकाशन, दिल्ली

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Publisher's Note

Agam Ratnakar Acharya Samrat Shri Atmaram ji M. has done pioneering work in the field of study, teaching and popularising of Jain canonical literature. His everlasting contribution will always be remembered. The lineage of his learned disciples has continued to be the fore runners in furthering his mission. The scholars of Jain Agams among his disciples have amply contributed towards the spread of the spiritual message propagated by the Jina. In this pious tradition the name of Uttar Bharatiya Pravartak Gurudev Bhandari Shri Padam Chandra ji Maharaj continues to glitter in golden letters. He was a disciple of Pandit Ratna Shri Hemchandra ji Maharaj, a learned disciple of the Acharya Samrat.

The useful and attractive publication of Sutrakritang (two volumes), Prashna-Vyakaran (two volumes), Bhagavati Sutra (four volumes) and others with Hindi commentary has been appreciated everywhere; these works were edited by Pravartak Shri Amar Muni ji, a learned disciple of Gurudev Shri Bhandari ji M. The scholars of the Agam literature have been greatly benefitted by these works. In this great series of the Agam Publication, Shri Amar Muni ji, in order to fulfil the desires of his Guru Shri Bhandari ji M., has also included the important and novel project of illustrated editions of the Agams.

Illustrations are effective means of easily understanding the content of a text, as such the visual media occupies an important place in the field of knowledge and education. Although it is a cost intensive project, the publication of illustrated Agam literature has a historical value too. The future generations as well as the masses, who do not come in contact with Jain ascetics, will undoubtedly be able to know and understand with ease the essentials of Jain tenets and its rich religious and cultural tradition. With the blessing of our Gurudev and keeping in view these far reaching goals, we have launched this project of publishing illustrated Agam literature.

We brought out Illustrated Shri Uttaradhyayan Sutra, the last preachings of Bhagavan Mahavir. It was received well and commended by all. After that we published Illustrated Shrimad Antakriddasha Sutra, the eighth Anga and that too was praised everywhere. We hope that such useful and valuable books reach every library, Sthanak and Temple. People should not only decorate their drawing rooms with such valuable books but also study them regularly. We are confident that a time would come when the scripture loving ascetics as well

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

as laity would inspire others to acquire such attractive and valuable publications, and consequently help in wide spread popularising of the Agam literature.

This year we are coming out with the Illustrated Shri Kalpasutra. The cost of an illustrated edition is almost ten times that of a simple edition. Accordingly the selling price is also to be kept higher. Still for the sake of a wider distribution we try to sell it at the cost only.

Pravartak Shri Amar Muni ji has put in great efforts in editing of this work. Under his guidance the famous scholar and expert of illustrated literature Shri Srichand ji Surana 'Saras' has put in a year of hard work into this project. Besides assisting in the editing, Shri Surendra Kumar ji Bothara has also done the simplified rendering in a flowing style in English language. We express our gratitude to these scholars.

Pravartini Shri Sarita ji M. besides her valued guidence and support, has also inspired prominent citizens to extend their co-operation and contributions to this project. Numerous devotees of Gurudev Shri have made our task easy with their material contribution and support. We express our thanks and gratitude to them.

Our thanks also to Sardar Purushottam Singh and Sardar Harvinder Singh the illustrator; and Nirmal Chitran, Agra, the printer. They have been extremely co-operative.

We hope his project of publishing illustrated Agam literature will be received well in the country as well as abroad and this particular work will become popular on its own merit and for its usefulness.

There has been an ever increasing interest for the illustrated Kalpa Sutra among readers, scholars and teachers. The first edition is almost sold out. Pravartak Shri Amar Muni Ji M. S. feels that this book should be available always for serious readers. Accordingly we have decided to come out with this second edition. Prakrit Bharati Academy Jaipur and Shree Diwakar Prakashan, Agra have extended their enthusiastic support as joint Publishers, we are grateful to them.

—Mahendra Kumar Jain

***President :* Padma Prakashan, Delhi**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कल्पसूत्र : प्रास्ताविक

कल्प का स्वरूप और अर्थ

'कल्प' शब्द के अनेक अर्थ हैं, जैसे–मर्यादा, आचार-संहिता, समाचारी, परम्परा आदि। आचार्य उमास्वाति के अनुसार 'कल्प' शब्द का लक्षण है–"जो कार्य या आचरण ज्ञान, शील, तप आदि का उपकार या संवर्धन करता है तथा दोषों का निग्रह करता है, उसे कल्प और शेष को अकल्प समझना चाहिए।"[1]

कल्प आचार और तप की मर्यादाओं का प्रेरक है। वस्तुतः कल्प, कल्पवृक्ष है, जो साधुओं के वांछित साध्य–फल को प्राप्त कराता है। कल्प सम्यक् रसायन है, जिसके सेवन से त्यागी जीवन परिपुष्ट होता है।[2]

कल्पसूत्र क्या है ?

श्रमण वर्ग की आचार–मर्यादाओं, परम्पराओं एवं समाचारी आदि का सूचन एवं प्ररूपण करने वाला सूत्र–शास्त्र कल्पसूत्र कहा जाता है। इसके १२१५ श्लोक प्रमाण होने से बारह सौ सूत्र (बारसा कल्प) भी इसका नाम प्रसिद्ध हो गया है।

कल्पसूत्र श्रुत केवली भद्रबाहुस्वामी द्वारा विरचित है। उन्होंने प्रत्याख्यान प्रवाद, बृहत्कल्प, आचारदशा आदि शास्त्रों से चुन-चुनकर इसमें दस कल्पों तथा साधु-समाचारी आदि का निरूपण किया है। वैसे यह दशाश्रुत स्कंध नामक छेद सूत्र का आठवाँ अध्ययन माना जाता है।

कल्पसूत्र का प्रतिपाद्य

कल्पसूत्र में मुख्यतः तीन विषयों का प्रतिपादन किया गया है–

१. तीर्थंकर चरित्र–कल्प मर्यादाओं के प्रेरक एवं निर्देशक श्रमण भगवान महावीर आदि २४ तीर्थंकरों का जीवन-चरित्र।

२. स्थविरावली–कल्प-मर्यादा में स्वयं स्थिर रहने और अपने गण के साधु वर्ग को स्थिर रखने वाले ज्ञान एवं चारित्र गुणों में श्रेष्ठ स्थविरों का परिचय एवं उनकी परम्परा।

३. समाचारी–साधु वर्ग के लिए पालनीय पर्युषण (वर्षावास) कल्प एवं साधु-व्रत, नियम समाचारी आदि का निरूपण।

कल्पसूत्र का वाचन और श्रवण

पर्युषण पर्व के आठ दिनों में जीवन के श्रेय और अभ्युदय के लिए कल्पसूत्र के वाचन श्रवण की प्राचीन परम्परा रही है। कल्पसूत्र के प्रकाश में साधु-साध्वी वर्ग को अपने समग्र आचार-विचारों के बोध की पुनरावृति हो जाती थी। फलस्वरूप वह आचार संहिता का विशेष जागृति और सावधानीपूर्वक अप्रमत्त भाव से आचरण

१. "यज्ज्ञान-शील-तपसामुपग्रहं च दोषाणाम्, कल्पयति निश्चये यत्तत्कल्पमवसेयम्।" –*प्रशमरति, श्लोक १२३*

२. "कल्पो रसायनं सम्यक्, कल्पस्तत्त्वार्थ दीपकः।" –*कल्पसमर्थनम् कल्पमहिमा, श्लोक १*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करने लगता था। कल्पसूत्र के मूलपाठ के साथ अर्थ और आशय को हृदयंगम करने के लिए साधु वर्ग ८ दिनों में इसका व्यक्तिगत वाचन-श्रवण भी करता था।[1]

प्रश्न है कि कल्पसूत्र का सार्वजनिक रूप से पठन एवं श्रवण कब से प्रारम्भ हुआ और क्यों?

इसके लिए कल्पसूत्र के प्राचीन चूर्णिकार एक ऐतिहासिक घटना का उल्लेख करते हैं–"आज से लगभग १५०० वर्ष पहले आनन्दपुर नगर में ध्रुवसेन नाम के राजा थे जो जैन धर्म में पूर्ण निष्ठावान और नीतिनिष्ठ थे। पर्युषण के दिनों में ही उनका इकलौता पुत्र मृत्यु को प्राप्त हो गया। पुत्र की मृत्यु से शोकग्रस्त राजा के शोक को कम करने के लिए एक जैनाचार्य ने चतुर्विध संघ एवं राज-परिवार के समक्ष कल्पसूत्र का सार्वजनिक रूप से वाचन किया, जिससे शोक संतृप्त राज-परिवार को शांति मिली।" तभी से कल्पसूत्र वाचन की परम्परा प्रचलित हो गई।

मुख्य प्रतिपाद्य

कल्पसूत्र में दशविध कल्पों का वर्णन और उनका सम्यक् परिपालन निरूपण है। वे दश कल्प इस प्रकार हैं–

"आचेलक्कुद्देसिय-सिज्जायर-रायपिंड-कितिकम्मे।

वत-जेट्ठ-पडिक्कमणे, मासं पज्जोसवणा-कप्पे॥"

१. आचेलक्य, २. औद्देशिककल्प, ३. शय्यातर (शय्याधर)–पिण्ड, ४. राजपिण्ड, ५. कृतिक्रम (कृतिकर्म = वन्दनाक्रम), ६. व्रतकल्प, ७. ज्येष्ठकल्प, ८. प्रतिक्रमणकल्प, ९. मासकल्प और १०. पर्युषणाकल्प।

ये दस कल्प स्थविरकल्पी साधु वर्ग के लिये विहित हैं।

कल्प के मुख्य दो प्रकार

शास्त्रों में जिनकल्प और स्थविरकल्प ऐसे दो मुख्य कल्प बताये गये हैं। जिनकल्पी श्रमण का लक्षण है–जो वज्रऋषभनाराच-संहनन-धारक हों, कम-से-कम नौवें पूर्व की तृतीय आचारवस्तु का और अधिक-से-अधिक कुछ कम दस पूर्व तक का जिसे शास्त्रज्ञान हो, जिनकल्पी श्रमण संघ में नहीं रहता। वह पहले स्थविरकल्पी-साधना में पारंगत होने पर ही जिनकल्पिक बनता है। जिनकल्पी साधकों के कुछ विशिष्ट उत्कृष्ट कल्प होते हैं। वे नग्न निष्प्रतिकर्म एवं विविध अभिग्रह-धारक होते हैं। इनके दो प्रकार हैं–पाणिपात्र एवं पात्रधारी।

स्थविरकल्पी साधक संघ में या संघ से सम्बद्ध रहकर अपनी साधना करते हैं। स्थविरकल्पी साधु-साध्वियों को दृष्टिगत रखकर दस कल्पों के विधि-निषेध का प्रतिपादन किया गया है।

स्थविरकल्प के दो भेद होते हैं–एक शास्त्रीयकल्प और दूसरे संघीयकल्प।

अतिप्राचीन काल से आगत आचारकल्प शास्त्रीयकल्प हैं, जो तीर्थंकर गणधर आदि द्वारा प्ररूपित हैं। दूसरे संघीयकल्प हैं, जो संघ की सुव्यवस्था के लिये आचार्यों द्वारा द्रव्य, क्षेत्र, काल एवं भाव की स्थिति को देखकर निर्मित किये जाते हैं, इसे संघ की समाचारी भी कहते हैं। कल्पसूत्र में दस प्रकार के शास्त्रीयकल्पों का विधान है।

---

१. "एगग्गचित्ता जिणसासणम्मि, पभावणा पूअपरायणा जे।
तिसत्तवारं निसुणंति कप्पं, भवन्नवं ते लहुसा तरंति॥" —*कल्पसमर्थनम् कल्पमहिमा, श्लोक ४*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दस कल्पों का स्वरूप

१. **आचेलक्य**–'चेल' का अर्थ है–वस्त्र ! 'अ' शब्द के दो अर्थ होते हैं–निषेध और अल्प। इस अपेक्षा से अचेल, अचेलक या आचेलक्य शब्द यहाँ सर्वथा निषेधार्थक न होकर अल्प वस्त्र का द्योतक है। इसका भाव है–अल्प मूल्य वाले सात्त्विक, अल्प तथा मर्यादित वस्त्र रखना।

पूर्वाचार्य-रचित 'कल्पसमर्थन' में कहा है–प्रथम और अन्तिम तीर्थंकर का धर्म (आचार), अचेलक (मर्यादानुकूल अल्प मूल्य वाले श्वेत वस्त्र रखना) है और बाईस तीर्थंकरों का धर्म (आचार) सचेलक और अचेलक दोनों प्रकार का है, अर्थात्–वे बहुमूल्य, रंगीन अथवा प्रमाणाधिक वस्त्र भी रख सकते थे।

२. **औद्देशिककल्प**–इसका अर्थ है–साधु या साध्वी का नामोद्देश करके गृहस्थ द्वारा आहार आदि का बनाया जाना औद्देशिक है। प्रथम और अन्तिम तीर्थंकर के शासन के साधु-साध्वीगण के लिए औद्देशिक आहारादि ग्रहण करने का निषेध है, जबकि बीच के बाईस तीर्थंकरों के शासन के अन्य साधु-साध्वी उक्त औद्देशिक आहार को ग्रहण कर सकते हैं, केवल वही साध्वी या साधु ग्रहण नहीं कर सकता, जिसके निमित्त वह आहारादि बनाया गया हो।

३. **शय्यातरपिण्डकल्प**–शय्यातर या शय्याधर (स्थानदाता या उक्त स्थान में ठहरने की आज्ञा देने वाले) के पिण्ड, अर्थात्–अशन, पान, खादिम, स्वादिम, औषधि, वस्त्र, पात्र आदि के ग्रहण करने का निषेध। शय्यातरकल्प सभी तीर्थंकरों के साधु वर्ग के लिए पालनीय है।

निशीथभाष्य के अनुसार स्वयं गृहपति या उसके द्वारा निर्दिष्ट या नियुक्त कोई भी अन्य व्यक्ति शय्यातर हो सकता है। श्रमण या श्रमणी जिस स्थान में रात्रि-निवास करें, सोयें तथा चरमावश्यक कार्य करें, उस स्थान का अधिपति शय्यातर होता है। उसका पिंड–आहार ग्रहण करने का निषेध है।

४. **राजपिण्ड**–अर्थात्–जिसका विधिवत् राज्याभिषेक हुआ हो, उस मूर्द्धाभिषिक्त राजा का भोजन राजपिण्ड है और वह साधु के लिए अग्राह्य है। राजपिण्ड ग्रहण करने के निषेध के पीछे अनेक कारण हैं। निशीथभाष्य, चूर्णि आदि के अनुसार साधु को राजभवन में प्रवेश करते देख कोई अपशकुन समझे, या अनादर कर बैठे, अथवा गुप्तचर समझकर साधु को कष्ट दे, इस कारण राजपिण्ड को अग्राह्य माना है। इसके अतिरिक्त गरिष्ठ, मादक एवं सरस स्वादिष्ट होने से तथा रसलोलुपता बढ़ाने तथा सामिष आहार मिश्रित होने की सम्भावना से भी राजपिण्ड अनेषणीय है। राजपिण्ड ग्रहण करने का निषेध प्रथम और अन्तिम तीर्थंकरों के साधु वर्ग के लिए है, शेष बावीस तीर्थंकरों के साधु वर्ग के लिए नहीं।

५. **कृतिक्रम (कृतिकर्म)**–इसका अर्थ है–अपने दीक्षा (संयमादि अथवा चारित्र गुणों) में ज्येष्ठ श्रमणों का, दीक्षालघु श्रमणों द्वारा वन्दन, अभ्युत्थान, बहुमान तथा हितशिक्षाओं का श्रद्धापूर्वक स्वीकार करना। कृतिक्रमकल्प चौबीस ही तीर्थंकरों के साधु वर्ग के लिए समान रूप में विहित है।

६. **व्रतकल्प**–व्रत का अर्थ है–असत्प्रवृत्ति से निवृत्ति (विरति) और सत् में प्रवृत्ति। इस दृष्टि से भगवान महावीर और भगवान ऋषभदेव के श्रमणों के लिए १. प्राणातिपात, २. मृषावाद, ३. अदत्तादान, ४. मैथुन और ५. परिग्रह, इन पाँच असत् प्रवृत्तियों से निवृत्ति एवं अहिंसा सत्यादिरूप पंचमहाव्रतों में प्रवृत्ति का विधान किया गया है, जबकि बीच के तीर्थंकरों के साधुओं के लिए मैथुन-विरमण को परिग्रह-विरति में समाविष्ट करके चातुर्याम धर्म (चार महाव्रतों) का ही विधान था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसका कारण यह बताया गया है कि प्रथम तीर्थंकर के साधु ऋजु-जड़ होते थे, वे किसी बात को कठिनता से समझते थे तथा अन्तिम तीर्थंकर के साधु वक्र जड़ होते हैं। किन्तु मध्यवर्ती युग के २२ तीर्थंकरों के श्रमण ऋजु-प्राज्ञ होते थे। उन श्रमणों के लिए धर्म को समझना और पालना सुगम होता था। यही कारण है–प्रथम और अन्तिम तीर्थंकरों के श्रमण वर्ग के लिए पंचमहाव्रत का और मध्यवर्ती २२ तीर्थंकरों के श्रमणों के लिए चातुर्याम धर्म (चार महाव्रतों) का विधान किया गया।

७. **ज्येष्ठकल्प**–ज्येष्ठकल्प के मुख्यतया तीन अर्थ होते हैं–

(१) मध्यवर्ती २२ तीर्थंकरों के शासनकाल में श्रमण-श्रमणी के सामायिक चारित्र ही होता है, परन्तु प्रथम और अन्तिम तीर्थंकर के समय में श्रमण वर्ग के सामायिक चारित्र के बाद छेदोपस्थापनिक (महाव्रतारोपण) चारित्र भी होता है और इसी चारित्र के आधार से श्रमण ज्येष्ठ या कनिष्ठ होता है। पिता-पुत्र, राजा-मंत्री, सेठ-मुनीम यदि एक साथ दीक्षा ग्रहण करें तो छेदोपस्थापनीय चारित्रानुसार पहले पिता, राजा या सेठ को ज्येष्ठ और पुत्र, मंत्री एवं मुनीम को कनिष्ठ बनाया जाता है। परन्तु यदि पिता, राजा और सेठ, पुत्र, मंत्री और मुनीम की दीक्षा के ६ महीने बाद दीक्षा लें तो ऐसी स्थिति में वे दीक्षा-ज्येष्ठ नहीं बनाये जाते, दीक्षा-लघु ही माने जाते हैं। आजकल सामायिक चारित्र को छोटी दीक्षा और छेदोपस्थापनीय चारित्र को बड़ी दीक्षा कहते हैं।

(२) दूसरे अर्थ के अनुसार ऐसा विधान भी है कि यदि पुत्र आदि ने पिता आदि से प्रथम सामायिक चारित्र ग्रहण कर लिया है और पिता आदि के अन्तर्मानस में बाद में दीक्षा लेने की भावना जागती है, तो चार या उत्कृष्ट ६ मास तक पुत्रादि को छेदोपस्थापनीय चारित्र नहीं दिया जाता, पिता आदि को छेदोपस्थापनीय चारित्र देकर उन्हें ज्येष्ठ बनाया जाता है और पुत्रादि को लघु।

(३) ज्येष्ठकल्प का तीसरा अर्थ होता है–आत्मा के ज्ञानादि गुणों के आध्यात्मिक विकास के आधार पर ज्येष्ठत्व-कनिष्ठत्व। इस दृष्टि से पुरुष-ज्येष्ठ का रहस्यार्थ है आध्यात्मिक विकास की उच्च भूमिका पर पहुँचे हुए पुरुष यानी आत्मा का ज्येष्ठत्व तथा निम्न भूमिका पर रहे हुए पुरुष (आत्मा) का कनिष्ठत्व।

पुरुष-ज्येष्ठ का यह अर्थ सिद्धान्त सम्मत भी है। जैनागमों में भी "पुरुष" शब्द आत्मा के अर्थ में आया है। जैसे–आचारांग में कहा गया है–"पुरिसा ! तुममेव तुमं मित्तं, किं बहिया मित्तमिच्छसि ?" सांख्यदर्शन में आत्मा के अर्थ में सर्वत्र "पुरुष" शब्द का प्रयोग किया गया है।

८. **प्रतिक्रमणकल्प**–प्रतिक्रमण आत्मालोचन एवं आत्मविशुद्धि का मुख्य अंग है, आत्मा का ज्ञान-दर्शन-चारित्ररूप स्व-स्थान (स्वभाव) से हटकर पर-स्थान (राग-द्वेष, क्रोधादि-कषाय, मोह, मिथ्यात्व आदि विभाव) में चले जाना अतिक्रमण है। इस पर-स्थान से आत्मा को वापस स्व-स्थान में लौटा लाना ही प्रतिक्रमण है। १. मिथ्यात्व, २. अविरति, ३. प्रमाद, ४. कषाय और ५. अप्रशस्त योग, ये पाँच दोष आत्मा के लिए पर-स्थान हैं। इन दोषों के परिहार के लिए आत्मा द्वारा आलोचना, निन्दना, गर्हणा करके स्वयं को सम्यक् विरति (व्रत), अप्रमाद, अकषाय (क्षमा, नम्रता) एवं प्रशस्त योग में लौटाना, इनमें रमण कराना प्रतिक्रमण है। प्रतिक्रमण का मुख्य लक्ष्य-आत्मा को पाप-प्रवृत्ति से वापस मोड़ना है। वैसे तो साधक के लिए–१. सामायिक, २. चतुर्विंशति-स्तव, ३. वन्दना, ४. प्रतिक्रमण, ५. कायोत्सर्ग और ६. प्रत्याख्यान, ये छह आवश्यक नियत हैं। प्रतिक्रमण इनमें चौथा आवश्यक है। परन्तु प्रतिक्रमण शब्द इतना रूढ़ हो गया है कि इसी से छहों आवश्यकों का बोध हो जाता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रतिक्रमण के मुख्यतः पाँच प्रकार हैं–१. दैवसिक, २. रात्रिक, ३. पाक्षिक, ४. चातुर्मासिक और ५. सांवत्सरिक। सामान्यतः साधु वर्ग के लिए उभयकाल के अतिरिक्त भिक्षा स्वाध्याय, गमनागमन आदि प्रत्येक चर्या के बाद प्रतिक्रमण करने का विधान है। परन्तु प्रथम और अन्तिम तीर्थंकर के साधु वर्ग के लिए दोनों समय नियमित रूप से प्रतिक्रमण करने का विधान है, किन्तु मध्यवर्ती २२ तीर्थंकरों के साधु वर्ग के लिये ऐसा नियम नहीं है। वे दोष लगने पर ही प्रतिक्रमण करते हैं, अन्यथा नहीं।

९. **मासकल्प**–जैन श्रमण-श्रमणी वर्ग के लिए यह सामान्य विधान है कि चातुर्मास तथा रोगादि कारणों के सिवाय शेषकाल में ग्रामानुग्राम विचरण करें। शेषकाल में साधु वर्ग एक मास तक किसी स्थान पर रह सकता है। वर्षावास का परम प्रमाण चार मास है।

भगवान ऋषभदेव और भगवान महावीर के श्रमण वर्ग के लिए ही मासकल्प का विधान है, शेष बावीस तीर्थंकरों के श्रमणों के लिए नहीं। इसलिए प्रथम और अन्तिम तीर्थंकर के साधु वर्ग के लिए मासकल्प अवस्थित है। मध्यकाल के बावीस तीर्थंकर के साधु वर्ग के लिए यह अस्थिर है।

१०. **पर्युषणाकल्प**–पर्युषण का भावार्थ होता है–सब ओर से आत्मा के समीप रहना। दूसरा अर्थ है–पर-भाव से हटकर स्व-भाव में रमण करना, आत्मस्थ होना। आत्म-रमण का यह पर्व आषाढ़ी पूर्णिमा से होकर ४९वें या ५०वें दिन, अर्थात् भादवा सुदी ४ या ५ को मनाया जाता है, जिसे "संवत्सरी पर्व" कहते हैं। पर्युषणाकल्प का यह एक अर्थ है। पर्युषणाकल्प का दूसरा अर्थ है–एक स्थान पर निवास करना। वह दो प्रकार का है–सालम्बन और निरालम्बन। सालम्बन का अर्थ है सकारण और निरालम्बन का अर्थ है कारणरहित। पर्युषणाकल्प का वर्तमान अर्थ है वर्षावासकल्प। वर्षावास में आचरणीय, कल्पनीय नियमों का विधान तथा अकरणीय का निषेध। वर्तमान में चातुर्मास में यह पर्व आठ दिनों का मनाया जाता है।

वर्षावासकल्प–नियत एवं अनियत

प्रथम और अन्तिम तीर्थंकर के श्रमण वर्ग के लिए वर्षावास (पर्युषणा) का पूर्णतः विधान है, अर्थात् वे वर्षावास (चातुर्मास) में निश्चित क्षेत्र में वास करते हैं, शेष बावीस तीर्थंकरों के साधु वर्ग के लिए ऐसा नहीं है। वे वर्षा आदि के कारण ठहरते भी थे और कारणाभाव में विहार भी कर जाते थे।

दसकल्पों में अस्थिर और अवस्थित कल्प

पूर्वोक्त दस कल्पों में छह कल्प अस्थिर हैं–१. आचेलक्य, २. औद्देशिककल्प ३. प्रतिक्रमणकल्प, ४. राजपिण्ड, ५. मासकल्प और ६. पर्युषणाकल्प तथा शेष चार कल्प अवस्थित हैं, स्थायी हैं–१. शय्यातरपिण्डकल्प, २. चतुर्थ महाव्रत रूप धर्म (व्रतकल्प), ३. ज्येष्ठकल्प और ४. कृतिक्रम ये चार कल्प अवस्थित हैं, जो चौवीस ही तीर्थंकरों के शासन में मान्य होते हैं।

कल्पसूत्र का वर्तमान संस्करण

कल्पसूत्र पर अब तक अनेक आचार्यों, मुनियों एवं विद्वानों द्वारा निर्युक्ति, टीका, चूर्णि, अवचूरी, भाष्य, व्याख्या आदि लिखे गये हैं। कल्पसूत्र पर सबसे प्राचीन व्याख्या ग्रंथ है–द्वितीय भद्रबाहु द्वारा (छठी शताब्दी) रचित निर्युक्ति। इसके बाद इसकी लोकोपकारिता को ध्यान में रखकर प्राकृत-संस्कृत आदि भाषाओं में १०० से अधिक टीका, व्याख्या, टिप्पण, स्तबक आदि रचे गये हैं। गुजराती भाषा में भी इसके अनेक अनुवाद, बांग्ला में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक अनुवाद तथा अंग्रेजी में दो अनुवाद—डॉ. हर्मन जैकोबी तथा डॉ. मुकुन्द लाट (प्राकृत भारती, जयपुर) प्रसिद्ध हुए हैं।

स्थानकवासी परम्परा में उपाध्याय श्री प्यारचन्द जी म. का अनुवाद काफी लोकप्रिय हुआ है। श्रमण संघ के वर्तमान आचार्य श्री देवेन्द्र मुनि जी शास्त्री ने भी बहुत ही श्रम करके इसका विद्वत्तापूर्ण सम्पादन एवं विवेचन किया है। आचार्य श्री आनन्द ऋषि जी म. के निदेशन में पं. मुनि श्री नेमिचन्द्र जी ने भी कल्पसूत्र पर सुन्दर विवेचन लिखा है। सभी की अपनी-अपनी विशेषताएँ हैं।

प्रस्तुत संस्करण

प्रस्तुत संस्करण की अपनी अलग ही विशेषता है। इसमें चौवीस तीर्थंकरों के जीवन चरित्र को रंगीन भावपूर्ण चित्रों के साथ प्रस्तुत किया गया है। चित्र के कारण जटिल विषय भी न केवल बोधगम्य हो जाता है, परन्तु रोचक और आकर्षक भी वन जाता है। इस दृष्टि से मैंने सचित्र आगम प्रकाशन की योजना को मूर्त्तरूप दिया, जिसके अन्तर्गत अब तक सचित्र उत्तराध्ययन सूत्र एवं सचित्र अन्तकृद्दशा सूत्र का प्रकाशन हो चुका है। उसी शृंखला में प्रस्तुत कल्पसूत्र का सचित्र अंकन तथा हिन्दी एवं अंग्रेजी अनुवाद के साथ प्रस्तुतीकरण किया गया है। मुझे विश्वास है, कल्पसूत्र का यह सचित्र प्रकाशन पाठकों, आगम स्वाध्यायियों आदि के लिए रुचिकर तथा सहज बोधगम्य बनेगा। परिशिष्ट में तीर्थंकरों सम्बन्धी अनेक प्रकार की रोचक, ज्ञानवर्धक तथा उपयोगी तालिकाएँ भी हैं।

इस अवसर पर मैं अपने परमाराध्य जैनागम महोदधि, जैन आगमों के रहस्यज्ञाता और विशिष्ट व्याख्याता श्रमण संघ के प्रथम आचार्यदेव, आचार्यसम्राट् श्री आत्माराम जी म. का स्मरण करता हूँ। यह वर्ष आचार्य-सम्राट् का दीक्षा शताब्दी वर्ष है, अतः ऐसे पुण्य प्रसंग पर इस विशिष्ट आगम का प्रकाशन मेरे लिए आनन्द एवं गौरव का विषय है।

आचार्य श्री आत्माराम जी म. के प्रशिष्य मेरे परम पूज्य गुरुदेव श्रद्धेय महामना उ. भा. प्रवर्त्तक भण्डारी श्री पद्मचन्द्र जी म. का दीक्षा स्वर्ण-जयन्ती वर्ष भी इसी वर्ष मनाया जा रहा है। मैंने जीवन में जो भी अक्षर-बोध तथा अन्य कुछ उपलब्ध किया है, वह सब इन्हीं पूज्य गुरुदेवों की कृपा का सुफल है। अतः मैं गुरु-चरणों में अपनी श्रद्धा-भक्ति समर्पित करता हूँ।

कल्पसूत्र के चित्रांकन, सम्पादन, अनुवाद आदि में हमारे परम सहयोगी प्रसिद्ध विद्वान् श्री श्रीचन्द जी सुराना 'सरस' का हार्दिक सहयोग भी मेरे लिए स्मरणीय है तथा अंग्रेजी अनुवाद व सम्पादन सहयोग के लिए श्रीयुत श्री सुरेन्द्रकुमार जी बोथरा, जयपुर का भी सहयोग मिलता रहा है, मिलता रहेगा, ऐसा विश्वास है।

स्वर्गीय महासती श्री शशिकांता जी म. की सुशिष्या उपप्रवर्तिनी डॉ. महासती सरिता जी ने शास्त्र प्रचार एवं प्रकाशन कार्य में स्मरणीय सहयोग किया है तथा अनेक उदारमना गुरुभक्त सद्गृहस्थों ने भी शास्त्र भक्ति के रूप में अपना योगदान किया है, वे सभी धन्यवाद के पात्र हैं।

अन्त में मैं यही आशा व्यक्त करता हूँ इस शास्त्र के स्वाध्याय से सभी में देव-गुरु-धर्म की श्रद्धा-भक्ति बढ़े और आत्म-कल्याण के मार्ग में प्रवृत्त हों।

—अमर मुनि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

KALPASUTRA : AN INTRODUCTION

The Word and its Meaning

The word KALPA has numerous meanings—discipline, code of conduct, rules, tradition etc. Acharya Umaswati defines the term KALPA as—"That which refines and enhances indulgence in activities like pursuence of knowledge, virtues, penance etc., and impedes vices and faults, should be known as KALPA (acceptable) and all the rest as Akalpa (unacceptable).

Kalpa is the source of discipline in conduct and practice of penance. Truely speaking the Kalpa is like a wish-fulfilling tree (Kalpa-Vriksha) that provides all what is desired and strived for by the ascetics. The Kalpa is a perfect tonic for the health of the ascetic way of life.

What is Kalpasutra ?

The scripture that details and prescribes the code of conduct, the rules of discipline and the traditional norms to be followed by the ascetic community is known as the Kalpasutra. As it is a volume in size equivalent to 1215 couplets it is also popularly known as 'Baraha Sau Sutra' (Barasa Kalpa) or Twelve Hundred Aphorisms.

The author of Kalpasutra was Shrut-kevali Bhadrabahu Swami. He selected important material from Pratyakhyan Pravad, Brihatkalpa, Achardasha and other such works and framed the ten Kalpas and Sadhu-samachari parts of this work. It is generally believed that this work is the eighth section of the Chheda Sutra (a classificatin of Jain scriptures) named the Dashashrut Skandha.

The Content of Kalpasutra

Mainly three topics have been dealt with in the Kalpasutra—

1. **Tirthankar Charitra**—The biographical sketches of the Tirthankars—the propagators and teachers of the code of conducts—including Shraman Bhagavan Mahavir.

2. **Sthaviravali**—The profiles and chronological lineage of the Sthavirs, in Mahavir's tradition. The Sthavirs are those senior monks who immaculately follow the code of conduct and as the leaders of the organisation ensure that the ascetics of their group strictly observe the prescribed code.

3. **Samachari**—The rules of ascetic discipline during the monsoon stay (Paryushan) and otherwise.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

The Reading and Reciting of Kalpasutra

The reading and reciting of the Kalpasutra during the eight days of the Paryushan Parva (a religious festival celebrated during the monsoon season) for the purpose of spiritual awakening and general well being of the masses is an ancient tradition in the Jain community. In the light of Kalpasutra the ascetic community gets a chance to revise and refresh the knowledge of the basic tenets and the codes of conduct. Consequently the individual ascetic becomes more alert, vigorous and steadfast in his observences. In the past, the ascetics used to read and recite Kalpasutra individually as well, in order to memorise the text and the meaning.

An often asked question is—When and why this tradition of reading and reciting of Kalpasutra in congregations began ?

On this matter, the early commentators of Kalpasutra narrate a historical incident—"About 1500 years back, a king named Dhruvasen ruled over the town of Anandpur. He had complete faith in the tenets of Jainism and was a righteous person. It so happened that his only son died during the Paryushan days. In order to disperse the dense fog of sorrow choking the king and his family, a Jain Acharya recited Kalpasutra before a congregation of the members of the ruling family and the public. This alleviated the sorrow of the royal family." This was the beginning of the tradition of the public recital of the Kalpasutra.

Main Themes

Kalpasutra contains the detailed layout and methods of following the ten sets of codes of conduct. The ten classifications are :

1. Aachelakya (relating to dress), 2. Auddeshikakalpa (relating to intent of possession), 3. Shayyatarpindkalpa (relating to the host), 4. Rajpind (relating to the offerings by a king or state), 5. Kritikrama (relating to group ettiquette), 6. Vratkalpa (relating to the vows), 7. Jyeshthakalpa (relating to the group hierarchy), 8. Pratikramankalpa (relating to self-evaluation), 9. Maskalpa (relating to the general period of stay) and 10. Paryushanakalpa (relating to the monsoon-stay).

These ten groups of codes are meant for the ascetics who are Sthavirakalpi (those who stay in a group or at shelters provided by the laity).

Two Broad Categories of Kalpa

In the scriptures there is a mention of two main categories of the Kalpa—Jinakalpa and Sthavirakalpa. The qualifications of a Jinakalpi Shraman, as mentioned in the scriptures, are that his physical constitution should confirm to the Vajra-rishabha-naracha-samhanan (a class of physical constitution of the human body) and he should have the knowledge of at least the third Acharvastu of the ninth Sublime Canon (Purva) and at the most of a little less than ten Purvas. A Jinakalpi Shraman is never a part of the Shraman organisation. He graduates from the Sthavirakalpi class to the Jinakalpi one,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

and follows some special and higher levels of codes. He remains nude and practises a variety of resolutions (Abhigraha). There are two categories of Jinakalpis—Panipatra (those who do not carry alms-pots) and Patradhari (those who carry alms-pots).

The Sthavirakalpis conduct their spiritual practices within the Shraman organisation or attached to it. For the Sthavirakalpi ascetics confirmative and prohibitive rules relating to the ten Kalpas have been formulated.

There are two categories of this Sthavirakalpa also—canonical codes and organisational codes.

The codes of conduct that have been in practice since ancient times and were propagated by Tirthankars or their chief disciples are known as canonical codes. The second category, the organisational codes, is prepared by the Acharyas for the proper functioning of the organisation and taking in consideration the prevailing circumstances (material, geographical, temporal and intellectual parameters). This is also known as 'Sangh Samachari'. In Kalpasutra there is a mention of ten types of canonical codes.

The Ten Kalpas

1. Aachelakya—The term 'Chela' means apparel. The prefix 'A' indicates negation as well as reduction. As such, the word Achela, Achelak or Aachelakya in this context does not indicate total absence of dress. It conveys the meaning of less-dress, or 'to have less, limited, low cost and simple cloths'.

In the book 'Kalpasamarthan' by ancient seers it is mentioned that the code followed by the first and the last Tirthankars was 'Achelaka'. Which means that they used to have low cost and white dress as per the rule. The code followed by the remaining twenty two Tirthankars was 'Achelaka' and 'Sachelaka' both. Which means that they could also use rich, colourful and larger number of dresses.

2. Auddeshikakalpa—The preparing of food or any other thing needed by a Shraman, specifically for him is known as Auddeshika. For the ascetics belonging to the organisations of the first and last Tirthankars it is not allowed to accept such food. However, in case of the ascetics of the organisations of the other twenty two Tirthankars, the negation was meant only for the particular monks for whom the things were prepared; all the remaining monks could accept the preparations.

3. Shayyatarpindkalpa—Shayyatar or Shayyadhar means the provider of the place of stay or the host. The rule is that the ascetic is not allowed to accept any Pind (food, water, dress, medicine, pots etc.) from the person who provides the place of stay. This rule is applicable to ascetics of the organisations of all the Tirthankars.

According to Nishith Bhashya, the owner of the house or any of his representatives is Shayyatar. The ascetics are not allowed to accept any Pind from any Shayyatar whose place they are using for night stay, sleeping or any other daily or essential chores.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

4. Rajpind—The food belonging to a properly coronated king is known as Rajpind and it should not be accepted by an ascetic. There are various reasons for this rule. According to Nishith Bhashya, Churni etc. the reason is that, as there are chances that while entering a royal palace for obtaining something, an ascetic might be ill treated considering him to be a spy or a bad omen. As such, taking alms from king is prohibited. Besides this, there is every chance that such food might be heavy, intoxicating, rich in taste, habit forming, and mixed with non-vegetarian food, making it un-acceptable for an ascetic. This prohibition is meant for the periods of the first and last Tirthankar only.

5. Kritikrama (Kritikarma)—This means the salutation, serving, respect and accepting orders and teachings with due respect, of the senior ascetics by the junior ascetics. The seniority essentially means the seniority in terms of period of initiation and/or level of virtues of conduct. This rule is applicable to the ascetics belonging to the organisations of all the twenty four Tirthankars.

6. Vratkalpa—Vrat means to desist from indulging in vices and to continue to indulge in virtues. With this goal in mind the procedure of observing the five great vows has been laid down for the ascetics following the first and the last Tirthankars. These are non-indulgence in vices like 1. Pranatipat or causing unpleasentness to a living being, 2. Mrishavad or following untruth, 3. Adattadan or accepting what is not given, 4. Maithun or indulging in lustful activities and 5. Parigrah or fondness for possessions. Five great vows including Ahimsa promote the pursuit of this goal. In case of the Tirthankars in between Maithun and Parigrah (fourth and fifth vows) were fused into one and the code was known as Chaturyam or four dimensional.

The reason for this was that the followers of the first Tirthankar were Riju-Jada or simple minded (having no or little rational thinking) and the followers of the last Tirthankar were Vajra-Jada or complex minded (having excessive rational thinking leading to confusion). Both these types have problems in understanding and grasping a thing. As such the code of five vows was formulated for them. The people of the middle period or the followers of the remaining twenty two Tirthankars were Riju-Prajna or balanced minded. For them it was easy to understand and follow a thing. As such, the code of four vows was formulated for them.

7. Jyeshthakalpa—This has three interpretations :

(1) During the period of the twenty two middle Tirthankars the ascetics followed only the Samayik-Charitra (equanimous conduct). However, in case of the first and the last Tirthankar the ascetics additionally follow the Chhedopasthapanik Charitra (the conduct of great vows). On the basis of the commencement of this conduct or time of initiation, the seniority in the monk organisation is established. The rule is that an ascetic initiated early is senior to the ascetic initiated later irrespective of his being senior or junior according to the outside norms. For example a son initiated earlier will be senior to the father initiated later and not the other way round. However, in cases where they are initiated at the same time the mundane seniority is followed even as ascetics. These days the Samayik Charitra

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

is popularly known as Chhoti Diksha (minor initiation) and the Chhedopasthapanik Charitra as the Badi Diksha (major initiation).

(2) According to the second interpretation their is a provision that if a socially junior person is initiated into the Samayik Charitra and his senior also decides to get initiated later, the initiation of the junior into the Chhedopasthapanik Charitra may be delayed by a maximum period of six months and the senior is initiated earlier into this major initiation, so that the social seniority may continue in the ascetic life as well.

(3) According to the third interpretation the seniority is based on the level of spiritual virtues or the spiritual achievements. According to this rule the meaning of Purush-Jyeshtha (literally-male seniority) is that a person or soul at the higher spiritual level is senior to the person at a lower spiritual level irrespective of other considerations. This meaning of the term Purush finds support in scriptures also, because there also, the term Purush has been used for soul (Acharanga etc.). In the Sankhya philosophy, Purush word has been used everywhere for soul.

8. Pratikramankalpa—Pratikraman (self-analysis) is an important practice on the path of purification of soul. Jnana-Darshan-Charitra (knowledge-perception-conduct) is the true abode or firmament of the soul. Drifting into the alien firmament of attachment, aversion, passions like anger, fondness, illusion etc. is known as Atikraman (transgression). To bring it back from the alien firmament to its natural one is known as ingression or Pratikraman. There are five alien firmaments for the soul—1. illusion, 2. indulgence (in the mundane), 3. inaction, 4. passions and 5. misconception. The process of bringing back the soul into its natural firmament by removing the vices with the help of self-analysis, criticism and reproach and establishing it into sincere indulgence in right vows, spiritual activities, benevolence, humility and right path is known as Pratikraman. The basic purpose of Pratikraman is to divert the soul away from sinful activities. There are six essentials for a spiritual practicer—1. Samayik, 2. Chaturvimshati-Stav, 3. Vandana, 4. Pratikraman, 5. Kayotsarga and 6. Pratyakhyan. Although Pratikraman is fourth, it has become so popular that it now envelopes all the six essentials within.

There are mainly five types of Pratikramans—1. Daivasik (day time), 2. Ratrik (night time), 3. Pakshik (fortnightly), 4. Chaturmasik (four monthly) and 5. Samvatsarik (yearly). Generally for monks, the rule is to do Pratikraman after almost every activity including going for alms, studying and moving out for any other work. This is besides the morning and evening Pratikramans. For the ascetics of the organisations of the first and the last Tirthankars it was mandatory to do Pratikraman regularly as per the rules. But the ascetics of the organisations of the other Tirthankars were to do Pratikraman only if and when they did something wrong.

9. Maskalp—The general rule for Jain ascetics is that except the monsoon period (four months of monsoon) they should wander from one place to another unless they are forced to stay due to sickness. The maximum period of their stay at a place should not exceed one month. The maximum span of the monsoon-stay is four months.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

As the Maskalp is applicable to the periods relating to the first and last Tirthankars, the period of stay for the ascetics belonging to the organisations of Bhagavan Rishabhdev and Bhagavan Mahavir have fixed limits whereas that for the ascetics belonging to the organisations of remaining twenty two Tirthankars has no fixed limits.

10. Paryushanakalpa—The inferred meaning of the word Paryushan is to live near one's soul in all respects. Another meaning is to dissociate from others and indulge in self in terms of thought, attitude and feeling. The festival of such indulgence in the self is observed on the 49th or 50th day after the full moon day of the month of Ashadh. It falls on the 4th or 5th day of the bright half of the month of Bhadrapad and is popularly known as Samvatsari-Parva. This is one meaning of the term Paryushanakalp. The other meaning is to stay at one place. This is of two types—one is for a specific purpose and the other is without any purpose. The modern interpretation of this term is the code of monsoon-stay. It envelopes the do's and don'ts during the monsoon-stay. These days this is observed for eight days during the monsoon season.

Varshavaskalpa—Regular and Irregular

This code is also meant for the ascetics of the organisations of the first and twenty fourth Tirthankars and not for those of other Tirthankars. They could stay or move according to their convenience.

Variable and Permanent Kalpa in Ten Kalpas

Out of these ten kalpas six are variable and change according to the needs of time—1. Aachelakya, 2. Auddeshikakalpa, 3. Pratikramankalpa, 4. Rajpind, 5. Maskalpa and 6. Paryushanakalpa. The remaining four are permanent and are applicable to the times of all the twenty four Tirthankars—1. Shayyatarpindkalpa, 2. Vratkalpa, 3. Jyeshthakalpa and 4. Kritikrama.

Modern Edition of Kalpasutra

Numerous commentaries and explanatory works on Kalpasutra (Niryukti, Tika, Churni, Avachuri, Bhashya, Vyakhya etc.) have been written by a number of Acharyas, Ascetics and Scholars. The oldest available work of this category is Kalpasutra-Niryukti by Bhadrabahu-II (6th century A.D.). Looking at its usefulness for the masses, more than a hundred explanatory books were prepared later in Prakrit, Sanskrit and other languages. A number of translations have become popular in Gujarati, one in Bengali, and two in English (one by Herman Jacobi and the other by Mukund Lath).

In the Sthanakvasi tradition the translation by Upadhyay Shri Pyar Chand ji M. has been very popular. The present head of the Shraman Sangh, Acharya Shri Devendra Muni ji Shastri has also brought out a scholarly commentary by putting in a lot of effort. Pt. Muni Shri Nemi Chandra ji has written a beautiful illustration on Kalpasutra under the direction of Acharya Shri Anand Rishi ji M. Every edition has its own value.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

This Edition

The edition in hand has its own uniqueness. The biographies of twenty four Tirthankars have been included alongwith colourful representative illustrations. A complex subject not only becomes easy to comprehend but also turns interesting and magnetic by inclusion of illustrations. Keeping this in view I launched the project of publishing illustrated canonical literature. As part of this project illustrated Uttaradhyayan Sutra and illustrated Antkriddasha Sutra have already been published. This edition of Kalpasutra, containing illustrations, Hindi and English translations alongwith the text, is third in line. I am confident that this illustrated edition of Kalpasutra will be received well and liked by common readers as well as scholars. Informative and useful appendices have also been appended for the benefit of readers.

I remember with reverence Acharya Samrat Shri Atmaram ji M., the first head of the Shraman Sangh and a profound scholar and commentator of Jain Agams (canons). As this is the Diksha centenary year of the great Acharya, the publication of this important canonical work on this occasion is a matter of great honour and pleasure for me.

The Golden Jubilee year of the Diksha of my revered guru U. B. Pravartak Bhandari Shri Padam Chandra ji M., who happens to be the grand-disciple of Acharya Shri Atmaram ji M., is also being celebrated this year. All my achievements in the field of knowledge and others are the result of the blessings of these revered gurus. As such, I humbly offer my regards and devotion at their feet.

I shall always remember the sincere efforts of the famous scholar and associate Shri Srichand ji Surana 'Saras', put into this publication. For the English translation and editing Shri Surendra Kumar ji Bothara, Jaipur, has put in a lot of efforts, I am sure he will continue his association in future.

Up-Pravartini Dr. Mahasati Sarita ji, a disciple of late Mahasati Shri Shashi Kanta ji M., has extended commendable assistance in the field of publication and popularizing of scriptures. Many devoted and benevolent Shravaks have sincerely contributed to this project revealing their sincere regards for spiritual literature, they all deserve my sincere thanks.

I conclude with the wish that may the study of this work enhance the feeling of reverence and faith in God, Guru and Dharma and infuse the desire to tred the path of spiritual upliftment in all.

—*Amar Muni*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र-परिचय

चित्र संख्या		संकेत सूची	Symbol Index
M	=	भगवान महावीर	Bhagavan Mahavir
P	=	भगवान पार्श्वनाथ	Bhagavan Parshvanath
AN	=	भगवान अरिष्टनेमि	Bhagavan Arishtanemi
ML	=	भगवान मल्लिनाथ	Bhagavan Mallinath
A	=	भगवान अरनाथ	Bhagavan Arnath
K	=	भगवान कुन्थुनाथ	Bhagavan Kunthunath
S	=	भगवान शान्तिनाथ	Bhagavan Shantinath
G	=	विविध	General
R	=	भगवान ऋषभदेव	Bhagavan Rishabhdev

चित्र १ से ४ चौबीस तीर्थंकरों के चित्र
Illustration of Twenty Four Tirthankars

चित्र ६ तीर्थंकरों के पंच-कल्याणक
Five auspicious events in a Tirthankar's life

चित्र ७ तीर्थंकरों की समवसरण-रचना : एक दृश्य
A birds evyview of the divine assembly (Samvasarana) of Tirthankars

M 1 मरीचि भव का प्रसंग
The story of Marichi

M 2 त्रिपृष्ठ वासुदेव भव का चरित्र
The story of Triprishtha Vasudev

M 3 त्रिपृष्ठ वासुदेव भव का चरित्र
The story of Triprishtha Vasudev

M 4 (१) प्रियमित्र चक्रवर्ती का भव (1) Priyamitra Chakravarti
(२) नन्दनमुनि का त्याग और साधना (2) The detachment and spiritual practice of Nandan Muni

M 5 निद्रामग्न त्रिशला रानी द्वारा चौदह स्वप्न दर्शन
Sleeping queen Trishla and her fourteen dreams

M 6 सिद्धार्थ राजा की सभा में स्वप्न-पाठकों द्वारा स्वप्न-फल कथन
Dream diviners explaining meaning of the dreams in the assembly of king Siddhartha

M 7 चतुर्मुखी वृद्धि देखकर सिद्धार्थ राजा व त्रिशला रानी द्वारा नामकरण विमर्श
Alround development and contemplation of name by king Siddhartha and queen Trishla

M 8 प्रीतिभोज का आयोजन तथा नामकरण
The great feast and name announcement

M 9 देव द्वारा बालक वर्द्धमान के धैर्य व साहस की परीक्षा
Divine test of child Vardhaman's courage and presence of mind

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

M 10 पाठशाला में वर्द्धमान द्वारा ब्राह्मण वेशधारी इन्द्र के प्रश्नों का समाधान
In school Vardhaman replies to questions by Indra disguised as a Brahman scholar

M 11 वर्द्धमान महावीर का परिवार परिचय
Family of Vardhaman Mahavir

M 12 (१) नव लोकान्तिक देवों द्वारा दीक्षा संकल्प का अभिनन्दन
(1) Felicitation of the resolution of renunciation by nine gods

(२) वर्षीदान (2) The year long great charity

M 13 राजसी वस्त्राभूषण उतारकर केश लोच तथा सिद्धों को नमस्कार सहित कठोर दीक्षा संकल्प
Plucking of hair after shedding regal dress and ornaments, and the tough resolution after salutations of Siddhas

M 14 सोम शर्मा ब्राह्मण को वस्त्रदान
Presenting the only peice of cloth to Brahman Som Sharma

M 15 (१) ग्वाले द्वारा रस्सी से भगवान को उपसर्ग, इन्द्रदेव द्वारा बचाव
(1) Indra interfering in the infliction by the cowherd

(२) इन्द्र के सेवा प्रस्ताव का श्रमण महावीर द्वारा अस्वीकार.
(2) Shraman Mahavir rejecting Indra's offer to provide protection

M 16 शूलपाणि यक्ष द्वारा भयावने उपसर्ग
Fearsome afflictions by Shulpani

M 17 चंडकौशिक नाग का उपसर्ग
Affliction by serpant Chandakaushik

M 18 (१) अग्नि लपटों के बीच अकम्प श्रमण महावीर (1) Shraman Mahavir unmoved by flames

(२) कालहस्ती द्वारा उत्पीड़न (2) Torture by Kalahasti

M 19 श्रमण महावीर को आदिवासियों द्वारा विविध उपसर्ग
Ill treatment of Shraman Mahavir by rustic aborigines

M 20 शीतल तेजोलेश्या द्वारा गौशालक की रक्षा
Saving Gaushalak using his pacifying power.

M 21 (१) कटपूतना द्वारा उपसर्ग (1) The afflictions by Katputana

(२) साध्वी विजया व प्रगल्भा द्वारा श्रमण महावीर को कारागार से मुक्त कराना
(2) The release of Shraman Mahavir from the prison by mendicants Vijaya and Pragalbha

M 22 संगम देव द्वारा एक ही रात्रि में २० भीषण उपसर्ग
In human tortures by god Sangam

M 23 (१) चमरेन्द्र द्वारा भगवान महावीर की शरण लेकर शक्रेन्द्र को चुनौती
(1) The story of Chamarendra challanging Shakrendra

(२) अन्त में महावीर की चरण-शरण (2) Later taking refuge near Mahavir to save himself

M 24 भगवान महावीर का कठोर अभिग्रह और चन्दना द्वारा भगवान महावीर का पारणा
The impossible resolution of Bhagavan Mahavir; and Chandana giving alms to Bhagavan Mahavir for breaking his fast

M 25 अंतिम उपसर्ग : कानों में कीलें तथा उनका उपचार
The last affliction : Nails in the ears and the treatment

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

M 26 केवलज्ञान से पूर्व दस महास्वप्न
Ten great dreams before omniscience

M 27 (१) ऋजुबालुका नदी के तट पर भगवान महावीर को कैवल्य प्राप्ति
(1) Bhagavan Mahavir attains omniscience on the bank of the river Rijubaluka

(२) भगवान महावीर की देवों की उपस्थिति में प्रथम देशना (2) The first discourse in presence of gods

M 28 इन्द्रभूति का आगमन और महावीर के चरणों में सर्वात्मना समर्पण
Indrabhuti's arrival and total submission before Mahavir

P 1 (१) क्षमा माँगते मरुभूति पर कमठ द्वारा पत्थर मारना (1) Kamath hitting bowing Marubhuti with stone

(२) कुर्कुट सर्प द्वारा यूथपति हस्ती के मस्तक पर दंश
(2) Kurkut serpant biting the king elephant on its head

P 2 पार्श्वकुमार द्वारा यवनराज विजय
Victory over Yavan by Parshva Kumar

P 3 कमठ के अग्नि-कुण्ड से सर्प युगल की रक्षा और उनका धरणेन्द्र-पद्मावती बनना
Saving the pair of serpants from the fire of Kamath and their reincarnation as Dharnendra-Padmavati

P 4 मेघमाली (कमठासुर) द्वारा उपसंर्ग और धरणेन्द्र-पद्मावती का प्रकट होना
The afflictions by Meghmali and appearance of Dharnendra-Padmavati

AN 1 तीर्थंकर नेमिनाथ का जन्म-कल्याणक (सूतिका कर्म) मनाते हुए ५६ दिशा कुमारियाँ
Assembly of 56 goddesses of directions performing birth-celebrations (Janma Kalyanaka) of Tirthankar Neminath after post birth cleaning.

AN 2 (१) श्रीकृष्ण की व्यायामशाला में नेमिकुमार की बल-परीक्षा
(1) Trial of strength between Shrikrishna and Nemikumar in his gymnasium

(२) जल-क्रीड़ा के समय श्रीकृष्ण की रानियों द्वारा नेमिकुमार को विवाह के लिए सहमत करना
(2) Shrikrishna's queens persuading Nemikumar for marraige while playing water games

AN 3 नेमिकुमार की बारात, वध के निमित्त बंद निरीह पशुओं की मुक्ति तथा वैराग्य लेने का निर्णय
The marriage procession of Nemikumar, liberation of mute animals meant to be butchered, and decision to become ascetic

AN 4 (१) नेमिकुमार के वैराग्य की सूचना से दुःखित राजीमती का मूर्च्छित होना
(1) Rajimati becomes unconscious hearing the shocking news of Nemikumar's renunciation

(२) नेमिकुमार का केश लोच कर अणगार बनना (2) Plucking his hair Nemikumar turns ascetic

ML 1 (१) चोक्षा परिव्राजिका का मल्लिकुमारी के सामने उपदेश
(1) Mendicant Choksha preaching before Malli Kumari

(२) क्रुद्ध चोक्षा का राजा जितशत्रु के समक्ष मल्लिकुमारी का सौन्दर्य वर्णन
(2) Annoyed Choksha describing the beauty of Malli Kumari before king Jitshatru

(३) छह राजाओं द्वारा मल्लिकुमारी की मूर्ति को निहारना
(3) The six kings admiring the statue of Malli Kumari

A 1 तीर्थंकर अरनाथ का अवतरण, चक्रवर्तित्व, घातिकर्म क्षय कर कैवल्य तथा निर्वाण प्राप्ति
The states of descent, sovereignty, omniscience after destroying Ghatikarmas, and liberation of Tirthankar Aranath

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

K1 अर्हत् कुन्थुनाथ का भोगमय जीवन, चक्रवर्तित्व, कायोत्सर्ग, तपश्चरण तथा निर्हरण क्रिया
The states of earlier birth, sovereignty, meditation, and passing away of Arhat Kunthunath

S1 (१) राजा मेघरथ का देहदान (1) Charity of his own flesh by king Meghrath
(२) ध्यानयोग मग्न राजा मेघरथ (2) Meghrath in deep meditation
(३) चक्र के पीछे शांतिनाथ की दिग्विजय यात्रा (3) Shantinath's war march following the Chakra
(४) वन में ध्यानलीन अर्हत् शान्तिनाथ (4) Arhat Shantinath meditating in Jungle

G1 (१) महारानी मंगलावती का न्याय (1) The justice of queen Mangalavati
(२) महारानी सुसीमा का पद्म शय्या पर सोने का दोहद (2) Queen Susima's desire to sleep on lotus bed
(३) महाराज दृढ़रथ के शरीर के ताप को महारानी के स्पर्श से शान्ति
(3) The relief to king Dridharath by touch of his queen.

G2 (१) राजा जितशत्रु दूसरों के समक्ष स्वयं को अजेय समझने लगे
(1) King Jitshatru believing himself to be unconquerable
(२) अजितनाथ की ध्यान साधना (2) Ajitnath in meditation
(३) राजा जितारि एवं सेनादेवी द्वारा नगरावलोकन
(3) King Jitari and Senadevi enjoying the view of the city
(४) अयोध्या के प्रजाजन परस्पर अभिवादन करने लगे (4) Citizens of Ayodhya greeting one another

R1 (१) माता मरुदेवी का स्वप्न दर्शन (1) Dreams of mother Marudevi
(२) इन्द्र द्वारा जन्म महोत्सव (2) Indra celebrating the birth
(३) इन्द्र के हाथ से इक्षु लेने के लिए बालक ऋषभ की उत्सुकता
(3) Child Rishabh's eagerness to take sugar-cane held in Indra's hand
(४) सुनन्दा एवं सुमंगला के साथ पाणिग्रहण (4) Marriage with Sunanda and Sumangala
(५) प्रजा को कृषि कार्य का प्रशिक्षण (5) Teaching arts and crafts including farming to the public

R2 प्रजाजनों द्वारा कमल पत्रों में जल भरकर ऋषभ का राज्याभिषेक। पीछे खड़े आशीर्वाद देते हैं—नाभिराजा एवं माता मरुदेवी
Citizens annointing Rishabh pouring water from lotus leaves. Standing behind and blessing the first king are Nabhiraja and mother Marudevi

R3 वस्त्राभूषण उतारकर ऋषभदेव का केश लुंचन। साथ में अनेक राजाओं द्वारा दीक्षा ग्रहण
Rishabhdev pulling out his hair after shedding his dress and ornaments. Numerous kings following his path of renunciation.

R4 (१) श्रेयांसकुमार द्वारा मेरु पर्वत को अमृत से धोने का स्वप्न
(1) Shreyans Kumar dreaming of pouring nectar to clean mount Meru.
(२) भगवान ऋषभदेव को इक्षुरस का दान
(2) Giving sugar-cane juice to Rishabhdev as alms

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय-सूची

पंच-परमेष्ठी नमस्कार १

तीर्थंकर चरितावली २-२०२

भगवान महावीर २
पंच कल्याणक २
च्यवन कल्याणक ३
नयसार : प्रथम बोधिलाभ ५
तृतीय भव : मरीचि ५
अहं का विष : त्रिपृष्ट वासुदेव ६
सही दिशा : प्रियमित्र चक्रवर्ती ७
उग्र साधना : नन्दन मुनि ८
देवानन्दा के गर्भ में अवतरण : स्वप्न दर्शन १३
ऋषभदत्त द्वारा स्वप्न-फल कथन १५
शक्रेन्द्र का स्वरूप वर्णन १८
भगवान का स्तुति पाठ २२
शक्रेन्द्र का स्वगत चिन्तन २४
हरिणैगमेषी देव को आदेश २६
गर्भ-परावर्तन २९
त्रिशला के स्वप्न ३५

स्वप्न दर्शन ३७
१. गज दर्शन ३७
२. वृषभ दर्शन ३८
३. सिंह दर्शन ३८
४. लक्ष्मी दर्शन ४०
५. माला दर्शन ४२
६. चन्द्र दर्शन ४३
७. सूर्य दर्शन ४४
८. ध्वजा दर्शन ४५
९. कलश दर्शन ४६
१०. पद्म-सरोवर ४६
११. क्षीर सागर ४७
१२. देव-विमान दर्शन ४८
१३. रत्नराशि ५०
१४. निर्धूम अग्निशिखा ५०

सिद्धार्थ राजा द्वारा स्वप्न-फलों की विवेचना ५३
सभा-मण्डप की सज्जा ५६
सिद्धार्थ राजा द्वारा व्यायामादि कार्य ५८
राजसभा में आगमन ६२
स्वप्न-फल ६५
चतुर्मुखी वृद्धि : नामकरण ७१
गर्भ में निस्पन्द ७३

CONTENTS

The Auspicious Salutations 1

Tirthankar Charitavali 2-202

Bhagavan Mahavir 3
The Five Auspicious Events 3
The Descent 8
Nayasar : First Glimpse of Right Knowledge 9
The Third Birth : Marichi 9
The Poison of Bloated Ego : Triprishta Vasudev 10
The Right Direction : Priyamitra Chakravarti 11
Austere Practices : Nandan Muni 12
Descent into Devananda's Womb : The Dreams 13
Interpretation of Dreams by Rishabhdatta 16
Description of Shakrendra 19
Panegyric of the Tirthankar 23
Deliberations of Shakrendra 25
Instructions to Harinaigameshi 27
The Transplantation 30
The Dreams of Trishala 37

Description of the Dreams 37
1. The Elephant 37
2. The Bull 38
3. The Lion 39
4. Goddess Laxmi 41
5. The Garland 43
6. The Moon 44
7. The Sun 45
8. The Flag 45
9. The Urn 46
10. The Lotus-pond 47
11. The Milky Sea 48
12. The Space-ship of Gods 49
13. The Heap of Gems 50
14. The Smokeless Fire 50

The Interpretation by King Siddhartha 54
Decoration of the Assembly Pavilion 57
The Morning Workout 59
In the Assembly 62
Interpreting the Dreams 66
Increasing Abundance : The Basis of His Name 71
The Stillness in the Womb 73

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक अभिग्रह	७५	A Resolution	75
जन्म कल्याणक व वसुधारा वृष्टि	७६	The Birth and the Divine Rain	77
जन्माभिषेक तथा जन्मोत्सव	७८	The Annointment and Birth Festival	78
प्रीतिभोज व नामकरण	८३	Great Feast and Naming	84
परिवार परिचय	८८	The Family	88
दीक्षा कल्याणक	९१	The Great Renunciation	92
अन्तिम दान	९६	The Last Charity	96
साधना काल	९८	The Period of Spiritual Practices	98
भगवान महावीर के लिए २१ उपमाएँ	११९	21 Metaphors for Mahavir's Virtues	120
केवलज्ञानोत्पत्ति	१२२	Attaining Omniscience	123
धर्मतीर्थ-स्थापना	१२४	Establishing the Ford	125
परिनिर्वाण	१२९	The Liberation	129
दीपोत्सव	१३०	The Festival of Lights	131
दुष्टग्रह की छाया	१३२	Shadow of the Evil	132
भगवान महावीर की शिष्य-संपदा	१३३	The Mass of Bhagavan Mahavir's Disciples	135
आयु तथा समय	१३७	Age and Era	138
पुरुषादानीय अर्हत् पार्श्वनाथ	१४०	**Purushadaniya Arhat Parshvanath**	**140**
दीक्षा ग्रहण	१४९	Renunciation	150
अर्हत् पार्श्व की शिष्य-संपदा	१५२	Disciples of Arhat Parshva	152
अर्हत् पार्श्व का निर्वाण	१५४	Nirvana of Arhat Parshva	155
अर्हत् अरिष्टनेमि	१५६	**Arhat Arishtanemi**	**156**
अर्हत् अरिष्टनेमि की शिष्य-संपदा	१६१	Disciples of Arhat Arishtanemi	162
अन्य तीर्थंकर	१६५	**Other Tirthankars**	**165**
अर्हत् मल्लिनाथ का संक्षिप्त जीवन-चरित्र	१६६	Brief Story of the Life of Arhat Mallinath	167
अर्हत् अरनाथ का संक्षिप्त जीवन चरित्र	१६९	Brief Story of the Life of Arhat Arnath	170
अर्हत् कुन्थुनाथ का संक्षिप्त जीवन चरित्र	१७१	Brief Story of the Life of Arhat Kunthunath	172
अर्हत् शान्तिनाथ का संक्षिप्त जीवन चरित्र	१७३	Brief Story of the Life of Arhat Shantinath	174
अर्हत् शीतलनाथ का संक्षिप्त जीवन चरित्र	१७७	Brief Story of the Life of Arhat Sheetalnath	178
अर्हत् पद्मप्रभ का संक्षिप्त जीवन चरित्र	१७९	Brief Story of the Life of Arhat Padmaprabh	180
अर्हत् सुमतिनाथ का संक्षिप्त जीवन चरित्र	१८१	Brief Story of the Life of Arhat Sumatinath	182
अर्हत् अभिनन्दन का संक्षिप्त जीवन चरित्र	१८३	Brief Story of the Life of Arhat Abhinandan	183
अर्हत् संभवनाथ का संक्षिप्त जीवन चरित्र	१८४	Brief Story of the Life of Arhat Sambhavanath	184
अर्हत् अजितनाथ का संक्षिप्त जीवन चरित्र	१८५	Brief Story of the Life of Arhat Ajitnath	186
कौशलिक अर्हत् ऋषभदेव	१८७	**Kaushalik Arhat Rishabhdev**	**187**
आदि राजा	१९१	The First King	192
शिष्य-संपदा	१९९	The Mass of Disciples	200
स्थविरावली	**२०३-२३४**	**List of the Group Leaders**	**203-234**
गणधर परिवार	२०५	The Lineage of Chief Disciples	205
आचार्य परम्परा	२०७	The Lineage of Acharyas	208
सुधर्मा स्वामी	२०८	Sudharma Swami	208
जम्बू स्वामी	२०९	Jambu Swami	209
आर्य प्रभव स्वामी	२०९	Arya Prabhav Swami	209
आर्य शय्यम्भव स्वामी	२१०	Arya Shayyambhav Swami	210

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आर्य यशोभद्र	२१०	Arya Yashobhadra	211
आर्य सम्भूति विजय	२१३	Arya Sambhuti Vijaya	213
आचार्य भद्रबाहु	२१३	Acharya Bhadrabahu	213
आचार्य स्थूलभद्र	२१४	Acharya Sthulabhadra	214
आर्य महागिरि	२१८	Arya Mahagiri	218
आर्य सुहस्ती	२१८	Arya Suhasti	218
आचार्य बलिस्सह	२१८	Acharya Balissaha	218
आचार्य गुणसुन्दर	२१८	Acharya Gunasunder	218
आचार्य सुस्थित	२१८	Acharya Susthit	219
आचार्य इन्द्रदिन्न	२२४	Acharya Indradinna	224
आर्य शमित	२२५	Arya Shamit	226
आर्य वज्रस्वामी	२२५	Arya Vajraswami	226
आर्य वज्रसेन	२२६	Arya Vajrasen	227
आर्य रक्षित	२२६	Arya Rakshit	227
अर्वाचीन प्रतियों में अधिक पाठ	२२७	Additional Text in Later Editions	229
स्थविरों की गाथाबद्ध स्तुति	२३१	Panegyric in Honour of the Leaders of the Order	230
देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण	२३४	Devarddhigani Kshamashraman	233
पर्युषणाकल्प	**२३५-२७०**	**The Code of Conduct for an Ascetic**	**235-270**
वर्षावास का समय	२३७	The Period of Monsoon-stay	237
वर्षावास की क्षेत्र मर्यादा	२४०	Area Limits during Monsoon-stay	240
आहार-मर्यादा	२४१	Food Discipline	241
गोचरी संख्या	२४४	Frequency of Alms Collection	242
जल-विशुद्धि मर्यादा	२४६	Purity of Water	246
आहार-प्रमाण	२४८	Quantity of Food	248
गमनागमन	२४९	Movement	249
आश्रय-मर्यादा	२५१	Rules for Taking Shelter	252
आठ सूक्ष्म	२५५	Eight Micro-things	256
आज्ञा–अनुमति	२६०	Seeking Permission	261
अन्य नियम	२६४	Other Rules	265
उपशमनकल्प	२६६	Self-discipline	266
उपसंहार	२६९	Conclusion	269
परिशिष्ट	**२७१-२९६**	**Appendix**	**271-296**
१. तीर्थंकरों के पंच कल्याणक	२७३	1. The Five Auspicious Events in the Life of the Tirthankar	273
२. तीर्थंकर परिचय	२७४	2. Details about Tirthankars	274
३. श्रमण भगवान महावीर के ग्यारह गणधर	२८२	3. Eleven Chief Disciples of Shraman Bhagavan Mahavir	282
४. काल-क्रम	२८२	4. The Cycle of Time	282
५. त्रिषष्टिशलाका पुरुष	२८५	5. Sixty Three Great Men	285
६. श्रमण भगवान महावीर के साधना काल के विहार स्थानों की तालिका	२८८	6. The list of places visited by Shraman Bhagavan Mahavir during the period of Spiritual Practices	288
पारिभाषिक शब्दावली	२९२	**A Select Glossary**	**296**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

1. BHAGAVAN RISHABHDEV

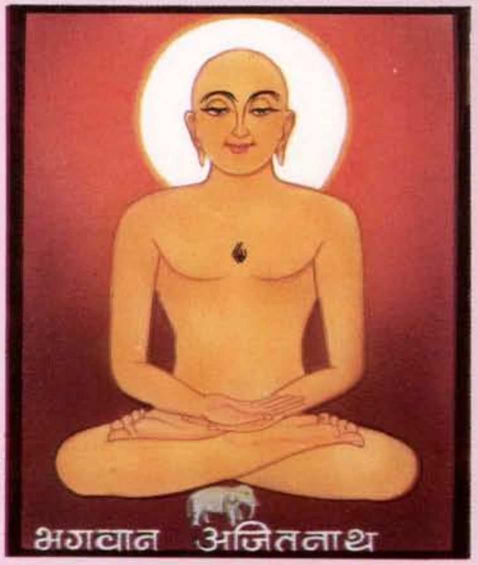

2. BHAGAVAN AJITNATH

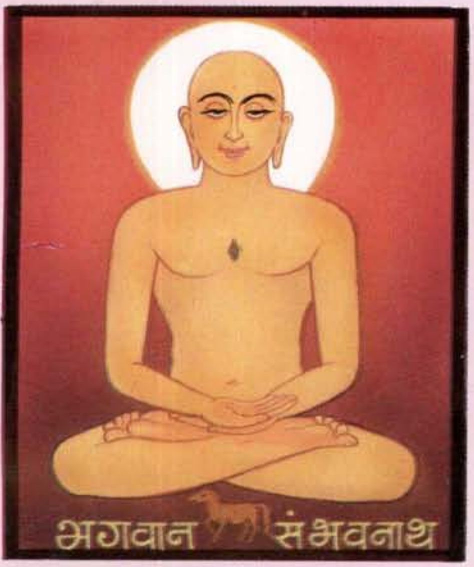

3. BHAGAVAN SAMBHAVNATH

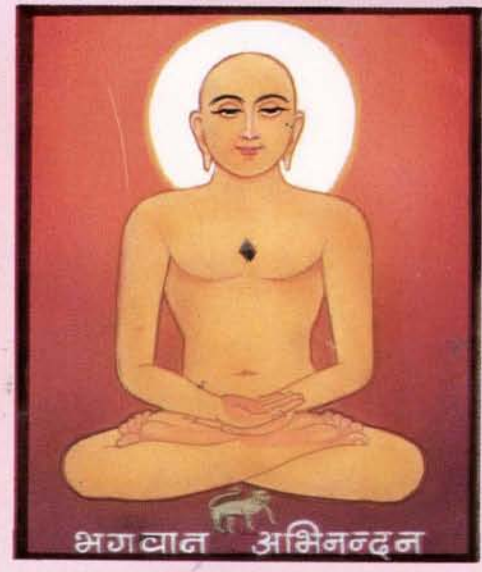

4. BHAGAVAN ABHINANDAN

5. BHAGAVAN SUMATINATH

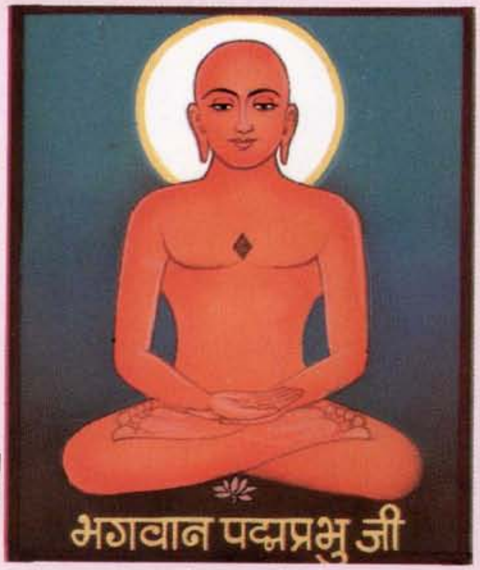

6. BHAGAVAN PADMAPRABH

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

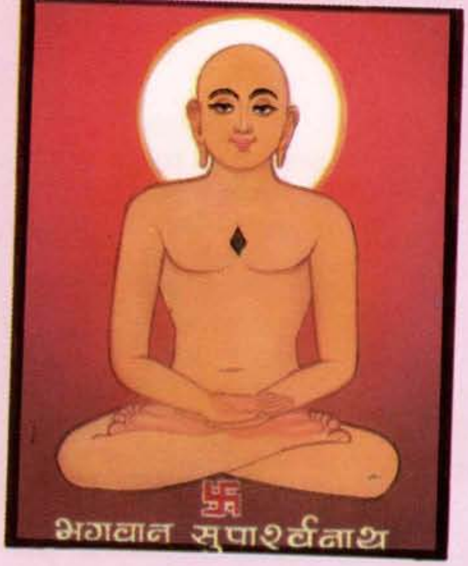

7. BHAGAVAN SUPARSHVANATH

8. BHAGAVAN CHANDRAPRABH

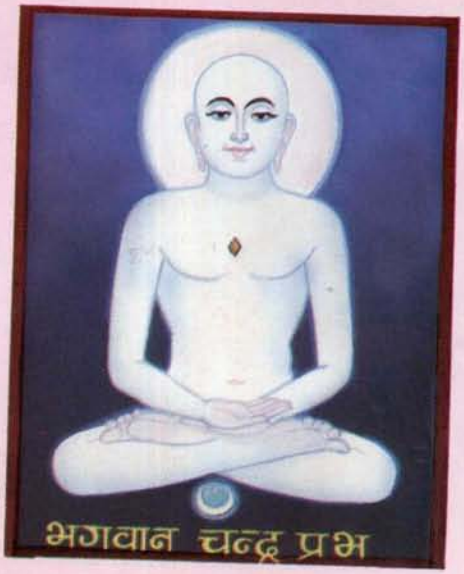

9. BHAGAVAN SUVIDHINATH

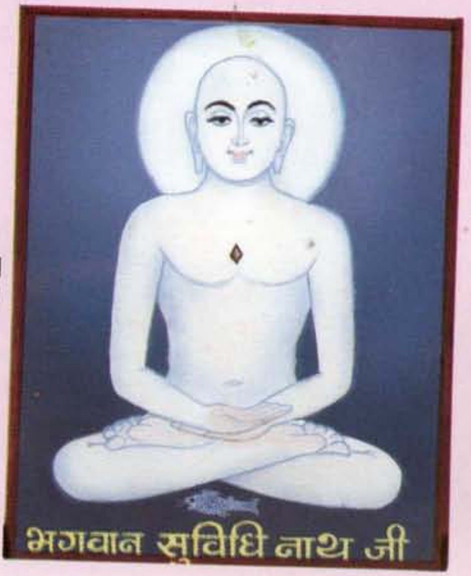

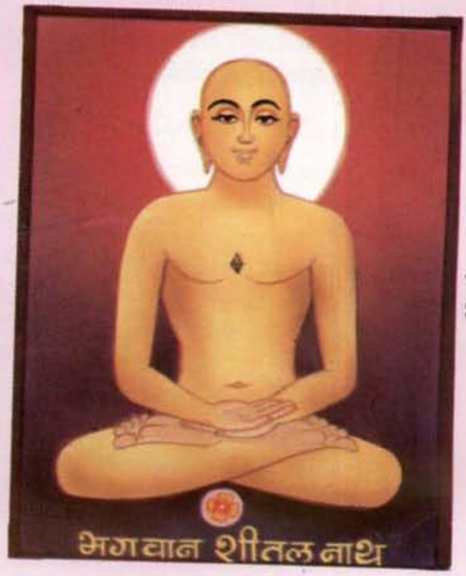

10. BHAGAVAN SHITALNATH

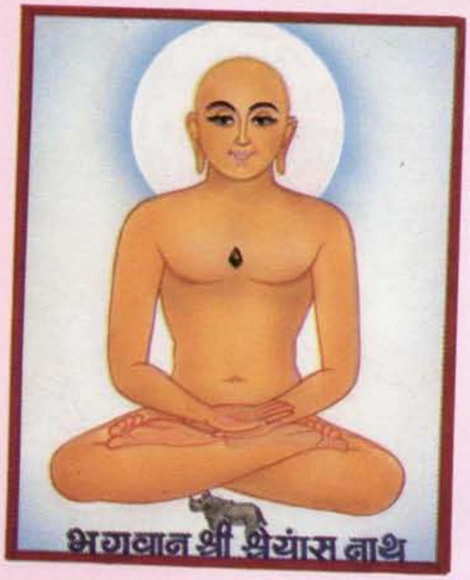

11. BHAGAVAN SHREYANSNATH

12. BHAGAVAN VASUPUJYA

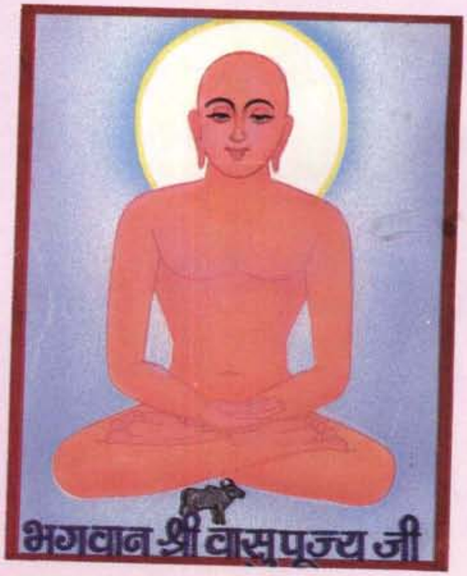

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

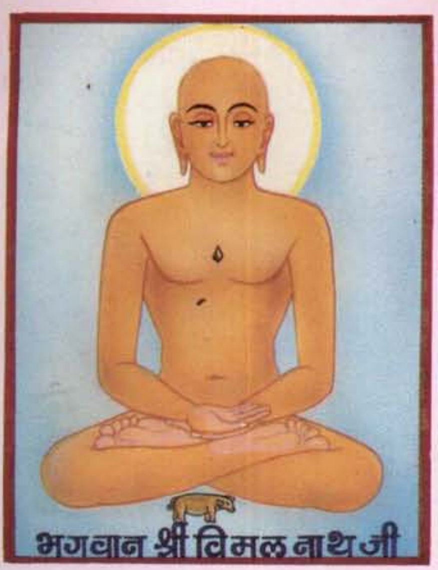

13. BHAGAVAN VIMALNATH

14. BHAGAVAN ANANTNATH

15. BHAGAVAN DHARMNATH

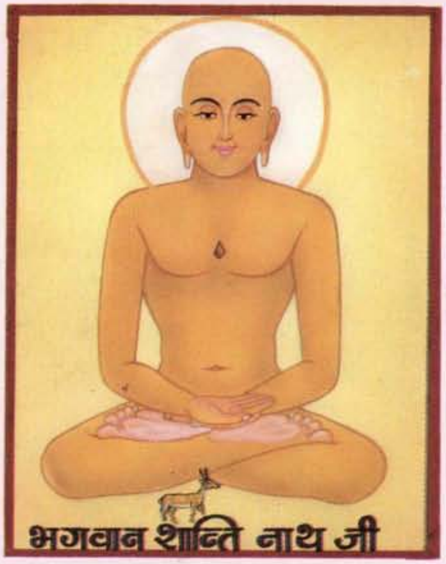

16. BHAGAVAN SHANTINATH

17. BHAGAVAN KUNTHUNATH

18. BHAGAVAN ARAHNATH

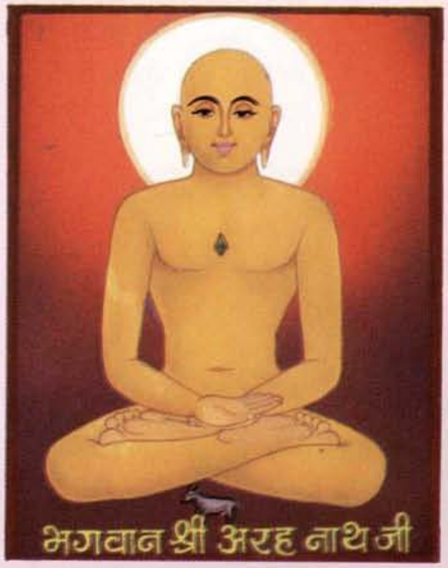

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

19. BHAGAVAN
MALLINATH

20. BHAGAVAN
MUNISUVRAT

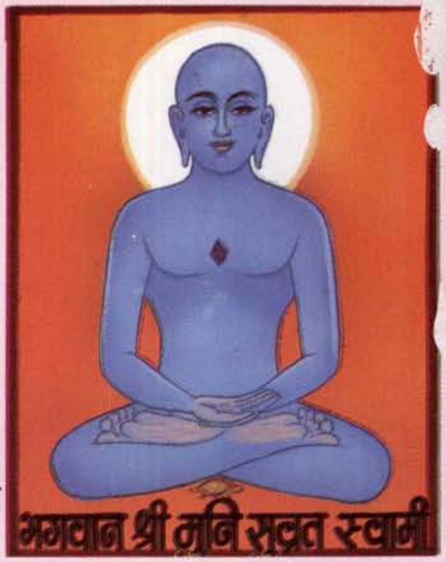

9.
SU

21. BHAGAVAN
NAMINATH

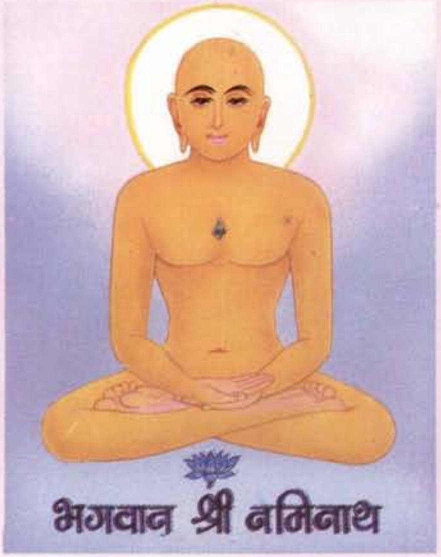

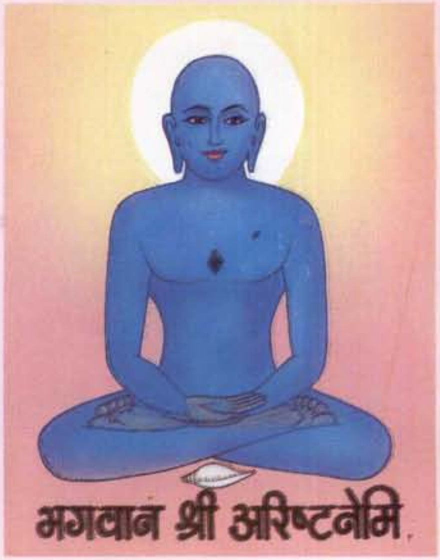

22. BHAGAVA
ARISHTANEM

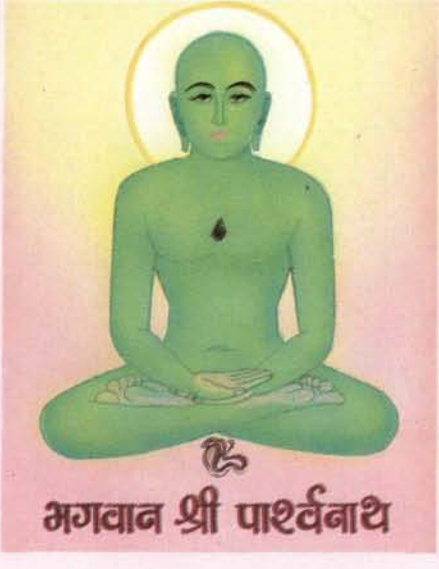

23. BHAGAVAN
PARSHVANATH

24. BHAGAVAN
MAHAVEER

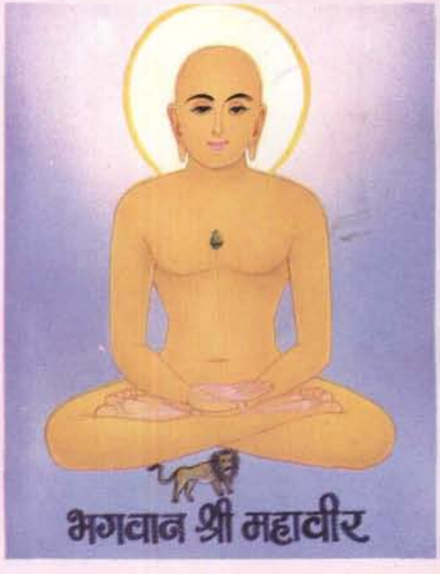

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंच-परमेष्ठी नमस्कार

णमो अरिहंताणं
णमो सिद्धाणं
णमो आयरियाणं
णमो उवज्झायाणं
णमो लोए सव्वसाहूणं
एसो पंच णमोक्कारो, सव्व-पावप्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं।

अरिहन्तों को नमस्कार, सिद्धों को नमस्कार, आचार्यों को नमस्कार, उपाध्यायों को नमस्कार, लोक (विश्व) के सभी साधुओं को नमस्कार हो।

यह पंच परमेष्ठी नमस्कार समस्त पापों का नाश करने वाला और सर्व-मंगलों में प्रथम (श्रेष्ठ) मंगल है।

THE AUSPICIOUS SALUTATIONS

I bow before the worthy ones. I bow before the perfected and liberated souls. I bow before the heads of the Jain order. I bow before the teachers of the scriptures. I bow before all the ascetics in the world.

This five-fold salutation wipes away all sins. It is the most auspicious of all auspicious things.

Elaboration :

Here the term 'bow' (Namo) does not simply indicate the physical act; it also essentially includes the meanings of paying homage and conveying venerations.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भगवान महावीर

पंच कल्याणक

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे पंच हत्थुत्तरे होत्था; तं जहा–

१-हत्थुत्तराहिं चुए, चइत्ता गब्भं वक्कंते, २-हत्थुत्तराहिं गब्भाओ गब्भं साहरिए, ३-हत्थुत्तराहिं जाए, ४-हत्थुत्तराहिं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइए, ५-हत्थुत्तराहिं अणंते, अणुत्तरे, निव्वाघाए, निरावरणे, कसिणे, पडिपुण्णे, केवल वर-नाण-दंसणे समुप्पण्णे; साइणा परिनिव्वुए भयवं॥१॥

(१) उस काल के उस समयांश (भाग) में श्रमण भगवान महावीर के जीवन की पाँच मांगलिक घटनाएँ (पंच कल्याणक) हस्तोत्तरा अर्थात् उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र में घटीं। वे इस प्रकार हैं :

(क) भावी भगवान महावीर का जीव (आत्मा) देवलोक से च्यवन (प्रयाण) कर देवानन्दा ब्राह्मणी की कोख में अवतरित हुआ।

(ख) भावी भगवान के जीव को देवानन्दा माता के गर्भ से विस्थापित कर त्रिशला क्षत्रियाणी के गर्भ में स्थापित किया गया।

(ग) भगवान महावीर का जन्म हुआ।

(घ) भगवान ने गृहस्थ जीवन का त्याग कर, मुंडित हो अणगार धर्म की दीक्षा ली।

(च) भगवान महावीर ने अनन्त, सर्वश्रेष्ठ, निर्बाध, निरावरण, सम्पूर्ण एवं परिपूर्ण केवलज्ञान और केवल-दर्शन प्राप्त किए।

भगवान महावीर का परिनिर्वाण स्वाति नक्षत्र में हुआ।

विस्तार :

इस सूत्र में भगवान महावीर के जीवन की पाँच महत्वपूर्ण घटनाओं की सूचना है। ये घटनाएँ प्रत्येक तीर्थंकर के जीवन में महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। इनका सम्बन्ध लोक कल्याण के साथ होने से इन्हें 'कल्याणक' कहा जाता है। स्वर्ग से च्यव कर देवानन्दा के गर्भ से त्रिशला रानी के गर्भ में स्थापित होने तक की दोनों घटनाओं को 'च्यवन कल्याणक' के अन्तर्गत माना गया है। (देखो चित्र G-५)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र संख्या ६ तीर्थंकरों के पंच-कल्याणक।
Illustration 6 Five auspicious events in a Tirthankar's life.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

BHAGAVAN MAHAVIR

The Five Auspicious Events

(1) During that period in that age the five auspicious events in the life of Bhagavan Mahavir occurred when the moon was in the twelfth (Uttara-phalguni) lunar mansion. These events are :

(a) The soul that was to be Bhagavan Mahavir left the dimension of gods and descended into the womb of Devananda Brahmani.

(b) The embryo that would be born as Bhagavan Mahavir was transplanted from the womb of mother Devananda into the womb of Trishla Kshatriyani.

(c) Bhagavan Mahavir was born.

(d) Bhagavan renounced normal mundane life, pulled out his hair, and became a homeless ascetic.

(e) Bhagavan attained infinite, supreme, unhindered, unclouded, complete and perfect 'ultimate knowledge' or Kewal Jnana and 'ultimate perception' or Kewal Darshan.

All the above events occurred when the moon was in the Uttara-Phalguni lunar mansion. However, liberation alone among the Kalyanaks occurred when the moon was in the fifteenth (Swati) lunar mansion.

Elaboration :

This para lists the five important incidents from Bhagavan Mahavir's life. These incidents are considered important in the life of every Tirthankar. As these are linked with the upliftment of the masses they are given the name of 'auspicious events' (Kalyanak). The first two incidents, descending into the womb of Devananda and transplanting into the womb of Trishla, are jointly known as the auspicious event of descending. (Illustration G-5)

च्यवन कल्याणक

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणं भगवं महावीरे जे से गिम्हाणं चउत्थे मासे अट्ठमे पक्खे आसाढ सुद्धे, तस्स णं आसाढ सुद्धस्स छट्ठी पक्खेणं महाविजय-पुप्फुत्तर-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पवर-पुंडरीयाओ महाविमाणाओ वीसं सागरोवमट्ठियाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता;

इहेव जंबूद्दीवे दीवे भारहे वासे दाहिणद्ध-भरहे इमीसे ओसप्पिणीए सुसम-सुसमाए समाए विइक्कंताए, सुसमाए समाए विइक्कंताए, सुसम-दुसमाए समाए विइक्कंताए, दुसम-सुसमाए बहु-विइक्कंताए, (सागरोवम कोडाकोडीए बायालीस-वास-सहस्सेहिं ऊणियाए) पचहत्तरिवासेहिं अद्ध नवमेहिं य मासेहिं सेसेहिं, इक्कवीसाए तित्थयरेहिं इक्खाग-कुल-समुप्पन्नेहिं कासवगोत्तेहिं, दोहि य हरिवंस-कुल-समुप्पन्नेहिं गोयम-सगोत्तेहिं, तेवीसाए तित्थयरेहिं विइक्कंतेहिं, समणे भगवं महावीरे चरिमे तित्थयरे, पुव्वतित्थयर-निद्दिट्ठे माहण-कुंडग्गामे नयरे उसभदत्तस्स माहणस्स कोडालसगोत्तस्स भारियाए देवाणंदाए माहणीए जालंधर-सगोत्ताए पुव्वरत्तावरत्त-काल-समयंसि हत्थुत्तराहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं आहारवक्कंतीए भववक्कंतीए सरीरवक्कंतीए कुच्छिंसि गब्भत्ताए वक्कंते ॥२॥

(२) उस काल के उस भाग में ग्रीष्म ऋतु का चौथा महीना या आठवाँ पक्ष, आषाढ़ शुक्ल चल रहा था। तब आषाढ़ शुक्ला छठ के दिन श्रमण भगवान महावीर के जीव ने बीस सागरोपम की आयु, भव और स्थिति पूर्ण कर महाविजय पुष्पोत्तर प्रवर पुण्डरीक सौवस्तिक वर्धमान नामक महाविमान से प्रयाण किया।

इस अवसर्पिणी काल[1] के सुषम-सुषम (१), सुषम (२) तथा सुषम-दुःषम (३) नामक तीनों आरे पूर्णतया बीत चुके थे और दुःषम नामक चौथे आरे (जो बयालीस हजार कम एक कोटा-कोटि सागरोपम वर्ष का है) का भी अधिकांश भाग बीत चुका था, केवल पचहत्तर वर्ष और साढ़े आठ महीने बाकी बचे थे। इस समय से पहले इक्ष्वाकु कुल में उत्पन्न काश्यप गोत्र के इक्कीस तीर्थंकर, और हरिवंश कुल में उत्पन्न गौतम गोत्रीय दो तीर्थंकर, कुल तेइस तीर्थंकर हो चुके थे। "श्रमण भगवान महावीर अन्तिम तीर्थंकर होंगे", पूर्व में हुए तीर्थंकरों के इस कथन के अनुरूप भावी भगवान महावीर का जीव जम्बूद्वीप के अन्तर्गत दक्षिणार्द्ध भरत में स्थित ब्राह्मण कुण्डग्राम नामक नगर में कोड़ाल गोत्रीय ब्राह्मण ऋषभदत्त की पत्नी, जालन्धर गोत्रीया देवानन्दा ब्राह्मणी की कोख में उस दिन मध्यरात्रि के समय जब हस्तोत्तरा नक्षत्र का योग बना, तब दैवीय (देव सम्बन्धी) आहार, भव और शरीर को मानवीय आहार, भव और शरीर में बदलते हुए गर्भ रूप में अवतरित हुआ।

१. देखें—परिशिष्ट १, कालक्रम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विस्तार :

कल्पसूत्र में अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर के भव (जन्म) से वर्णन प्रारम्भ होता है। परन्तु व्याख्या ग्रंथों में इस भव से पूर्व २६ भवों में इस आत्मा के क्रमिक आध्यात्मिक विकास का बहुत ही रोचक वर्णन मिलता है। पूर्व भवों के मुख्य-मुख्य प्रसंग यहाँ चित्रों द्वारा प्रस्तुत किये गये हैं।

नयसार : प्रथम बोधिलाभ

वर्तमान तीर्थंकर भव से २६ भव पूर्व भगवान महावीर का जीव पश्चिम महाविदेह के प्रतिष्ठान नगर के शत्रुमर्दन राजा के अधीन नयसार नाम का एक वन अधिपालक (फोरेस्टर) था। वह जंगल की इमारती लकड़ियाँ कटवाकर नगर में लाता था। एक बार मध्यान्ह के समय सभी कर्मचारी भोजन करके विश्राम कर रहे थे। नयसार भी एक वृक्ष की छाया में अपने साथ लाया हुआ सात्विक भोजन करने बैठा। उसी समय उसे पहाड़ों की तलहटी में भ्रमण करते हुए त्यागी श्रमण दिखाई दिये। नयसार ने सोचा प्रचंड धूप के समय ये श्रमण भूखे प्यासे इस जंगल में घूम रहे हैं। अगर ये इधर आएँगे तो मैं इन्हें अपने भोजन में से कुछ आहार आदि दूँगा। अतिथि दान का सहज पुण्य मिल जायेगा। आज का दिन धन्य होगा।

सरल हृदय नयसार मुनियों की तरफ देखने लगा। मुनि उसी ओर चले आ रहे थे। नयसार ने अत्यन्त हार्दिक श्रद्धा, उल्लास तथा भक्तिपूर्वक मुनियों को शुद्ध आहार का दान दिया। मुनियों ने भी एकांत में जाकर भोजन किया और नगर की ओर चले। नयसार कुछ दूर तक मुनियों के साथ नगर का रास्ता बताने के लिए गया। वापस लौटते समय उसने मुनियों को वन्दना की। मुनियों ने उसे सद्धर्म का बोध दिया। श्रद्धाशील भक्त-हृदय नयसार को मुनियों के उपदेश से आत्म-ज्ञान प्राप्त हुआ। फलस्वरूप उसके हृदय में सम्यक्त्व-बीज अंकुरित हुआ। आत्मिक विकास का आरम्भ बिन्दु होने से इसी भव से महावीर के पूर्व भवों की गणना की जाती है।

तृतीय भव : मरीचि

नयसार का जीव आयुष्य पूर्ण कर सौधर्म-कल्प में गया। वहाँ से अयोध्या नगरी में चक्रवर्ती भरत का पुत्र मरीचि हुआ। भगवान ऋषभदेव का प्रथम प्रवचन सुनकर मरीचि ने श्रमण दीक्षा ग्रहण की। परन्तु श्रमण जीवन की कठिन चर्या का पालन नहीं कर सकने के कारण वह श्रमण वेष का परित्याग कर त्रिदण्डी परिव्राजक बन गया। किन्तु फिर भी मरीचि भगवान ऋषभदेव द्वारा प्ररूपित धर्म को श्रेष्ठ मानता था। वह भगवान की धर्म सभा (समवसरण) के बाहर बैठकर लोगों को उपदेश दिया करता था और उन्हें श्रमण धर्म अंगीकार करने की प्रेरणा देता रहता था।

एक बार भगवान ऋषभदेव की सभा में चक्रवर्ती भरत ने उनसे प्रश्न किया, "प्रभो! आपकी इस सभा में कोई ऐसा महान् आत्मा है जो भविष्य में आपके समान ही तीर्थंकर बनेगा?" ऋषभदेव ने कहा, "भरत! इस धर्म सभा के बाहर तुम्हारा पुत्र मरीचि परिव्राजक के वेष में उपस्थित है, वह अनेक जन्मों तक तपस्या आदि करके इस अवसर्पिणी काल का अन्तिम तीर्थंकर होगा। मरीचि से महावीर तक की संसार यात्रा में वही एक बार त्रिपृष्ट नामक वासुदेव तथा एक बार प्रियमित्र नाम का चक्रवर्ती बनेगा।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपने पुत्र मरीचि का श्रेष्ठतम भविष्य सुनकर सम्राट् भरत का हृदय खिल उठा। हर्ष का यह संवाद मरीचि को सुनाने के लिए वे उसके पास आये और कहा, "मरीचि! तुम महान् पुण्यशाली हो, भावी तीर्थंकर के रूप में तुम्हारा अभिनन्दन करता हूँ।" (चित्र M-1)

भगवान ऋषभदेव का कथन सुनकर मरीचि को हर्ष का आर-पार नहीं रहा। वह बाँसों उछलने लगा, साथ ही उसे अपने कुल-गौरव का अभिमान भी जाग उठा। गर्व से दीप्त होकर वह बोला, "अहा! मेरा कुल कितना महान् है? मेरा वंश कितना उत्तम है। मेरे दादा तीर्थंकर, मेरे पिता प्रथम चक्रवर्ती और मैं वासुदेव बनूँगा, चक्रवर्ती सम्राट् बनूँगा और अन्त में इस अवसर्पिणी काल का अन्तिम तीर्थंकर भी बनूँगा। अहा! हो! हो!" इस घटना के बाद मरीचि का हृदय अहंकार से परिपूर्ण हो गया। इस कारण वह धीरे-धीरे आध्यात्मिक श्रेष्ठता से नीचे गिरता हुआ जातिगत-श्रेष्ठता के अभिमान के दलदल में धँसता चला गया। (चित्र M-1)

जैन परम्परा के अनुसार मरीचि, परिव्राजक परम्परा का आदि पुरुष था। अंतिम समय में उसने राजकुमार कपिल को अपना शिष्य बनाया। कपिल से चली परिव्राजक परम्परा धीरे-धीरे श्रमण परम्परा से दूर-दूर हटती चली गई।

मरीचि का आत्मा कई बार देवलोक में जन्मा और कई बार मानव देह धारण कर परिव्राजक बना, तपस्या की। इस प्रकार भव-भ्रमण करता हुआ वह उन्नीसवें जन्म में त्रिपृष्ट वासुदेव बना।

अहं का विष : त्रिपृष्ट वासुदेव

पोतनपुर के राजा प्रजापति की रानी मृगावती ने एक महान् बलिष्ट पुत्र को जन्म दिया। पुत्र का नाम रखा गया त्रिपृष्ट।

प्रजापति सामान्य राजा थे, जो प्रतिवासुदेव अश्वग्रीव के अधीन थे। एक दिन अश्वग्रीव ने राजा प्रजापति को आदेश भेजा, "हमारे शालिक्षेत्र (धान की खेती का क्षेत्र) में एक खूँख्वार सिंह ने उपद्रव मचा रखा है। तुम उस क्षेत्र में जाकर सिंह से किसानों की रक्षा करो।" राजा प्रजापति जब जाने लगा तो त्रिपृष्ट कुमार ने कहा, "पिताजी, हमारे होते आपको यह कष्ट उठाने की क्या आवश्यकता है? उस क्षुद्र सिंह के लिए आपके बालक ही पर्याप्त हैं।"

त्रिपृष्ट कुमार अपने बड़े भाई बलदेव अचल कुमार के साथ उस जंगली क्षेत्र में गये। वहाँ के वासियों से उन्होंने सिंह के बारे में जानकारी ली और सिंह की गुफा की ओर गये। लोगों का शोर सुनकर सिंह बाहर निकला और कुमार की तरफ लपका। इधर सिंह को सामने आता देखकर कुमार के मन में विचार उठा, "जब सिंह पैदल ही अकेला चलकर आ रहा है तो मुझे अपने साथ अंगरक्षकों की एवं रथ की क्या आवश्यकता है? जब सिंह निहत्था है तो मुझे शस्त्र रखना क्या उचित है? मैं भी अकेला ही अपनी भुजाओं से सिंह का सामना करूँगा।" त्रिपृष्ट कुमार रथ से उतर गये, शस्त्र दूर फेंक दिये और अकेले ही उस खूँख्वार नरभक्षी सिंह से भिड़ गये। अपनी बलिष्ट भुजाओं से सिंह का जबड़ा चीर डाला। दूर खड़े किसानों ने उछल-उछल कर हर्ष मनाया। कुमार की जय-जयकार की। दर्द से तड़पते सिंह के पास कुमार का सारथी आया, उसे सांत्वना दी, घावों पर वनस्पति आदि का लेप किया जिससे मरते हुए सिंह को कुछ शान्ति अनुभव हुई। सिंह के मन में सारथी के प्रति स्नेह भाव जगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

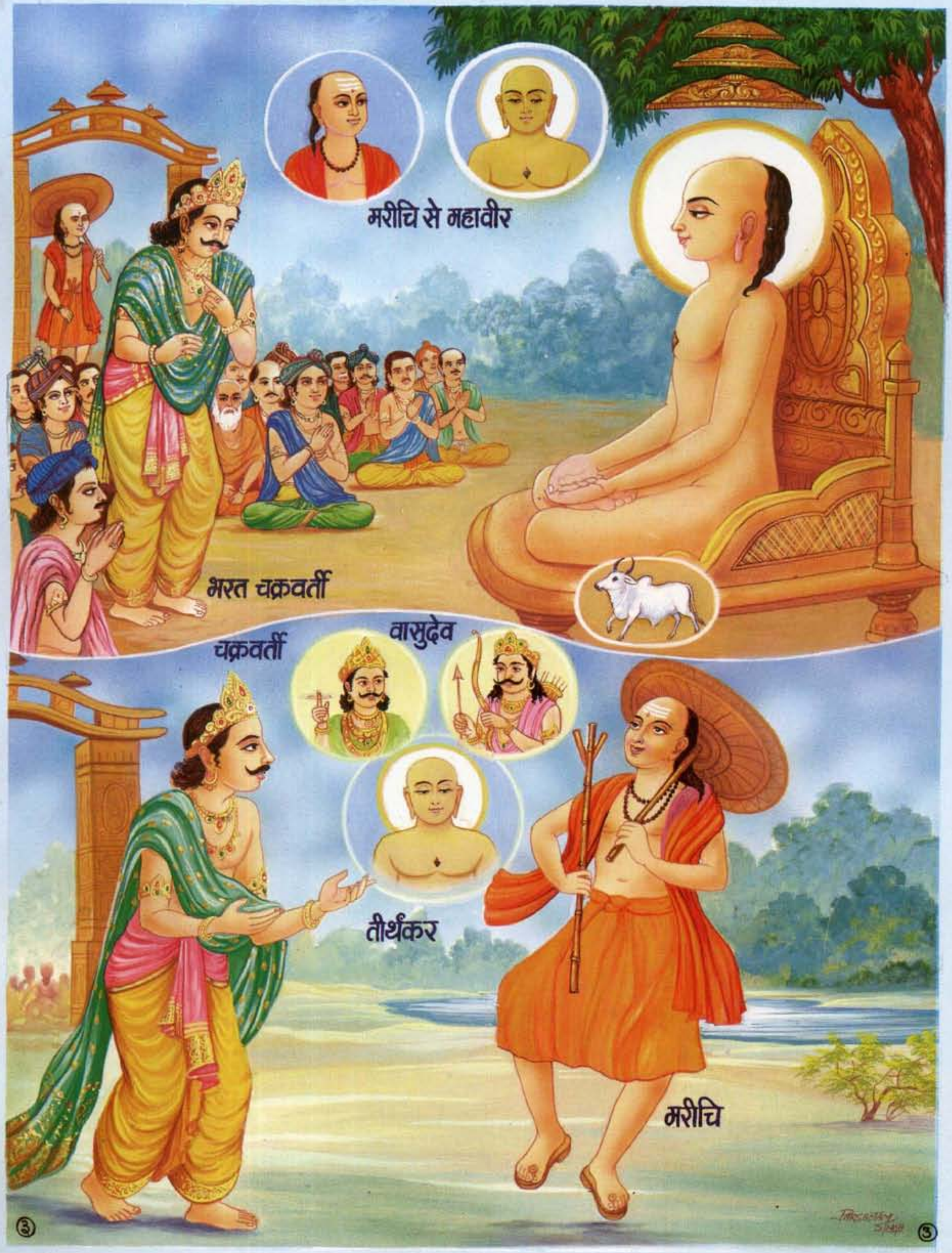

M 1 मरीचि भव का प्रसंग।
The story of Marichi.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

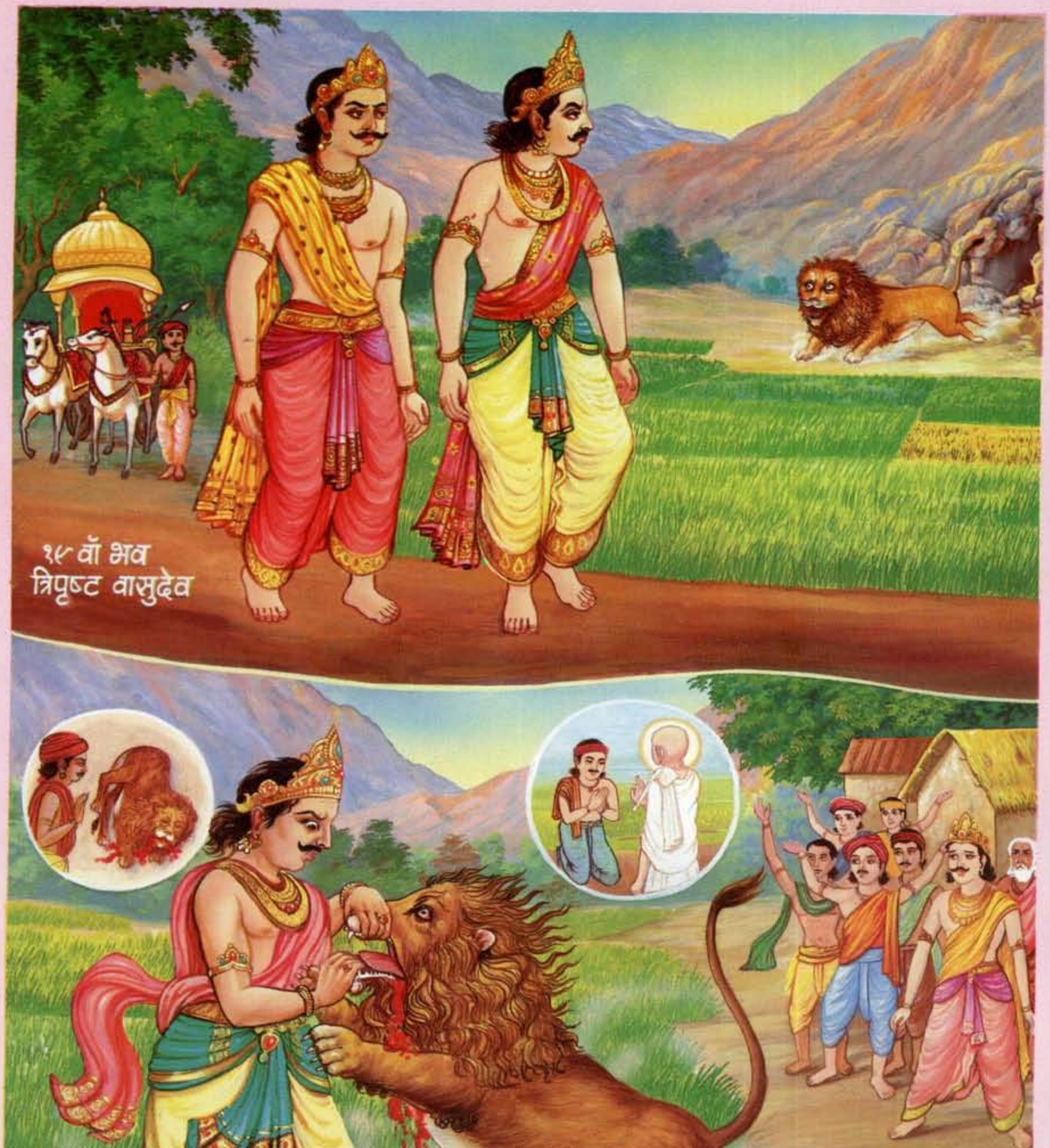

M 2 त्रिपृष्ठ वासुदेव भव का चरित्र।
The story of Triprishtha Vasudev

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जब सारथी का जीव भगवान महावीर का प्रिय शिष्य इन्द्रभूति गौतम बना तब उसी सिंह का जीव एक किसान बना। गौतम को देखने पर किसान के मन में अचानक उनके प्रति स्नेह तथा सद्भाव जाग उठा। वह उनका शिष्य बन गया। किन्तु भगवान महावीर को देखकर उसके मन में भय एवं प्रतिशोध के संस्कार जाग्रत हो गये। तब भगवान महावीर ने पूर्व-जन्म के इस वैरानुबंध का रहस्य उद्घाटित किया। (चित्र M-2)

त्रिपृष्ट कुमार ने अत्याचारी क्रूर शासक प्रतिवासुदेव अश्वग्रीव का नाश करके तीन खण्ड में अपना साम्राज्य स्थापित किया। वे प्रथम वासुदेव बने।

एक बार वासुदेव त्रिपृष्ट राज-सभा में संगीत के मधुर कार्यक्रम में लीन थे। उन्हें नींद की हलकी झपकी आने लगी तो अपने शय्यापालक (शयन परिचालक) से कहा, "मुझे नींद आ जाये तो गाना-बजाना बन्द कर देना।"

कुछ ही देर बाद वासुदेव को नींद आ गई। संगीत की मधुर स्वर लहरियों में सब डूबे हुए थे। गाना रात भर चलता रहा। अचानक वासुदेव की आँख खुली, उन्होंने सभा में संगीत की धुनें बजती सुनीं तो क्रोध में लाल-पीले हो उठे। शय्यापालक को डाँटते हुए कहा, "अब तक गाना बन्द क्यों नहीं हुआ?" शय्यापालक ने हाथ जोड़कर निवेदन किया, "इस कर्ण प्रिय संगीत के सागर में सभी आनन्द मग्न थे। मैं स्वयं भी उसी में खो गया था।" अपने आदेश की अवज्ञा से वासुदेव का क्रोध और अधिक भड़क उठा। शय्यापालक पर क्रोध बरसाते हुए बोले, "इस संगीत लोभी के कानों में पिघला सीसा उँडेल दो, इसे बताओ कि कर्णप्रिय संगीत के चक्कर में स्वामी की आज्ञा के उल्लंघन की क्या सज़ा होती है।" वासुदेव की आज्ञा का पालन हुआ। भयंकर असह्य वेदना से छटपटाते शय्यापालक ने वहीं पर दम तोड़ दिया। (चित्र M-3)

वासुदेव त्रिपृष्ट ने अत्यन्त क्रूर परिणामों के कारण जो घोर पापकर्म का बंध किया उसका कटु कर्म फल महावीर के भव में भोगना पड़ा। शय्यापालक के जीव ने किसान बनकर श्रमण महावीर के कानों में कीलें ठोके। सत्ता मद, वैभव में आसक्ति एवं हिंसक क्रूर परिणामों के कारण त्रिपृष्ट वासुदेव का जीव आयुष्य पूर्ण कर सातवें नरक में गया। २१वें भव में सिंह तथा २२वें भव में चतुर्थ नरक में उत्पन्न होने के बाद २३वें भव में प्रियमित्र चक्रवर्ती बना।

सही दिशा : प्रियमित्र चक्रवर्ती

मूकानगरी के धनंजय राजा की रानी ने अनेक शुभ-स्वप्न देखकर एक पुत्र को जन्म दिया। पुत्र का नाम रखा गया प्रियमित्र। अपनी पूर्व पुण्याई तथा बाहुबल से षट्खंड पर एक छत्र राज्य स्थापित कर वह प्रियमित्र चक्रवर्ती बने। चक्रवर्ती सम्राट् के रूप में संसार का ऐश्वर्य भोगा। अंततः संसार-भोगों से विरक्ति होने पर पोट्टिलाचार्य के पास दीक्षा ग्रहण की। एक करोड़ वर्ष तक गुरुसेवा, शास्त्र-स्वाध्याय, ध्यान तथा आतापना आदि विविध प्रकार के तप द्वारा पूर्वबद्ध कर्मों का नाश करने लगे (चित्र M-4/1)। यहाँ से आयुष्य पूर्ण कर महाशुक्र कल्प में देव बने। देव आयुष्य भोगकर छत्रानगरी में जितशत्रु राजा के पुत्र रूप में जन्म लिया। नन्दन नाम रखा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उग्र साधना : नन्दन मुनि

नन्दन राजकुमार भोगों के कीचड़ में कमल की भाँति निर्लिप्त रहता था। रूपवती रमणियों के स्नेह और सौन्दर्य के मोहजाल से निर्लेप रहकर वह सदा ही आत्मलक्षी बना रहा। एक दिन पोट्टिलाचार्य के पास राजकुमार ने दीक्षा ले ली और आत्मा को तप की पवित्र अग्नि में झोंककर कुन्दन बनने लगा। तप-संयम-अरिहंतभक्ति-वैयावृत्य आदि बीस स्थानों की निर्मल आराधना करते हुए उन्होंने तीर्थंकर-नाम-कर्म का बन्ध किया। नन्दन मुनि ने एक लाख वर्ष तक निर्दोष संयम-जीवन बिताया। जिसमें उन्होंने ग्यारह लाख साठ हजार (11,60,000) मास खमण तप किये।

इस प्रकार उग्र तपश्चरण, एकान्त ध्यान, आतापना एवं सेवा आदि करते हुए आयुष्य पूर्ण कर प्राणत स्वर्ग के पुष्पोत्तर विमान में देव रूप में उत्पन्न हुए। यह महावीर के रूप में जन्म लेने के तत्काल पूर्व का भव था। (चित्र M-4/2)

The Descent

(2) During that time in that age, it was the fourth month and the eighth fortnight of summer running. On the sixth day of the bright half of the month of Ashadh, the soul that was to be Bhagavan Mahavir descended from the Mahavijaya Pushpottar Pravar Pundarik Disha Sauvastika Vardhaman Mahaviman (the name of a specific dimension of gods) after completing the twenty Sagaropam (a superlative count of time) age specific to the particular birth in the particular state.

Three phases of the six phase cycle of time (Appendix-1), namely Susham-Susham (1), Susham (2) and Susham-Dusham (3), had already elapsed. Only seventy five years and eight and a half months remained of the fourth phase named Dusham-Susham (which is forty two thousand years less one Kota-Koti Sagaropam years long). Before this time twenty three Tirthankars had already blessed the land. Twenty one of them were born in the Ikshvaku family of the Kashyap clan (gotra) and two in the Harivamsha family of the Gautam clan. "Shraman Bhagavan Mahavir will be the last Tirthankar", according to this prophecy of the earlier Tirthankars, the soul that was to be Bhagavan Mahavir was conceived in the womb of Devananda Brahmani, daughter of the Jalandhar clan and wife of Brahman Rishabhdatta of the Kondal clan, a resident of Brahman Kundgram. It was midnight and the moon had just entered the twelfth lunar mansion known as Hastottara or Uttaraphalguni, when the soul that was to be Bhagavan Mahavir—transforming the state, constitution, and factors of sustainance from the divine realm to the human realm—descended into the womb.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

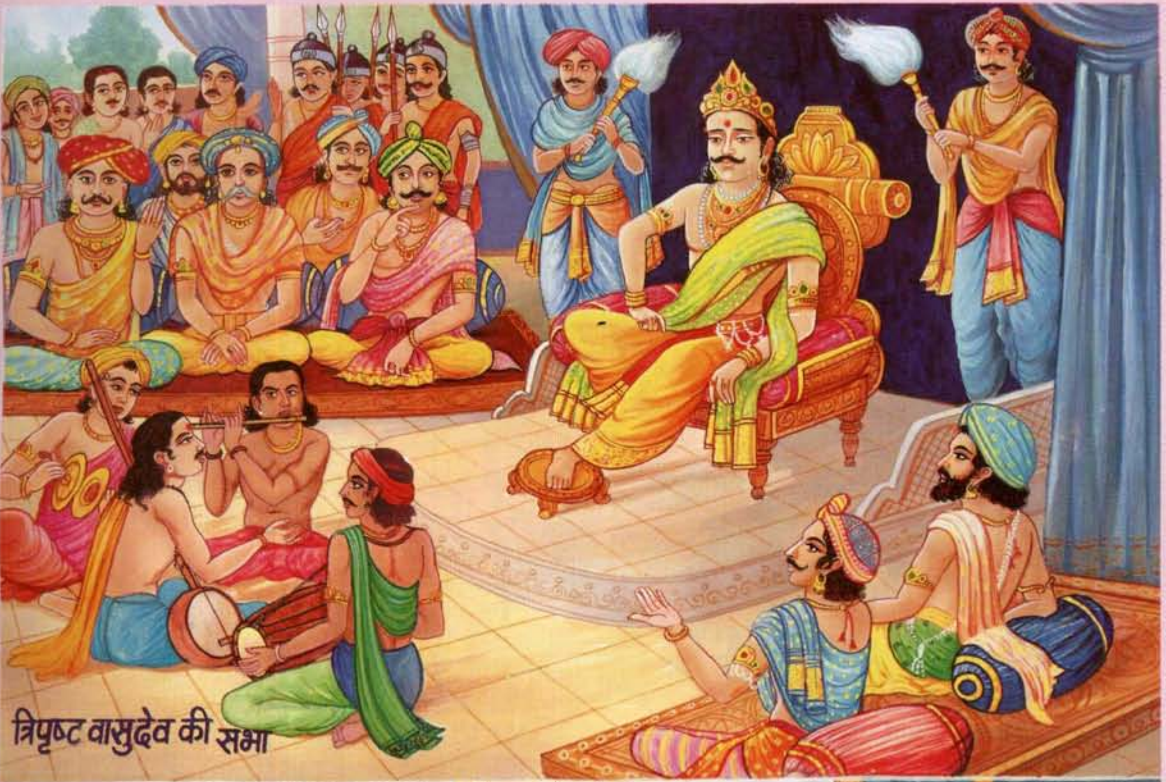

M 3 त्रिपृष्ठ वासुदेव भव का चरित्र।
The story of Triprishtha Vasudev

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

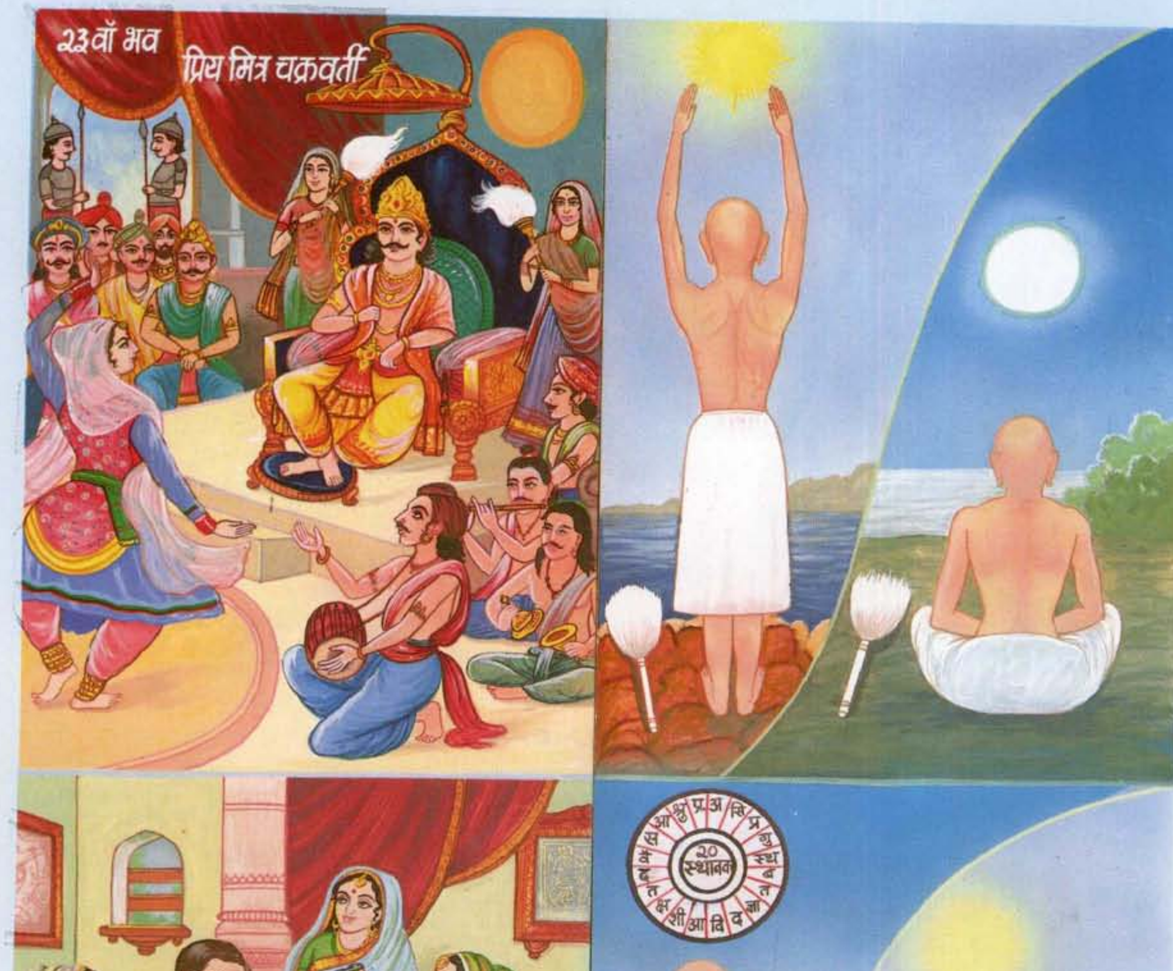

M 4 (१) प्रियमित्र चक्रवर्ती का भव (२) नन्दनमुनि का त्याग और साधना।
(1) Priyamitra Chakravarti (2) The detachment and spiritual practice of Nandan Muni

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Elaboration :

The Kalpasutra starts with the narration of the life of Bhagavan Mahavir. But the explanatory scriptures and commentaries contain interesting details of the gradual spiritual evolution of this soul through twenty six earlier incarnations. Significant events from these earlier incarnations have been presented here with the help of illustrations.

Nayasar : First Glimpse of Right Knowledge

In the twenty seventh birth before being born as Bhagavan Mahavir, this soul was a forester working for king Shatrumardan of Pratisthan city in the west Mahavideh area. He used to bring all the wood required for construction purposes from the forest. One day at noon time all the workers were taking rest after their lunch. Nayasar also sat under a tree in order to take the food he had brought along. Before starting to eat he saw some ascetics wandering at the foot of nearby hills. Nayasar thought that these ascetics are wandering without food or water in this scorching sun. If they happen to come this side, I will offer a part of my food to them. I will be benefitted by this simple act of serving guests and my day will become purposeful.

Innocent Nayasar waited looking at the approaching ascetics. With deep devotion he offered them his pure food. When they proceeded towards the town, Nayasar accompanied them for some distance to show the way. When Nayasar bowed before the ascetics before taking their leave, they gave him sermons of the true path. Devoted and respectful, Nayasar got enlightened and the seed of righteousness (Samyaktva) sprouted in his mind. As this is the starting point of spiritual evolution, the counting of the earlier incarnations of the soul that became Bhagavan Mahavir begins here.

The Third Birth : Marichi

After completing his age (the age of a being, according to Jainism, is a fixed period determined by actions in the immediately preceding birth), the soul of Nayasar was reborn as a god in the Saudharma kalpa. He then took birth as Marichi, the son of Chakravarti (sovereign of six continents) Bharat in the city of Ayodhya. After hearing the first discourse of Bhagavan Rishabhdev he became a Shraman. But as he could not sustain the rigorous ascetic codes, he abandoned the dress of a Shraman and became a Tridandi Parivrajak (a class of mendicants). However, he still believed the path of Rishabhdev to be the best. He would sit just outside the divine pavilion (Samavasaran) of Rishabhdev and preach to the people around, inspiring them to accept the religion of Shramans.

One day Bharat Chakravarti asked Bhagavan Rishabhdev, "Prabho! Is there any great being (soul) present in this congregation who will become a Tirthankar like you?" Rishabhdev replied, "Bharat! Outside this religious congregation sits your son Marichi dressed as a Parivrajak. After penances and other practices for many re-incarnations, he will become the last Tirthankar of this cycle of time. During his passage from Marichi to Mahavir, he will also be born as Triprishta Vasudev (the lord of three regions) in one birth and in another re-incarnation as Priyamitra Chakravarti."

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Hearing about the astoundingly bright future of the soul of his son Marichi, Emperor Bharat burst with joy. He went to Marichi with the happy news and said, "Marichi! you are extremely lucky, I greet you as the future Tirthankar." (Illustration M-1)

Marichi was overjoyed hearing the prophecy of Bhagavan Rishabdev. His happiness was boundless. But at the same time, thoughts of the glory of his clan stirred his conceit. Filled with pride for his clan, he uttered, "How great is my clan and what a superior family is that to which I belong. My grandfather is the first Tirthankar, my father is the first Chakravarti, and I will become a Vasudev, a Chakravarti, and finally the last Tirthankar of this cycle of time. How great, indeed." And thus Marichi almost burst with conceit. Slowly he slid down from the heights of spiritual excellence, and was drawn into the whirlpool of the egoism of racial superiority. (Illustration M-1)

According to the Jain tradition, Marichi was the founder of the Parivrajak school. In his last days he made prince Kapil his disciple. From that point on the derivative Parivrajak school gradually distanced itself from the Shraman school.

The soul of Marichi moved from the human dimension to that of gods and back again for many incarnations. When born as human he became Parivrajak many a time and observed numerous austerities. In his nineteenth incarnation he became Triprishtha Vasudev.

The Poison of Bloated Ego : Triprishta Vasudev

Queen Mrigavati of King Prajapati of Potanpur gave birth to an extremely powerful son. He was named Triprishta.

Prajapati was an ordinary king of a subordinate kingdom of the Prativasudev Ashvagriva (Jain mythical evil king for whose subjugation a Vasudev is born-Appendix-2). One day Ashvagriva sent an order to Prajapati, "A ferocious lion has created havoc in the Shali area. Immediately proceed to that area and protect the farmers from the lion." When Prajapati prepared to go, prince Triprishta requested, "Father! when we are available you need not take the trouble to proceed for this insignificant venture. Your sons can easily take care of that petty beast."

Triprishta and his elder brother Baldev Achal Kumar went to that forest and enquired about the lion from the local populace. As directed, they proceeded towards the den of the lion. Disturbed by the noise, the lion came out of its den and charged toward the princes. Looking at the approaching lion Triprishta thought, "The creature is alone moving on its feet, why do I need my bodygaurds and the chariot? When it does not carry any weapon, why should I? I will face it alone and bare handed." Triprishta got down from the chariot and threw away his weapons. He fought alone and bare handed with the ferocious maneater. In the end he caught hold of the jaws of the lion and tore it apart. Standing at a safe distance, the farmers jumped with joy and hailed the prince. The driver of the chariot of the prince went near the writhing lion, said a few words of sympathy, and covered its wounds with medicinal herbs. The dying moments of the beast became peaceful. This act infused a feeling of affection for the driver in the mind of the dying lion.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

When the driver reincarnated as the chief disciple of Bhagavan Mahavir, Indrabhuti Gautam, this lion was born as a farmer. When the farmer saw Gautam he was infused with a feeling of fraternity and respect for Gautam. He became Gautam's disciple. But when he happened to see Bhagavan Mahavir, the dormant feelings of fear and vengeance surfaced. Bhagavan Mahavir then revealed the cause of these dormant feelings by narrating the story of his earlier life. (Illustration M-2)

Prince Triprishta conquered the evil king Prativasudev Ashwagriva and established his own empire over three continents. He became the first Vasudev of this cycle of time.

Once the Vasudev was enjoying a musical concert in his assembly. When his eyelids became heavy with slumber he instructed his bed attendent, "When I am asleep stop the programme."

After a few minutes Triprishta closed his eyes and went to sleep. Everyone present was engrossed in the lilting music. The concert went on throughout the night. Suddenly Vasudev was awake. When he heard the music concert still going on, he turned crimson with anger. He shouted angrily at the attendant, "Why the music has not been stopped yet?" With folded hands the bed attendant submitted, "Everyone was lost in the intoxicating waves of the melodious music. Pardon me, sire! I too became lost." The negligence in the following his instructions added fuel to the fire of Triprishta's anger. Directing all his anger on the negligent aide, he said, "Pour molten lead in the ears of this music buff. Let him realize the consequences of ignoring the instructions of his master for the sake of his love for music." Vasudev's order was carried out. Writhing with extreme and intolerable agony the bed-attendant died on the spot. (Illustration M-3)

The soul in the form of Triprishta accumulated the bondage of tarnishing Karmas due to its extremely cruel attitude. It had to suffer the excruciating result in the form and life as Mahavir. The aide reincarnated as a farmer and hammered nails in Mahavir's ears when he did penance as a Shraman. As a result of the intoxication of power, passion for grandeur, and cruelty of attitude, Triprishta Vasudev, after living his age, was reborn in the seventh hell. In his twenty first incarnation he became a lion; in the twenty second he again went to the fourth hell, and after that he was born as Priyamitra Chakravarti in the twenty third birth.

The Right Direction : Priyamitra Chakravarti

After seeing many auspicious dreams, the queen of Dhananjaya, the ruler of Mukanagari, gave birth to a son. He was named Priyamitra. As a result of his virtuous karmas and his bravery he conquered all the six continents and became a Chakravarti. He enjoyed all the pleasures and grandeur befitting a Chakravarti. In the end he obtained detachment and became a Shraman by taking Diksha (the formal act of renouncing the mundane life-style) from Pottilacharya. For about ten million years he indulged in serving the guru, studying and pondering over the scriptures, meditation, and a variety of austere penances. Through these he continued to wipe out the tarnishing karmas acquired during

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

previous lives. Living his age, he was reborn as a god in the Mahashukra-kalpa from where, in his next incarnation, he was born as the son of king Jitshatru of Chhatranagari. (Illustration M-4/1)

Austere Practices : Nandan Muni

The life of prince Nandan (son of king Jitshatru) was like a lotus flower in the swamp of passions and mundane indulgances. The attraction of the beauty and love of beautiful damsels did not divert him from his spiritual quest. Finally he became a disciple of Pottilacharya. Becoming an ascetic, he started purifying his soul with the fire of penance. He undertook the tough practice of the twenty-step penance that includes discipline, penance, devotion for Arihant, service of the ascetic, and other such purifying acts. As a result of these practices, he earned the Tirthankar-nama-karma-gotra-karma (the karma that would make him a Tirthankar in a future birth). He spent about a hundard thousand years as a Shraman with perfect discipline. During this period he did one hundred and sixty thousand one-month fasts. Living his age with austere practices, deep meditation, and unselfish service, he reincarnated as a god in the Pranat Pushpottar Viman (a specific dimension of gods). This was the birth preceding his reincarnation as Mahavir. (Illustration M-4/2)

समणे भगवं महावीरे तिण्णाणोवगए यावि होत्था– चइस्सामि त्ति जाणइ, चयमाणे न जाणइ, चुएमि त्ति जाणइ॥३॥

(३) जन्म से ही श्रमण भगवान महावीर तीन ज्ञान (मति, श्रुत, अवधि ज्ञान) से सम्पन्न थे। च्यवन से ठीक पहले वे यह जानते थे कि मैं प्रयाण करूँगा। च्यवन-क्रिया के समय उन्हें यह ज्ञात नहीं था कि मैं प्रयाण कर रहा हूँ। च्यवन के ठीक बाद वे यह भी जान गए थे कि मैं प्रयाण कर चुका हूँ।

विवेचना :

यहाँ 'समय' शब्द काल के सामान्य अर्थ में प्रयुक्त नहीं हुआ है। जैन काल गणना (परिशिष्ट-१ देखें) में 'समय' काल की सूक्ष्मतम इकाई का नाम है। यह एक क्षण से असंख्य भाग छोटी होती है और छद्मस्थ की कल्पना से परे। च्यवन क्रिया ऐसे सूक्ष्म एक 'समय' में पूर्ण हो जाती है।

(3) At the time of descent Bhagavan Mahavir was endowed with three levels of knowledge (sensory perception, literal or scriptural knowledge, and extra-sensory perception of physical dimension). Just before the 'Samaya' (moment) of descent, from the dimension of gods, he was aware that he was going to descend. He was not aware of the act of descent. The moment after descent he knew that he had descended.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Elaboration :

The term 'Samaya' has not been used here in its ordinary meaning of passage of time. In the Jain measurement of time (Appendix 1) it is much smaller than even nano-second and is beyond the imagination of normal human faculties. The act of descent is concluded within one 'Samaya', so the unawareness.

देवानन्दा के गर्भ में अवतरण : स्वप्न दर्शन

जं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे देवाणंदाए माहणीए जालंधरसगोत्ताए कुच्छिंसि गब्भत्ताए वक्कंते, तं रयणिं च णं सा देवाणंदा माहणी सयणिज्जंसि सुत्त-जागरा ओहीरमाणी ओहीरमाणी इमेयारूवे ओराले, कल्लाणे, सिवे, धन्ने, मंगले, सस्सिरीए चउद्दस-महासुमणे पासित्ता णं पडिबुद्धा। तं जहा—

गय-वसह-सीह-अभिसेयं, दाम-ससि-दिणयरं झयं कुंभं।
पउमसर-सायर-विमाण-भवणं, रयणुच्चयं सिहिं च॥४-५॥

(४) जिस रात श्रमण भगवान महावीर देवानन्दा ब्राह्मणी की कोख में गर्भ रूप में अवतरित हुए थे, उस रात वे अधनींदी अवस्था में शय्या पर लेटी हुई थीं। चौदह उदार, कल्याणकारक, शिवकारक, धन्य, मंगलकारक तथा शोभामय महास्वप्न देखकर देवानन्दा की नींद खुल गई।

(५) ये चौदह स्वप्न इस प्रकार हैं—१. हाथी, २. वृषभ, ३. सिंह, ४. देवी लक्ष्मी का अभिषेक, ५. पुष्पमाला, ६. चन्द्रमा, ७. सूर्य, ८. ध्वजा, ९. कुंभ, १०. पद्म-सरोवर, ११. सागर, १२. देव विमान (भवन), १३. रत्न-राशि और १४. निर्धूम-अग्नि।

Descent into Devananda's Womb : The Dreams

(4) The night the soul that was to be Bhagavan Mahavir descended into the womb of Devananda, she lay half asleep on her bed. She saw fourteen peerless dreams that were exuberent, auspicious, propitious, blessed, bountiful, and radiant. The vision woke her up.

(5) The fourteen dreams are—1. an elephant, 2. a bull, 3. a lion, 4. annointing of goddess Laxmi, 5. a garland, 6. the moon, 7. the sun, 8. a flag, 9. an urn, 10. a lotus-pond, 11. the sea, 12. a space vehicle of gods, 13. a heap of jewels and 14. a smokeless fire.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तए णं सा देवाणंदा माहणी इमेयारूवे ओराले कल्लाणे सिवे धन्ने मंगले सस्सिरीए चोद्दस महासुमिणे पासित्ता णं पडिबुद्धा समाणी हट्ठ-तुट्ठ-चित्तमाणंदिया पीइमणा परम-सोमणसिया हरिस-वस-विसप्पमाण-हियया धाराहय-कलंबुयं पिव समुसस्सिय-रोमकूवा सुमिणोग्गहं करेइ, सुमिणोग्गहं करित्ता सयणिज्जाओ अब्भुट्ठेइ, सयणिज्जाओ अब्भुट्ठेत्ता अतुरिय-मचवल-मसंभंताए रायहंस-सरिसीए गईए जेणेव उसभदत्ते माहणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता उसभदत्त-माहणं जएणं विजएणं वद्धावेइ, वद्धावित्ता भद्दासण-वरगया आसत्था वीसत्था करयल-परिग्गहियं सिरसावत्तं दसनहं मत्थए अंजलि कट्टु एवं वयासी–

"एवं खलु अहं देवाणुप्पिया! अज्ज सयणिज्जंसि सुत्तजागरा ओहीरमाणी ओहीरमाणी इमे एयारूवे ओराले जाव सस्सिरीए चोद्दस महासुमिणे पासित्ता णं पडिबुद्धा, तं जहा–गय जाव सिहिं च।

एएसिं णं देवाणुप्पिया! ओरालाणं जाव चउद्दसण्हं महासुमिणाणं के मन्ने फलवित्तिविसेसे भविस्सइ?" ॥६॥

(६) ऐसे चौदह महास्वप्न देखकर देवानन्दा की नींद खुली। वह मन ही मन प्रसन्न, संतुष्ट व आनन्दमग्न हुई। उसका हृदय प्रेममय हुआ और मन में परम सौमनस्य की भावनाएँ जागीं। वह हर्ष-विभोर हो उठी। जैसे वर्षा की फुहारों से कदम्ब का फूल खिल उठता है, वैसे ही देवानन्दा का रोम-रोम पुलक उठा। उसने सपनों को याद किया और तब शय्या से उठी। राजहंसिनी की तरह चपलता और विलम्ब-रहित गति से मंद-मंद चलकर वह वहाँ गई जहाँ ऋषभदत्त थे। निकट पहुँचकर उसने "जय हो! विजय हो!" शब्दों से ऋषभदत्त का अभिनन्दन किया। फिर वह भद्रासन पर बैठी। स्वस्थ चित्त हो, दोनों हाथ जोड़ ललाट का स्पर्श कर उसने अंजलिबद्ध नमन किया। उसने कहा, "हे देवानुप्रिय! आज जब मैं अर्ध-निद्रित अवस्था में अपनी शय्या पर नींद ले रही थी, तब मुझे श्रेष्ठ, सुन्दर व सुस्पष्ट चौदह महास्वप्न दिखाई पड़े और मैं जाग उठी।" हाथी से अग्नि-शिखा तक सब स्वप्नों का विवरण बताकर उसने कहा, "हे देवानुप्रिय! मुझे लगता है कि इन सुस्पष्ट व शोभामय स्वप्नों का कोई अत्यन्त कल्याणमय फल हमें भविष्य में प्राप्त होगा।"

(6) Devananda woke up just after seeing the fourteen great dreams. She was profoundly delighted, contented and happy. She was filled with feelings

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

of love and deep equanimity. Her heart was elated with joy. As a Kadamaba flower blossoms at the touch of droplets of rain, every pore of Devananda's body was filled with ecstatic joy. She brooded over the vivid dreams and got up from the bed. She moved away from the bed, drifting with the grace of a swan and approached the bed of Rishabhdatta with an unhurried gait and steady steps. She greeted Rishabhdatta, "May you be ever victorious! may you be ever truimphant!" She took a comfortable seat and touching her forehead with folded palms she bowed before Rishabhdatta. Controlling her excitement and regaining her composure. She said, "O beloved of gods! last night while I was lying in my bed and dozing, I saw fourteen vivid and radiant dreams that broke my slumber." She then described the fourteen objects she had seen in her dreams and commented, "O beloved of gods! I have a feeling that these vivid and beautiful dreams are precursors of some highly blissful occurrence in the near future."

ऋषभदत्त द्वारा स्वप्न-फल कथन

तए णं से उसभदत्ते माहणे देवाणंदाए माहणीए अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठ-तुट्ठ जाव हियए धाराहय-कलंबुयं पिव समुस्ससिय-रोमकूवे सुमिणोग्गहं करेइ, करित्ता ईहं अणुपविसइ, ईहं अणुपविसित्ता अप्पणो साभाविएणं मइ-पुव्वएणं बुद्धि-विन्नाणेणं तेसिं सुमिणाणं अत्थोग्गहं करेइ, करेत्ता देवाणंदां माहणीं एवं वयासी–॥७॥

''ओराला णं तुमे देवाणुप्पिए! सुमिणा दिट्ठा, कल्लाणा णं. सिवा धन्ना मंगल्ला सस्सिरीया आरोग्ग-तुट्ठि-दीहाउ-कल्लाण-मंगल्ल-कारगा णं तुमे देवाणुप्पिए सुमिणा दिट्ठा! तं जहा–अत्थलाभो देवाणुप्पिए! भोगलाभो देवाणुप्पिए! पुत्तलाभो देवाणुप्पिए! सोक्खलाभो देवाणुप्पिए! एवं खलु तुमं देवाणुप्पिए! नवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं अद्धट्ठमाणं राइंदियाणं विइक्कंताणं सुकुमाल-पाणि-पायं अहीण-पडिपुन्न-पंचिंदिय-सरीरं लक्खण-वंजण-गुणोववेयं माणुम्माण-प्पमाण-पडिपुण्णं सुजाय-सव्वंग-सुंदरंगं ससि-सोमाकारं कंतं पियदंसणं सुरूवं देवकुमारोवमं दारयं पयाहिसि।''॥८॥

से वि य णं दारए उम्मुक्क-बालभावे विन्नाय-परिणयमित्ते जोवणगमणुपत्ते रिउव्वेय-जउव्वेय-सामवेय-अत्थव्वण-वेय-इतिहास-पंचमाणं, निघंटु-छट्ठाणं संगोवंगाण सरहस्साणं चउण्हं वेयाणं सारए पारए धारए सडंगवी सट्ठितंत-विसारए संखाणे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिक्खाणे सिक्खाकप्पे वागरणे छंदे निरुत्ते जोइसामयणे अण्णेसु य बहुसु बंभन्नएस परिव्वायएसु नएसु परिनिट्ठिए यावि भविस्सई॥९॥

तं ओराला णं तुमे देवाणुप्पिए! सुमिणा दिट्ठा जाव आरोग्ग-तुट्ठि-दीहाउय-मंगल-कल्लाण-कारगा णं तुमे देवाणुप्पिए! सुमिणा दिट्ठा॥१०॥

(७) देवानन्दा की यह बात सुन-समझकर ऋषभदत्त प्रसन्न हुए और उनका हृदय भी देवानन्दा के समान प्रफुल्लित और पुलकित हो उठा। उन्होंने उन स्वप्नों को स्मृति में संजोया और उनके फल के विषय में चिन्तन करने लगे। अपनी स्वाभाविक मेधा तथा विशिष्ट बुद्धि-विज्ञान से उन्होंने इन सपनों के अर्थ व फल का निश्चय किया और तब देवानन्दा से कहा–

(८) "हे देवानुप्रिये! तुमने बहुत ही उदार (विशिष्ट) स्वप्न देखे हैं। वे तुम्हारे लिए कल्याणकारक, शिवरूप, धन्य और मंगलमय होंगे। तुम्हें आरोग्य, संतोष और दीर्घायु का लाभ मिलेगा। तुम्हें धन, ऐश्वर्य और सुख प्राप्त होगा। इन स्वप्नों से यह संकेत मिलता है कि नौ महीने और साढ़े सात दिन बाद तुम एक पुत्र-रत्न को जन्म दोगी। यह पुत्र सुकोमल हाथ-पैर वाला और विकृति-रहित पंचेंद्रिय परिपूर्ण शरीर वाला होगा। उसकी देह सब प्रकार के शुभ चिन्हों, शुभ लक्षण, शुभ व्यंजन से युक्त तथा आकार, भार तथा ऊँचाई में श्रेष्ठतम अनुपात वाली होगी। वह देवकुमार सम सर्वांग सुन्दर, चन्द्रमा के समान सौम्य और मोहक कान्ति युक्त, सुदर्शन और रूपवान होगा।"

(९) बचपन बीत जाने पर शिक्षा प्राप्त कर वह विचारशील एवं ज्ञानवान युवक बनेगा। तब वह ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद, इन चारों वेदों तथा पाँचवें इतिहास और छठे निघण्टु, इन सभी छः विषयों का सामान्य तथा गूढ़ रूप से अध्ययन, मनन और धारण कर सम्पूर्ण जानकार बनेगा। वह छः वेदांगों तथा षष्ठितंत्र का विशेषज्ञ होगा। गणित, आचार, शिक्षा, व्याकरण, छन्द, निरुक्त, ज्योतिष आदि तथा अन्य अनेक ब्राह्मण, परिव्राजक एवं न्याय ग्रंथों का प्रकाण्ड विद्वान् होगा।

(१०) इस प्रकार, "हे देवानुप्रिये! तुमने जो उदार स्वप्न देखे हैं वे आरोग्य, संतोष, दीर्घायु, मंगल और कल्याण प्रदान करने वाले हैं।" इन शब्दों में वह बारंबार स्वप्नों की प्रशंसा करने लगा।

Interpretation of Dreams by Rishabhdatta

(7) Devananda's words filled Rishabhdatta with joy. Like Devananda, his heart also effused with delightful ecstasy. He ruminated over the dreams

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

and pondered over what they augured. With the help of his inborn intelligence and discerning mind he interpreted the dreams and what they foretold. He, then, conveyed to Devananda—

(8) "O beloved of gods! you have, indeed, seen bountiful dreams that are harbingers of well being and good fortune. You will gain good health, contentment, and long life. You will acquire wealth, grandeur, and joy. The dreams indicate that after nine months and seven and a half days from today, you will give birth to a son. This son of yours will have delicate limbs, faultless and acute senses, and a perfectly formed body. His body will have auspicious signs and marks and it will be ideally proportioned in terms of shape, height and weight. Like a divine child he will be absolutely beautiful, charming and handsome. Like moon he will be soothingly radiant."

(9) As he passes the age of infancy he will grow into a youth of mature intellect and profound knowledge. By that time he will have acquired, through study, analysis, and absorption, an intimate and indepth knowledge of the four Vedas (Rigved, Yajurved, Samaved and Atharvaved) and history and lexicon (believed to be the fifth and the sixth Vedas respectively). He will become an expert of the six sub-vedas (Vedanga) and the Shashthi Tantra. He will also be a great scholar of a variety of subjects, including mathematics, ethics, education, grammer, poetics and metrics, etymology, astrology, and many other works of Brahmanic, Parivrajaka and Nyaya schools.

(10) Thus, "O beloved of gods! the dreams you have seen augur good health, contentment, long life and well being for you." He repeatedly praised the dreams.

तएणं सा देवाणंदा माहणी उसभदत्तस्स माहणस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठ-तुट्ठ जाव हियया करयल-परिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलि कट्टु उसभदत्तं माहणं एवं वयासी–॥११॥

एवमेयं देवाणुप्पिया! तहमेयं देवाणुप्पिया! अवितहमेयं देवाणुप्पिया! असंदिद्धमेयं देवाणुप्पिया! इच्छियमेयं देवाणुप्पिया! पडिच्छियमेयं देवाणुप्पिया! इच्छिय-पडिच्छियमेयं देवाणुप्पिया! सव्वे णं एसमट्ठे से जहेयं तुब्भे वयह त्ति कट्टु ते सुमिणे सम्मं पडिच्छइ,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ते सुमिणे सम्मं पडिच्छित्ता उसभदत्तेणं माहणेणं सद्धिं ओरालाईं माणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंजमाणी विहरइ॥१२॥

(११) ऋषभदत्त के मुख से स्वप्नों के शुभ फल सुन-समझकर देवानन्दा प्रसन्न और संतुष्ट हुई। हाथ जोड़ विधिपूर्वक नमन कर उसने ऋषभदत्त से कहा–

(१२) "हे देवानुप्रिय! निस्संदेह आपका कथन सर्वथा सत्य है। वह आशानुरूप ही नहीं, अभिलाषापूर्ण होने का इंगित भी है। इन स्वप्नों का जो अर्थ व फल आपने बताया है मैं उसे पूर्णतया स्वीकार करती हूँ।" इस प्रकार देवानन्दा अपने पति ऋषभदत्त के कथन को मान्य कर उसके साथ मानवोचित भोगोपभोग का आनन्द लेती हुई जीवन व्यतीत करने लगी।

(11) These words of Rishabhdatta made Devananda happy and contented. She courteously and with folded hands greeted Rishabhdatta and exclaimed—

(12) "O beloved of gods! Undoubtedly, what you have said is true. Your statement is not simply desirable; it is also the indicator of the fulfilment of our cherished desires. I fully accept the meaning and interpretation explained by you." Thus accepting Rishabhdatta's statement, Devananda resumed her normal pleasent, luxurious and aristrocatic family life with her husband.

शक्रेन्द्र का स्वरूप वर्णन

तेणं कालेणं तेणं समएणं सक्के देविंदे देवराया, वज्जपाणी पुरंदरे सयक्कऊ सहस्सक्खे मघवं पागसासणे दाहिणड्ढ-लोगाहिवई बत्तीसविमाण-सयसहस्साहिवई एरावण-वाहणे सुरिंदे अरयंबर-वत्थधरे आलइय-माल-मउडे नवहेम-चारु-चित्त-चंचल-कुंडल-विलिहिज्जमाण-गंडे महिड्ढीए महज्जुइए महाबले महायसे महाणुभावे महासुक्खे भासुरबोंदी, पलंब-वण-मालधरे सोहम्मे कप्पे सोहम्म-वडिंसगे विमाणे सुहम्माए सभाए सक्कंसि सीहासणंसि निसण्णे॥१३॥

(१३) उस काल और उस समय में देवराज इन्द्र सौधर्मकल्प नामक देवलोक के सौधर्मावतंसक नामक विमान की सुधर्म सभा में शक्र नामक सिंहासन पर विराजमान थे। वे शक्र, देवेन्द्र, वज्रपाणि, पुरन्दर, शतक्रतु, सहस्राक्ष, मघवा, पाकशासन, सुरेन्द्र आदि अनेक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नामों से जाने जाते थे। वे दक्षिणार्ध लोक के अधिपति तथा बत्तीस लाख विमानों के स्वामी थे। वे ऐरावत नामक हाथी पर सवारी करते थे और गगन के समान शुद्ध और निर्मल वस्त्र धारण करने वाले थे। माला और मुकुट से वे सुसज्जित थे। उनके कोमल कपोल सोने के नए, सुन्दर, अद्‌भुत और झूलते कुण्डलों की आभा से चमक रहे थे। उनका शरीर अनोखे ओज से प्रदीप्त था और उनके गले में वन-पुष्पों की पैरों तक लटकती माला सुशोभित हो रही थी।

Description of Shakrendra

(13) At that moment during that period, the king of gods, Indra, was sitting on his throne named Shakra, in his council hall called Sudharmasabha in the space-ship Saudharmavatamsaka in the dimension known as Saudharmakalpa. Some of his numerous epithets are—Shakra, Devendra (King of gods), Vajrapani (Wielder of the thunderbolt), Purandar (Destroyer of evil towns), Shatakritu (Performer of hundred sacrifices), Sahasraksha (Thousand eyed one), Maghava (Owner of the clouds), Pakashasana (Victor of the demon Paka). He was the lord of the southern region and owned thirty two hundred thousand space-ships. He used to ride the elephant called Airavata and dressed in spotless white. He was adorned with a crown and a necklace. His soft cheeks glowed with the radiance of the earrings newly and beautifully crafted in gold. He had an astonishingly resplendent body. A garland of wild flowers hung around his neck, touching his feet.

से णं तत्थ बत्तीसाए विमाणावास-सयसाहस्सीणं, चउरासीए सामाणिय-साहस्सीणं, तायत्तीसाए तायत्तीसगाणं, चउण्हं लोगपालाणं, अट्ठण्हं अग्ग-महिसीणं, सपरिवाराणं, तिण्हं परिसाणं, सत्तण्हं अणियाणं, सत्तण्हं अणियाहिवईणं, चउण्हं चउरासीणं, आय-रक्ख-देव-साहस्सीणं, अण्णेसिं च बहूणं सोहम्म-कप्प-वासीणं वेमाणियाणं, देवाणं देवीण य आहेवच्चं पोरेवच्चं सामित्तं भट्टित्तं महत्तरगत्तं आणा-ईसर-सेणावच्चं कारेमाणे पालेमाणे महया हय-नट्ट-गीय-वाइय-तंती-तल-ताल-तुडिय-घण-मुइंग-पडु-पडह-वाइय-रवेणं दिव्वाइं भोग-भोगाइं भुंजमाणे विहरइ॥१४॥

(१४) इन्द्रदेव बत्तीस लाख विमानों, चौरासी हजार सामानिक देवों, तेतीस त्रायस्त्रिंशक देवों और सौधर्मकल्प में रहने वाले कई और वैमानिक देव-देवियों के अधिपति थे। उनके आठ पटरानियाँ परिवार सहित थीं। वे चार लोकपालों, तीन प्रकार की परिषदों, सात

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सेनाओं व सेनापतियों तथा तीन लाख छत्तीस हजार अंगरक्षक देवों के स्वामी थे। वे इन सभी के अधिपति, अग्रपुरुष, पालक, स्वामी, अन्नदाता और महत्तर-महामान्य थे। वे अपने अधीन सभी देवों का संचालन अपने प्रमुख सेनापतियों के माध्यम से करते थे और अपनी प्रजा का पालन करते थे। स्पष्ट ध्वनि वाले नाटक, वीणा, करताल, तुरुही, गंभीर ध्वनि के मृदंग तथा मन्द स्वर के पटह-ढोल आदि के मधुर संगीत का आनन्द लेते हुए, दिव्य भोगों का उपभोग करते हुए वे अपना जीवन आनन्द से व्यतीत करते थे।

(14) Indra ruled over thirty two hundred thousand space-ships, eighty four thousand gods almost equal in rank, thirty three gods forming the group called Trayastrinshak, and many other gods and goddesses owning space-ships and living in Saudharmakalpa. He had eight principal queens having their own independent retinues. There were four regional governers, three types of assemblies, seven commanders with their armies, and three hundred and thirty six thousand bodyguards under his command. He was the most revered leader, protector, lord, and provider of all those under his rule. He ruled over his people through his commanders. In the surroundings that resonated with the treble and bass of musical instruments such as the Vina, cymbals, flutes, drums, and many others, he enjoyed divine pleasures.

इमं च णं केवलकप्पं जंबुद्दीवं दीवं विउलेण ओहिणा आभोएमाणे आभोएमाणे विहरइ। तत्थ णं समणं भगवं महावीरं जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे दाहिणड्ढभरहे माहणकुंडग्गामे नगरे उसभदत्तस्स माहणस्स-कोडाल सगोत्तस्स भारियाए देवाणंदाए माहणीए जालंधर-सगोत्ताए कुच्छिंसि गब्भत्ताए वक्कंतं पासइ, पासित्ता हट्ठ-तुट्ठ-चित्तमाणंदिए णंदिए परमाणंदिए पीइमणे परम-सोमणसिए हरिसवस-विसप्पमाण-हियए धाराहय-कयंब-सुरहि-कुसुम-चंचुमालइय-ऊसासिय-रोमकूवे, वियसिय-वर-कमल-नयण-वयणे, पयलिय-वर-कडग-तुडिय-केऊर-मउड-हार-विरायंत-वच्छे पालंब-पलंबमाण-घोलंत-भूसणधरे, ससंभमं तुरियं चवलं सुरिंदे सीहासणाओ अब्भुट्ठेइ, सीहासणाओ अब्भुट्ठित्ता पायपीढाओ पच्चोरूहइ, पच्चोरूहित्ता वेरुलिय-वरिट्ठ-रिट्ठ-अंजण-निउणोविय मिसिमिसिंत-मणि-रयण-मंडियाओ पाउयाओ ओमुयइ, ओमुयइत्ता एगसाडियं उत्तरासंगं करेइ, एगसाडियं उत्तरासंगं करित्ता अंजलि-मउलियग्गहत्थे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तित्थयराभिमुह सत्तट्ठ-पयाइं अणुगच्छइ, अणुगच्छित्ता वामं जाणुं अंचेइ, वामं जाणुं अंचित्ता दाहिणं जाणुं धरणितलंसि साहट्टु तिक्खुत्तो मुद्धाणं धरणितलंसि निवेसित्ता ईसिं पच्चुण्णमइ, पच्चुण्णमित्ता कडग-तुडिय-थंभियाओ भुयाओ साहरइ साहरित्ता करयल-परिग्गहियं सिरसावत्तं दसनहं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी–॥१५॥

(१५) वे इन्द्रदेव अपने व्यापक अवधिज्ञान से सम्पूर्ण जम्बूद्वीप को बार-बार देखते रहते थे। उन्होंने जम्बूद्वीप के भारतवर्ष के दक्षिणार्ध भरत क्षेत्र स्थित ब्राह्मण कुण्डग्राम नामक नगर में, कोडाल गोत्र के ऋषभदत्त ब्राह्मण की पत्नी जालन्धर गोत्र की देवानन्दा ब्राह्मणी की कोख में, श्रमण भगवान महावीर को गर्भ रूप में अवतरित होते हुए देखा। यह देख उनका मन हर्षित, तुष्ट और आनन्द विभोर (परमानन्दित) हो उठा। उन्हें अतीव सौमनस्य प्राप्त हुआ। हर्ष से उनका मन प्रफुल्लित हो उठा। मेघ धारा से भींगे कदम्ब के सुगन्धित और खिले हुए फूल की केसर के समान उनके रोमाग्र (रोएँ) पुलकित हो उठे। पूर्ण रूप से विकसित सुन्दर कमल के समान उनके नयन और मुख खिल उठे। इस हर्ष के कारण उनके कड़े, पंहुची, भुजबन्ध, मुकुट, कुण्डल और वक्ष पर शोभित हार हिलने लगे। उनके गले में लटके लम्बे गहने बार-बार झूलने लगे। सुरेन्द्र किसी सोच में पड़े अनायास ही जल्दी से उठ खड़े हुए। पाद-पीठ पर पाँव रख वे नीचे उतरे और लहसुनिया, रिष्ठ, अंजन आदि मणि रत्नों से जड़ित व कुशल कारीगरों द्वारा बनाये अपने पादुका उतारे। दुपट्टे को बाँये कंधे पर डाल, हथेलियों को अंजलिबद्ध कर वे इन्द्रदेव, तीर्थंकर की ओर सात-आठ कदम बढ़े। बाँये घुटने को ऊँचा कर दाहिने घुटने को धरती पर समेट तीन बार मस्तक को धरती पर लगाया और सीधे बैठ गये। तब दोनों हाथों को इस प्रकार समेटा कि कड़े और पंहुची आदि आभूषण स्थिर हो ध्वनिरहित हो गये। दसों नाखून परस्पर जुड़ जायें इस प्रकार दोनों हथेलियों को मिलाया। बद्ध करों को ललाट से छुआकर बोले–

(15) With his all embracing extra-sensory perception of the physical world (Avadhi Jnana), Indra kept a constant watch over the entire Jambudvipa. He saw Shraman Bhagavan Mahavir descending into the womb of Devananda Brahmani of the Jalandhar clan, who was the wife of Rishabhdatta Brahman of the Kodal clan living in the Brahman Kundgram in the southern Bharat area of Bharatvarsha in Jambudvipa. He became happy, contented and elated. He became deeply equanimous. His heart was filled with joy, and as a Kadamba flower blossoms at the touch of droplets of rain, every pore of his body was filled with ecstatic joy. His eyes and face gleamed like beautiful blooming lotus flowers. Due to this profusion of joys

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

his body trembled and so did his adornments such as his bracelets, wristlets, armlets, crown, earrings and necklaces. Coming out of his reverie, Indra suddenly got up. The long necklaces and garlands started swinging. Stepping on the foot-stool, he got down and removed his sandals made by expert artisans and studded with jewells like catseye, ruby, coral, Anjan, etc. He flung his shawl over his left shoulder and with folded hands took seven or eight steps in the direction of the Tirthankar. Sitting down bending his left knee forward and folding his right knee, he touched the floor three times with his forehead. He folded his hands to make the ornaments stable and soundless. Joining his palms together, all fingers touching, he touched his forehead in reverence and addressed the Tirthankar—

भगवान का स्तुति पाठ

नमो त्थु णं अरहंताणं भगवंताणं, आइगराणं तित्थयराणं सयंसंबुद्धाणं, पुरिसुत्तमाणं पुरिससीहाणं पुरिसवर-पुंडरियाणं पुरिसवर-गंधहत्थीणं, लोगुत्तमाणं लोगनाहाणं लोगहियाणं, लोगपईवाणं लोगपज्जोयगराणं, अभयदयाणं चक्खुदयाणं मग्गदयाणं सरणदयाणं जीवदयाणं बोहिदयाणं धम्मदयाणं, धम्मदेसयाणं, धम्मनायगाणं, धम्मसारहीणं, धम्मवरचाउरंत-चक्कवट्टीणं; दीवोत्ताणं सरण-गई-पइट्ठाणं, अप्पडिहय-वर-नाण-दंसण-धराणं, वियट्ट-छउमाणं, जिणाणं जावयाणं, तिन्नाणं तारयाणं बुद्धाणं बोहयाणं, मुत्ताणं मोयगाणं, सव्वन्नूणं सव्वदरिसीणं; सिवमयल-मरुअ-मणंत-मक्खय-मव्वाबाह-मपुणराविति-सिद्धिगइ-नामधेयं ठाणं संपत्ताणं नमो जिणाणं जिय-भयाणं।

नमो त्थु णं समणस्स भगवओ महावीरस्स आदिगरस्स चरम तित्थयरस्स पुव्वतित्थयर-निद्दिट्ठस्स जाव संपाविउकामस्स, वंदामि णं भगवंतं तत्थगयं इहगए, पासइ मे भगवं तत्थगए इहगयं त्ति कट्टु समणं भगवं महावीरं वंदइ णमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहे सन्निसन्ने॥१६॥

(१६) "नमस्कार हो उन्हें, जो अरहंत हैं, भगवंत हैं, आदि पुरुष हैं, तीर्थंकर हैं, स्वयं संबुद्ध हैं, पुरुषोत्तम हैं, पुरुष सिंह हैं, पुरुषों में कमल के समान हैं, पुरुषों में गंध-हस्ती के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समान हैं। नमस्कार हो उन्हें, जो लोकोत्तम हैं, लोकनाथ हैं, लोकहितकारक हैं, लोक में दीपक समान हैं, लोक में प्रकाश करने वाले हैं, अभय देने वाले हैं, ज्ञान-नेत्र देने वाले हैं, मार्गदर्शक हैं, शरणदायक हैं, जीवनदायक हैं, बोध देने वाले हैं, धर्म देने वाले हैं, धर्म की देशना देने वाले हैं, धर्मनायक हैं, धर्म सारथि हैं। नमस्कार हो उन्हें, जो चार गतियों के संहारक धर्म-चक्रवर्ती हैं, भव समुद्र में द्वीप के समान हैं, त्राणदायक हैं, शरणदायक हैं, अवबोध और अवलम्ब देने वाले हैं, अप्रतिहत श्रेष्ठ ज्ञान व दर्शन के धारक हैं, छद्मस्थ अवस्था से रहित हैं, जिन हैं, जयदायक हैं, पार उतर चुके हैं, तारक हैं, बुद्ध हैं, बोध दाता हैं, मुक्त हैं, मुक्तिदाता हैं, सर्वज्ञ हैं, सर्वदर्शी हैं, शिव रूप हैं, अचल हैं, रोग रहित हैं, अनन्त हैं, अक्षय हैं, अपुनरावृत्त सिद्धगति नामक स्थान पर पहुँचे हुए हैं, अव्याबाध हैं। ऐसे भयजित (भय को जीतने वाले) जिनों को मेरा नमस्कार हो।"

"पूर्व में हुए तीर्थंकरों द्वारा कथित और पूर्व वर्णित सभी गुणों के धारक, सिद्ध गति को प्राप्त करने की अभिलाषा करने वाले, तीर्थ की स्थापना करने वाले अन्तिम तीर्थंकर श्रमण भगवान महावीर को मेरा नमस्कार है। यहाँ स्वर्ग से मैं वहाँ देवानंदा की कोख में रहे भगवान को वन्दना करता हूँ। वे मेरी वन्दना स्वीकार करें।" यह कहते हुए देवराज इन्द्र श्रमण भगवान महावीर को वन्दना करते हैं, नमस्कार करते हैं। और तब अपने सिंहासन पर पूर्व दिशा की ओर मुख करके बैठते हैं।

Panegyric of the Tirthankar

(16) "I bow and convey my reverence to the worthy ones (Arhats), the gods (supreme ones), the originators of religion, the Tirthankars (ford-founders), the self-enlightened ones; those who are supreme among men, the lions among men, the lotuses among men and the glorious elephants among men. My veneration to those who are eminent in the worlds, masters of the world, benefactors of the worlds, lamps of wisdom in the world, and illuminators of the world. I bow to those who dispel fear, give vision of knowledge, show the path of liberation, give refuge, discipline life, and steer one to enlightement. I pay homage to those who are the bestowers, preceptors, leaders, and true guides of Dharma as well as the emperors of Dharma in all the four dimensions of life. I pay homage also to those who are like islands in the ocean of life, and who provide protection, shelter, enlightenment and support. I also pay homage to those who possess undiluted supreme knowledge and perception, who are without illusion. To those who are victors and victory givers, who have crossed the ocean of life

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

and help crossing it, who are enlightened and give enlightenment, who are liberated and liberators. I also pay homage to those who are all knowing, all seeing, supreme, stable; who are free of disease, eternal, indestructible, unimpeded and who have reached the state of Siddha where the cycle of rebirth is terminated. I pay homage to such Jinas who have conquered fear."

"My obeisance to Shraman Bhagavan Mahavir, who, as indicated by the earlier Tirthankars, is the last of the Tirthankars, is endowed with all the above said qualities and desirous of attaining the state of liberation. From my abode, here in the heaven, I bow to Shraman Bhagavan Mahavir, who is there in the womb of Devananda. May he accept my venerations." With these words Indra, the king of gods bowed and paid homage to Shraman Bhagavan Mahavir. He than resumed his seat facing east.

शक्रेन्द्र का स्वगत चिन्तन

तए णं तस्स सक्कस्स देविंदस्स देवरन्नो अयमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए पत्थिए मणोगए संकप्पे समुप्पज्जित्था—न एयं भूयं, न एयं भव्वं, न एयं भविस्सं। जं अरहंता वा, चक्कवट्टी वा, बलदेवा वा, वासुदेवा वा, अंतकुलेसु वा, पंतकुलेसु वा, भिक्खाय-कुलेसु वा, माहणकुलेसु वा आयाइंसु वा, आयाइंति वा, आयाइस्संति वा, एवं खलु अरहंता वा, चक्कवट्टी वा, बलदेवा वा, वासुदेवा वा,उग्गकुलेसु वा, भोगकुलेसु वा, राइन्न-कुलेसु वा, इक्खागकुलेसु वा, खत्तियकुलेसु वा, हरिवंस-कुलेसु वा, अन्नयरेसु वा तहप्पगारेसु, विसुद्ध-जाइ-कुल-वंसेसु आयाइंसु वा, आयाइंति वा, आयाइस्संति वा ॥१७॥

(१७) इसके बाद वे शक्र देवेन्द्र अपने मन की प्रेरणा से गहन चिन्तन कर संकल्प करते हैं, "सच ही, न तो ऐसा कभी अतीत में हुआ है, न वर्तमान में ऐसा होता है, और न भविष्य में कभी ऐसा होगा। अरहन्त, चक्रवर्ती, बलदेव और वासुदेव का जन्म हीन कुलों, अधम कुलों, तुच्छ कुलों, दरिद्र कुलों, कृपण कुलों, भिक्षुक कुलों तथा ब्राह्मण कुलों में न कभी हुआ है, न होता है और न कभी होगा। ये सब सदा उग्र कुलों, भोग कुलों, राजन्य कुलों, इक्ष्वाकु कुलों, क्षत्रिय कुलों, हरिवंश कुलों या इसी प्रकार के अन्य विशुद्ध जाति, विशुद्ध कुल तथा विशुद्ध वंश में जन्मे हैं, जन्मते हैं और जन्मेंगे।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Deliberations of Shakrendra

(17) After this the king of gods ruminated over the subject, analysed his thoughts and resolved, "Such a thing has never happened in the past, it does not happen in the present, neither is it going to happen in the future. An Arhant, Chakravarti, Baldev, or Vasudev was never born, is not born, and will never be born in lower, degraded, petty, poor, miserly, beggar, or Brahman clans. They are always born in martial, affluent, princely, Ikshvaku, Kshatriya, Harivamsha, and other such pure races, clans, and families."

अत्थि पुण एसे वि भावे लोगच्छेरयभूए अणंताहिं ओसप्पिणी-उस्सप्पिणीहिं विइक्कंताहि समुप्पज्जइ। नाम-गोत्तस्स वा कम्मस्स अक्खीणस्स अवेइयस्स अणिज्जिण्णस्स उदएणं जं णं अरहंता वा, चक्कवट्टी वा, बलदेवा वा, वासुदेवा वा, अंतकुलेसु वा, पंतकुलेसु वा, तुच्छकुलेसु वा, दरिद्द-कुलेसु वा, भिक्खाग-कुलेसु वा, किविण-कुलेसु वा, माहण-कुलेसु वा, आयाइंसु वा, आयाइंति वा, आयाइस्संति वा कुच्छिंसि गब्भत्ताए वक्कमिंसु वा, वक्कमंति वा, वक्कमिस्संति वा, नो चेव णं जोणी-जम्मण-निक्खमणेणं निक्खमिंसु वा निक्खमंति वा निक्खमिस्संति वा॥१८॥

(१८) "किन्तु इस लोक में अनन्त उत्सर्पिणियों और अवसर्पिणियों के अन्तराल से ऐसी आश्चर्यजनक घटना होती है। तब अरहंतादि महापुरुष नामकर्म-गोत्रकर्म की निर्जरा नहीं होने से, तथा इन कर्मों के उदय में आने से उपरोक्त हीनादि कुलों में आये हैं, आते हैं और आयेंगे अर्थात् इन हीनादि कुलों में माताओं की कोख में गर्भरूप में अवतरित अवश्य हुए हैं, होते हैं और होंगे, परन्तु उनकी योनि (उदर) से महापुरुष न कभी जन्मे हैं, जन्मते हैं अथवा जन्मेंगे।"

(18) "But once in a while, after a long gap of numerous ascending and descending time cycles, such an unprecedented incident occurs. Then such a lofty person as an Arhant, etc. comes to the said lower, etc. clans as a result of the precipitation of the residual Namkarma and Gotrakarma. To be more specific, these lofty persons do descend into the wombs of the mothers from such clans, but they were never born, are not born, and will not be born from the womb of such women."

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अयं च णं समणे भगवं महावीरे जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे माहणकुंडग्गामे नयरे उसभदत्तस्स माहणस्स कोडाल-सगोत्तस्स भारियाए देवाणंदाए माहणीए जालंधरसगोत्ताए कुच्छिंसि गब्भत्ताए वक्कंते॥१९॥

(१९) "ये श्रमण भगवान महावीर जम्बूद्वीप नामक महाद्वीप के भारतवर्ष नामक क्षेत्र के ब्राह्मण कुण्डग्राम नामक नगर में ऋषभदत्त ब्राह्मण की पत्नी देवानन्दा की कोख में गर्भरूप में अवतरित हुए हैं।"

(19) "But Shraman Bhagavan Mahavir has descended into the womb of Devananda, the wife of Brahman Rishabhdatta in Brahman Kundgram in Bharatvarsh in the continent of Jambudvipa."

हरिणैगमेषी देव को आदेश

तं जीयमेयं तीय-पच्चुप्पण्णमणागयाणं सक्काणं देविंदाणं देवरायाणं अरहंते भगवंते तहप्पगारेहिंतो अंतकुलेहिंतो वा जाव (पंत. तुच्छ. दरिद्द. भिक्खाग.) किविणकुलेहिंतो वा तहप्पगारेसु जाव (उग्गकुलेसु वा भोगकुलेसु वा राइन्नकुलेसु वा नाय. खत्तिय.) हरिवंसकुलेसु अण्णयरेसु वा तहप्पगारेसु विसुद्ध-जाई-कुल-वंसेसु वा (जाव रज्जसिरिं कारेमाणेसु पालेमाणेसु) साहराविक्तए।

तं सेयं खलु मम वि समणं भगवं महावीरं चरम-तित्थयरं पुव्व-तित्थयर-निद्दिट्ठं माहण-कुंड-गामाओ नयराओ उसभदत्तस्स माहणस्स कोडाल-सगोत्तस्स भारियाए देवाणंदाए माहणीए जालंधर-सगोत्ताए कुच्छिओ खत्तिय-कुंडग्गामे नयरे नायाणं खत्तियाणं सिद्धत्थस्स खत्तियस्स कासवगोत्तस्स भारियाए तिसलाए खत्तियाणीए वासिट्ठ-सगोत्ताए कुच्छिंसि गब्भत्ताए साहराविक्तए।

जे विय णं से तिसलाए खत्तियाणीए गब्भे तं पि य णं देवाणंदाए माहणीए जालंधर-सगोत्ताए कुच्छिंसि गब्भत्ताए साहराविक्तए त्ति कट्टु एवं संपेहेई, एवं संपेहित्ता हरिणेगमेसिं पायत्ताणियाहिवइं देवं सद्दावेइ, हरिणेगमेसि-देवं सद्दावित्ता एवं वयासी–॥२०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२०) "ऐसी स्थिति में भूत, वर्तमान और भविष्य के शक्र-देवेन्द्रों का यह कर्तव्य होता है कि वे अरहंत भगवान को पूर्वोक्त हीनादि कुलों से हटाकर उग्रादि विशुद्ध कुल या वंश में स्थापित करें।"

"अतः मेरे लिए यह उचित होगा कि अन्तिम तीर्थंकर श्रमण भगवान महावीर के जीव को देवानन्दा की कोख से लेकर क्षत्रिय कुण्डग्राम में रहने वाले ज्ञातवंशीय काश्यप गोत्रीय सिद्धार्थ क्षत्रिय की भार्या वसिष्ट गोत्रीया त्रिशला क्षत्रियाणी की कोख में गर्भरूप में स्थापित करूँ।"

यह विचार कर शक्र अपनी पैदल सेना के सेनापति हरिणैगमेषी नामक देव को बुलाते हैं और अपने विचार प्रकट करते हैं–

Instructions to Harinaigameshi

(20) "In such a predicament it is the prescribed duty of the Indras of the past, present, and future to ensure that the embryo that is to be the Arhant is transplanted from the lower clan to a pure clan."

"As such, in order to fulfil my prescribed duty I should arrange to transplant the embryo that is to be the last Tirthankar, Shraman Bhagavan Mahavir from the womb of Devananda to that of Trishala Kshatriyani belonging to the Vashista clan and wife of Siddhartha Kshatriya belonging to the Jnata family of the Kashyap clan and living in Kshatriya Kundgram."

With these thoughts he called the commander of his foot-soldiers, a god named Harinaigameshi, and expressed his thoughts—

एवं खलु देवाणुप्पिया! न एयं भूयं, न एयं भव्वं, न एयं भविस्सं, जं णं अरहंता वा, चक्कवट्टी वा, बलदेवा वा, वासुदेवा वा, अंत-कुलेसु वा, पंत. किविण. दरिद्द. तुच्छ. भिक्खाग-कुलेसु वा आयाइंसु वा ३, एवं खलु अरहंता वा चक्कवट्टी बलदेवा वासुदेवा वा उग्गकुलेसु वा भोगकुलेसु वा राइन्न. नाय. खत्तिय. इक्खाग. हरिवंस-कुलेसु वा अन्नयरेसु वा तहप्पगारेसु विसुद्ध-जाइ-कुल-वंसेसु आयाइंसु वा ३ ॥२१॥

(२१) "हे देवानुप्रिय! ऐसा न कभी हुआ, न होता है, न होगा कि अरहंतादि महापुरुष हीनादि कुलों में जन्म लें। वे सदा ही तथा प्रकार के उग्रादि विशुद्ध उत्तम कुलों में जन्म लेते हैं।"

(21) "O beloved of gods ! Such a thing has never happened in the past, it does not happen in the present, neither is it going to happen in the future

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

that an Arhant, etc. is born in lower, etc. clans. They are always born in the said martial, etc. clans."

अत्थि पुण एस भावे लोगच्छेरयभूए अणंताहिं ओसप्पिणी-उस्सप्पिणीहिं विइक्कंताहि समुप्पज्जति, नामगोत्तस्स वा कम्मस्स अक्खीणस्स अवेइयस्स अणिज्जिण्णस्स उदएणं जं णं अरहंता वा चक्कवट्टी वा बलदेवा वा अंतकुलेसु वा पंतकुलेसु वा तुच्छकुलेसु वा किविणकुलेसु वा, दरिद्द. भिक्खाग-कुलेसु वा आयाइंसु वा ३, नो चेव णं जोणी- जम्मण-निक्खमणेणं निक्खमिंसु वा ३ ॥२२॥

(२२) "पर अनेक कालचक्रों के अन्तराल से ऐसा आश्चर्य भी होता है जब नाम और गोत्र कर्म के क्षीण न होने से, पूर्ण वेदन न होने से, निर्जरा न होने से और इनके उदय में आने से वे अरहंतादि महापुरुष हीनादि कुलों में माता के गर्भ में अवतरित तो होते हैं, पर जन्म नहीं लेते।"

(22) "But once in a while, after a long gap of numerous ascending and descending time cycles, such an unprecedented incident occurs. Then such a lofty person as an Arhant, etc. comes to the said lower, etc. clans as a result of the precipitation of the residual Namkarma and Gotrakarma. To be more specific these lofty persons do descend into the wombs of the mothers from such clans, but they were never born, are not born, and will not be born from the womb of such women."

अयं च णं समणे भगवं महावीरे जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे माहणकुंडग्गामे नयरे उसभदत्तस्स माहणस्स कोडाल-सगोत्तस्स भारियाए देवाणंदाए माहणीए जालंधर-सगोत्ताए कुच्छिंसि गब्भत्ताए वक्कंते॥२३॥

(२३) "और ये श्रमण भगवान महावीर जम्बूद्वीप के भारतवर्ष क्षेत्र के ब्राह्मण कुण्डग्राम में ऋषभदत्त ब्राह्मण की पत्नी देवानन्दा की कोख में गर्भरूप में अवतरित हुए हैं।"

(23) "But Shraman Bhagavan Mahavir has descended into the womb of Devananda, the wife of Brahman Rishabhdatta in Brahman Kundgram in Bharatvarsh in the continent of Jambudvipa."

तं जीयमेयं तीय-पच्चुप्पण्ण-मणागयाणं सक्काणं देविंदाणं देवरायाणं अरहंते भगवंते तहप्पगारेहिंतो वा अंत. पंत. तुच्छ. किविण. दरिद्द. वणीमग. जाव माहण-कुलेहिंतो तहप्पगारेसु वा उग्गकुलेसु वा, भोगकुलेसु वा, राइन्न. नाय. खत्तिय.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इक्खाग. हरिवंसकुलेसु वा, अण्णयरेसु वा, तहप्पगारेसु विसुद्ध-जाइ-कुल-वंसेसु साहराविज्ञाए॥२४॥

(२४) "ऐसे में अतीत-वर्तमान एवं अनागत-तीनों कालों में शक्र-देवेन्द्र का कर्तव्य होता है कि वे अरहंत भगवान को हीनादि कुलों से हटाकर उग्रादि विशुद्ध कुलों में स्थापति करें।"

(24) "In such situation it is the duty of the Shakra Indra that he arranges the transplantation of the Arhant Bhagavan from lower clan to the pure clan."

तं गच्छ णं तुमं देवाणुप्पिया! समणं भगवं महावीरं माहण-कुण्डग्गामाओ नयराओ उसभदत्तस्स माहणस्स कोडाल-सगोत्तस्स भारियाए देवाणंदाए माहणीए जालंधर-सगोत्ताए कुच्छीओ खत्तिय-कुण्डग्गामे नयरे नायाणं खत्तियाणं सिद्धत्थस्स खत्तियस्स कासवगोत्तस्स भारियाए तिसलाए खत्तियाणीए वासिट्ठ-सगोत्ताए कुच्छिंसि गब्भत्ताए साहराहि, साहरित्ता मम एयमाणत्तियं खिप्पामेव पच्चप्पिणाहि॥२५॥

(२५) "अतः हे देवानुप्रिय! तुम जाओ और ब्राह्मण कुण्डग्राम की देवानन्दा ब्राह्मणी की कुक्षि में स्थित श्रमण भगवान महावीर के जीव का संहरण (हटा) करके उसे क्षत्रिय कुण्डग्राम के सिद्धार्थ क्षत्रिय की भार्या त्रिशला क्षत्रियाणी की कुक्षि में गर्भरूप में स्थापित करो। यह कार्य सम्पन्न कर तत्काल लौटकर मुझे सूचित करो।"

(25) "Therefore, O beloved of gods! go and remove the embryo that is to be Bhagavan Mahavir from the womb of Devananda Brahmani, living in the Brahman Kundgram and implant it in the womb of Trishala Kshatriyani, the wife of Siddhartha Kshatriya living in Kshatriya Kundgram. Report back as soon as you accomplish the task."

गर्भ-परावर्तन

तएणं से हरिणेगमेसी पायत्ताणियाहिवई देवे सक्केणं देविंदेणं देवरन्ना एवं वुत्ते समाणे हट्ठे जाव हय-हियए करयल जाव त्ति कट्टु एवं जं देवो आणवेइ त्ति आणाए विणएणं वयणं पडिसुणेइ, वयणं पडिसुणित्ता सक्कस्स देविंदस्स देवरन्नो अंतियाओ पडिनिक्खमइ पडिनिक्खमित्ता उत्तर-पुरच्छिमं दिसीभागं अवक्कमइ, अवक्कमित्ता वेउव्विय-समुग्घाएणं समोहणइ, वेउव्विय-समुग्घाएणं समोहणइत्ता, संखेज्जाइं जोयणाइं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दंडं निसिरइ, तं जहा–रयणाणं वइराणं वेरुलियाणं लोहियक्खाणं मसारगल्लाणं हंसगब्भाणं पुलयाणं सोगंधियाणं जोइरसाणं अंजणाणं अंजण-पुलयाणं रयणाणं जायरूवाणं सुभगाणं अंकाणं फलिहाणं रिट्ठाणं अहाबायरे पोग्गले परिसाडेइ, परिसाडित्ता अहासुहुमे पोग्गले परियाएइ ॥२६॥

(२६) शक्रेन्द्र की यह आज्ञा सुनकर सेनापति हरिणैगमेषी देव अत्यन्त प्रसन्न हुआ। "स्वामी की जैसी आज्ञा!" ऐसा कहकर, पुलकित मन से दोनों हाथों को जोड़ अंजलि बना उसने आज्ञा को विनयपूर्वक स्वीकार किया। देवराज के पास से निकलकर हरिणैगमेषी देव ईशानकोण अथवा उत्तर-पूर्व दिशा की ओर गया। वहाँ उसने वैक्रिय-समुद्घात द्वारा आत्म-प्रदेशों का विस्तार कर संख्यात योजन का विस्तृत दण्ड निर्मित किया। विभिन्न रत्नों, जैसे हीरा, लसनिया, लोहिताक्ष, मसारगल्ल, हंसगर्भ, पुलक, सौगन्धिक, ज्योतिरस, अंजन, अंजन-पुलक, रजत, सुभग, अंक, स्फटिक, रिष्ठ आदि का निर्माण, जिस प्रकार स्थूल अंश को तराश सारभूत अंश को रखकर किया जाता है, उसी प्रकार उसने अपने स्थूल पुद्गलों को त्याग सूक्ष्म साररूप पुद्गलों को ग्रहण किया।

The Transplantation

(26) Commander Harinaigameshi was pleased to get this order from Shakrendra. Filled with joy he joined his palms in salutation and humbly accepted the order, "As you say, my lord!" Leaving the chamber of the king of gods, he proceeded in north-east direction. There he imparted fluidity to the constituent particles of his body and the micro-sections of the soul and expanding them he transformed his body into an extremely long rod (this process is known as Vaikriya Samudghata). As gems like diamond, catseye, ruby, emerald, pearl, agate, spinel, jyotiras, anjan, silver, subhag, anka, crystal quartz and rishtha, are made by slicing and grinding away the gross superficial matter and selecting the fine radiant portion, Harinaigameshi separated the subtle vital molecules from the gross physical molecules of his body.

परियाइत्ता दोच्चं पि वेउव्विय-समुग्घाएणं समोहणइ, समोहणित्ता उत्तर-वेउव्वियं रूवं विउव्वइ, उत्तर-वेउव्वियं रूवं विउव्वित्ता ताए उक्किट्ठाए तुरियाए चवलाए चंडाए जयणाए उद्धुयाए सिग्घाए दिव्वाए देवगईए वीइवयमाणे वीइवयमाणे तिरियमसंखेज्जाणं दीवसमुद्दाणं मज्झं-मज्झेणं जेणेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे जेणेव

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

माहणकुंडग्गामे नयरे जेणेव उसभदत्तस्स माहणस्स गिहे, जेणेव देवाणंदा माहणी तेणेव उवागच्छइ।

तेणेव उवागच्छित्ता आलोए समणस्स भगवओ महावीरस्स पणामं करेइ, करित्ता देवाणंदाए माहणीए सपरिजणाए ओसोवणिं दलयइ, ओसोवणिं दलइत्ता असुहे पोग्गले अवहरइ, अवहरित्ता सुहे पोग्गले पक्खिवइ, सुहे पोग्गले पक्खिवइत्ता। "अणुजाणउ मे भगवं!" ति कट्टु समणं भगवं महावीरं अव्वाबाहं अव्वाबाहेणं करयल-संपुडेण गिण्हइ, समणं भगवं महावीरं अव्वाबाहं अव्वाबाहेणं गिण्हित्ता जेणेव खत्तिय-कुंडग्गामे नयरे, जेणेव सिद्धत्थस्स खत्तियस्स गिहे, जेणेव तिसला खत्तियाणी तेणेव उवागच्छइ।

तेणेव उवागच्छित्ता तिसलाए खत्तियाणीए सपरिजणाए ओसोवणिं दलयइ, ओसोवणिं दलइत्ता असुहे पोग्गले अवहरइ, असुहे पोग्गले अवहरित्ता सुहे पोग्गले पक्खिवइ, सुहे पोग्गले पक्खिवइत्ता समणं भगवं महावीरं अव्वाबाहं अव्वाबाहेणं तिसलाए खत्तियाणीए कुच्छिंसि गब्भत्ताए साहरइ, साहरित्ता जे वि य णं से तिसलाए खत्तियाणीए गब्भे, तं पि य णं देवाणंदाए माहणीए जालंधर-सगोत्ताए कुच्छिंसि गब्भत्ताए साहरइ, साहरित्ता जामेव दिसं पाउब्भूए तामेव दिसिं पडिगए॥२७॥

(२७) सूक्ष्म तथा शुभ पुद्‌गलों को ग्रहण कर उसने पुनः वैक्रिय-समुद्‌घात कर अपने सामान्य शरीर से अलग दूसरा उत्तर वैक्रिय शरीर बनाया। फिर वह उत्कृष्ट, त्वरित, चपल, प्रचण्ड, चतुर, सावधान, उद्धत, अति तीव्र, शीघ्र व दिव्य देवगति से रवाना हुआ। तिरछे आयामों में प्रवेश कर असंख्य द्वीप तथा समुद्रों को पार करता हुआ वह जम्बूद्वीप के भारतवर्ष क्षेत्र के ब्राह्मण कुण्डग्राम नामक नगर में स्थित ऋषभदत्त ब्राह्मण के घर में जहाँ देवानन्दा थी वहाँ आया।

उसने गर्भस्थ श्रमण भगवान् महावीर को देखते ही प्रणाम किया। परिवार सहित देवानन्दा को अवस्वापिनी (मूर्च्छा के समान) निद्रा में सुला दिया। उस स्थान के वातावरण में रहे अशुभ पुद्‌गलों को दूर किया और शुभ पुद्‌गलों को वहाँ फैलाया। "भगवन्! मुझे अनुज्ञा प्रदान करें", यह कहकर बड़ी सावधानी से, यह ध्यान रखकर कि पीड़ा न हो, उसने हाथों की अंजलि में भ्रूण रूपी भगवान को उठा लिया। फिर वह वहाँ आया जहाँ क्षत्रिय कुण्डग्राम नगर में सिद्धार्थ क्षत्रिय के घर में उसकी भार्या त्रिशला रहती थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यहाँ भी उसने परिवार सहित त्रिशला क्षत्रियाणी को अवस्वापिनी निद्रा में सुला दिया। वातावरण में रहे अशुभ पुद्गलों को दूर किया और शुभ पुद्गलों को फैलाया। भ्रूणरूपी भगवान महावीर को तनिक भी कष्ट न हो, इस प्रकार बड़ी सावधानी से त्रिशला के गर्भ में स्थापित किया। साथ ही त्रिशला के गर्भ में रहे जीव को ले जाकर देवानन्दा ब्राह्मणी की कोख में स्थापित कर दिया। यह कार्य सम्पन्न कर हरिणैगमेषी देव जिस दिशा से आया था उसी दिशा की ओर लौट गया। (चित्र 6)

(27) From these subtle, vital and pure molecules he created an alternate vital and dynamic body (Uttar Vaikriya Sharira) with the help of the same process (Vaikrya Samudghat). He then commenced his journey with divine speed that was good, fast, quick, tremendous, sharp, controlled, impulsive and restrained at the same time. Crossing the curves in space diagonally and passing numerous land masses and oceans he came near Devananda in the house of Brahman Rishabhdatta in Brahman Kundgram in Bharatvarsha in Jambudvipa.

He bowed before Shraman Bhagavan Mahavir in the womb of Devananda. He put Devanada and all other members of the family to deep sleep and sterilized the atmosphere by replacing the contaminated molecules with clean ones. "Permit me, Lord!", saying thus he lifted the embryo in his cupped hands with extreme care making sure not to cause any pain. He came to the house of Trishala Kshatriyani the wife of Siddhartha Kshatriya of Kshatriya Kundgram.

Here also he put Trishla and all members of the family to deep sleep and sterlized the atmosphere. With great care he put the embryo that was to be Mahavir in the womb of Trishala and took out the already existing embryo from there for replacing in Devanada's womb. After accomplishing all these Harinaigameshi returned in the direction he came from. (Illustration 6)

ताए उक्किट्ठाए तुरियाए चवलाए चंडाए जवणाए उद्धुयाए सिग्घाए दिव्वाए देवगईए तिरियमसंखेज्जाणं दीव-समुद्दाणं मज्झं मज्झेणं जोयण-साहस्सीएहिं विग्गहेहिं उप्पयमाणे उप्पयमाणे जेणामेव सोहम्मे कप्पे सोहम्म-वडिंसए विमाणे सक्कंसि सीहासणंसि सक्के देविंदे देवराया तेणांमेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सक्कस्स देविंदस्स देवरन्नो एयमाणत्तियं खिप्पामेव पच्चप्पिणइ ॥२८॥

(२८) फिर जैसी विशिष्ट दिव्य गति से वह आया था वैसी ही गति से तिरछे आयामों में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रवेश करता हुआ, असंख्य द्वीप-समुद्रों को पार कर, हज़ार-हज़ार योजन की वक्र (घुमावदार) गति से ऊपर की ओर चढ़ता हुआ वह वहाँ आया जहाँ सौधर्मकल्प में सौधर्मावतंसक विमान में शक्र नामक सिंहासन पर शक्र देवेन्द्र बैठा हुआ था। वहाँ पहुँचकर उसने देवराज को उनके आदेशानुसार कार्य सम्पन्न हो जाने की सूचना दी।

(28) With the same divine speed, with which he had come, he crossed numerous land masses and oceans, entered the curved space diagonally and with bursts of acceleration spiraled high to reach Saudharmakalpa where Indra was sitting on his Shakra throne in the Saudharmavatansak spaceship. Harinaigameshi informed him that his order had been carried out.

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणें भगवं महावीरे तिण्णाणोवगए यावि होत्था; तं जहा--

साहरिज्जिस्सामि त्ति जाणइ, साहरिज्जमाणे नो जाणइ, साहरिएमि त्ति जाणइ ॥२९॥

(२९) उस काल के उस भाग में श्रमण भगवान महावीर तीन ज्ञान से युक्त थे। "मेरा यहाँ से संहरण किया जायेगा यह वे जानते थे। वे यह नहीं जानते थे कि मेरा संहरण हो रहा है। पर वे यह जानते थे कि मेरा संहरण हो चुका है।"

(29) At that moment during that period, Shraman Bhagavan Mahavir was endowed with three levels of knowledge.

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे जे से वासाणं तच्चे मासे पंचमे पक्खे आसोय-बहुले तस्स णं आसोय-बहुलस्स तेरसी पक्खेणं बासीइ-राइंदिएहिं विइक्कंतेहिं तेसीइमस्स राइंदियस्स अंतरा वट्टमाणे हियाणुकंपएणं देवेणं हरिणगमेसिणा सक्क-वयण-संदिट्ठेण माहणकुंडग्गामाओ नयराओ उसभदत्तस्स माहणस्स कोडाल-सगोत्तस्स भारियाए देवाणंदाए माहणीए जालंधर-सगोत्ताए कुच्छीओ खत्तियकुंडग्गामे नयरे नायाणं खत्तियाणं सिद्धत्थस्स खत्तियस्स कासव-गोत्तस्स भारियाए तिसलाए खत्तियाणीए वासिट्ठ-सगोत्ताए पुव्वरत्तावरत्त-काल-समयंसि हत्थुत्तराहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं अव्वाबाहं अव्वाबाहेणं कुच्छिंसि गब्भत्ताए साहरिए॥३०॥

(३०) उस काल के उस समय में वर्षा ऋतु का तीसरा महीना, पाँचवाँ पक्ष, आश्विन कृष्ण चल रहा था। श्रमण भगवान महावीर को स्वर्ग से च्यतु हुए बयासी रात-दिन बीत चुके थे और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तिरासीवाँ चल रहा था। आश्विन कृष्णा त्रयोदशी के दिन मध्य रात्रि के समय हस्तोत्तरा नक्षत्र का योग आने पर देवेन्द्र की आज्ञा से हितानुकम्पी हरिणैगमेषी देव ने श्रमण भगवान महावीर के जीव को ब्राह्मण कुण्डग्राम के ऋषभदत्त की भार्या देवानन्दा की कोख से उठा क्षत्रिय कुण्डग्राम के सिद्धार्थ क्षत्रिय की भार्या त्रिशला की कोख में सावधानी से बिना पीड़ा दिये सुखपूर्वक स्थापित किया।

(30) At that time during that period, it was the third month and fifth fortnight of the monsoon season. Eighty two days and nights had elapsed since the descent of Shraman Bhagavan Mahavir from heaven and the eighty third was running. On the thirteenth day of the dark fortnight of the month of Ashvin at midnight, when the moon entered the Hastottara lunar mansion, the well wishing Harinaigameshi god transplanted the embryo that was to be Bhagavan Mahavir from the womb of Devananda to that of Trishala Kshatriyani as per the order of the king of gods.

समणे भगवं महावीरे तिण्णाणोवगए यावि होत्था। तं जहा–

साहरिज्जिस्सामि त्ति जाणइ, साहरिज्जमाणे न जाणइ, साहरिएमि त्ति जाणइ ॥३१॥

(३१) श्रमण भगवान महावीर तीन ज्ञान युक्त थे। वे जानते थे कि मेरा संहरण होगा। वे यह नहीं जानते थे कि मेरा संहरण हो रहा है। वे यह जानते थे कि मेरा संहरण हो गया है।

(31) Shraman Bhagavan Mahavir was endowed with three levels of knowledge. He knew that he was to be transplanted. He was not aware that he was in the process of being transplanted. He knew that he had been transplanted.

जं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे देवाणंदाए माहणीए जालंधर-सगोत्ताए कुच्छीओ तिसलाए खत्तियाणीए वासिट्ठ-सगोत्ताए कुच्छीओ तिसलाए खत्तियाणीए वासिट्ठ-सगोत्ताए कुच्छिंसि गब्भत्ताए साहरिए, तं रयणिं च सा देवाणंदा माहणी सयणिज्जंसि सुत्तजागरा ओहीरमाणी ओहीरमाणी इमेयारूवे ओराले कल्लाणे सिव धन्ने मंगल्ले सस्सिरीए चउद्दस महासुमिणे तिसलाए खत्तियाणीए हडे त्ति पासित्ता णं पडिबुद्धा,

तं जहा–गय उसह जाव सिहिं च (गाथा) ॥३२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(३२) जिस रात यह गर्भ-परिवर्तन की घटना हुई उस रात देवानन्दा ने शय्या पर अर्धनिद्रित अवस्था में स्वप्न में देखा कि उसने पहले जो चौदह शुभ स्वप्न देखे थे उनका त्रिशला क्षत्रियाणी ने हरण कर लिया है। यह स्वप्न देखते ही वह जाग पड़ी। वे चौदह स्वप्न थे (पूर्व वर्णित, क्रमशः) हाथी, वृषभ आदि।

(32) The night this incident of embryo transplant took place, Devananda, while sleeping on her bed, saw in her dream that the fourteen auspicious things she had seen in her earlier dream had been taken away by Trishala Kshatriyani. She woke up as soon as she saw this dream. The fourteen auspicious things were, elephant, bull, etc.

त्रिशला के स्वप्न

जं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे देवाणंदाए माहणीए जालंधर-सगोत्ताए कुच्छिंसि गब्भत्ताए साहरिए, तं रयणिं च सा तिसला खत्तियाणी तंसि तारिसगंसि वासघरंसि अब्भिंतरओ सचित्तकम्मे बाहिरओ दूमिय-घट्ठ-मट्ठे विचित्त-उल्लोयतले मणि-रयण-पणासियंधयारे बहुसम-सुविभत्त-भूमिभागे पंचवण्ण-सरस-सुरहि-मुक्क-पुप्फ-पुंजोवयार-कलिए कालागुरु-पवर-कुंदुरुक्क-तुरुक्क-डज्झंत-धूव-मघमघंत-गंधुद्धुयाभिरामे सुगंध-वर-गंधिए-गंध-वट्टिभूए तंसि तारिसगंसि सयणिज्जंसि सालिंगणवट्टिए उभओ बिब्बोयणे उभओ उन्नए मज्झेण य गंभीरे गंगा-पुलिण-वालुय-उद्दाल-सालिसए तोयविय-खोमिय-दुगुल्ल-पट्ट-पडिच्छन्ने सुविरइय-रयत्ताणे रत्तंसुय-संवुए सुरम्मे आइणग-रुय-बूर-नवणीय-तूल-तुल्ल-फासे सुगंध-वर-कुसुम-चुन्न-सयणोवयार-कलिए, पुव्वरत्तावरत्त-काल-समयंसि जाव चउद्दस-महासुमिणे पासित्ता णं पडिबुद्धा,

तं जहा—गय वसह सीह अभिसेह, दामससि दिणयरं झयं कुंभं।
पउमसर, सागर, विमाण-भवण, रयणुच्चय सिहिं च॥१॥ ॥३३॥

(३३) जिस रात श्रमण भगवान महावीर को देवानन्दा की कोख से त्रिशला क्षत्रियाणी की कोख में ले जाया गया था उस रात त्रिशला क्षत्रियाणी अपने कमरे में सो रही थी। उस कमरे की भीतरी दीवारों पर चित्र बने हुए थे और बाहरी भाग चूने आदि की घुटाई से चिकना और चमकदार बनाया हुआ था। कमरे के भीतर छत पर भी चित्र बने हुए थे। मणि और रत्नों की आभा से उस कमरे का अंधकार मिट गया था। कमरे का फर्श समतल और सुरचित था। फर्श

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पर पाँच रंगों के सरस सुगन्धित फूलों के गुच्छे जहाँ-तहाँ बिखरे हुए थे। वह कमरा कृष्णागुरु, उत्तम कुन्दरुक, गुरुष्क आदि अनेक प्रकार की जलती धूप से फैलती सुगन्ध से महक रहा था। सुगंधित पदार्थों की गुटिका-पोटली की तरह अन्य अनेक प्रकार के सुगन्धित पदार्थों से सुरभित हो रहा था। ऐसे श्रेष्ठ कमरे में त्रिशला क्षत्रियाणी जिस पलंग पर सो रही थी, वह शरीर के परिमाण के अनुसार बना हुआ था तथा सिर और पैर दोनों तरफ तकिए लगे थे। वह शय्या दोनों ओर से उठी हुई और बीच से दबी हुई थी। गंगा नदी के किनारे की रेत, पैर रखने से जैसी नरम प्रतीत होती है, वह बिछौना वैसा ही नरम था। बिस्तर पर साफ-सुथरी अलसी के कपड़े की चादर बिछी हुई थी। धूल से बचने के लिए उस पर एक और चादर तनी हुई थी। उसके चारों ओर लाल रंग की एक मच्छरदानी टँकी हुई थी। छूने में वह बिछौना ऐसा कोमल था जैसे मृगचर्म, कोमल रुई, बूर-वनस्पति, मक्खन अथवा आक की रुई। वह बिछौना यथोचित कलापूर्ण ढंग से सजा हुआ था। उसके चारों ओर सुगन्धित और उत्तम फूल और गन्ध-चूर्ण बिखरे हुए थे। ऐसे बिस्तर पर अर्धनिद्रित अवस्था में सोयी त्रिशला क्षत्रियाणी चौदह महास्वप्न देखकर जाग पड़ी।

ये महास्वप्न थे—गज, वृषभ, सिंह, लक्ष्मी-अभिषेक, पुष्पमाला, चन्द्रमा, सूर्य, ध्वजा, कुम्भ, पद्म-सरोवर, सागर, देव विमान अथवा भुवन, रत्नराशि तथा निर्धूम अग्नि। (चित्र M-5)

The Dreams of Trishala

(33) That night Trishala Kshatriyani was sleeping in her bedroom. The inner walls of the bedroom had beautiful frescoes and the outer surface was stuccoed and polished with a soft finish. Frescoes had also been done on the ceiling of the room. The glow from the decorated jewels was dispelling the darkness in the room. The floor of the room had an exquisite and level finish. Bunches of fragrant flowers of five different colours were lying scattered on the floor. The room was filled with the aroma of a variety of burning incenses like Krishnaguru, Kundaruk, Gurushka, etc. The added fragrance of other aromatic substances had made the room redolent like a bouquet. In this elegant room was lying Trishala's bed. It was made to the measure of Trishala. There were pillows lying at both ends. It was raised on both sides and sunken in the middle. On this bed, soft and pliant like the beach sand of the Ganges, was laid out a bed spread of spotless silk. Another one was spread over it for protection from dust. A red mosquito-net had been put around it. Like chamois leather, softest cotton, Bura plant, fresh butter, or Aaka fibre, it was extremely soft to touch. It was aristocratically made, and fragrant flowers and aromatic powders were

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

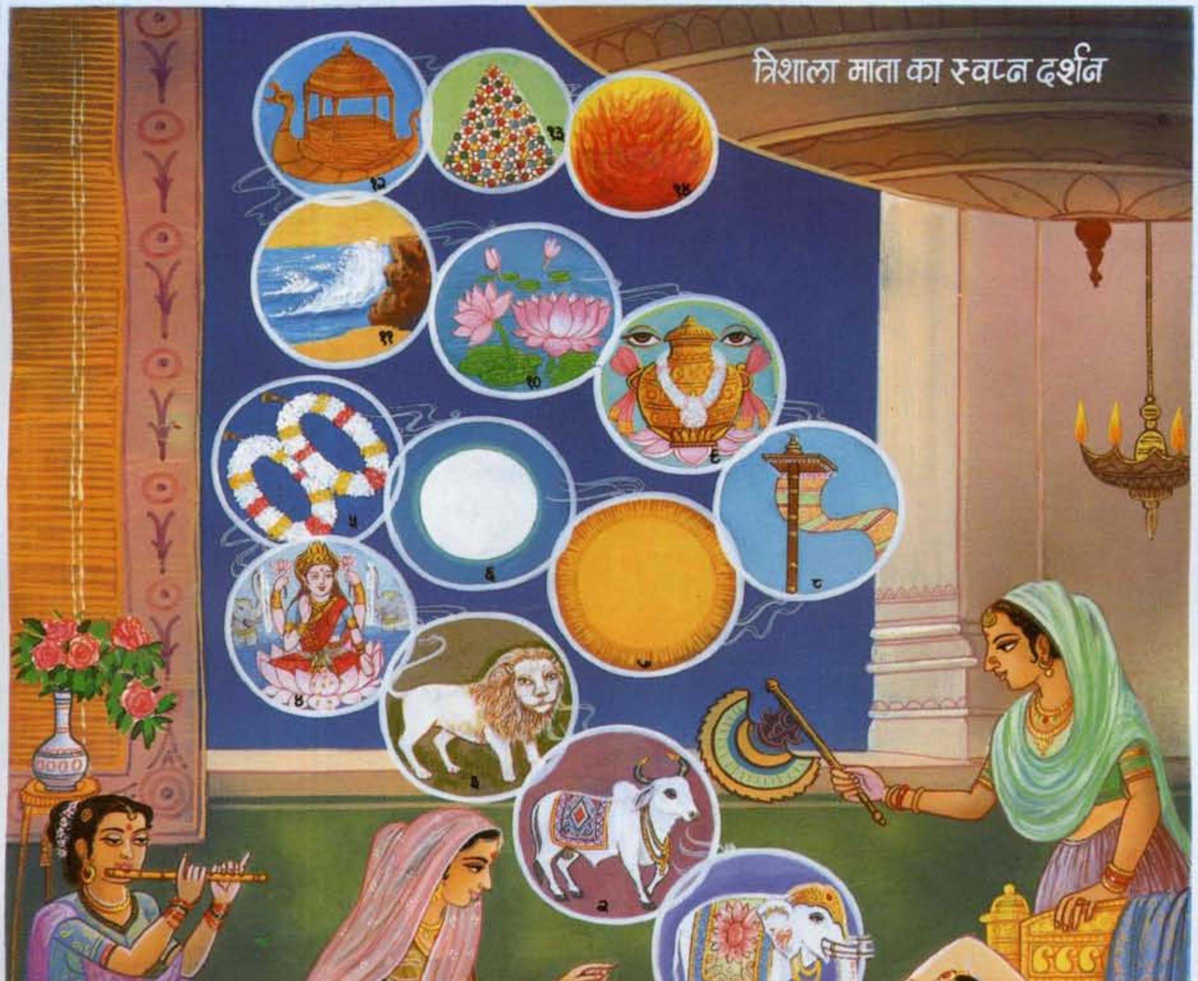

M 5 निद्रामग्न रानी त्रिशला द्वारा चौदह स्वप्न दर्शन।
Sleeping queen Trishala and her fourteen dreams

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

M 6 सिद्धार्थ राजा की सभा में स्वप्न-पाठकों द्वारा स्वप्न-फल कथन।
Dream diviners explaining meaning of the dreams in the assembly of king Siddhartha

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

sprinkled around it. Lying half asleep on this bed Trishala Kshatriyani saw fourteen great dreams, and got up.

These great dreams were—an elephant, a bull, a lion, the annointing of the goddess Laxmi,a garland, the moon, the sun, a flag, an urn, lotus pond, the sea, a space vehicle, a heap of jewels, and a smokeless fire. (Illustration M-5)

स्वप्न वर्णन

१. गज दर्शन

तएणं सा तिसला खत्तियाणी तप्पढमयाए तओ य चउद्दंत-मूसिय-गलिय-विपुल-जलहर-हार-निकर-खीरसागर-ससंककिरण-दगरय-रयय-महासेल-पंडुरतरं समागय-महुयर-सुगंध-दाण-वासिय-कवोल-मूलं, देवराय-कुंजर-वरप्पमाणं पेच्छइ, सजल-घण-विपुल-जलहर-गज्जिय-गंभीर-चारु-घोसं इभं सुभं सव्व-लक्खण-कयंबियं वरोरुं ॥१॥ ॥३४॥

(३४) त्रिशला क्षत्रियाणी का पहला स्वप्न था हाथी। वह हाथी चार दाँत वाला, विशाल और ओजपूर्ण था। वह इतना सफेद और आभामय था जैसे वरसे हुए मेघ, मोतियों के गुच्छे, क्षीर समुद्र, चन्द्रमा की किरणें, पानी की बूँदें या चाँदी का विशाल पर्वत होते हैं। उसके ललाट से बहते हुए मद की सुगन्ध से वहाँ भँवरों का झुंड मँडरा रहा था। वह इन्द्र के ऐरावत हाथी की तरह विशाल और सुन्दर था। उसकी चिंघाड़ सजल व घने बादलों की गरज की तरह गंभीर और मधुर थी। सुडोल पीठ वाले उस हाथी में सभी श्रेष्ठ व शुभ लक्षण विद्यमान थे।

DESCRIPTION OF THE DREAMS

1. The Elephant

(34) The first dream that Trishala Kshatriyani saw was of an elephant. That elephant had four tusks, and it was huge and glowing. Like clouds after rain, a bunch of pearls, a sea of milk, moon rays, drops of water or a mountain of silver, it was white and radiant. The sweet aroma of the rut-fluid oozing down its cheek had attracted swarms of black bumble-bees. It was as huge and attractive as Airavat, the elephant belonging to Indra. Its

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

trumpeting was deep and bass, like the rumbling of dense monsoon clouds. That elephant with a shapely back was endowed with all possible marks of excellence and auspicious signs.

२. वृषभ दर्शन

तओ पुणो धवल-कमलपत्त-पयराइरेग-रूवप्पभं पहा-समुदोवहारेहिं सव्वओ चेव दीवयंतं अइसिरिभर-पिल्लणा-विसप्पंत-कंत-सोहंत-चारु-ककुहं तणु-सुइ-सुकुमाल-लोम-निद्ध-छविं, थिर-सुबद्ध-मंसलोवचिय-लट्ठ-सुविभत्त सुंदरंगं पेच्छइ, घण-वट्ट-लट्ठ-उक्किट्ठ-विसिट्ठ-तुप्पग्ग-तिक्ख-सिंगं दंतं सिवं समाण-सोभंत-सुद्ध-दंतं वसभं अमिय-गुण-मंगल-मुहं ॥२॥ ॥३५॥

(३५) स्वप्न में इसके बाद त्रिशला क्षत्रियाणी ने वृषभ देखा। वह सफेद कमल की पंखुड़ियों के समूह से भी अधिक प्रभापूर्ण रूप वाला था। उसमें से एक दीप्त कान्ति चहुँ ओर बिखर रही थी। उसका सुडोल और विकसित कुकुद् सुन्दर, कान्तियुक्त और मनोहर था। उसके रोम सूक्ष्म, कोमल, स्निग्ध, स्वच्छ और चमकीले थे। उसके अंग सुगठित, माँसल, पुष्ट, सानुपात और स्थिर थे। उसके सींग भारी, घुमावदार, पुष्ट, अनुपम, उत्कृष्ट और पैने थे तथा उन पर घी का लेप किया हुआ था। वह शान्त सौम्य था और एक समान सुन्दर स्वच्छ दाँतों वाला था। वह अगणित गुणों वाला था और उसका मुख मांगलिक था।

2. The Bull

(35) After this, Trishala Kshatriyani saw a bull in her dream. It had a gleam white and brighter than the petals of a white lotus. Its scintillating radiance spread all around. Its shapely and pronounced hump was beautiful, radiant and attractive. Its body was covered with a fine, soft, smooth, clean and bright coat of hair. Its body was well formed, fleshy, strong, well proportioned and stable. The horns were heavy, curved, strong, superb and unique, and they were annointed with ghee. This majestic bull was calm and gentle. Its teeth were beautiful and clean. It had all the marks of excellence and its countenance was auspicious.

३. सिंह दर्शन

तओ पुणो हार-निकर-खीर-सागर-ससंक-किरण-दगरय-रययमहासेल-पंडरगोरं रमणिज्ज-पेच्छणिज्जं थिर-लट्ठ-पउट्ठं वट्ट-पीवर-सुसिलिट्ठ-विसिट्ठ-तिक्ख-दाढा-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विडंबिय-मुहं परिकम्मिय-जच्च-कमल-कोमल-पमाण-सोभंत-लट्ठ-उट्ठं, रत्तोप्पल-पत्त-मउय-सुकुमाल-तालु निल्लालियग्गजीहं, मूसागय-पवर-कणग-ताविअ-आवत्तायंत-वट्ट-विमल-तडिय-सरिसनयणं विसाल पीवर-वरोरुं, पडिपुन्न-विमल-खंधं मिउ-विसय सुहुम-लक्खण-पसत्थ-विच्छिन्न-केसराडोव-सोहियं ऊसिय-सुनिम्मिय-सुजाय-अप्फोडिय-लंगूलं, सोमं सोमाकारं लीलायंतं जिंभायंतं नहयलाओ ओवयमाणं, नियग-वयणमइवयंतं पेच्छइ सा गाढ-तिक्ख-नहं सीहं वयण-सिरी पल्लव-पत्त-चारु-जीहं ॥३॥ ॥३६॥

(३६) इसके बाद स्वप्न में सिंह दिखाई पड़ा। वह मोतियों की माला, क्षीर सागर, चन्द्रमा की किरण, जल-कण और चाँदी के पर्वत के समान गौर आभा लिये सफेद और उज्ज्वल था। वह रमणीय और दर्शनीय था। उसके पंजे स्थिर और सुदृढ़ थे। उसके मुँह में शोभित दाढ़ें गोल, सुपुष्ट, परस्पर सटी हुई और खूब तीखी थीं। उसके दोनों होठ कमल के समान कोमल, उपयुक्त आकार के, सुन्दर, पुष्ट और स्वच्छ थे। उसका तालू लाल कमल की पंखुड़ियों सा कोमल और स्निग्ध था। उसकी जीभ मुख से बाहर लपलपा रही थी। उसकी आँखें सुनार के साँचे में पड़े पिघले सोने के समान तप्त, सुनहरी, गोल और चमकदार थीं। उसकी विशाल जाँघें अत्यन्त पुष्ट और सुन्दर थीं। उसके कंधे पूरे भरावदार और सुडोल थे। उसके माथे पर कोमल, साफ, सुन्दर, महीन, घनी और फैली हुई अयाल शोभित हो रही थी। उसकी उठी हुई पूँछ कुण्डलाकार और सुन्दर थी। वह सौम्य था। उसकी चाल शालीन थी। उसके नाखूनों की नोक, सख्त, कठोर और धारदार थी। नई कोंपल के समान सुन्दर जीभ उसके मुख की शोभा को बढ़ा रही थी। त्रिशला ने ऐसे सिंह को जंभाई लेते हुए, खिलवाड़ करते, आकाश से अपने मुख में प्रवेश करते हुए देखा।

3. The Lion

(36) Then she dreamt of a lion. It was brilliant white with a golden hue like strings of pearl, a sea of milk, moon rays, drops of water, and a heap of silver. It was attractive and captivating to look at. Its paws were strong and unrelenting. Its jaws had a strong set of teeth without any gaps and with rounded and sharp canines. Both its lips were lotus soft, beautifully shaped, thick and clean; the palate was smooth and soft like petals of crimson lotus. The tip of its tongue hung out. Like molten gold in a goldsmith's crucible, its eyes were gleaming golden fire balls. It had huge muscular and streamlined flanks, and full and well proportioned shoulders. It had a thick and puffed

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

mane of clean, soft, fine and beautiful hair. Its tail was lifted and it formed an attractive spiral. The lion was majestic and its gait graceful. Its claws were hard and sharp. Soft as petals, its tongue added to the beauty of its open mouth. Trishala Kshatriyani saw such a magnificent lion playfully yawning, descending from the sky, and entering her mouth.

४. लक्ष्मी दर्शन

तओ पुणो पुण्णचंद-वयणा उच्चगयट्ठाण-लट्ठ-संठियं, पसत्थरूवं, सुपइट्ठिय-कणग-कुम्म-सरिसोवमाण-चलणं अच्चुन्नय-पीण-रइय-मंसल-उन्नत-तणु-तंब-निद्ध-नहं, कमल-पलास-सुकुमाल-कर-चरण-कोमल-वरंगुलिं, कुरुविंदावत्त-वट्टाणुपुव्वजंघं, निगूढजाणुं गयवर-कर-सरिस-पीवरोरुं, चामीकर-रइअ-मेहलाजुत्त-कंत-विच्छिन्न-सोणिचक्कं, जच्चंजण-भमर-जलय-पकर-उज्जुय-सम-संहिय-तणुय-आदेज्ज-लडह-सुकुमाल-मउय-रमणिज्ज-रोमाराइं, नाभिमंडल-सुन्दर-विसाल-पसत्थ-जघणं, करयल-माइय-पसत्थ-तिवलीय-मज्झं, नाणामणि-रयण-कणग-विमल-महातवणिज्जा-भरण-भूसण-विराइयंगमंगिं।

हार-विरायंत-कुंदमाल-परिणद्ध-जलजलिंत-थणजुयल-विमल कलसं आइय-पत्तिय-विभूसिएण य सुभग-जालुज्जलेण मुत्ता-कलावएणं उरत्थ-दीणार-मालिय-विरइएणं कंठ-मणिसुत्तएण य कुंडल-जुयलुल्लसंत-अंसोवसत्त-सोभंत-सप्पभेणं सोभा-गुण-समुदएणं आणण-कुडुंबिएणं कमलामल-विसाल-रमणिज्ज-लोयणं, कमल-पज्जलंत-कर-गहिय-मुक्क-तोयं, लीलावाय-कय-पक्खएणं, सुविसय-कसिण-घण-सण्ह-लंबंत-केसहत्थं, पउमद्दह-कमलवासिणिं सिरिं भगवइं पिच्छइ; हिमवंत-सेल-सिहरे दिसागइंदोरु-पीवर-कराभिसिच्चमाणिं।।४।। ।।३७।।

(३७) इसके बाद चंद्रमुखी त्रिशला क्षत्रियाणी ने स्वप्न में देवी लक्ष्मी को देखा। वह अतीव सुन्दरी देवी ऊँचे पर्वत पर उत्पन्न श्रेष्ठ जाति के कमल के आसन पर विराजमान थी। उसके चरण सोने के सज्जित कछुए के आकार जैसा उभार लिए थे। उसके नाखून सुन्दर गोल आकार के और पुष्ट थे। उन पर रंग सज्जा की हुई नहीं थी फिर भी वे सज्जित लग रहे थे, माँसल उभार लिए हुए थे और ताँबे के पत्तर की तरह लाल और चिकने थे। उसके हाथ और पैर कोमल थे और अंगुलियाँ कमल-दल के समान कोमल और सुन्दर थीं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उसकी पिंडलियाँ नागर मोथा और कदली स्तम्भ के समान गोल, पतली तथा सुडोल थीं। माँसल भराव के कारण उसके घुटने और टखने अलग से दिखाई नहीं देते थे। उसकी जाँघें हाथी की सूँड़ के समान पुष्ट थीं। उसने कमर में सोने की विशाल और चमकीली करधनी पहनी हुई थी। उसकी रोमराजि उत्तम काजल, भँवरे और वर्षा के घने बादलों की तरह काली थी और सीधी, क्रमबद्ध, महीन, सुन्दर, कोमल, मृदु और सुन्दर थी। उसके नितम्ब सुडोल-गोल, सुन्दर और मनोहर थे। उसकी कमर मुट्ठी में आ जाये इतनी पतली थी। पेट पर के तीन सल उसके सौन्दर्य को बढ़ा रहे थे।

उसने अंगोपांगों पर मणियों, रत्नों और लाल आभा वाले सोने के तरह-तरह के सुन्दर गहने पहन रखे थे। सुडोल कलशों के समान सुन्दर उरोज मोतियों के कंठों और कुंद पुष्प की माला से सुसज्जित थे और चमकते हारों की पंक्तियों तथा मोतियों के गुच्छों से उद्‌भासित हो रहे थे। वक्षस्थल पर स्वर्ण-मुद्राओं का हार पड़ा था और गले में मंगल सूत्र शोभित हो रहा था। कानों के चमचमाते कुण्डल कंधों तक लटक रहे थे। उन कुण्डलों की आभा जैसे मुखमंडल की आभा के परिवार की ही हो। सौन्दर्य के गुणों के इस समूह से वह अपूर्व शोभामय हो रही थी। उसके दोनों हाथों में चमकते कमल पुष्प थे, जिनसे मकरन्द की बूँदें टपक रहीं थीं। वह चंचल और डोलते पंखे से विभूषित थी। उसकी सुन्दर, घनी और काली चोटी कमर तक लटक रही थी। कमल के आसन पर बैठी इस देवी का अभिषेक पहाड़ की चोटियों पर खड़े विशाल हाथियों की मोटी सूँड़ों से निकलती जलधाराओं से हो रहा था।

4. Goddess Laxmi

(37) Moon faced Trishala Kshatriyani then saw goddess Laxmi in her dream. That divinely beautiful goddess sat on rare species of Himalayan lotus. Her feet were of the colour and shape of a golden turtle. The nails on her toes were exquisitely rounded and full, smooth and red like copper foil, and without being pedicured and painted they appeared so. Her limbs were delicate and her fingers beautiful and tender like lotus petals. Her lower legs were shapely, round, and tapered like the inside stem of a plantain tree. Her thighs were full and healthy like the trunk of an elephant. Her legs were so full and rounded that the knee and ankle joints were not distinguishable. She had buxom buttocks that were beautiful and captivating. Her waist was as thin as a fist. Three distinct line-like folds on her abdomen added to her beauty.

Different parts of her body were adorned with a variety of ornaments made of gold with a reddish hue and studded with jewels and beads. On her

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

waist rested a large and shining girdle made of gold. On her shapely and beautiful breasts rested strings of pearls and garlands of Kunda flowers, and they were made more prominent by the glow of rows of necklaces with bunches of pearls. In the area just below the neck was placed a necklace of gold coins and a Mangalasutra (the auspicious sign of a married lady). In her ears dangled brilliant earings that touched her shoulders; their glow mingled with that of her face. Her body hair was black like fine collyrium, or bumble-bees, or rain-clouds and also uniform, thin, delicate, soft, and beautiful. Adorned with all the signs of beauty she looked gorgeous. Drops of pollen dripped from the gleaming lotus flowers in both her hands. There was a swinging fan besides her. Her thick and dark hair was knitted into a beautiful tail that hung touching her waist. Two giant elephants from the mountain peaks were annointing this goddess, sitting on a lotus, with streams of water flowing from their thick round trunks.

५. *माला दर्शन*

तओ पुणो सरस-कुसुम-मंदार-दाम-रमणिज्जभूयं चंपगा-सोग-पुण्णाग-नाग-पियंगु-सिरीस-मोग्गरग-मल्लिया-जाइ-जूहियं कोल्ल-कोज्ज-कोरिंट-पत्त-दमणय-नवमालिय-वउल-तिलय-वासंतिय-पउमुप्पल-पाडल-कुंदाइमुत्त-सहकार-सुरभिगंधिं अणुवम-मणोहरेणं गंधेणं दस दिसाओ वि वासयंतं सव्वोउय-सुरभि-कुसुम-मल्ल-धवल-विलसंत कंत-बहुवन्न-भत्तिचित्तं छप्पय-महुयरि-भमर-गण-गुम-गुमायंत-निलिंत-गुंजंत-देसभाग दामं पेच्छइ नहंगण-तलाओ ओवयंतं ॥५॥ ॥३८॥

(३८) इसके बाद त्रिशला क्षत्रियाणी ने माला का स्वप्न देखा। वह माला मन्दार के सरस और ताज़ा फूलों से गुँथी हुई और सुन्दर थी। उस माला में चम्पक, अशोक, पुन्नाग, नाग-केशर, प्रियंगु, शिरीष, मोगरा, मल्लिका, जाई, जूही, अंकोल, कोज्ज, कोरंट-पत्र, दमनक, नवमालिका, बकुल, तिलक, वासन्ती, पद्म, उत्पल, पाटल, कुन्द, अतिमुक्तक और सहकार के सुगन्धमय फूल भी गुँथे हुए थे। यह माला सभी ऋतुओं में खिलने वाले सुगन्धपूर्ण फूलों से बनी थी। मुख्यतया सफेद रंग की इस माला में अनेक तरह-तरह के रंगों के फूल होने से वह अत्यन्त आकर्षक और अद्भुत दिखाई पड़ती थी। माला के चारों ओर षट्पद, भँवरे, मधुमक्खी आदि गुँजन करते हुए मँडरा रहे थे। त्रिशला ने ऐसी माला को आकाश से नीचे आते देखा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

5. The Garland

(38) Her next dream was of a garland. It was a beautiful garland made up of fresh and gleaming Mandar flowers. Also strung in this garland were a variety of exotic, fragrant, and all-season flowers like—Champaka, Ashoka, Punnaga, Naga-keshar, Priyangu, Shirish, Mogra, Mallika, Jai, Juhi, Ankol, Kojja, Korant-patra, Damanak, Nava-mallika, Bakul, Vasanti, Padma, Utpal, Patal, Kunda, Atimuktaka, and Sahakar. The sprinkling of the wide range of colours in the predominently white base made it extremely attractive and splendid. All around this garland could be seen, hovering and buzzing, insects like bumble-bees, honey-bees, wasps, etc. Trishala Kshatriyani saw in her dream such a splendid garland descending from the skies.

६. चन्द्र दर्शन

ससिं च गोखीर-फेण-दगरय-रयय-कलस-पंडुरं सुभं हियय-नयण-कंतं, पडिपुन्नं, तिमिर-निकर-घण-गहिर-वितिमिरकरं, पमाण-पक्खंत-रायलेहं, कुमुद-वण-विबोहयं, निसा-सोभगं, सुपरिमट्ठ-दप्पण-तलोवमं, हंस-पडुवन्नं, जोइस-मुह मंडगं, तम-रिपुं मयण-सरापूरं, समुद्द-दग-पूरगं, दुम्मणं जणं दइय-वज्जियं पायएहिं सोसयंतं पुणो सोम्म-चारुरूवं, पेच्छइ सा गगण-मंडल-विसाल-सोम्म-चंकम्ममाण-तिलगं, रोहिणि-मण-हियय-वल्लहं देवी पुन्नचंदं समुल्लंसतं ॥६॥ ॥३९॥

(३९) फिर त्रिशला क्षत्रियाणी ने स्वप्न में चन्द्रमा देखा। वह चाँद दूध, पानी के झाग, पानी की बूँद, हंस या चाँदी के कलश की तरह सफेद था। वह पूर्ण और शुभ था तथा देखने से आँखों और मन को आनन्द देने वाला था। वह घने अंधकार का नाश करने वाला था। पूनम के चाँद की तरह वह सोलह कलाओं वाला था और उसके प्रकाश से कुमुद खिल उठते थे। रात्रि की शोभा बढ़ाने वाला वह चाँद एकदम साफ दर्पण की तरह चमक रहा था। नक्षत्र और तारों के समूह का वह मुखिया था और अंधकार का शत्रु। कामदेव के बाणों के तरकश के समान वह चन्द्र अपनी किरणों से विरह पीड़ित लोगों की व्यथा बढ़ाता था। सौम्य और सुन्दर रूप वाला वह चन्द्रमा अनन्त आकाश का चंचल तिलक था। रोहिणी का वह प्रीतम समुद्र में ज्वार पैदा करने वाला था। त्रिशला देवी ने ऐसा पूर्ण विकसित चन्द्रमा अपने स्वप्न में देखा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

6. The Moon

(39) After this, Trishala Kshatriyani saw the moon. It was white as milk, froth of water, droplets of water, swan, or a silver pitcher. It was the auspicious full moon that pleased the eyes and mind when beheld. It dispelled the dense darkness of the night. Being the full moon, it embraced all the sixteen waxing stages of its growth. Its beams caused the lotus to bloom. It was shining like a spotless mirror, enhancing the serene beauty of the night. It was the enemy of darkness and chief of the countless stars and planets. Like the arrow of Cupid its rays increased the pain of parted lovers. This soothingly beautiful moon was the alluring ornament of the infinite sky. It was the spouse of the constellation named Rohini and the cause of ebb and flow in the oceans. Trishala Kshatriyani saw such splendid full moon in her dream.

७. सूर्य दर्शन

तओ पुणो तम-पडल-परिप्फुडं, चेव चेयसा पज्जलंतरूवं रत्तासोग-पगास-किंसुय-सुगमुह-गुंजद्ध-राग-सरिसं कमल वणालंकरणं अंकणं जोइसस्स अंबर-तल-पईवं हिमपडल-गलग्गहं गह-गणोरु-नायगं रत्ति-विणासं उदयत्थमणेसु मुहुत्त-सुहं-दंसणं दुन्निरिक्ख-रूवं रत्तिमुद्धायंत-दुप्पयार-पमद्दणं सीयवेग-महणं पेच्छइ मेरु-गिरि-सयय-परियट्टयं विसालं सूरं रस्सी-सहस्स-पयलिय-दित्त-सोहं ॥७॥ ॥४०॥

(४०) इसके बाद उसने सूर्य का स्वप्न देखा। वह सूर्य तेज से प्रदीप्त रूप वाला और अंधकार के समूह का नाश करने वाला था। लाल अशोक, विकसित किंशुक, तोते की चोंच और चिर्मी के रंग की सी ललाई लिए वह सूर्य कमल वनों को विकसित करने वाला था और ज्योतिष चक्र को आँकने वाला था। गगन तल का वह दीपक बर्फ के ढेरों को पिघलाने वाला था। वह रात्रि का नाश करने वाला और ग्रह मण्डल का मुखिया था। उसकी ओर केवल उदय और अस्त के समय ही देख पाना सम्भव था, अन्य किसी भी समय उसकी ओर देख पाना कठिन था। अंधेरे की आड़ में काम करने वाले जार, चोर आदि को त्रास देने वाला था और सर्दी के प्रभाव को कम करने वाला भी। अपनी हज़ारों किरणों से चन्द्रमा व अन्य ग्रहों के तेज को मंद करने वाला वह सूर्य मेरु पर्वत के चारों ओर निर्बाध घूमता था। ऐसा विशाल सूर्य त्रिशला ने अपने स्वप्न में देखा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

7. The Sun

(40) Then Trishala Kshatriyani saw the Sun in her dream. It was brilliantly radiant and scattered the gathered mass of darkness. It was crimson like the colour of the red Ashoka flower, the blooming Kinshuk flower, the beak of a parrot or a gunja seed. The touch of its rays made lotuses bloom. It described the astrological circle. This lamp of the sky melted heaps of snow and ice. It brought the end of the night and was the head of the planets. It was impossible to look at it at any time other then dawn or dusk. It caused consternation to thieves and other denizens of darkness. With its warmth it removed chilling cold. With its brilliance it reduced the glow of the moon and stars to insignificance. It perpetually moved on its circular path around Meru mountain.

८. ध्वजा दर्शन

तओ पुणो जच्च-कणग-लट्ठि-पइट्ठियं [वत्थ-] समूह-नील-रत्त-पीय-सुक्किल्ल-सुकुमालुल्लसिय-मोरपिच्छ-कयमुद्धयं, फालिय-संखंक-कुंद-दगरय-रयय-कलस-पंडरेण मत्थयत्थेण सीहेण रायमाणेणं रायमाणं भेत्तुं गगण-तल-मंडलं चेव ववसिएणं पेच्छइ सिव-मउय-मारुय-लयाहय-पकंपमाणं अतिप्पमाणं जण-पिच्छणिज्जरूवं ॥८॥ ॥४१॥

(४१) फिर त्रिशला क्षत्रियाणी ने स्वप्न में ध्वजा देखी। वह ध्वजा उत्तम सोने के ऊँचे डंडे पर लगी थी और नीले, पीले, लाल, सफेद आदि कई रंगों के कपड़ों से बनी थी। ध्वजा की चोटी पर कोमल मोर-पंख शोभित थे। ध्वजा के आधे भाग में उत्कृष्ट सफेद रंग का सिंह चित्रित था। वह ऊँची ध्वजा मन्द-मन्द हवा के शीतल झोंकों से जब लहराती थी तो लगता था मानो वह सिंह आकाश को चीरने का प्रयत्न कर रहा है। उस ध्वजा का रूप देखते ही बनता था।

8. The Flag

(41) Next to come in her dream was the flag. This flag was made of cloth of blue, yellow, red, white and numerous other colors, and was flying on a staff made of pure gold. At the top of this staff were stuck soft peacock-feathers. A lion, as white as crystal, a conch, a white gem, a Kunda flower, a water drop or a silver pitcher, was painted on one half of the flag. When this flag fluttered in the gentle breeze it appeared as if the lion was trying to tear apart the sky. The beauty of that flag was a treat to the eyes.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९. कलश दर्शन

तओ पुणो जच्च-कंचणुज्जलंत-रूवं निम्मल-जल-पुन्नमुत्तमं दिप्पमाण-सोहं कमल-कलाव-परिरायमाणं पडिपुण्ण-सव्वमंगल-भेय-समागमं पवर-रयण-परायंत-कमलट्ठियं नयण-भूसणकरं पभासमाणं सव्वओ चेव दीवयंतं सोम-लच्छी-निभेलणं सव्व-पाव-परिवज्जियं सुभं भासुरं सिरिवर सव्वोउय-सुरभि-कुसुम-आसत्त-मल्लदामं, पेच्छइ सा रययपुन्न-कलसं ॥९॥ ॥४२॥

(४२) त्रिशला ने फिर स्वप्न में कलश देखा। वह कलश सुनहरी चमक लिए था और चारों तरफ कमल पुष्पों से घिरा हुआ था। स्वच्छ जल से भरा वह कलश मनोहर कान्तियुक्त था। वह सर्वमंगलमय था मानो सभी प्रकार के मंगल चिन्ह उसमें सिमट आए हों। वह उत्तम रत्नों से बने कमल पर रखा हुआ था जिसे देखते ही आँखें आनन्द विभोर हो उठती थीं। वह प्रकाशमय था और उसकी आभा दसों दिशाओं में फैल रही थी। वह शुभ और निर्दोष कलश लक्ष्मी का आवास था। कलश के गले में सर्व ऋतुओं के सुगंधित फूलों की मालाएँ पड़ी थीं।

9. The Urn

(42) After this she saw an urn. This urn was bright golden in colour and was resting in the middle of lotus flowers. Filled with pure clean water, this urn had an attractive sheen. It was all-auspicious, as if all possible auspicious signs had been drawn within it. It rested on a exclusive lotus made up of best quality gems. It was radiant and its sparkle filled all directions. This holy and faultless urn was the abode of the goddess Laxmi. Lying around its neck were garlands of fragrant, all-season flowers.

१०. पद्म-सरोवर

तओ पुणो रवि-किरण-तरुण-बोहिय-सहस्सपत्त-सुरहितर-पिंजर-जलंजलचर-पहगर-परिहत्थग-मच्छ-परिभुज्जमाण-जलसंचयं महंतं जलंतमिव, कमल-कुवलय-उप्पल-तामरस-पुंडरीय-उरुसप्पमाण-सिरिसमुदएणं रमणिज्ज-रूव-सोभं पमुइयंत-भमर-गण-मत्त-महुकरि-गणोक्करोलिज्जमाण-कमल कादंबग-बलाहग-चक्काक-कलहंस-सारस-गव्विय-सउण-गण-मिहुण सेविज्जमाण-सलिलं पउमिणि-पत्तोवलग्ग-जलबिंदु-निचयचित्तं च पेच्छइ सा हियय-नयणकंतं पउमसरं नाम सरं सररूहाभिरामं ॥१०॥ ॥४३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(४३) फिर वह पद्म सरोवर का स्वप्न देखती है। वह सरोवर सूर्य की किरणों के प्रभाव से खिले फूलों के मकरन्द से महक रहा था। उसका पानी ललाई लिए पीले रंग का था। उसमें रहने वाले जीव समूह इधर-उधर तैर रहे थे और मछलियाँ पानी पी रही थीं। वह तालाब बहुत विशाल था। सूर्य की किरणों से खिलने वाले कमल, कुवलय, लाल रंग के उत्पल, तामरस, सफेद पुण्डरीक आदि कई तरह के कमल फूलों के विस्तार से तथा उनके अनेक रंगों की नर्तन करती आभाओं से वह सरोवर प्रदीप्त हो रहा था। सरोवर का रूप और उसकी छटा मनोहारी थे। आनन्द से गुंजन करते भँवरों के झुंड और नशे में झूमतीं मधु-मक्खियों के झुंड उन फूलों पर बैठ उनका पराग चूस रहे थे। मीठे स्वर वाले कादम्बक, बक, बगुले, चकवे, कलहंस, सारस आदि पक्षियों के जोड़े हर्ष से उस सरोवर में क्रीड़ा कर रहे थे। कमलिनी दल पर पड़ी पानी की बूँदें मोतियों की तरह चमक रही थीं।

10. The Lotus-pond

(43) Trishala Kshatriyani, then, saw a lotus pond. The flowers in this pond were in full bloom due to the falling sun rays and it was saturated with the fragrance of the pollen of these flowers. It was full of floating and swimming aquatic life. This large pond was resplendent with multicoloured hue of sunrays reflected from a wide variety of lotus flowers of different colours including—Kamal, Kuvalaya, red Utpal, Tamaras, white Pundarik, etc. Swarms of honey-bees and bumble-bees were sucking the pollen, hovering and buzzing with delight. A variety of birds including Kadambak, Baka, Bagula, Chakva, Kalahamsa, Saras, etc., were joyfully playing around and emitting sweet sounds. The dew drops on the petals of lotus flowers were shining like pearls. The pond was stunningly beautiful.

११. क्षीर सागर

तओ पुणो चंद-किरण-रासि-सिरिवच्छ-सोहं, चउगमण-पवड्ढमाण-जल-संचयं, चवल-चंचलुच्चायप्पमाण-कल्लोल-लोलंत तोय-पडु-पवणाहय-चलिय-चवल-पागड-तरंग-रंगंत-भंग-खोखुब्भमाण-सोभंत-निम्मल-उक्कड-उम्मी-सह-सम्बन्ध-धावमाणोव-नियत्त-भासुरतराभिरामं महा-मगरमच्छ-तिमि-तिमिंगल-निरुद्ध-तिलि-तिलिया-भिघाय-कप्पूर-फेण-पसरं, महानई-तुरिय-वेग-समागय-भम-गंगावत्त-गुप्प मारुच्चलंत-पच्चोनियत्त-भममाण-लोल-सलिलं पेच्छइ खीरोय-सागरं सारय-रयणिकर-सोम्मवयणा ॥११॥ ॥४४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(४४) इसके पश्चात् त्रिशला रानी ने क्षीर सागर का स्वप्न देखा। क्षीर सागर का मध्य भाग चंद्र किरणों के समान उज्ज्वल था। वह बढ़ती जल राशि से चारों दिशाओं में फैलता-सा लग रहा था। चपल, चंचल और ऊँची लहरों से उसकी सतह तरंगित हो रही थी और ऐसा लग रहा था कि वे आपस में टकरा कर दौड़ लगा रही हैं। वे उछलती हुई सुन्दर लहरें नाच रही थीं और अत्यन्त वेग से डोल रही थीं। एक के पीछे एक पंक्ति में दौड़ती वे लहरें चमक रही थीं और रमणीय लग रही थीं। महामगर, मच्छ, जिमि, तिमिंगिल, निरुद्ध, तिलितिलिय आदि जन्तुओं की पूँछों की फटकार से चारों तरफ कपूर जैसे सफेद झाग फैल रहे थे। अनेक महानदियों के प्रबल वेग से गिरते पानी के कारण उसमें गंगावर्त नामक भंवर उत्पन्न होते थे, जिनके कारण पानी उद्वेलित होकर उछलता गिरता और चारों ओर चक्कर लगाता हुआ दिखाई देता था।

11. The Milky Sea

(44) Her next dream was of a milky sea. The surface in the middle of the sea had the brilliant whiteness of moon beams. The swelling mass of its waters appeared to be spreading in all directions. Its surface was violent with surging waves that collided with each other and raced ahead. The vigorous momentum ended in a dance of macabre beauty. Running one after the other, the cascading sequence of these shining waves presented a fascinating view. The surface was covered by an ever spreading, camphor like froth, created by the beating of the waters by tails of giant aquatic creatures such as Mahamagar, Machha, Jimi, Timingal, Niruddha, etc. Many great rivers emptied into it with tremendous speed creating giant whirlpools, known as Gangavarta, and giving a circular motion to the surging and falling mass of water.

१२. देव-विमान दर्शन

तओ पुणो तरुण-सूरमंडल-समप्पभं, (दिप्पमाण-सोहं) उत्तम-कंचण-महामणि-समूह-पवर-तेय-अट्ठसहस्स-दिप्पंत-नह-प्पईवं, कणग-पयर-लंबमाण-मुत्ता-समुज्जलं, जलंत-दिव्वदामं, ईहामिग-उसभ-तुरग-नर-मगर-विहग-वालग-किन्नर-रुरु-सरभ-चमर-संसत्त-कुंजर-वणलय-पउमलय-भत्तिचित्तं, गंधव्वोपवज्जमाण-संपुण्णघोसं, निच्चं सजल-घण-विउल-जलहर-गज्जिय-सद्दाणुणाइणा देव-दुंदुभि-महारवेणं सयलमवि जीवलोयं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पपूरयंतं कालागुरु-पवर-कुंदुरुक्क-तुरुक्क-डज्झंत-धूव-दसंग-मघमघंत-गंधद्धुयाभिरामं निच्चालोयं सेयं सेयप्पभं सुरवराभिरामं पिच्छइ सा सातोवभोगं विमाण-वर-पुंडरीयं ॥१२॥ ॥४५॥

(४५) तत्पश्चात् उसने विमान का स्वप्न देखा। वह देव विमान बाल-सूर्य की तरह चमक वाला और शोभामय था। उसमें सोने और रत्नों से बने आठ हजार स्तम्भ थे जो अपने तीव्र प्रकाश के कारण आकाश में दीप की तरह चमक रहे थे। उसमें सोने के पत्तर पर जड़े हुए बेदाग मोतियों के गुच्छे और चमचमाती दिव्य मालाएँ लटक रही थीं। उस विमान पर अनेक सुन्दर भित्ति चित्र बने हुए थे जिनमें इहा-मृग (शुतुरमुर्ग), वृषभ, अश्व, नर, मगर, पक्षी, सूर्य, किन्नर, रुरु-मृग, शरभ, चमरीगाय, हाथी और वन लता, पद्म लता आदि आँके हुए थे। गंधर्वों द्वारा बजाए वाद्य यंत्रों का मधुर संगीत वहाँ निरन्तर गूँज रहा था। उसमें वर्षा के विशाल मेघों की गर्जना जैसी देव दुन्दुभियों का महाघोष ऐसे हो रहा था, मानो पूरे जीव लोक को अपनी गूँज से आच्छादित कर रहा हो। कृष्णागुरु, श्रेष्ठ कुंदरु, और तुरुष्क (लोबान) की जलती धूप से वह महक रहा था और रमणीय लग रहा था। उस विमान में सदैव प्रकाश रहता था। उसमें सदा देव विचरते थे। वह उज्ज्वल सफेद आभा वाला था। सुख के साधनों से परिपूर्ण ऐसा पुण्डरीक विमान त्रिशला ने सपने में देखा।

12. The Space-ship of Gods

(45) She then saw a space-ship of the gods (Dev Viman) in her dream. It was as bright and beautiful as the rising sun. There were eight thousand pillars made of gold and studded with gems in this ship, and these were glittering like bright lamps in the sky. Golden leaves with bunches of pearls and divine garlands were hanging in it. There were numerous murals on the walls with a variety of motifs, such as Iha Mriga (ostrich), bull, horse, man, alligator, bird, serpent, demi-god, Ruru-Mriga, Sharabh, yalk, Shavapad, elephant, wild creeper, lotus, etc. Lower gods filled it with melodious instrumental music all the time. Divine drums emitted a loud rumbling sound like that coming from dense monsoon clouds, as if the whole universe was filled with that drumming sound. The fragrance of burning incenses like Krishnaguru, Shreshta kunduru, and Turushk made it all the more enchanting. It remained illuminated with a white glow and was furnished with all means of pleasure and convenience. Trishala Kshatriyani saw this magnificent ship that was named Pundarika.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३. रत्नराशि

तओ पुणो पुलग-वेरिंदनील-सासग-कक्केयण-लोहियक्ख-मरगय-मसारगल्ल-पवाल-फलिह-सोगंधिय-हंसगब्भ-अंजण-चंदप्पभ-वर-रयणेहिं महियल-पइट्ठियं गगणमंडलंतं पभासयंतं तुंगं मेरुगिरि-सन्निगासं पिच्छइ सा रयण-निकर-रासिं ॥१३॥ ॥४६॥

(४६) फिर त्रिशला ने स्वप्न में रत्नराशि देखी। पुलक, वज्र, इन्द्रनील, शास्यक (सस्यक), कर्केतन, लोहिताक्ष, मरकत, मसारगल्ल, मूँगा, स्फटिक, नील, सौगन्धिक, हंसगर्भ, अंजन और चन्द्रप्रभा आदि उत्तम रत्नों का ढेर जमीन पर लगा हुआ था। उनकी चमक से सारा आकाश आलोकित हो रहा था। वह रत्नों का ढेर मेरु पर्वत के समान ऊँचा लग रहा था।

13. The Heap of Gems

(46) It was a heap of gems that Trishala Kshatriyani saw next in her dream. This heap contained a variety of good quality gems including— Pulak (black stone), Vajra (diamond), Indranil (blue sapphire), Sasyak, Karketan, Lohitaksha (ruby), Markat (emerald), Masargalla (carnelian), Moonga (coral), Sphatik (crystal-quartz), Neel (blue sapphire), Saugandhik (ruby), Hamsagarbh, Anjan, Chandraprabha (monstone), etc. This heap was as high as Meru mountain and a glow spread in the sky due to the radiance of these gems.

१४. निर्धूम अग्निशिखा

सिंहि च सा विउलुज्जल-पिंगल-महुघय-परिसिच्चमाण-निद्धूम-धगधगाइय-जलंत-जालुज्जलाभिरामं तरतम-जोगेहिं जाल-पयरेहिं अण्णमण्णमिव अणुपइण्णं पेच्छइ जालुज्जलणग-अंबरं व कत्थइ-पयंतं अइवेग-चंचलं सिहिं ॥१४॥ ॥४७॥

(४७) अन्त में त्रिशला ने निर्धूम अग्नि शिखा का स्वप्न देखा। उस अग्नि की विशाल ज्वालाएँ ऊपर की ओर उठ रही थीं। निर्मल घी और पीले शहद से बार-बार सींचे जाने के कारण उसकी धधकती लपटें धुँआरहित थीं। उनकी दमक इसीलिए आकर्षक थी। छोटी बड़ी ज्वालाओं का मिश्रण मानो ऊँचा उठकर आकाश को छूने का प्रयास कर रहा हो। ये लपटें वेग से धधकने के कारण अत्यधिक चंचल थीं।

14. The Smokeless Fire

(47) The last dream that Trishala Kshatriyani saw was of a smokeless fire. Its giant flames were reaching the sky. As this fire was fuelled by pure

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Ghee and yellow honey, its towering flames did not emit any smoke and had an attractive glow. These fast leaping low and high flames overlapped each other, swelling with great force.

इमे एयारिसे सुभे, सोम्मे, पियदंसणे, सुरूवे सुमिणे दट्ठूण सयणमज्झे पडिबुद्धा अरविंद-लोयणा हरिस-पुलइयंगी।

एए चोद्दस-सुमिणो, सव्वा पासेइ तित्थयर-माया।
जं रयणिं वक्कमई, कुच्छिंसि महायसो अरहा॥१॥ ॥४८॥

(४८) ये सब शुभ सौम्य, प्रिय, दर्शनीय और सुन्दर स्वप्न देखकर कमल जैसे नयनों वाली त्रिशला हर्ष से पुलकित हो उठी। उसके अंग रोमांचित हो उठे और वह जाग पड़ी।

जिस रात महायशस्वी अरहंत तीर्थंकर अपनी माँ की कोख में आते हैं उस रात उन सभी की माताएँ इसी प्रकार चौदह स्वप्न देखती हैं।

(48) Seeing these auspicious, pleasing, lovely, attractive and beautiful dreams, lotus-eyed Trishala Kshatriyani was filled with joy, and the exhilerating sensation woke her up.

Whenever an illustrious Tirthankar is concieved by his mother, she experiences these same fourteen visions in her dream.

तएणं सा तिसला खत्तियाणी इमेयारूवे ओराले चोद्दस महासुमिणे पासित्ताणं पडिबुद्धा समाणी हट्ठ जाव हय-हियया धाराहय-कलंब-पुप्फगं पिव समूससिय-रोमकूवा सुमिणोग्गहं करेइ, सुमिणोग्गहं करित्ता सयणिज्जाओ अब्भुट्ठेइ, सयणिज्जाओ अब्भुट्ठित्ता पाय-पीढाओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता अतुरियं अचवलमसंभंताए अविलंबियाए रायहंस-सरिसीए गईए जेणेव सयणिज्जे जेणेव सिद्धत्थे खत्तिए, तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सिद्धत्थं खत्तियं ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं पियाहिं मणुन्नाहिं मणामाहिं ओरालाहिं कल्लाणाहिं सिवाहिं धन्नाहिं मंगल्लाहिं सस्सिरियाहिं हियय-गमणिज्जाहिं हियय-पल्हायणिज्जाहिं मिउ-महुर-मंजुलाहिं गिराहिं संलवमाणी संलवमाणी पडिबोहेइ॥४९॥

(४९) चौदह महास्वप्न देखकर जागी त्रिशला आनन्दमग्न हो गई। उसका मन हर्ष-विभोर हो उठा। वर्षा से भीगे कदम्ब के फूल की तरह उसका रोम-रोम पुलक उठा। उसने सपनों को

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

याद किया और फिर शय्या से उठ पाद पीठ पर होती हुई धरती पर उतरी। वह पूर्ण जाग्रत हो तत्काल मन्द-मन्द चपलतारहित राजहंस जैसी चाल से राजा सिद्धार्थ के कमरे में गई। इष्ट, कान्त, प्रिय, मनोज्ञ, हृदयस्पर्शी, उदार, कल्याणमय, धन्य, मंगलकारी, शोभाकारी, मृदु, मधुर, मंजुल, हृदयग्राही और आह्लादकारक वाणी का उच्चारण कर उसने सिद्धार्थ राजा को जगाया।

(49) Waking up after the vision, Trishala Kshatriyani was filled with joy. Her heart was brimming over with happiness. As a Kadamba flower blossoms at the touch of droplets of rain, every pore of Trishala's body became alive with a sensation of ecstacy. She brooded over the vivid dreams and got up from the bed. She moved away from the bed, drifting with the grace of a swan and approached the bed of Siddhartha with unhurried gait and steady steps. She gently woke him up, uttering loving, touching and suitable words in her soft, sweet, pleasing and melodious vioce with a gracious, open, warm, and polite accent.

तए णं सा तिसला खत्तियाणी सिद्धत्थेणं रन्ना अब्भणुन्नाया समाणी नाणा-मणि-रयण-भत्ति-चित्तंसि भद्दासणंसि निसीयइ, निसीइत्ता आसत्था विसत्था सुहासण-वर-गया, सिद्धत्थं खत्तियं ताहिं इट्ठाहिं जाव संलवमाणी संलवमाणी एवं वयासी–॥५०॥

"एवं खलु अहं सामी! अज्ज तंसि तारिसंगंसि सयणिज्जंसि वण्णओ जाव पडिबुद्धा, तं जहा–गय वसह. गाहा। तं एएसिं सामी! उरालाणं चउदसण्हं महासुमिणाणं के मन्ने कल्लाणे फलवित्ति-विसेसे भविस्सइ?"॥५१॥

(५०) सिद्धार्थ राजा की अनुमति ले वह सोने के रत्नजड़ित और चित्रित भद्रासन पर बैठी। आश्वस्त होकर उसने सुखासन पर बैठे सिद्धार्थ से अपने मधुर स्वर में कहा–

(५१) "हे स्वामिन्! आज जब मैं अपनी शय्या पर सो रही थी तब चौदह महास्वप्न देखकर जागी। वे चौदह स्वप्न थे–गज, वृषभ आदि। हे स्वामिन्! मैं समझती हूँ कि इन चौदह महास्वप्नों का कोई बहुत कल्याणकारी फल मिलेगा?"

(50), (51) Seeking permission from king Siddhartha, she made herself comfortable on a golden and gem studded seat. Controlling her excitement and regaining her composure she addressed Siddhartha in her sweet voice, "Today, my lord! while I was sleeping in my bed I saw fourteen vivid and radiant dreams that broke my slumber. She then described the fourteen dreams (elephant, bull, etc.) and continued, I have a feeling, my lord, that

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

these great dreams are precursers of some blessed incident in the near future."

तएणं से सिद्धत्थे राया तिसलाए खत्तियाणीए अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठ-तुट्ठ-चित्ते आणंदिए पीइमणे परम-सोमणसिए हरिस-वस-विसप्पमाण-हियए धाराहय-नीव-सुरहि-कुसुम-चंचुमालइय-रोमकूवे ते सुमिणे ओगिण्हति, ते सुमिणे ओगिण्हित्ता, ईहं, अणुप्पविसइ, ईहं अणुप्पविसित्ता अप्पणो साहाविएणं मइपुव्वएणं बुद्धि-विन्नाणेणं तेसिं सुमिणाणं अत्थोग्गहं करेइ, अत्थोग्गहं करित्ता तिसला-खत्तियाणीं ताहिं इट्ठाहिं जाव मंगल्लाहिं पिय-महुर-सस्सिरीयाहिं वग्गूहिं संलवमाणे संलवमाणे एवं वयासी–॥५२॥

(५२) सिद्धार्थ राजा त्रिशला रानी की बात सुन-समझकर प्रसन्न हुआ और उसके मन को संतोष प्राप्त हुआ। उसके मन में प्रीति उत्पन्न हुई। उसे परम सौम्यता और आह्लाद मिले। वह हर्ष-विभोर हो उठा। वर्षा की बूँदों में भीगे सुगन्धित कदम्ब की तरह उसका रोम-रोम पुलकित हो उठा। उसने उन स्वप्नों को समझा और उनके फल का चिन्तन किया। अपनी स्वाभाविक प्रज्ञा और विज्ञान-बुद्धि द्वारा उसने प्रत्येक स्वप्न के विशिष्ट अर्थ व फल का निश्चय किया। फिर वह मधुर वाणी में त्रिशला से बोला–

(52) Trishala's words filled Siddhartha with joy. Like Trishala his heart also brimmed over with delightful ecstasy. He ruminated over the dreams and pondered what they augured. With the help of his inborn intelligence and discerning mind, he interpreted the dreams and what they forbode. He then conveyed sweetly to Trishala—

सिद्धार्थ राजा द्वारा स्वप्न-फलों की विवेचना

"ओराला णं तुमे देवाणुप्पिए! सुमिणा दिट्ठा, कल्लाणा णं तुमे देवाणुप्पिए! सुमिणा दिट्ठा, एवं सिवा, धन्ना, मंगल्ला, सस्सिरीया! आरोग्गतुट्ठि-दीहाउय-कल्लाण-मंगल-कारगा णं तुमे देवाणुप्पिए! सुमिणा दिट्ठा;

तं जहा–अत्थलाभो देवाणुप्पिए!, भोगलाभो देवाणुप्पिए!, पुत्तलाभो देवाणुप्पिए!, सोक्खलाभो देवाणुप्पिए!, रज्जलाभो देवाणुप्पिए!, एवं खलु तुमं देवाणुप्पिए! नवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णामणं अद्धट्ठमाणं य राइंदियाणं विइक्कंताणं अम्हं कुलकेउं, अम्हं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुलदीवं, कुल-पव्वयं, कुल-तिलयं, कुल-किंत्तिकरं, कुल-वित्तिकरं, कुल-दिणयरं, कुल-आहारं, कुल-नंदिकरं, कुल-जसकरं, कुल-पायवं, कुल-विवद्धण-करं, सुकुमाल-पाणि-पायं, अहीण-पडिपुण्ण-पंचेंदिय-सरीरं, लक्खण-वंजण-गुणोववेयं, माणुम्माण पमाण-पडिपुण्ण सुजाय-सव्वंग-सुंदरंगं ससि-सोमाकारं कंतं पियं सुदंसणं दारयं पयाहिसि।'' ॥५३॥

(५३) ''हे देवानुप्रिये! तुमने उदार व कल्याणकारी स्वप्न देखे हैं। हे देवानुप्रिये! तुमने शिव-मंगलरूपादि गुणों वाले स्वप्न देखे हैं। जिनके फलस्वरूप अर्थ, भोग, पुत्र, सुख व राज्य लाभ होगा। यह निश्चित है कि नौ महीने और साढ़े सात दिन पूरे होने पर तुम एक पुत्र को जन्म दोगी। तुम्हारा यह पुत्र हमारे कुल के लिए ध्वजा, दीपक, पर्वत, मुकुट, तिलक आदि के समान कीर्ति प्रदान करने वाला होगा। वह कुल का सूर्य, आधार व पादप वृक्ष होगा। वह कुल का निर्वाह करने वाला, यश बढ़ाने वाला, और विशेष वृद्धि करने वाला होगा। वह-सुकोमल हाथ-पैर वाला, किसी भी प्रकार की हीनता से रहित सम्पूर्ण पंचेन्द्रिय शरीर वाला होगा। उसका शरीर मान, उन्मान और परिमाण से पूर्ण व सर्वांग सुन्दर होगा। वह शुभ लक्षण, व्यंजन आदि गुणों से युक्त होगा। वह शोभावान, चन्द्रमा के समान सौम्य आकृति वाला, कान्त, मनोज्ञ और प्रियदर्शी होगा।''

The Interpretation by King Siddhartha

(53) "O beloved of gods! You have seen bountiful dreams that are harbingers of well being and good fortune. You will gain wealth, grandeur, a son, joy, and expansion of kingdom. It is certain that you will give birth to a son after nine months and seven and a half days from today. This son of yours will bring glory to our clan like a flag, a lamp, a mountain, a crown, and a mark on the forehead do. For our clan he will be like the sun, a support, and a shade giving tree. He will have delicate limbs, faultless and acute senses, and a perfectly formed body. His body will have all the auspicious marks and signs and it will be ideally proportioned in terms of shape, height and weight. Like a divine child he will be absolutely beautiful, charming, and handsome. Like the moon he will be soothingly radiant."

''से वि य णं दारए उम्मुक्क-बालभावे विन्नाय-परिणय-मित्ते जोव्वणगमणुपत्ते सूरे वीरे विक्कंते-विच्छिन्न-विउल-बल-वाहणे रज्जवई राया भविस्सइ. तं उराला णं तुमे.'' जाव दोच्चंपि तच्चं पि अणुबूहइ ॥५४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(५४) "वह बचपन बीतने पर कला, विज्ञान आदि सभी विषयों में पारंगत होकर यौवन प्राप्त करेगा। तब वह शूरवीर, तेजस्वी, विशाल, बलशाली, वाहन, सेना, राज्य आदि का स्वामी राजा होगा।" इस प्रकार तुमने जो महास्वप्न देखे हैं वे सभी अत्युत्तम हैं। सिद्धार्थ राजा ने अनेक बार स्वप्नों की प्रशंसा की।

(54) "As he passes the age of infancy he will grow into a youth of mature intelligence and having perfect knowledge of all subjects including arts and sciences. He will then be a king having courage, bravery, glory, benevolence, power, vehicles, army and kingdom." Thus you have seen the best of all possible dreams. King Siddhartha praised the dreams over and over.

तए णं सा तिसला खत्तियाणी सिद्धत्थस्स रन्नो अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठ-तुट्ठ. जाव हियया करयल-परिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी– ॥५५॥

"एयमेयं सामी! तहमेयं सामी! अवितहमेयं सामी! असंदिद्धमेयं सामी! इच्छियमेयं सामी! पडिच्छियमेयं सामी! इच्छिय-पडिच्छियमेयं सामी! सच्चेणं एस अट्ठे, से जहेयं तुब्भे वयह त्ति कट्टु ते सुमिणे सम्मं पडिच्छइ सम्मं पडिच्छित्ता सिद्धत्थेणं रन्ना अब्भणुण्णाया समाणी नाणा-मणि-रयण-भत्ति-चित्ताओ भद्दासणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठित्ता अतुरियमचवलमसंभंताए अविलंबियाए राजहंस-सरिसीए गईए, जेणेव सए सयणिज्जे तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता एवं वयासी– ॥५६॥

(५५) त्रिशला रानी सिद्धार्थ राजा से स्वप्नों का अर्थ सुन-समझकर अत्यन्त प्रसन्न हुई और दोनों हाथ जोड़ ललाट पर लगाकर आदर सहित बोली–

(५६) "हे स्वामिन्! निःसन्देह आपकी बात सत्य है। यह आशानुरूप, अभीष्ट और इच्छित है। यह स्वप्नफल प्रमाणित है।" स्वप्नों के अर्थ को मन से स्वीकार कर सिद्धार्थ राजा की आज्ञा ले वह भद्रासन से उठी और अपनी स्वाभाविक चाल से चलती हुई अपने शयनकक्ष में आई। शय्या पर बैठकर वह सोचने लगी–

(55), (56) These words of king Siddhartha made queen Trishala happy and contented. She greeted king Siddhartha courteously and with joined palms and exclaimed, "Undoubtedly, my lord, what you say is true. Your statement is not simply desirable; it is also the indicator of the fulfilment of

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

our cherished desires. Your interpretation is absolutely correct." Sincerely accepting the interpretation, she begged leave of king Siddhartha, got up from her seat and returned to her bedroom with her natural graceful gait. Sitting on her bed, she started thinking—

"मा मे ते उत्तमा पहाणा मंगल्ला सुमिणा दिट्ठा अन्नेहिं पावसुमिणेहिं पडिहम्मिस्संति" त्ति कट्टु देवय-गुरुजण-संबद्धाहिं पसत्थाहिं मंगल्लाहिं धम्मियाहिं लट्ठाहिं कहाहिं सुमिण-जागरियं जागरमाणी पडिजागरमाणी विहरइ॥५७॥

(५७) "मेरे ये मंगलमय स्वप्न अन्य दु:स्वप्नों से कहीं निष्फल न हो जायें इसलिए मुझे देव और गुरुजन विषयक उच्च, मांगलिक और धर्म-रस से भरी कथाओं की सहायता से जागते रहना चाहिए।" यह सोचकर वह उस रात जागती रही।

(57) "Lest these dreams lose their auspicious effect due to later bad dream; let me keep awake with the help of pious, auspicious, and religious tales about gods and elders." With these thoughts she did not sleep for the rest of the night.

सभा-मण्डप की सज्जा

तए णं सिद्धेत्थे खत्तिए पच्चूसकाल-समयंसि कोडुंबिय-पुरिसे सद्दावेइ, कोडुंबिय-पुरिसे सद्दावित्ता एवं वयासी-"खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! अज्ज सविसेसं बाहिरियं उवट्ठाणसालं गंधोदयसित्त-सम्मज्जिअ-उवलित्तं सुगंध-वर-पंचवन्न-पुप्फोवयार-कलियं कालागुरु-पवर-कुंदरुक्क-तुरुक्क-डज्झंत-धूव-मघमघंत-गंधुद्धुयाभिरामं सुगंध-वर-गंधियं गंधवट्टिभूयं करेह, कारवेह, करित्ता कारवेत्ता य सीहासणं रयावेह सीहासणं रयावित्ता ममेयमाणत्तियं खिप्पामेव पच्चप्पिणह॥५८॥

(५८) उधर प्रात: काल होने पर सिद्धार्थ राजा ने कुटुम्बियों (काम करने वाले सेवकों) को बुलाया और कहा, "हे देवानुप्रियो! आज बाहरी (उपस्थानशाला) सभा मंडप में जल्दी ही उत्तम सुगन्धित जल छिड़को, उसकी सफाई करो और वहाँ पर लेप करो। पाँच रंग के श्रेष्ठ सुगन्धित फूलों से उसे सजाओ। तरह-तरह की सुगन्धित धूप जलाकर उसे सुवासित करो और रमणीय बनाओ। इधर-उधर सुगन्धित चूर्ण बिखराकर उसे सुगन्ध के पिटारे जैसा बना दो। यह सब काम तुम स्वयं तथा अन्यों की सहायता से पूरा कर मुझे सूचित करो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Decoration of the Assembly Pavilion

(58) As the dawn approached, king Siddhartha summoned the members of his family and staff and said, "O beloved of gods! Hurry up and get the outer assembly hall cleaned, anointed and sprinkled with good fragrant water. Decorate it with special fragrant flowers of five colours. Burn a variety of incenses to make it redolent and pleasent. Turn it into a chamber of perfume by sprinkling aromatic powders. Do all this yourself and with the help of others, and report back."

तए णं ते कोडुंबियपुरिसा सिद्धत्थेणं रण्णा एवं वुत्ता समाणा हट्ठ जाव हियया करयल जाव कट्टु एवं सामित्ति आणाए विणएणं वयणं पडिसुणंति, एवं समित्ति आणाए विणएणं वयणं पडिसुणित्ता सिद्धत्थस्स खत्तियस्स अंतियाओ पडिनिक्खमंति, पडिनिक्खमित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणेव उवागच्छंति, तेणेव उवागच्छित्ता खिप्पामेव सविसेसं बाहिरियं उवट्ठाणसालं गंधोदयसित्त। जाव सीहासणं रयावेंति, सिहासणं रयावित्ता जेणेव सिद्धत्थे खत्तिए, तेणेव उवागच्छंति, तेणेव उवागच्छित्ता करयल-परिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु सिद्धत्थस्स खत्तियस्स तमाणत्तियं पच्चप्पिणंति॥५९॥

(५९) वे कुटुम्बीजन राजा की इस आज्ञा को सुनकर हर्षित हुए और हाथ जोड़कर बोले, "स्वामिन्! जैसी आपकी आज्ञा!" यों विनयपूर्वक स्वामी की आज्ञा स्वीकार कर वे बाहर निकले और सभा मण्डप में आए। राजा की इच्छानुसार सभा मण्डप को तैयार किया, वहाँ सिंहासन लगाया। फिर सिद्धार्थ राजा के पास लौटे और हाथ जोड़कर विनयपूर्वक राजा को कार्य सम्पन्न होने की सूचना दी।

(59) Hearing the kings order they were all pleased, and with joined palms they conveyed their assent, "As you wish, my lord." They immediately went out and reached the assembly hall. They prepared the hall as desired by the king, installed a throne, and returned back to the king to report that his order has been carried out.

तए णं सिद्धत्थे खत्तिए कल्लं पाउप्पभाए रयणीए फुल्लुप्पल-कमल-कोमलुमिल्लियम्मि अहा पंडरे पहाए रत्ता-सोय-पगास-किंसुय-सुयमुह-गुंजद्ध-राग-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सरिसे-कमला-यर-संड-बोहए उट्ठियम्मि सूरे सहस्सरस्सिम्मि दिणयरे तेयसा जलंते य सयणिज्जाओ अब्भुट्ठेइ॥६०॥

(६०) ऊषाकाल में पौ फटने पर उत्पन्न कमल की कलियाँ खिलने लगीं थीं और सुनहरी आभा छिटक रही थी। लाल अशोक, टेसू, तोते की चोंच, चिर्मी, रक्तपुष्प, कबूतर के पंजे व आँख, जासू (जवा कुसुम) फूलों का ढेर, सिंदूर आदि के लाल रंग से भी अधिक चमकता और शोभामय सूरज धीरे-धीरे उग रहा था और उसकी किरणों के प्रहार से अंधकार का नाश हो गया था। उसकी पहली किरणों के तेज से समस्त संसार कुंकुम जैसे लाल रंग में नहा गया था। ऐसे तेजोमय हज़ारों किरणों वाले सूर्य के उगने पर सिद्धार्थ राजा अपनी शय्या से उठे।

(60) At the hour of dawn when the sun was slowly rising, buds of Utpal lotus started blossoming and a golden glow started spreading. Brighter and more beautiful then the colour of the red Ashoka flower, the Tesu flower, the beak of a parrot, a gunja seed, a Rakta-pushpa, the talons and eyes of a pigeon, a heap of Javakusum flowers, vermilion, etc., the morning sun was slowly rising on the horizon. The onslaught of its rays had destroyed darkness. Its first rays had coloured everything red, as if the world was drenched in the colour of vermilion. With the dawning of such a scintillating sun having infinite rays, king Siddhartha got up from his bed.

सिद्धार्थ राजा द्वारा व्यायामादि कार्य

सयणिज्जाओ अब्भुट्ठित्ता पायपीढाओ पच्चोरुहई, पच्चोरुहित्ता, जेणेव अट्टणसाला तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता अट्टणसालं अणुप्पविसइ, अट्टणसालं अणुप्पविसित्ता अणेगवायाम-जोग-वग्गण-वामद्दण-मल्ल-जुद्ध-करणेहिं संते परिस्संते सय-पाग-सहस्स-पागेहिं सुगंधवरतेल्लमाइएहिं पीण-णिज्जेहिं जिंघणिज्जेहिं दीवणिज्जेहिं दप्पणिज्जेहिं, मयणिज्जेहिं, विहणिज्जेहिं सव्विंदिय-गाय-पल्हायणिज्जेहिं अब्भंगिए समाणे तेल्ल-चम्मंसि णिउणेहिं पडिपुण्ण-पाणिपाय-सुकुमाल-कोमल-तलेहिं अब्भंगण-परिमद्दणुवल्लण-करण-गुण-निम्माएहिं छेएहिं दक्खेहिं पट्ठेहिं कुसलेहिं मेहावीहिं जिय-परिसम्मेहिं पुरिसेहिं अट्ठिसुहाए मंससुहाए तयासुहाए रोमसुहाए चउव्विहाए सुह-परिक्कम्मणाए संवाहिए समाणे अवगय-परिस्समे अट्टणसालाओ पडिनिक्खमइ॥६१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(६१) शय्या से उठकर पादपीठ पर पैर रखकर वे नीचे उतरे और व्यायामशाला की तरफ गए। उसमें प्रवेश कर उन्होंने शस्त्राभ्यास, कूद, अंगों को मोड़ना, कुश्ती, आसन आदि कई तरह के व्यायाम किये। व्यायाम से थक जाने पर उन्होंने सुगन्धित शतपाक, सहस्रपाक तेलों से मालिश करवाई। यह मालिश रस-रक्त आदि सप्त धातु को बढ़ाने वाली है, शुक्रवर्धक और बलवर्धक है, तथा अंग-प्रत्यंग को आनन्द देने वाली है। मालिश करने वाले अनुचर कोमल हथेलियों और पगथलियों वाले, बलिष्ठ थे। वे तेल लगाने, मालिश करने, पसीना बाहर निकालने, आदि मर्दन कला के विभिन्न अंगों के विशेषज्ञ थे। वे अपने कार्य में प्रवीण, चतुर और मेहनती थे। इन लोगों ने राजा सिद्धार्थ के शरीर को सुख और स्वास्थ्य प्रदान करने वाली चार तरह की, अस्थि-सुखकारक, माँस-सुखकारक, त्वचा-सुखकारक और रोम-सुखकारक मालिश भली प्रकार से की। मालिश द्वारा थकान मिटाकर स्फूर्तिवान राजा सिद्धार्थ व्यायामशाला से बाहर निकले।

The Morning Workout

(61) Stepping on the foot-stool he got down and went to his gymnasium. There, he completed various routines including the practice of weapons, jumping, gymnastics, wrestling and yogic postures. After this tiring routine, he went for a massage with medicated and flavoured oils like Shata-paka and Sahastra-pak. This massage was nourishing to the seven constituents (Dhatu) of the body, including blood, juices and marrow. It increased the potency and strength of the body, and at the same time gave pleasure and exhilaration to every part. The masseures were strong and well built but with soft palms and heels. They were experts of all aspects of massaging including the rubbing of oil, kneading, and making one sweat. They expertly gave king Siddhartha four types of pleasent and healthy massage—bone stimulating, muscle stimulating, skin stimulating and hair stimulating. Removing fatigue and getting refreshed, king Siddhartha came out of the gymnasium.

अट्टणसालाओ पडिनिक्खमित्ता जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता मज्जणघरं अणुप्पविसइ, अणुप्पविसित्ता समुत्तजाल-कलावाभिरामे विचित्त-मणि-रयण-कुट्टिमतले रमणिज्जे ण्हाण-मंडवंसि नाणामणि-रयण-भत्ति-चित्तंसि ण्हाण-पीढंसि सुह-निसण्णे पुप्फोदएहिं य, गंधोदएहिं य, उण्होदएहिं य, सुहोदएहिं य, सुद्धोदएहिं य कल्लाणय-करण-पवर-मज्जण-विहिए मज्जिए। तत्थ कोउय सएहिं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बहुविहेहिं कल्लाणग-पवर-मज्जणावसाणे पम्हल-सुकुमाल-गंध-कासाइय-लूहियंगे अहय-सुमहग्घ-दूस-रयण-सुसंवुडे, सरस-सुरहि-गोसीस-चंदणाणुलित्तगत्ते, सुइ-माला-वन्नग-विलेवणे-आविद्ध-मणि-सुवन्ने कप्पिय हारद्धहार-तिसरय-पालंब-पलंबमाण-कडिसुत्तय-कयसोहे, पिणद्ध-गेविज्जे अंगुलिज्जग-ललिय-कयाभरणे वर-कडग-तुडिय-थंभिय-भूए अहिय-रूव-सस्सिरीए कुंडल-उज्जोइयाणणे मउड-दित्त-सिरए हारोत्थय-सुकय-रइय-वच्छे मुद्दिया-पिंगसंगुलीए पालंब-पलंबमाण-सुकय-पड-उत्तरिज्जे नाणामणि-कणग-रयण-विमल-महरिह-निउणोचिय-मिसिमिसिंत-विरइय-सुसिलिट्ठ-विसिट्ठ-लट्ठ-आविद्ध-वीरवलए। किं बहुणा? कप्परुक्खए वि व अलंकिय विभूसिए नरिंदे सकोरिंट-मल्ल-दामेणं छत्तेणं धरिज्ज-माणेणं सेयवर-चामराहिं उद्धुव्वमाणीहिं मंगल-जयसद्द-कयालोए अणेग-गणनायग-दण्डनायग-राईसर-तलवर-मंडबिय-कोडुंबिय-मंति-महामंति-गणग-दोवारिय-अमच्च-चेड-पीठमद्द-णगर-निगम-सेट्ठि-सेणावइ-सत्थवाह-दूय-संधिवाल-सद्धिं संपरिवुडे धवल-महामेह-निग्गए इव गहगण-दिप्पंतरिक्ख-तारागणाण मज्झे ससि व्व पियदंसणे नरवई मज्जणघराओ पडिनिक्खमइ॥६२॥

(६२) फिर वे स्नानगृह में गए, जिसमें मोती की झालरों वाला और फर्श में रत्न जड़ा मनोहर स्नानमंडप था। वहाँ पहुँचकर कई मणिरत्नों से बनी अनोखी चौकी पर वे आराम से बैठे और पुष्पोदक, गन्धोदक, उष्णोदक, शुभोदक, और शुद्धोदक से अच्छी तरह स्नान किया। स्नान करते समय उन्होंने अनेक कौतुक-क्रीड़ाएँ (मषीतिलक, आदि) भी कीं। स्वच्छता और आनन्द प्रदान करने वाले स्नान के बाद उन्होंने रोंएदार, नरम और सुगन्धित तौलियों से शरीर पोंछा, सरस व सुगन्धित गोशीर्ष और चन्दन का लेप किया और अंगराग लगाया। उन्होंने पवित्र माला, मणियों से जड़े सोने के हार, अर्द्धहार तथा त्रिशर के हार और कंठे गले में पहने, जिनसे उनका वक्षस्थल दर्शनीय बन गया। कमर में लम्बे झुमकेदार करधनी और हाथों में रत्न जड़े कड़े और भुजबन्ध पहने। अंगुलियों में अंगूठियाँ पहनीं, जिनकी पीत आभा से वे चमकने लगीं। कानों में कुंडल पहने, जिनसे उनका मुख चमकने लगा। मुकुट धारण करने से उनका मस्तक आलोकित हो उठा। इस प्रकार इन आभूषणों से सिद्धार्थ राजा का सारा शरीर दमक उठा। फिर उन्होंने कंधे पर लम्बा लटकता हुआ दुपट्टा डाला। श्रेष्ठ कारीगरों द्वारा बनाया गया, मणिरत्न तथा सोना जड़ा, सुन्दर, बहुमूल्य, चमकीला, दृढ़-सांधों वाला वीर-वलय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पहना। शब्दों में उनके सौन्दर्य का वर्णन कैसे किया जाय? सिद्धार्थ राजा मानो साक्षात् कल्पवृक्ष लग रहे थे। सेवकों ने उनके मस्तक के ऊपर कोरंट फूलों की माला लटके छत्र की छाया की हुई थी। अन्य सेवक श्रेष्ठ सफेद चमर ढुला रहे थे। उन्हें देखते ही लोग जय-जयकार करने लगे।

इस तरह सजकर राजा सिद्धार्थ स्नानागार से बाहर निकले। जैसे बादलों से चन्द्रमा निकलकर ग्रह, नक्षत्र और तारों के बीच शोभित होता है, वैसे ही राजा सिद्धार्थ स्नानागार से निकल, अनेक गणनायकों, दण्डनायकों, युवराजों, पट्टधारियों (राज्य सम्मान प्राप्त व्यक्ति), जमींदारों, चौधरियों, मन्त्रियों, महामन्त्रियों, ज्योतिषियों, द्वारपालों, अमात्यों, दासों, पीठमर्दकों, प्रतिष्ठित नागरिकों, व्यापारियों, श्रेष्ठियों, सेनापतियों, सार्थवाहों, दूतों, सन्धिपालों आदि के बीच शोभित होने लगे।

(62) He then went into the bathroom where there was a bath chamber with a floor inlaid with gem stones and a ceiling decorated with a hanging net and laces of pearls. King Siddhartha made himself comfortable on a gem studded stool and took his bath with pure, clean, warm and fragrant water. He made this bath all the more enjoyable by playful activities. After this cleansing and refreshing bath he rubbed his body dry with a flossy, soft and perfumed towel. He then got his body annointed with a creamy paste made fragrant with sandal and Goshirsha. His whole body was then adorned with auspicious garlands—gem studded golden necklaces like Haar, Ardha-haar, Trishar-haar, Kantha, etc. adorned his neck and chest. A girdle with suspended chains was on his waist, gem studded armlets and bracelets on his arms; glittering golden rings on his fingers; shiny earings dangled near his face; and a scintillating crown was placed on his head. All these glittering ornaments added a radiance to the graceful presence of king Siddhartha. The king flung an exquisite long shawl over his shoulder, under which was an exquisite upper garment made by expert artisans using gems, brocade and other costly, glittering, and elegant materials. It was strong and protective. It is hard to described his grace and elegance in words. It was as if king Siddhartha looked like the wish-fulfilling tree (Kalpavriksha). The attendents held over his head a regal parasol from which garlands of Korant flowers dangled. Other attendants fanned him with best quality white whisks (Chamar). The moment he appeared on the threshold, people greeted him with hails of victory.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Coming out of the bathroom, king Siddhartha joined the attending luminaries including numerous chieftains, administrators, princes, knights of honour, landlords, village-heads, ministers, chief ministers, astrologers, guards, secretaries, personal servants, senior citizens, businessmen, merchants, commanders, caravan-chiefs, ambassadors, diplomats, etc. It appeared as if the moon, coming out of the cover of dark clouds was perched in the midst of stars and planets with all its grandeur and beauty.

राजसभा में आगमन

मज्जणघराओ पडिनिक्खमित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाण-साला तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता, सीहासणंसि पुरत्थाभिमुहे निसीयइ, निसीइत्ता अप्पणो उत्तर-पुरत्थिमे दिसिभाए अट्ठ भद्दासणाइं, सेय-वत्थ-पच्चत्थुयाइं सिद्धत्थय-कय-मंगलोवयाराइं रयावेइ, रयावित्ता अप्पणो अदूर-सामंते नाणा-मणि-रयण-मंडियं अहिय-पेच्छणिज्जं महग्घ-वर-पट्टणुग्गयं सण्ह-पट्ट-भत्ति-सयचित्तमाणं ईहा-मिय-उसभ-तुरग-नर-मगर-विहग-वालग-किन्नर-सस-सरभ-चमर-कुंजर-वणलय-पउमलय-भत्तिचित्तं अब्भिंतरियं जवणियं अंछावेइ, अंछावेत्ता नाणामणि-रयण-भत्तिचित्तं अत्थ-रय-मिउ-मसूर-गोत्थयं सेय-वत्थ-पच्चत्थुयं सुमउयं अंग-सुह-फरिसगं विसिट्ठं तिसलाए खत्तियाणीए भद्दासणं रयावेइ ॥६३॥

(६३) तब वे बाहरी सभामण्डप में आए और पूर्व दिशा की ओर मुख कर सिंहासन पर बैठ गए। ईशाण कोण की ओर सफेद वस्त्र से ढके और मांगलिक उपचार किये आठ भद्रासन स्थापित करवाये। इसके बाद न तो एकदम पास और न अधिक दूर कई मणि-रत्न लगा एक बहुमूल्य, उत्तम और दर्शनीय पर्दा बैठक के भीतर लगवाया। किसी बड़े नगर में बने मुलायम कपड़े से तैयार किये इस पर्दे पर ईहामृगादि के चित्र बने थे। पर्दे के पीछे मणि-रत्न लगे अनोखे मुलायम गद्दे व तकिये वाला सफेद चद्दर से ढका बहुत कोमल और शरीर के लिए सुखद स्पर्श वाला विशिष्ट भद्रासन रानी त्रिशला के बैठने के लिये लगवाया।

In the Assembly

(63) King Siddhartha came to the outer assembly hall, and facing the east, sat on the throne. With formal ritual he got eight chairs, with white covers, installed in the area north-east of his throne. After this he got a gorgeous, rich and gem studded screen placed at his side, neither too far nor

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

too near from the throne. This screen was made of soft imported cloth with pictures of Iha-mriga etc. (as listed earlier). Behind the screen was placed an exquisite gem studded throne with soft, comfortable cushions and pillows covered with a clean white cotton sheet.

भद्दासणं रयावित्ता कोडुंबिय-पुरिसे सद्दावेइ, सद्दाविता एवं वयासी–"खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! अट्ठंग-महानिमित्त-सुत्तत्थ-पारए विविह-सत्थ-कुसले सुविण-लक्खण-पाढए सद्दावेह।" ॥६४॥

(६४) इस सबके बाद सिद्धार्थ राजा ने सेवकों को बुलाया और कहा "हे देवानुप्रियो! शीघ्र ही अष्टांग महानिमित्त के सूत्र व अर्थ के पारंगत, विविध शास्त्रों के ज्ञाता, स्वप्नफल समझने/बताने वालों को बुलाकर लाओ।"

(64) King Siddhartha summoned his servants and ordered, "O beloved of gods! call the scholars of the eight-fold scripture of augury and various other scriptures, and also the dream-diviners as soon as possible."

तए णं ते कोडुंबिय-पुरिसा सिद्धत्थेणं रन्ना एवं वुत्ता समाणा हट्ठा जाव हय-हियया करयल जाव पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता सिद्धत्थस्स खत्तियस्स अंतियाओ पडिनिक्खमंति, पडिनिक्खमित्ता कुंडग्गामं नगरं मज्झंमज्झेणं जेणेव सुमिण-लक्खण-पाढगाणं गेहाइ तेणेव उवागच्छंति, तेणेव उवागच्छित्ता सुविण-लक्खण-पाढए सद्दावेंति॥६५॥

(६५) सेवक राजा के इस कथन पर प्रसन्न हुए और विनयपूर्वक आज्ञा को शिरोधार्य किया। कुण्डग्राम के बीच होते हुए वे उस भाग में पहुँचे जहाँ स्वप्नफल वेत्ता पण्डित रहते थे, वहाँ आकर उन्हें राजा की ओर से राजसभा में आने का निमन्त्रण दिया।

(65) The attendents happily and humbly accepted the king's order. Crossing the crowded streets of Kundgram they reached the area where the scholars of augury and allied subjects lived and extended the king's invitation to attend the assembly.

तए णं ते सुविण-लक्खण-पाढगा सिद्धत्थस्स-खत्तियस्स कोडुंबिय-पुरिसेहिं सद्दाविया समाणा हट्ठ-तुट्ठ जाव हियया ण्हाया, कय-बलिकम्मा कय-कोउय-मंगल-पायच्छित्ता, सुद्ध-पावेसाइं मंगलाइं वत्थाइं पवराइं परिहिया अप्प-महग्घाभरणालंकिय-सरीरा सिद्धत्थय-हरियालिय-कय-मंगल-मुद्धाणा सएहिं सएहिं गेहेहिंतो निग्गच्छंति॥६६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(६६) निमन्त्रण पाकर वे पण्डित हर्षित हुए, प्रसन्न हुए और स्नान व बलिकर्म (दही, अक्षत, सरसों, दूब, आदि मांगलिक वस्तुओं से अशुभ स्वप्न, शकुन, आदि के दोष दूर करना) कर तिलक लगाया, मांगलिक व प्रायश्चित्त अनुष्ठान कर तैयार हुए। राजसभा में जाने के योग्य शुद्ध, मांगलिक वस्त्र और भार में हल्के पर मूल्यवान गहने धारण किये और मंगल हेतु सरसों, दूब आदि सर पर रख अपने घरों के बाहर निकले।

(66) Getting the invitation the scholars felt pleased and honoured. After taking their bath they completed their ritual routines of awakening protective spirits, repentance for mistakes, offerings to gods, using auspicious things like curd, rice, mustard, grass etc. Putting auspicious marks on their foreheads, they dressed themselves in clean and sober costumes suitable for the king's assembly. They embellished themselves with light but rich ornaments. As a sign of auspiciousness they put mustard and grass on their heads and came out of their houses.

निगच्छित्ता खत्तिय-कुंडग्गामं नगरं मज्झं-मज्झेणं जेणेव सिद्धत्थस्स रण्णो भवणवर-वडिंसग-पडिदुवारे तेणेव उवागच्छंति, तेणेव एगयओ मिलंति, एगयओ मिलित्ता, जेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता करयल-परिग्गहियं जाव कट्टु सिद्धत्थं खत्तियं जएणं विजएणं वद्धाविंति॥६७॥

(६७) क्षत्रिय कुण्डग्राम के बीच होते हुए वे राजा सिद्धार्थ के विशाल भवन के दरवाजे पर आए। वहाँ एकत्र हो वे सब साथ-साथ बाहरी सभा मण्डप में राजा सिद्धार्थ के पास आये और हाथ जोड़ जय-जयकार कर राजा को बधाई दी।

(67) Passing through the town they approached the gate of the great mansion belonging to king Siddhartha. After assembling at the gate they entered the hall in a group and went near the king. Joining their palms they greeted the king, wishing him success and victory, and blessed him.

तए णं ते सुविण-लक्खण-पाढगा सिद्धत्थेणं रण्णा वंदिय-पूइय-सक्कारिय-सम्माणिया समाणा पत्तेयं पत्तेयं पुव्वण्णत्थेसु भद्दासणेसु निसीयंति॥६८॥

(६८) राजा सिद्धार्थ ने उन पण्डितों को नमस्कार किया, उनकी अर्चना की तथा आदर-सत्कारपूर्वक मधुर स्वर में उनकी अभ्यर्थना की। वे सब अपने लिये नियत भद्रासनों पर बैठ गये।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(68) King Siddhartha, folding his hands, greeted the Pundits, sweetly giving them due respect and recognition. The scholars then took the seats offered to them.

तए णं सिद्धत्थे खत्तिए तिसलं खत्तियाणिं जवणियंतरियं ठावेइ, ठावित्ता पुप्फ-फल-पडिपुण्णहत्थे परेण-विणएणं ते सुविण-लक्खण-पाढए एवं वयासी–"एवं खलु देवाणुप्पिया! अज्ज तिसला खत्तियाणी तंसि तारिसगंसि जाव सुत्त-जागरा ओहीरमाणी ओहीरमाणी इमेयारूवे ओराले जाव चउद्दस महासुमिणे पासित्ता णं पडिबुद्धा तं जहा–गय वसह–गाहा।

तं एएसिं चोद्दसण्हं महासुमिणाणं देवाणुप्पिया! ओरालाणं जाव के मन्ने कल्लाण फल-वित्ति-विसेसे भविस्सइ?"॥६९॥

(६९) सिद्धार्थ राजा ने त्रिशला रानी को पर्दे के पीछे बिठाया और हाथ में फल-फूल लेकर विनयपूर्वक उन पंडितों से कहा, "हे देवानुप्रियो! आज त्रिशला क्षत्रियाणी ने (पूर्व वर्णन के अनुसार) गज, वृषभ आदि चौदह स्वप्न देखे और जाग पड़ीं। हे देवानुप्रियो! मेरा अनुमान है कि इन उदार महास्वप्नों का कोई विशेष कल्याणकारी फल होना चाहिए।"

(69) Queen Trishala took her seat behind the screen and king Siddhartha, filling his hands with fruits and flowers, queried the scholars, "O beloved of gods! Queen Trishala saw fourteen dreams last night and got up. (He gave details as mentioned earlier.) I assume that these great auspicious dreams are indications of some special achievement in future."

स्वप्न-फल

तएणं ते सुमिण-लक्खण-पाढगा सिद्धत्थस्स खत्तियस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठ जाव हियया ते सुविणे ओगिण्हंति ओगिण्हित्ता इहं अणुपविसंति, ईहं अणुपविसित्ता अन्नमन्नेणं सद्धिं संलाविंति, संलावित्ता तेसिं सुमिणाणं लद्धट्ठा गहियट्ठा पुच्छियट्ठा विणिच्छियट्ठा अहिगयट्ठा सिद्धत्थस्स रन्नो पुरओ सुमिणसत्थाइं उच्चारेमाणा उच्चारेमाणा सिद्धत्थं खत्तियं एवं वयासी–॥७०॥

(७०) सिद्धार्थ राजा की यह बात सुन स्वप्न पाठक संतुष्ट व प्रसन्न हुए। पहले उन्होंने उन स्वप्नों पर सामान्य रूप से विचार किया और फिर उनके अर्थ पर विशेष रूप से चिन्तन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

किया। परस्पर विचार-विमर्श कर, एक दूसरे का अभिप्राय समझ स्वप्नों के अर्थ के साथ ही उसकी गहराई तक पहुँचे। जब वे सभी स्वप्नों के संबंध में एकमत हो गये तब सिद्धार्थ राजा से स्वप्न शास्त्र के नियमानुसार अपना मंतव्य कहने लगे–

Interpreting the Dreams

(70) The dream divines were happy to hear the words of king Siddhartha. They first gave a cursory thought to the dreams and then a deep evaluative contemplation. They consulted with each other in an in-depth discussion about the meaning and indications of the dreams. When they had reached a unanimous agreement about the meanings of all the dreams, they conveyed their opinion, based on the scriptures about dreams, to king Siddhartha—

"एवं खलु देवाणुप्पिया! अम्हं सुमिण-सत्थे बायालीसं सुमिणा, तीसं महासुमिणा, बावत्तरिं सव्व-सुमिणा दिट्ठा। तत्थ णं देवाणुप्पिया! अरहंत-मायरो वा, चक्कवट्टिमायरो वा अरहंतंसि वा चक्कहरंसि वा गब्भं वक्कममाणंसि एएसिं तीसाए महासुमिणाणं इमे चोद्दस-महासुमिणे पासित्ता णं पडिबुज्झंति, तं जहा–गय वसह गाहा।" ॥७१॥

"वासुदेव-मायरो वा वासुदेवंसि गब्भं वक्कममाणंसि एएसिं चोद्दसण्हं महासुमिणाणं अण्णतरे सत्त महासुमिणे पासित्ता णं पडिबुज्झंति।" ॥७२॥

"बलदेव-मायरो वा बलदेवंसि गब्भं वक्कममाणंसि एएसिं चोद्दसण्हं महासुमिणाणं अन्नयरे चत्तारि महासुमिणे पासित्ता णं पडिबुज्झंति।" ॥७३॥

"मंडलिय-मायरो वा मंडलियंसि गब्भं वक्कममाणंसि एएसिं चोद्दसण्हं महासुमिणाणं अन्नयरं एगं महासुमिणं पासित्ता णं पडिबुज्झंति।" ॥७४॥

"इमे य णं देवाणुप्पिया! तिसलाए खत्तियाणीए चोद्दस महासुमिणा दिट्ठा। तं ओराला णं देवाणुप्पिया! तिसलाए खत्तियाणीए सुमिणा दिट्ठा, जाव मंगल्लकारगा णं देवाणुप्पिया! तिसला खत्तियाणीए सुमिणा दिट्ठा, तं जहा–अत्थलाभो देवाणुप्पिया! भोग-लाभो देवाणुप्पिया! पुत्त-लाभो देवाणुप्पिया!, सुक्ख-लाभो देवाणुप्पिया!, रज्ज-लाभो देवाणुप्पिया! एवं खलु देवाणुप्पिया! तिसला खत्तियाणी नवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं अद्धट्ठमाणं य राइंदियाणं विइक्कंताणं तुम्हं कुलकेउं, कुलदीवं,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुलपव्वयं, कुलवडिंसयं, कुलतिलयं कुलकित्तिकरं कुल-नंदिकरं, कुलजसकरं, कुलाधारं, कुल-पायवं, कुल-विविद्धिकरं (कुल-तंतु-संताण-विवद्धणकरं) सुकुमाल-पाणि-पायं अहीण-पडिपुन्न-पंचिदिय-सरीरं लक्खण-वंजण-गुणोववेयं माणुम्माण-पमाण-पडिपुण्ण-सुजाय-सव्वंग-सुंदरंगं ससि-सोमाकारं कंतं पियदंसणं सुरूवं दारयं पयाहिसि।"॥७५॥

"से वि य णं दारए उम्मुक्कबालभावे विण्णाय-परिणयमित्ते, जोव्वणगमणुपत्ते सूरे वीरे विक्कंते विच्छिण्ण-विउल-बलवाहणे, चाउरंत-चक्कवट्टी रज्जवई राया भविस्सइ, जिणे वा तिलोग-नायगे धम्म-वर-चाउरंत-चक्कवट्टी। तं ओराला णं देवाणुप्पिया! तिसलाए खत्तियाणीए सुमिणा दिट्ठा; जाव आरुग्ग-तुट्ठि-दीहाउ-कल्लाण-मंगल-कारगा णं देवाणुप्पिया! तिसलाए खत्तियाणीए सुमिणा दिट्ठा।"॥७६॥

(७१) "हे देवानुप्रिय! हमारे स्वप्नशास्त्र के अनुसार बयालीस स्वप्न और तीस महास्वप्न, कुल बहत्तर स्वप्न बताए गये हैं। हे देवानुप्रिय! जब अरहंत अथवा चक्रवर्ती गर्भ में आते हैं तब उनकी माताएँ तीस महास्वप्नों में से गज, वृषभादि चौदह महास्वप्न देखकर जागती हैं।"

(७२) "जब वासुदेव गर्भ में आते हैं तब उनकी माताएँ इन चौदह महास्वप्नों में से कोई भी सात स्वप्न देखकर जागती हैं।"

(७३) "जब बलदेव गर्भ में आते हैं तब उनकी माताएँ इन चौदह महास्वप्नों में से कोई भी चार स्वप्न देखकर जागती हैं।"

(७४) "माण्डलिक राजा के गर्भ में आने पर उनकी माताएँ इन चौदह महास्वप्नों में से कोई भी एक स्वप्न देखकर जागती हैं।"

(७५) "हे देवानुप्रिय! त्रिशला क्षत्रियाणी ने चौदह उदार व मंगलकारक स्वप्न देखे हैं। वे अर्थ, भोग, पुत्र व राज्य-लाभ प्रदान करने वाले हैं। निश्चित ही त्रिशला क्षत्रियाणी नौ महीने और साढ़े सात दिन-रात बीतने पर एक पुत्र-रत्न को जन्म देंगी। आपका यह पुत्र कुल में ध्वजादि के समान होगा और (पूर्ववर्णित रूप में) सर्वांग संपूर्ण सुन्दर होगा।"

(७६) "आपका वह पुत्र बाल्यकाल बीतने पर विज्ञानादि समस्त कलाओं का निष्णात होगा। युवावस्था को प्राप्त करने पर शूर, वीर और तेजस्वी होगा। वह विशाल सेनाओं (हस्ति, अश्व, रथ, पदाति आदि) का स्वामी चारों ओर समुद्र तक की भूमि का चक्रवर्ती सम्राट् होगा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

या फिर तीन लोकों का नायक श्रेष्ठ धर्म चक्रवर्ती या धर्मचक्र की स्थापना करने वाला जिन तीर्थंकर होगा। हे देवानुप्रिय! सचमुच ही त्रिशला देवी ने उदार व कल्याणकारक स्वप्न देखे हैं।" (चित्र M-6)

(71) to (76) "O beloved of gods! According to the science of dreams there are seventy two types of dreams, out of which forty two are known as dreams and thirty as great-dreams. O beloved of gods! When an Arhant or Chakravarti is conceived, his mother sees fourteen of the thirty great dreams—the dreams described earlier including an elephant, a bull, etc.—and then wakes up. When a Vasudev is conceived his mother sees any seven out of these fourteen dreams and wakes up. When it is a Baldeva in the womb, the mother sees any four of these fourteen dreams. And when a Mandalika Raja (regional sovereign) is conceived his mother wakes up after seeing one out of these fourteen dreams. O beloved of gods! Trishala Kshatriyani has seen fourteen bountiful dreams that are harbingers of good fortune. You will gain wealth, grandeur, a son, and expansion of your kingdom. It is certain that after nine months and seven and a half days Trishala Kshatriyani will give birth to a son. This son of yours will bring glory to your clan and will be endowed with superlative attributes as detailed earlier.

As he passes the age of infancy and grows into a youth, he will acquire perfect knowledge of all subjects and will be brave, courageous and radiant. He will become a Chakravarti having large armies (with elephants, horses, chariots, foot soldiers, etc.) and dominion over the six continents. Alternatively, he will be the Dharma Chakravarti or the leader of the three worlds or the Jina-Tirthankar who originates and establishes the religious order. O beloved of gods! Trishala Kshatriyani has indeed seen bountiful and auspicious dreams." (Illustration M-6)

तए णं से सिद्धत्थे राया तेसिं सुविण-लक्खण-पाढगाणं अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठ-तुट्ठ. जाव हियए करयल जाव ते सुविण-लक्खण-पाढए एवं वयासी-॥७७॥

(७७) सिद्धार्थ राजा उन स्वप्न-पाठकों के मुख से यह स्वप्न-फल सुन-समझकर प्रसन्न हुआ और हाथ जोड़कर स्वप्न-पाठकों से बोला-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(77) Hearing about the interpretation of dreams from the dream diviners, king Siddhartha became very pleased and with folded hands addressed the dream diviners—

"एवमेयं देवाणुप्पिया! तहमेयं देवाणुप्पिया! अवितहमेयं देवाणुप्पिया! इच्छिय पडिच्छियमेयं देवाणुप्पिया! सच्चेणं एस अट्ठे से जहेयं तुब्भे वयह।" त्ति कट्टु ते सुमिणे सम्मं विणएणं पडिच्छइ, ते सुमिणे सम्मं विणएण पडिच्छित्ता ते सुविण-लक्खण-पाढए णं विउलेणं पुप्फ-गंध-वत्थ-मल्लालंकारेणं सक्कारेइ सम्माणेइ, सक्कारित्ता, सम्माणित्ता विउलं जीवियारिहं पीइदाणं दलयइ, विउलं जीवियारिहं पीइदाणं दलइत्ता पडिविसज्जेइ ॥७८॥

(७८) "हे देवानुप्रियो! आपने सच कहा। आपका कथन यथार्थ और अवश्यम्भावी है। वह आशानुरूप है, कामना को पूर्ण करने वाला है और स्वीकार्य है। वह सत्य है।" इन शब्दों से उन्होंने स्वप्नों के अर्थ को पूरे मन से सम्मानपूर्वक स्वीकार किया और स्वप्न-पाठकों को खूब खाद्य सामग्री, फूल, कपड़े, सुगन्धित चूर्ण, मालाएँ, आभूषण आदि देकर सम्मानित किया। हार्दिक सद्भावपूर्वक स्वप्न-पाठकों का सत्कार कर उन्हें विदा किया।

(78) "O beloved of gods! You have indeed revealed the truth. Your interpretation contains reality and certainty. It satisfies our hopes and aspirations and is acceptable. It is the truth." With these words he accepted the interpretation with full faith and respect. He felicitated the scholars by presenting them food, flowers, cloth, incense, garlands, ornaments, etc. He donated these things in sufficient quantity to fulfil their needs for life, and bid them farewell with due respect and good will.

तएणं से सिद्धत्थे खत्तिए सीहासणाओ अब्भुट्ठेइ, सीहासणाओ अब्भुट्ठित्ता जेणेव तिसला खत्तियाणी जवणियंतरिया तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता तिसलं खत्तियाणिं एवं वयासी– ॥७९॥

"एवं खलु देवाणुप्पिए! सुविण-सत्थंसि बायालीसं सुमिणा, तीसं महासुमिणा जाव एगं महासुमिणं पासित्ता णं पडिबुज्झंति।" ॥८०॥

"इमे य णं तुमे देवाणुप्पिए! चोद्दस महासुमिणा दिट्ठा, तं जहा–ओराला णं तुमे जाव जिणे वा तेलोक्कनायए धम्मवर-चाउरंत-चक्कवट्टी।" ॥८१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(७९) तब सिद्धार्थ राजा अपने सिंहासन से उठे और पर्दे के पीछे बैठी त्रिशला रानी के पास आकर बोले–

(८०) "हे देवानुप्रिये! कोई तो स्वप्न शास्त्रों में बताये गये बयालीस महास्वप्नों में से एक स्वप्न देखकर जागती है।"

(८१) "पर तुम तो चौदह उदार महास्वप्न देखकर जागी हो। अतः तुम्हें तीन लोक के नायक श्रेष्ठ धर्म चक्रवर्ती अथवा धर्मतीर्थ की स्थापना करने वाले जिन तीर्थंकर बनने वाले पुत्र की प्राप्ति होगी।"

(79) After this, king Siddhartha got up from his throne, approached queen Trishala, behind the screen, and said—

(80) "O beloved of gods! Of the forty two common and thirty great dreams, most of the women wake up seeing only one dream."

(81) "But you have been awakened by fourteen of these bountiful dreams. As such, you will give birth to a son fated to become a Dharma Chakravarti, a Jina, a Tirthankar, the fountainhead of religion."

तए णं सा तिसला खत्तियाणी सिद्धत्थस्स रन्नो अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठ-तुट्ठ जाव हयहियया करयल जाव ते सुमिणे सम्मं पडिच्छइ॥८२॥

(८२) यह स्वप्न-फल सुन-समझकर त्रिशला रानी प्रसन्न व संतुष्ट हुई। उसने हाथ जोड़कर स्वप्नों के अर्थ को सच्चे मन से स्वीकार किया।

(82) Hearing and absorbing the interpretation, Trishala felt happy and contented. With joined palms and all sincerity she accepted the prophecy.

सम्मं पडिच्छित्ता सिद्धत्थेणं रन्ना अब्भुणुण्णया समाणी नाणा मणि-रयण-भत्ति-चित्ताओ भद्दासणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठित्ता अतुरियंअचवलं असंभंताए अविलंबियाए राय-हंस-सरिसीए गईए जेणेव सए भवणे तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता सयं भवणं अणुप्पविट्ठा॥८३॥

(८३) सिद्धार्थ राजा से अनुमति प्राप्त कर वह मणिमंडित भद्रासन से उठी और अपनी स्वाभाविक चाल से अपने भवन में चली गई।

(83) Begging leave of king Siddhartha she got up from the gem studded throne and proceeded gracefully to her palace.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चतुर्मुखी वृद्धि : नामकरण

जप्पभिइं च णं समणे भगवं महावीरे तंसि नायकुलंसि साहरिए, तप्पभिइं च णं बहवे देसमण-कुंडधारिणो तिरिय-जंभगा देवा सक्कवयणेणं से जाइं इमाइं पुरा-पोराणाइं महानिहाणाइं भवंति, तं जहा–पहीण-सामियाइं, पहीण-सेउयाइं, पहीण-गोत्तागाराइं, उच्छिन्न-सामियाइं, उच्छिन्न-सेउयाइं, उच्छिन्न-गोत्तागाराइं गामागर-नगर-खेड-कब्बड-मडंब-दोणमुह-पट्टणासम-संवाह-सन्निवेसेसु सिंघाडएसु वा, तिएसु वा, चउक्केसु वा, चच्चरेसु वा, चउम्मुहेसु वा, महापहेसु वा, गामट्ठाणेसु वा, नगरट्ठाणेसु वा, गाम-निद्धमणेसु वा, नगर निद्धमणेसु वा, आवणेसु वा, देवकुलेसु वा, सभासु वा, पवासु वा, आरामेसु वा, उज्जाणेसु वा, वणेसु वा, वण-संडेसु वा, सुसाण-सुन्नागार-गिरिकंदर-संति-सेलोवट्ठाण-भवण-गिहेसु वा संन्निखित्ताइं चिट्ठंति, ताइं सिद्धत्थराय-भवणंसि साहरंति॥८४॥

(८४) जिस दिन श्रमण भगवान महावीर इस ज्ञात कुल में अवतरित हुए उस दिन से वैश्रमण कुबेर के अधीन और तिर्यक् लोक में रहने वाले अनेक देवता इन्द्र की एक विशेष आज्ञा पूरी करने में जुट गये। वे अत्यन्त पुराने, जमीन में गड़े खजानों को ला-लाकर सिद्धार्थ राजा के भवन में रखने लगे। इनमें ये सभी खजाने सम्मिलित थे–जिस गड़े धन का आज कोई मालिक न रहा हो, जिसमें वृद्धि करने वाला कोई सेवक नहीं रह गया हो, जिसके मूल स्वामी का कोई वंशज या गोत्रीय भी नहीं बचा हो, अर्थात् जिसका कोई नाम लेने वाला भी नहीं बचा हो, ऐसे खजाने, वे चाहे गाँवों में, खदानों में, नगरों में, खेटकों में, कस्बों में, मडम्बों में, द्रोण-मुखों में, पत्तनों में, आश्रमों में, समभूमि में, सन्निवेशों में, शृंगाटकों में, तिराहों में, चौराहों में, चौक में, चतुर्मुखों में, राजमार्गों में, निर्जन गाँवों में, निर्जन नगरों में, ग्राम के नालों में, नगर के नालों में, दुकानों में, देवकुलों में, सभास्थलों में, प्याऊओं में, उपवनों में, उद्यानों में, वनों में, वन खण्डों में, श्मशानों में, शून्यगृहों में, पर्वत की गुफाओं में, शान्तिगृहों में, पत्थरों की खदानों में, कृषकों की झोंपड़ियों में, अथवा ऐसे अन्य स्थानों में दबे पड़े हों।

Increasing Abundance : The Basis of His Name

(84) Since the day of the conception of Shraman Bhagavan Mahavir many Jrimbhrika gods (a specific class of gods), who are subjects of Vaishraman Kuber (the god of wealth) and dwell in the mundane world,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

started carrying out an order of the king of gods relating to the enrichment of the Jnata clan. They started excavating ancient treasures and delivering the same to the palace of king Siddhartha. These treasures included the ones with no claiments, no protectors and no heirs. In other words these were treasures that were absolutely forsaken and forgotton. They collected these treasures from all possible places including villages, mines, cities, kraals, towns, boroughs, hamlets, harbours, ports, hermitages, level land, ravines, caravan serais, roadsteads, crossings of two, three or four roads, courtyards, terraces, highways, deserted villages and towns, village and city drains, shops, temples, halls, water-huts, gardens, parks, forests, woods, cremation grounds, abandoned houses, caves, retreats, quarries, and other such places of concealment.

जं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे नायकुलंसि साहरिए, तं रयणिं च णं नायकुलं हिरण्णेणं वड्ढित्था, सुवण्णेणं वड्ढित्था, धणेणं, धन्नेणं रज्जेणं रट्ठेणं, बलेणं, वाहणेणं, कोसेणं, कोट्ठागारेणं, पुरेणं, अंतेउरेणं जणवएणं वड्ढित्था; विपुल-धण-कणग-रयण-मणि-मोत्तिय-संख-सिल-प्पवाल-रत्त-रयणमाइएणं संत-सार-सावएज्जेणं पीइ-सक्कार-समुदएणं अईव-अईव अभिवड्ढित्था ॥८५॥

(८५) जिस रात श्रमण भगवान महावीर ज्ञात कुल में अवतरित हुए उस रात से उस कुल में सोना, चाँदी, धन-धान्य, जमीन-जायदाद, सेना-वाहन, राज्य-राष्ट्र, यश-कीर्ति आदि का विकास होने लगा। उसकी भौतिक सम्पत्ति और ऐश्वर्य के साथ-साथ प्रीति, सत्कार और सद्भाव का भी प्रचुर विस्तार होने लगा।

(85) Since the night that Shraman Bhagavan Mahavir descended in the Jnata clan, its wealth began to increase. Its movable wealth like gold, silver, cash, grains, etc. increased, its immovable wealth like land and buildings increased, and its kingdom expanded; its fame and glory were also enhanced. Besides the mundane wealth and grandeur, its goodwill, prestige and popularity also flourished. (This development has been detailed earlier.)

तए णं समणस्स भगवओ महावीरस्स अम्मापिऊणं अयमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए पत्थिए मणोगए संकप्पे समुप्पज्जित्था-"जप्पभिइं च णं अम्हं एस दारए कुच्छिंसि गब्भत्ताए वक्कंते, तप्पभिइं च णं अम्हे हिरण्णेणं वड्ढामो; कोसेणं, कोट्ठागारेणं, पुरेणं,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

M 7 चतुर्मुखी वृद्धि देखकर सिद्धार्थ राजा व त्रिशला रानी द्वारा नामकरण विमर्श।
Alround development and contemplation of name by king Siddhartha and queen Trishala

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

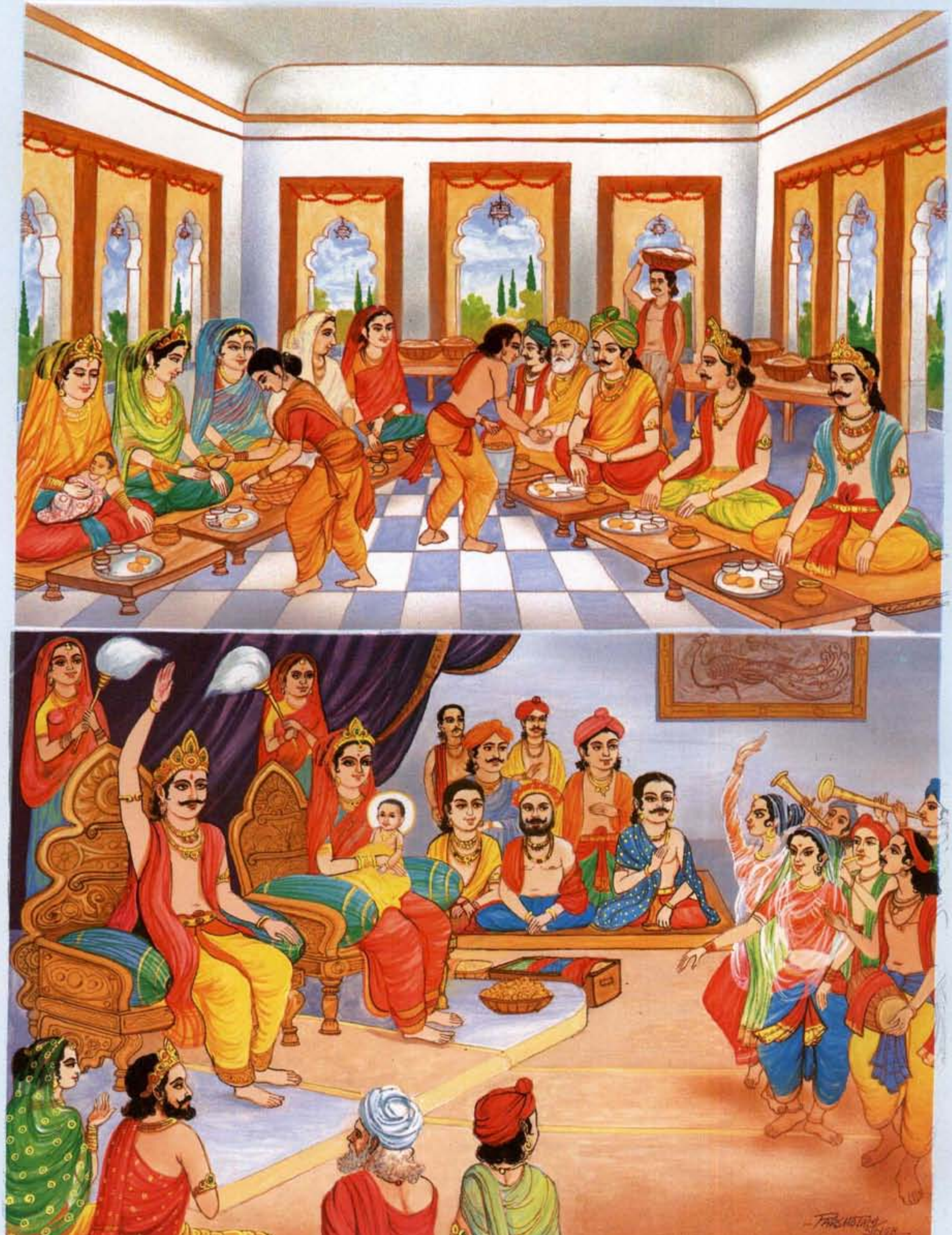

M 8 प्रीतिभोज का आयोजन तथा नामकरण।
The great feast and name announcement

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंतउरेणं, जणवएणं, जसवाएणं वड्ढामो; विपुल-धण-कणग-रयण-मणि-मोत्तिय-संख-सिल-प्पवाल-रत्तरयणमाइएणं संत-सार-सावएज्जेणं पीइ-सक्कार-समुदएणं अईव अईव अभिवड्ढामो; तं जया णं अम्हं एस दारए जाए भविस्सइ, तया णं अम्हे एयस्स दारगस्स एयाणुरूवं गोण्णं गुणनिफन्नं नामधिज्जं करिस्सामो 'वद्धमाणं' त्ति।" ॥८६॥

(८६) फलस्वरूप श्रमण भगवान महावीर के माता-पिता के मन में विचार तथा संकल्प उत्पन्न हुआ, "जब से हमारा यह पुत्र गर्भ में आया है तब से हमारी (पूर्व-वर्णित प्रकार से) सभी क्षेत्रों में वृद्धि हुई है। इसलिए जब हमारा यह पुत्र जन्म लेगा तब हम इसका इसके गुणों के अनुसार 'वर्द्धमान' नाम रखेंगे।" (चित्र M-7)

(86) Looking at all this, the parents of Shraman Bhagavan Mahavir had an idea that turned into a resolution, "Since this son of ours has been conceived our wealth has grown tremendously (as detailed earlier). As such, after his birth we shall name him 'Vardhaman' to reflect his virtues." (Illustration M-7)

गर्भ में निस्पन्द

तए णं समणे भगवं महावीरे माउ-अणुकंपणट्ठाए निच्चले, निप्फंदे, निरेयणे, अल्लीण-पल्लीण-गुत्ते यावि होत्था॥८७॥

(८७) तब एक बार गर्भ में उनके हिलने-डुलने से माता को पीड़ा न हो ऐसी मातृ-भक्ति से प्रेरित हो श्रमण भगवान महावीर गर्भ में निश्चल, निस्पंद और अकम्प हो गए और अपने अंगोपांगों को सिकोड़ लिया।

The Stillness in the Womb

(87) One day Shraman Bhagavan Mahavir had a notion that his foetal movements must be a source of pain for his mother. Inspired by his love and devotion for his mother he constrained his body and became immobile, still, and tranquil.

तए णं तीसे तिसलाए खत्तियाणीए अयमेयारूवे जाव संकप्पे समुप्पज्जित्था-हडे मे से गब्भे, मडे मे से गब्भे, चुए मे से गब्भे, गलिए मे से गब्भे; एस मे गब्भे पुव्विं एयइ, इयाणिं नो एयइ, त्ति कट्टु ओहय-मण-संकप्पा, चिंता-सोग-सायरं संपविट्ठा, करयल-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पल्हत्थ-मुही अट्टज्झाणोवगया भूमि-गय-दिट्ठिया झियायइ। तं पि य सिद्धत्थ-राय-भवणं उवरय-मुइंग-तंती-तल-ताल-नाडइज्ज-जणमणुज्जं दीण-विमणं विहरइ ॥८८॥

(८८) इससे त्रिशला क्षत्रियाणी के मन में विकल्प उठने लगे, "मेरे गर्भ का हरण कर लिया गया है, मेरे गर्भ की मृत्यु हो गई है, मेरा गर्भ गिर गया है या वह अपने स्थान से हट गया है। पहले यह हिलता-डुलता था पर अब स्थिर हो गया है।" इस प्रकार खिन्न और दुःखी मन लिये वह चिन्तारूपी शोक-समुद्र में डूब गई। हथेली पर मुँह रखकर आर्त्तध्यान में भूमि की ओर देखती हुई चिन्ता करने लगी। मृदंग, वीणा आदि के संगीत, रास-क्रीड़ा, नाटक और जय-जयकार के घोष के स्थान पर सिद्धार्थ राजा के महल में चारों ओर सन्नाटा छा गया और सब लोग दुःखी तथा उदासीन से हो गये।

(88) This cessation of foetal movement made Trishala Kshatriyani apprehensive, "The foetus I am carrying has been snatched away; it has died, it has been injured, or displaced. Earlier it had a movement, but now it has become still." With a sad and heavy heart she plunged into a sea of grief and melancholy. In her gloomy state of mind she rested her chin in her cupped palms and, looking down, she was consumed by anxiety. In the palace of king Siddhartha the sounds of drums, Vina and other musical instruments, dance, play, and hails of victory were replaced by a grave silence. Everyone became grief stricken and sad.

तए णं समणे भगवं महावीरे माऊए अयमेयारूवं अज्झत्थियं पत्थियं मणोगयं संकप्पं समुप्पन्नं वियाणित्ता एगदेसेण एयइ ॥८९॥

(८९) श्रमण भगवान महावीर ने अवधिज्ञान से जैसे ही अपनी माता के मन में उठे दुःख के ये विचार, चिन्ता और संकल्प-विकल्प को जाना, तो उन्होंने अपने शरीर के एक भाग को हिलाया।

(89) As soon as Shraman Bhagavan Mahavir became aware of the anxiety and apprehensive state of his mother he gave a little movement to his body.

तए णं सा तिसला खत्तियाणी हट्ठ-तुट्ठ जाव हय-हियया एवं वयासी–"नो खलु मे गब्भे हडे जाव नो गलिए मे गब्भे। पुव्विं नो एयइ, इयाणिं एयइ" त्ति कट्टु हट्ठ-तुट्ठ जाव एवं वा विहरइ ॥९०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(९०) इस हलचल से त्रिशला रानी प्रसन्न और संतुष्ट हुई और कहने लगी, "मेरा यह गर्भ जो पहले हिलता-डुलता नहीं था अव हिलने-डुलने लगा है। अतः निश्चित रूप से ही उसको कोई हानि नहीं पहुँची है।" और वे पुनः प्रसन्नचित्त रहने लगीं।

(90) This resumption of the foetal movement pleased Trishala and she said with satisfaction, "The stopped foetal movements have now resumed. As such, it is certain that no damage has been done to the life I am carrying in my womb." She regained her former happy state of mind.

एक अभिग्रह

तए णं समणे भगवं महावीरे गब्भत्थे चेव इमेयारूवं अभिग्गहं अभिगिण्हइ-"नो खलु मे कप्पइ अम्मापिएहिं जीवंतेहिं मुंडे भवित्ता अगारवासाओ अणगारियं पव्वइत्तए।" ॥९१॥

(९१) इस घटना के वाद (प्रगाढ़ मातृ स्नेह के कारण) श्रमण भगवान महावीर ने गर्भ में रहते हुए यह अभिग्रह (प्रतिज्ञा), यह संकल्प किया, "जब तक मेरे माता-पिता जीवित रहेंगे तब तक मैं गृहस्थ जीवन का त्याग कर, मुण्डन कर, प्रव्रज्या ग्रहण नहीं करूँगा।"

A Resolution

(91) After this incident, due to the deep love for his mother, Shraman Bhagavan Mahavir, while still in the womb, resolved and took this vow, "As long as my parents live I will not renounce the family life and get initiated as an ascetic by shaving my head."

तए णं सा तिसला खत्तियाणी ण्हाया कय-बलिकम्मा कय-कोउय-मंगल-पायच्छित्ता (जाव) सव्वालंकार-विभूसिया तं गब्भं नाइसीएहिं नाइउण्हेहिं नाइतित्तेहिं नाइकडुएहिं नाइकसाएहिं नाइअंबिलेहिं नाइमहुरेहिं नाइनिद्धेहिं नाइलुक्खेहिं नाइउल्लेहिं नाइसुक्केहिं सव्वत्तु भयमाणसुहेहिं भोयणच्छायण-गंध-मल्लेहिं ववगय-रोग-सोग-मोह-भय-परिस्समा सा जं तस्स गब्भस्स हियं मियं पत्थं गब्भ-पोसणं तं देसे य काले य आहार-माहारेमाणी विवित्त-मउएहिं सयणासणेहिं पइरिक्क-सुहाए मणाणुकूलाए विहार-भूमीए पसत्थ-दोहला, सम्माणिय-दोहला, अविमाणिय-दोहला, वुच्छिन्न-दोहला, अविमाणिय-दोहला, संपुण्ण दोहला, ववणीय-दोहला सुहं सुहेण आसइ, सयइ, चिट्ठइ, निसीयइ, तुयट्टइ सुहं सुहेणं तं गब्भं परिवहइ॥९२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(९२) तब त्रिशला क्षत्रियाणी ने स्नानादि नित्य कृत्यों को सम्पन्न कर वस्त्र-भूषण धारण किये और वह गर्भ की उचित देख-भाल करने लगी। उसने अति शीत, उष्ण, तीक्ष्ण, कटु, कसैले, खट्टे, मीठे, चिकने, लूखे भोजन का त्याग कर दिया। वह सब ऋतुओं के अनुकूल सुखकारी भोजन, वस्त्र, गंध तथा मालाएँ ग्रहण करतीं और रोग, शोक, मोह, भय और त्रास से मुक्त होकर रहतीं। वह अपने गर्भ के पोषण के लिए देश-काल के उपयुक्त लाभकारी परिमित पथ्यमय आहार करतीं, कोमल बिछौने और आसन का उपयोग करतीं। वे पूर्णतया सुखदायी और मन के अनुकूल एकान्त शान्त स्थल में रहने लगीं।

उनको गर्भ के प्रभाव से भले दोहद (इच्छाएँ) उत्पन्न हुए। उन दोहदों की उपेक्षा नहीं की गई अपितु सिद्धार्थ राजा ने उन्हें सम्मान सहित पूरा किया। इच्छित मनोरथ पूर्ण हो जाने से नए दोहद उत्पन्न होना बन्द हो गया। वह धीरे-धीरे सहारा लेकर भद्रासन पर उठती, बैठती, सोती और करवट बदलती थी।

(92) After this incident Trishala Kshatriyani resumed her normal daily activities including bathing, dressing and adorning herself with ornaments. She started taking proper care required during pregnancy. She stopped eating excessively hot, cold, pungent, bitter, acrid, sour, sweet, greasy, non-greasy, juicy, and dry food. She would eat food, wear dresses and use perfumes and flowers suited to all seasons. She maintained a state of body and mind that was free of ailment, sorrow, fondness, fear, and tension. She took all the care required during pregnancy, eating prescribed, nutritious and limited food, resting on a soft seat and bed, living in pleasent, cozy, and peaceful dwellings.

She had the peculiar pregnancy-desires (Dohad), and they were pleasent. Avoiding any neglect, king Siddhartha fulfilled all these desires with due care. This fulfilment put a stop to new desires. During all this period she avoided hasty and jerky movements while sitting, standing, lying down and turning around.

जन्म कल्याणक व वसुधारा वृष्टि

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे जे से गिम्हाणं पढमे मासे, दोच्चे पक्खे, चित्त-सुद्धे, तस्स णं चित्त-सुद्धस्स तेरसी दिवसे णं नवण्हं मासाणं बहु-पडिपुण्णाणं अद्धट्ठमाणं य राइंदियाणं विइक्कंताणं उच्चट्ठाणगतेसु गहेसु पढम चंदजोगे सोमासु दिसासु वितिमिरासु विसुद्धासु जइएसु सव्व-सउणेसु पयाहिणाणु-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कूलंसि भूमिसप्पिंसि मारुयंसि पवायंसि निप्फण्ण-मेइणीयंसि कालंसि पमुइअ-पक्कीलिएसु जणवएसु पुव्वारत्तावरत्त-काल-समयंसि हत्थुत्तराहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं आरोग्गा आरोग्गं दारयं पयाया॥९३॥

(९३) उस काल के उस भाग में जब गर्मी का पहला महीना, दूसरा पक्ष चल रहा था तब चैत्र शुक्ल त्रयोदशी के दिन श्रमण भगवान महावीर को गर्भ में अवतरित हुए नौ महीने और साढ़े सात रात-दिन बीत चुके थे। ग्रहों के उच्च स्थान में आने पर प्रथम चन्द्रयोग में सभी दिशाएँ सौम्य, अंधकाररहित और निर्मल थीं। जय-विजय सूचक सभी तरह के शकुन और चिह्न उपस्थित थे। दक्षिण दिशा से शीतल, मन्द और सुगन्धित पवन चल रही थी। खेत-खलिहान धान से भरपूर थे और जनपदों के वासियों के हृदय आनन्द से ओत-प्रोत थे। ऐसे समय मध्यरात्रि में हस्तोत्तरा नक्षत्र का योग आने पर त्रिशला क्षत्रियाणी ने सुखपूर्वक स्वस्थ पुत्र को जन्म दिया।

The Birth and the Divine Rain

(93) At that time during that period it was the first month and the second fortnight of the summer season. On the thirteenth day of the bright half of the month of Chaitra, nine months and seven and a half days had passed since the conception of Shraman Bhagavan Mahavir. At that time the planets were in their most auspicious conjunction, the moon was at the most exalted place, and the skies were calm, luminous and clear. All the auspicious signs and indications of victory and success were present. The cool and fragrant southerly breeze was blowing. Farms and barns were full of grain and the hearts of people overflowed with joy. In such surroundings Trishala Kshatriyani gave birth to a healthy son at midnight when the moon entered its twelfth mansion (Hastottara).

जं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे जाए, सा णं रयणी बहूहिं देवेहिं य देवीहिं य उवयंतिहिं य उप्पयंतेहिं य उप्पिंजलमाणभूया कह-कहभूया यावि होत्था॥९४॥

(९४) जिस रात श्रमण भगवान महावीर का जन्म हुआ उस रात बहुत से देव और देवियों के नीचे-ऊपर आने-जाने से, उनकी चमक-दमक से, उनके एकत्र होने से और पुंजीभूत आलोक से सारे संसार में हलचल मच गई और सब जगह कल-कल नाद फैल गया।

(94) The night Shraman Bhagavan Mahavir was born many gods descended from and ascended to the skies. The collective glow of their

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

movement and assembly disturbed the world around. There was commotion and noise everywhere.

जं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे जाए, तं रयणिं चं णं बहवे वेसमणकुंडधारिणो तिरिय-जंभगा देवा सिद्धत्थ-राय-भवणंसि हिरण्णवासं च, सुवण्ण-वासं च, रयणवासं च, वयरवासं च, वत्थवासं च, आभरणवासं च, पत्तवासं च, पुष्फवासं च, फलवासं च, बीयवासं च मल्लवासं च, गंधवासं च, वण्णवासं च, चुण्णवासं च वसुहारवासं च, वासिंसु ॥९५॥

(९५) उस रात कुबेर के अधीन तिर्यक् जृम्भक देवों ने सिद्धार्थ राजा के भवन में चाँदी, सोना, रत्न, हीरे, कपड़े, गहने, पत्र, पुष्प, फल, बीज, माला, सुगन्धित पदार्थ, वर्णक आदि की भरपूर वर्षा की।

(95) That night the Jrimbhak gods, the subordinates of Kuber (the god of wealth), caused a divine rain of silver, gold, gems, diamonds, apparrel, ornaments, leaves, flowers, fruits, seeds, garlands, perfumes, colours, coins, etc. in the courtyard of the palace of king Siddhartha.

जन्माभिषेक तथा जन्मोत्सव

तए णं से सिद्धत्थे खत्तिए भवणवइ-वाणवंतर-जोइस-वेमाणिएहिं देवेहिं तित्थयर जम्मणाभिसेय-महिमाए कयाए समाणीए पच्चूस-काल-समयंसि नगरगुत्तिए सद्दावेइ नगरगुत्तिए सद्दावित्ता एवं वयासी– ॥९६॥

(९६) भवनपति, वाणव्यंतर, ज्योतिषिक और वैमानिक अर्थात् चारों निकायों के देवों द्वारा तीर्थंकर का जन्माभिषेक महोत्सव संपन्न हो जाने के बाद सुबह होने पर सिद्धार्थ राजा ने नगर रक्षकों को बुलाया और कहा–

The Annointment and Birth Festival

(96) After the birth, gods from all the four dimensions, Bhuvanapati, Vana-vyantar, Jyotishka, and Vaimanik, performed the then birth-annointment with due celebrations. In the morning king Siddhartha called the city guards and gave instructions—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विस्तार :

जन्म के पश्चात् सर्वप्रथम छप्पन दिशा-कुमारियों ने श्रमण भगवान महावीर का सूतिकर्म तथा स्नानादि करवाया। उसके बाद शक्रेन्द्र सहित अन्य सभी देवता नवजात शिशु को मेरु पर्वत पर ले गये और वहाँ उत्सव सहित जन्माभिषेक किया। (चित्र ५)

Elaboration :

After the birth first of all the fifty six divine maidens from all directions (Disha Kumaris) came and performed the first cleaning and other necessary post-birth duties. Shakrendra and other gods, took the infant to the peak of Meru Mountain and gave him the first bath and sang songs to celebrate the divine birth. (Illustration 5)

"खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! कुंडपुरे (कुंडग्गामे) नगरे चारग-सोहणं करेह, चारग-सोहणं करित्ता माणुम्माणवद्धणं करेह माणुम्माणवद्धणं करेत्ता कुंडपुरं नगरं सब्भिंतर-बाहिरियं आसिय-संमज्जियोवलेवियं सिंघाडग तिय-चउक्क-चच्चर-चउम्मुह-महापह-पहेसु सित्त-सुइ-सम्मट्ठ-रत्थंतरावण-वीहियं मंचाइमंच-कलियं नाणाविह-राग-भूसियज्झय-पडाग-मंडियं, लाउल्लोइय-महियं गोसीस-सरस-रत्त-चंदण-दद्दर-दिण्ण-पंचंगुलितलं उवचिय-चंदण-कलसं चंदणं-घड-सुकय-तोरण-पडिदुवार-देसभागं आसत्तोसत्त-विपुल-वट्ट-वग्घारिय-मल्ल-दाम-कलावं पंचवन्न-सरस-सुरहि-मुक्क-पुप्फ-पुंजोवयार-कलियं कालागुरु-पवर-कुंदुरुक्क-तुरुक्क-डज्झंत-धूव-मघमघंत-गंधुद्धुया-भिरामं, सुगंधवर-गंधियं गंधवट्टिभूयं

नड-नट्टग-जल्ल-मुट्ठिय-वेलंबग-पवग-कहग-पढग-लासग-आरक्खग-लंख-मंख-तूणइल्ल-तुंब-वीणिय-अणेग-तालायराणुचरियं करेह कारवेह, करित्ता कारवित्ता य जूयसहस्सं मूसलसहस्सं च उस्सवेह उस्सवित्ता य मम एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह।"॥९७॥

(९७) "हे देवानुप्रियो! कुण्डग्राम नगर के कारागार के सभी बंदियों को तत्काल मुक्त कर दो। तौल-माप को बढ़ाओ और नगर में सभी वस्तुएँ सस्ते दामों पर बेचे जाने का आदेश प्रसारित करो। नगर के भीतर और बाहर पानी का छिड़काव, सफाई और लिपाई कराओ। इस अभियान में सभी स्थानों, यथा—शृंगाटक, तिराहे, चौराहे, चौक, चतुर्मुख, राजमार्ग, सामान्य मार्ग, मुहल्ले, गलियाँ आदि स्वच्छ और सुगंधित कराओ। विभिन्न स्थानों पर दर्शकों के लिए मंच व पण्डाल लगवाओ। विविध रंगों के ध्वज, झंडी-झालरें और बन्दनवार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बँधवाओ। मकानों की दीवारों पर हथेलियों से गोशीर्ष चन्दन, लाल चन्दन और मलय चन्दन के ऐसे छापे लगवाओ कि पाँचों अँगुलियों की छाप स्पष्ट दिखाई दे। घरों के भीतर चौक पुतवा कर वहाँ पर चन्दन कलश रखवाओ। द्वार-द्वार पर गोल फूलों की लम्बी, धरती को छूती, सुन्दर मालाएँ लटकवाओ। पाँच रंग के सुन्दर सुगन्धित फूलों के गुलदस्ते लगवाओ और फूलों को यहाँ-वहाँ छितराओ। काले अगर, कुन्दरू और तुरुष्क की बढ़िया सुगन्धित धूप जलाकर सारे वातावरण को सुगन्ध से भर दो और रमणीय बना दो। उत्तम सुगन्धित चूर्णों का चारों ओर छिड़काव कराओ जिससे नगर सुगन्ध की पोटली (गंधवटी) की तरह महक उठे।

नागरिकों के मनोरंजन के लिये ऐसी व्यवस्था करो और कराओ कि विभिन्न कलाकार जगह-जगह अपनी-अपनी कला का प्रदर्शन करें। इन कलाकारों में नट, नर्त्तक, जल्ल (रस्सी पर खेल करने वाले), पहलवान, मौष्टिक (मुट्ठियों से लड़ने वाले), विदूषक (हँसाने वाले), कथावाचक, प्लवग (कूदने वाले), लासक (रास क्रीड़ा करने वाले), भविष्यवेत्ता (ज्योतिषी), लंख (बाँस पर खेलने वाले), मंख (चित्र बनाने वाले), तूणवादक, तालवादक, वीणावादक आदि सभी अपनी-अपनी कला का प्रदर्शन कर जनता का मनोरंजन करें। हजारों बैलगाड़ी के जुए (बैलों को बंधन मुक्त करने हेतु) और मूसलों के ऊँचे स्तम्भ बनाए जाने चाहिये। यह सब काम पूरे कर मुझे सूचना दो।''

(97) "O beloved of gods! Free all the prisoners in the jails of Kundgram. Issue orders that everything should be sold at lower prices in the town. Start a cleaning campaign in and around the city and sprinkle water. Plaster over, white wash, or paint wherever needed. Include every possible place in this campaign, such as highways, roads, streets, lanes, crossings, squares, bisections, trisections, plazas, sections, blocks, sectors, etc., and make them presentable and fragrant. Erect pavilions and stages at various spots to accommodate people. Hoist flags, buntings, and strings of leaves freely. Decorate the outer walls of the houses with auspicious palm prints by dipping palms in Goshirsh, Red and Malaya sandal paste ensuring that the imprints of all five fingers are clearly visible. Place sandal urns in the courtyards of all the houses after washing and scrubbing them clean and annointing them. Suspend long and floor touching garlands of ball shaped flowers at every door. Liberally place flower vases with beautiful multi-coloured flowers and sprinkle fragrant flowers all around. Burn a variety of incenses, including black Agar, Kunduru, and Loban so that the atmosphere becomes fragrant and pleasent. Turn the whole town into a perfumed garden by sprinkling aromatic powders of the best quality.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Make all necessary arrangements for the entertainment of the citizens whereby artists of different disciplines display their skills at venues prepared for them. These performers may include gymnasts, dancers, trapezists, wrestlers, pugilists, comedians, story tellers, acrobats, folk dancers, astrologers and augurs, stilt-dancers, painters, performers on various musical instruments, etc. Erect thousands of pillars using yokes and large maces. Do all this and report back to me."

तए णं ते नगरगुत्तिया सिद्धत्थेणं रन्ना एवं वुत्ता समाणा हट्ठ-तट्ठ. जाव हय-हियया करयल. जाव पडिसुणित्ता खिप्पामेव कुंडपुरे नगरे चारग-सोहाणं जाव उस्सवित्ता जेणेव सिद्धत्थे राया तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता करयल. जाव कट्टु सिद्धत्थस्स खत्तियस्स रन्नो एयमाणत्तियं पच्चप्पिणंति ॥९८॥

(९८) नगर रक्षकों ने सिद्धार्थ राजा की यह आज्ञा प्रसन्नतापूर्वक सुनी और हाथ जोड़कर विनयपूर्वक स्वीकार की। वे जल्दी से गये और सभी काम झट-पट पूरे कर राजा के पास लौट आए। उन्होंने राजा को आश्वस्त किया, "आपकी आज्ञा के अनुसार हम सभी कार्य कर आए हैं।"

(98) The city guards accepted the king's order humbly and happily with folded hands. They left immediately and, completing the task as quickly as possible, they soon returned. They assured the king, "Sire! the task you had given has been completed."

तए णं से सिद्धत्थे राया जेणेव अट्टणसाला तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता जाव सव्वोरोहेणं सव्व-पुप्फ-गंध-वत्थ-मल्लालंकार-विभूसाए, सव्व-तुडिय-सद्द-निनाएणं महया इड्ढीए, महया जुतीए, महया बलेणं, महया वाहणेणं, महया समुदएणं, महया वर-तुडिय-जमग-समग-प्पवाइएणं संख-पणव-पडह-भेरी-झल्लरि-खरमुहि हुडुक्क-मुरज-मुइंग-दुंदुहि-निग्घोसणाइय-रवेणं उस्सुक्कं, उक्करं, उक्किट्ठं अदेज्जं अमेज्जं अभडप्पवेसं अदंड-कोदंडिमं अधरिमं गणियावर-नाडइज्ज-कलियं अणेग-तालायराणु-चरियं अणुद्धुय-मुइंगं अमिलाय-मल्लदामं, पमुइय-पक्कीलिय-सपुरजण-जाणवयं दस-दिवसं-ट्ठिइवडियं करेइ ॥९९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(९९) फिर राजा सिद्धार्थ अपने सारे परिवार व अन्तःपुर सहित समारोह स्थल पर आर्
सभी लोग फूल, गन्ध, वस्त्र, मालाएँ और अलंकारों से सजे हुए थे। उन्होंने अपनी प्रचु
समृद्धि, ऐश्वर्य, सेना, वाहन और विशाल जन-समुदाय के साथ मिलकर समारोह आरं
किया। वहाँ अनेक प्रकार के वाद्य, जैसे--शंख, पणव (मिट्टी का ढोल), भेरी, भल्लरी
खरमुखी, हुडुक, मुरज, मृदंग, दुन्दुभी, आदि की मधुर पर तेज ध्वनियों के साथ समारोह हो
लगा। दस दिनों तक राजा अपनी कुल मर्यादा के अनुसार यह पुत्र जन्मोत्सव मनाता रहा।

इस शुभ अवसर पर दस दिन के लिए चुंगी तथा कृषि-कर माफ कर दिया गया। सभ
दुकानों से बिना नापे तोले और बिना मूल्य चुकाए सभी प्रकार की सामग्री दिये जाने क
व्यवस्था कर दी गई। कर वसूली आदि के लिए जाने वाले कर्मचारियों का काम बन्द कर दिय
गया। अदण्ड और कुदण्ड समाप्त कर दिये गए। जनता के ऋणों को माफ करने की व्यवस्थ
की गई। नगर में प्रसिद्ध नर्तक और नर्तकियों के नृत्य और नाटकों के आयोजन किये गये
उत्सव के दिनों में लगातार मृदंग बजते रहे। नगर और देश के सभी वासी प्रसन्नचित्त हे
मनोरंजनपूर्वक समारोह में भाग लेने लगे। दस दिन तक यह समारोह चलता रहे ऐसा प्रबन्ध
कर दिया गया।

(99) King Siddhartha then came to the place of celebrations with his family. Adorned with garlands, flowers, formal dresses, ornaments, and perfumes, the nobles present there displayed gorgeous aristrocatic finery. The king, with all his affluence and glory, and accompanied by his army, mounts and carriages, and a massive gathering, declared the celebrations open. The function started with loud but melodious sound emanating from a variety of musical instruments, including conch-shells, large earthen drums, cymbals, kettle-drums, Jhallari, Kharamukhi, Huduk, Muruj, Mridanga, and Dundubhi. According to his family convention the birth celebrations continued for ten days.

On this joyous occasion municipal and agricultural tax were withdrawn for ten days. Arrangements were made for free distribution of all provisions in whatever quantity. The tax collection staff was sent on a holiday. Minor and major punishments were discontinued. Loans were written off. Famous performing artists were invited and their dances and dramas were organized throughout the city. During all the days of celebrations Mridangs were played non-stop. All the people of the city and the country joined the celebrations with joy and enthusiasm. Arrangements were made to continue the celebrations for ten days.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तए णं से सिद्धत्थे राया दसाहियाए ठिइवडियाए वट्टमाणीए सइए य, साहस्सिए य, सय-साहस्सिए य जाए य, दाए य, भाए य, दलमाणे य दवावेमाणे य सइए य, साहस्सिए य, सय-साहस्सिए य लंभे पडिच्छमाणे य पडिच्छावेमाणे य एवं वा विहरइ॥१००॥

(१००) राजा सिद्धार्थ ने इन दस दिनों में पूजा व दान आदि में लाखों रुपये व्यय किये और करवाये। उन्होंने लाखों रुपयों के उपहार स्वीकार किये और दूसरों को दिये।

(100) During these ten days king Siddhartha spent, and inspired others to spend, hundreds of thousands of rupees as religious and secular charity. He gave and accepted presents worth hundreds of thousands of rupees.

प्रीतिभोज व नामकरण

तए णं समणस्स भगवओ महावीरस्स अम्मापियरो पढमे दिवसे ठिइवडियं करेंति, तइए दिवसे चंद-सूरस्स दंसणियं करेंति, छट्ठे दिवसे धम्म-जागरियं जागरेंति एक्कारसमे दिवसे विइक्कंते निव्वत्तिए असुइ-जात-जम्म-कम्म-करणे, संपत्ते बारसाह-दिवसे विउलं असण-पाण-खाइम-साइमं उवक्खडाविंति, उवक्खडावित्ता, मित्त-नाइ-नियग-सयण-संबंधि-परिजणं नायए य खत्तिए य आमंतेइ, आमंतेत्ता तओ पच्छा ण्हाया कय-बलिकम्मा कय-कोउय-मंगल-पायच्छित्ता सुद्ध-पावेसाइं मंगल्लाइं (पवराइं) वत्थाइं पवर-परिहिया, अप्पमहग्घाभरणालंकिय-सरीरा भोयण-वेलाए भोयण-मंडवंसि सुहासण-वरगया तेणं मित्त-नाइ-नियग-सयण-संबंधि-परिजणेणं नायएहिं खत्तिएहिं य सद्धिं तं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं आसाएमाणा विसाएमाणा परिभुंजेमाणा परिभाएमाणा विहरंति॥१०१॥

(१०१) इस समारोह में कुल-परम्परा के अनुसार पहले दिन पुत्र जन्म का अनुष्ठान किया गया। तीसरे दिन चन्द्र और सूर्य के दर्शन का उत्सव मनाया गया। छठे दिन भक्तिपूर्वक रात्रि जागरण किया गया। ग्यारहवाँ दिन बीतने तक अशुचि निवारण के सभी कार्य पूरे हो गये। बारहवें दिन भारी मात्रा में भोजन के लिये स्वादिष्ट खाद्यान्न तथा जल का प्रबन्ध किया गया। राजा ने अपने मित्र, जाति भाई, स्वजन, सम्बन्धी, परिवार वाले तथा ज्ञातवंशीय सभी क्षत्रियों को निमंत्रित किया। वे सब स्नानादि आवश्यक कृत्य पूरे कर वस्त्राभूषणों से सज्जित हो भोजन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के समय भोजन मण्डप में आकर सुखासनों पर बैठे। राजा ने सभी अतिथियों के साथ बैठ स्वादिष्ट भोजन किया और कराया।

Great Feast and Naming

(101) On the first day of the celebrations the parents performed ritual ceremonies traditionally connected with the birth of a son. On the third day they performed the ritual of adorational beholding of the Sun and Moon. The sixth night was spent in chanting and singing devotional songs. By the end of the eleventh day all the ritual ceremonies of post child-birth purification were over. On the twelfth day arrangements were made for a great feast, and delicious and savory dishes were prepared. The king invited all the Kshatriyas of the Jnata clan including his family members, relatives, friends, and kin-folk. Donning formal dresses, after finishing their bath and other daily chores, they arrived at the place of feast at the scheduled time and took their seats. The king joined his guests in this great feast.

जिमिय भुत्तोत्तरागया वि य णं समाणा आयंता चोक्खा परमसुइभूया तं मित्त-नाइ-नियग-सयण-संबंधि-परिजणं नायए य खत्तिए य विउलेणं पुप्फ-वत्थ-गंध-मल्लालंकारेणं सक्कारेंति सम्माणेंति, सक्कारित्ता सम्माणित्ता तस्सेव मित्त-नाइ-नियग-सयण-संबंधि-परिजणस्स नायाण य खत्तियाण य परओ एवं वयासी–॥१०२॥

(१०२) भोजन के बाद उन्होंने स्वच्छ पानी से कुल्ले किये तथा दाँतों और मुँह को साफ किया। इस प्रकार परम विशुद्ध हो माता-पिता ने अपने सब अतिथियों का यथेष्ट पुष्प, वस्त्रादि प्रदान कर सत्कार व सम्मान किया और कहा–

(102) After the feast they all brushed their teeth and cleaned their mouth with clean water. The parents of the new born, after this cleansing formality, felicitated their guests by offering flowers, dresses, etc. The king then addressed the gathering—

"पुव्विं पि य णं देवाणुप्पिया! अम्हं एयंसि दारगंसि गब्भं वक्कंतंसि समाणंसि इमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए जाव समुप्पज्जित्था, जप्पभिइं च णं अम्हं एस दारए कुच्छिंसि गब्भत्ताए वक्कंते, तप्पभिइं च णं अम्हे हिरण्णेणं वड्ढामो, सुवण्णेणं वड्ढामो, धणेणं धन्नेणं जाव सावएज्जेणं पीइ-सक्कारेणं अईव अईव अभिवड्ढामो,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सामंत-रायाणो वसमागया य; तं जया णं अम्हं एस दारए जाए भविस्सइ, तया णं अम्हे एयस्स दारगस्स इमं एयाणुरूवं गोण्णं गुणनिप्फन्नं नामधिज्जं करिस्सामो वद्धमाणु त्ति। ता अज्ज अम्हं मणोरह-संपत्ती जाया; तं होउ णं अम्हं कुमारे वद्धमाणे वद्धमाणे नामेणं॥१०३॥

(१०३) "हे देवानुप्रियो! जब यह बालक गर्भ में आया उस समय हमारे मन में यह विचार आया था कि इस पुत्र के गर्भ में आने के बाद हमारे सोने, चाँदी की वृद्धि होने लगी। प्रीति और सत्कार की दृष्टि से भी बहुत विकास होने लगा और राज्य की दृष्टि से भी राजागण और सामन्तगण हमारे वश में हुए हैं। अतः जब हमारा यह पुत्र जन्म लेगा तब हम इसके गुणों के अनुरूप इसका नाम वर्द्धमान रखेंगे। आज हमारे मनोरथ सफल हुए हैं इसलिए हमारे इस कुमार का नाम वर्द्धमान हो, वर्द्धमान हो!" इस प्रकार श्रमण भगवान महावीर के माता-पिता ने कुमार का वर्द्धमान नामकरण कर दिया। (चित्र M-8)

(103) "O beloved of gods! When this child was conceived we knew that the arrival of this new soul in our family would enhance our wealth. It would amply add to the respect and love we inspire in others. By bringing more kings and princes under our influence it would also increase our territorial and political influence. As such, when this child is born we shall give it a name that suits its virtues. And so we decided to name him Vardhaman, the ever-increasing. Now that our hopes and expectations have materialized, we hereby announce that this son of ours should be known as Vardhaman and be called Vardhaman." Thus the new born was formally named Vardhaman by its parents. (Illustration M-8)

विस्तार :

भगवान महावीर के नामकरण के साथ जुड़े उनके सहज गुणों के प्रसंग में वर्द्धमान नाम का कारण तो मूल सूत्र में बताया ही है, उनके अद्‌भुत साहस तथा प्रखर प्रज्ञा बल की दो घटनाएँ भी प्रसिद्ध हैं–

साहस परीक्षा

एक बार कुमार वर्द्धमान अपने संगी-साथियों के साथ आमलकी नामक "क्रीड़ा" खेल रहे थे। तभी एक देवता ने वर्द्धमान के धैर्य व साहस की परीक्षा लेने के लिए काले नाग का रूप बनाया और वह वृक्ष के आस-पास फुँकारने लगा। नाग को फुँकारते देखकर दूसरे बालक डरकर भागने लगे, कोई वृक्ष पर चढ़ गया कोई वृक्ष की ओट में छुप गया। तभी साहसी कुमार वर्द्धमान ने सभी को धैर्य बँधाया, स्वयं काले नाग को पकड़ा और दूर झाड़ियों में ले जाकर छोड़ दिया। सभी ने वर्द्धमान के साहस की जय-जयकार की।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

फिर बालक "तिंदुषक क्रीड़ा" खेलने लगे। एक वृक्ष को लक्ष्य करके सभी बालक दौड़ लगाते, जो जीत जाता वह बारी-बारी दूसरे बालकों को घोड़ा बनाकर उनकी पीठ पर चढ़ता। उस देवता ने नाग का रूप छोड़कर एक बालक का रूप धारण कर लिया और बालकों के साथ खेलने लगा। खेल में वह जान-बूझकर हार गया, घोड़ा बना और कुमार वर्द्धमान को पीठ पर बैठाकर दौड़ने लगा। थोड़ी दूर चलने के बाद वह अपना आकार बढ़ाने लगा। देखते ही देखते उसने एक विकराल राक्षस का रूप बनाया और आकाश में उड़ने लगा। उस विशाल दैत्य को देखकर सभी बालक घबराकर चीखने-चिल्लाने लगे। किन्तु कुमार वर्द्धमान निर्भय बने रहे। उन्होंने आकाश में उड़ते दैत्य की पीठ पर कसकर एक मुक्का मारा। मुक्के की मार से राक्षस तिलमिलाने लगा। वर्द्धमान ने जैसे ही दूसरा मुक्का उठाया राक्षस डरकर नन्हा-सा रूप बनाकर धरती पर उतर गया और हाथ जोड़कर क्षमा माँगने लगा, "मुझे क्षमा करो वीरवर! मैंने तो आपकी वीरता की परीक्षा लेने के लिये यह अपराध किया था। सचमुच आप जैसा साहसी, वीर, धैर्यवान व्यक्ति संसार में दूसरा नहीं है। आप धीर हैं। महावीर हैं। अभय-करुणा के सागर हैं। मुझे क्षमा करें।" सभी बालक चकित हो देखते रहे। वर्द्धमान ने अभय-मुद्रा में हाथ उठाकर दैत्य के दुष्कृत्य को क्षमा कर दिया। (चित्र M-9)

सन्मति महावीर

बालक वर्द्धमान बाल्यकाल में ही प्रखर बुद्धि के धनी थे। आठ वर्ष की आयु में उन्हें पाठशाला में विद्याध्ययन हेतु भेजा गया। उनके अद्‌भुत ज्ञान और बुद्धि-वैभव को देखकर अध्यापक चकित थे। वे समझ नहीं पाते थे कि बालक वर्द्धमान में ऐसा क्या है। एक दिन इन्द्रदेव ने अध्यापक को वर्द्धमान की अद्‌भुत मेधा शक्ति का परिचय कराने के लिए ब्राह्मण का रूप बनाया और पाठशाला में आकर अध्यापक से व्याकरण के जटिल प्रश्न पूछने लगे। जब अध्यापक निरुत्तर और हतप्रभ हो गये तो कुमार वर्द्धमान ने विद्वान् ब्राह्मण से कहा, "आप इन सामान्य प्रश्नों के लिए मेरे गुरु जी को क्यों कष्ट देते हैं। इनका उत्तर तो मैं ही दे दूँगा।" और बालक वर्द्धमान ने एक-एक करके ब्राह्मण के व्याकरण सम्बन्धी सभी प्रश्नों का तर्कपूर्ण सरल शैली में इतना सटीक उत्तर दिया कि इन्द्रदेव स्वयं चकित रह गये। इन्द्र देवता ने अपना असली रूप प्रकट किया और अतुल बुद्धि निधान सन्मति-सागर वर्द्धमान की भावपूर्वक वन्दना की। अध्यापक धीर गंभीर वर्द्धमान के अद्‌भुत ज्ञान बल के समक्ष नतमस्तक हो गया। (चित्र M-10)

Elaboration :

The incident of naming of Bhagvan Mahavir to suit his virtues is detailed in the original text. There are two more incidents of his childhood, from other sources, that reveal his unusual courage and sharp intelligence. These popular tales are as follows—

The Test of Courage

One day prince Vardhaman was playing the Amalaki game with his friends. During this game a god appeared there in the form of a black cobra in order to test Vardhaman's patience and courage. When children saw this hissing cobra they ran helter and skelter. Fearfully, some of them climbed up the tree and others hid themselves behind the tree trunk. Seeing the commotion Vardhaman reassured them, went forward, caught hold of the serpent, and tossed it behind a distant bush. Everyone hailed Vardhaman's courage.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

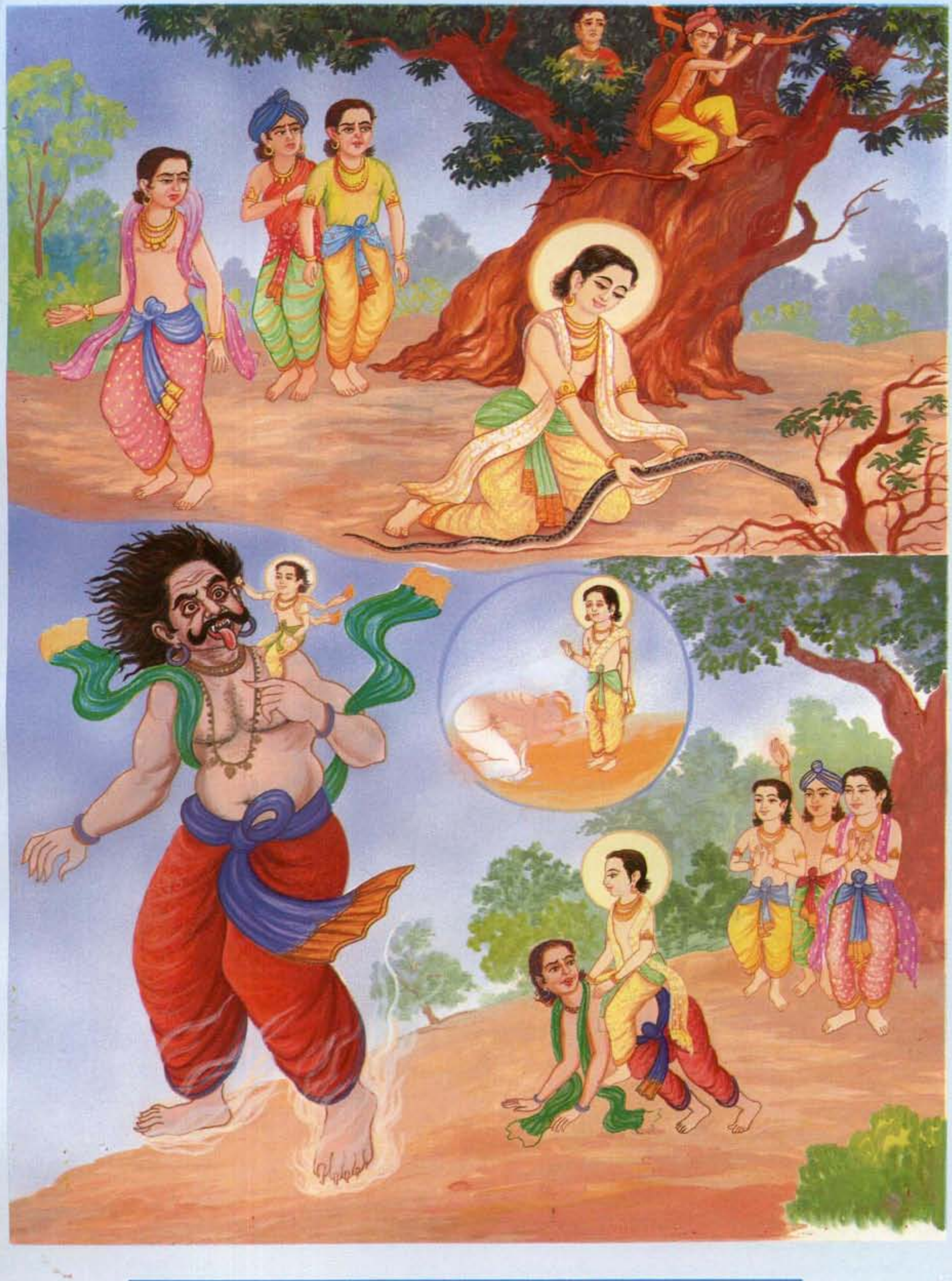

M 9 देव द्वारा बालक वर्धमान के धैर्य व साहस की परीक्षा।
Divine test of child Vardhaman's courage and presence of mind

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

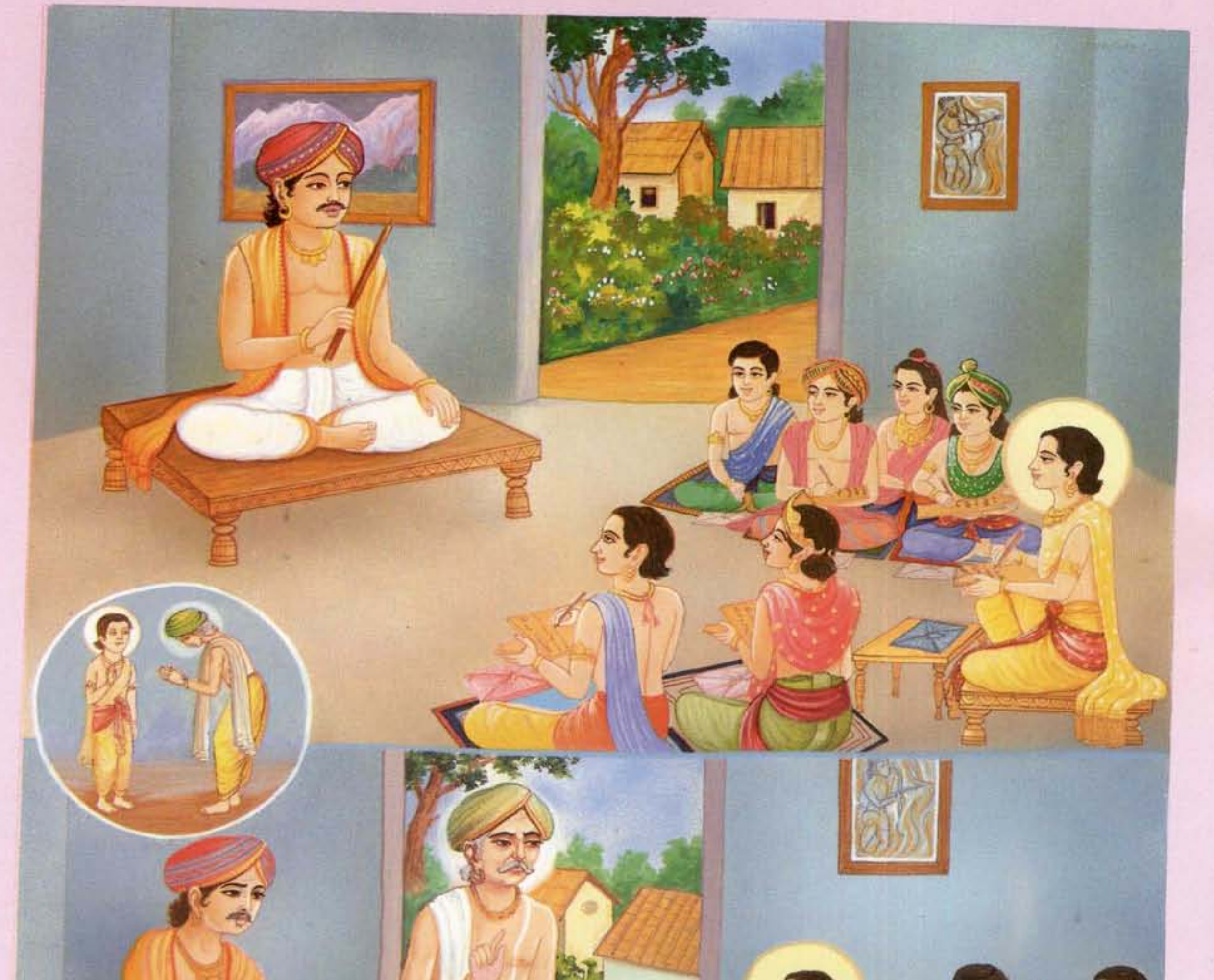

M 10 पाठशाला में वर्द्धमान द्वारा ब्राह्मण वेशधारी इन्द्र के प्रश्नों का समाधान।
In school Vardhaman replies to questions by Indra disguised as a Brahman scholar

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

The boys than started playing "Tindushka game". This game was also a race to a target tree. The winner was to ride piggy-back on the loser and return to the base. From serpent the god took form of a child and joined the game. He intentionally lost to Vardhaman and carried him piggy-back. When on way to the base the god transformed himself into a giant demon and started flying in the sky. Seeing this giant demon, all the children started crying with fear. But Vardhaman, undaunted, hit the giant with his mighty fist. The god cried with pain and when Vardhaman raised his fist once again the god landed on the ground. Resuming his original tiny form he joined his palms and sought pardon, "Pardon me O courageous one! I indulged in this abominable act just to test your courage. You are indeed, unparalleled in courage, valor, and patience. You are courageous! You are extremely courageous, Mahavir! You are the ocean of benevolence and compassion. Kindly forgive me." The children around stood wide eyed. Vardhaman raised his palm in gesture of benevolence and forgave the god. (Illustration M-9)

Precocious Mahavir

Vardhaman was a precocious child. At the age of eight years he was sent to school for studies. The teachers were astonished and they greatly admired his profound knowledge and wisdom. They could not fathom the inner source of child Vardhaman's wisdom. In order to acquaint his teacher with the extraordinary intelligence of Vardhaman, Indra, the king of gods, came to the school in the guise of a Brahman scholar. He asked some tough questions on grammar from the teacher. When the teacher could not provide answers and looked down in disgust , Vardhaman said to the Brahman scholar, "Why bother my teacher for such simple insignificant questions? Come, I will answer these questions." And child Vardhaman gave answers to all the questions, put forth by the Brahman scholar, one after another in simple but logical style. His appropriate answers astonished the king of gods himself. Indra, then presented himself in his true form and bowed before Vardhaman, the ocean of wisdom and source of unlimited knowledge. The teachers, too, acknowledged the grace and astonishing wisdom of Vardhaman with bowed heads. (Illustration M-10)

समणे भगवं महावीरे कासवगोत्तेणं, तस्स णं तओ नामधेज्जा एवमाहिज्जंति; तं जहा–१-अम्मा-पिउ-संतिए वद्धमाणे, २-सहसम्मुइयाए समणे, ३-अयले भय-भेरवाणं-परीसहोवसग्गाणं खंति-खमे, पडिमाणं पालए धीमं अरति-रति-सहे दविए वीरियसम्पन्ने देवेहिं से नाम कयं समणे भगवं महावीरे॥१०४॥

(१०४) श्रमण भगवान महावीर काश्यप गोत्र के थे। कहा जाता है कि उनके तीन नाम थे–माता-पिता ने उनका नाम वर्द्धमान रखा। विशिष्ट सहज बुद्धिबल और समतामय स्वभाव होने के कारण वे 'श्रमण' कहलाए। भय-भैरव (भयानक संकटों) की उपस्थिति में भी अचल रहने, परिषहों और उपसर्गों को शान्ति और क्षमापूर्वक सहने, भिक्षु-प्रतिमाओं का पालन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करने, प्रिय-अप्रिय परिस्थिति में समभावी होने, तथा बुद्धिमान, संयमी और परम पराक्रमी होने के कारण देवताओं ने उनका नाम 'श्रमण भगवान महावीर' रखा।

(104) Shraman Bhagavan Mahavir belonged to the Kashyap clan (gotra) It is said that he was known by three names. His parents gave him the name-Vardhaman. His unique natural wisdom and equanimous attitude inspired people to call him Shraman. Due to his unwavering determination, even in presence of fearful predicaments, his peaceful and compassionate tolerance for pain and inflictions, his steadfastness in observing the code of ascetics, his equanimity in favourable and adverse circumstances, his wisdom, discipline, and extreme valor, the gods gave him the epithet 'Shraman Bhagavan Mahavir'.

परिवार परिचय

समणस्स णं भगवओ महावीरस्स पिया कासवगोत्तेणं; तस्स णं तओ नामधेज्जा एवमाहिज्जंति; तं जहा–सिद्धत्थे इ वा, सेज्जंसे इ वा, जसंसे इ वा ॥१०५॥

(१०५) श्रमण भगवान महावीर के पिता काश्यप गोत्र के थे। वे इन तीन नामों से जाने जाते थे–(१) सिद्धार्थ, (२) श्रेयांस, और (३) यशस्वी।

The Family

(105) Shraman Bhagavan Mahavir's father belonged to the Kashyap clan. His three names were –1. Siddhartha, 2. Shreyansa, and 3. Yashasvi.

समणस्स णं भगवओ महावीरस्स माया वासिट्ठा गोत्तेणं; तीसे णं तओ नामधेज्जा एवमाहिज्जंति, तं जहा–तिसला इ वा, विदेहदिन्ना इ वा, पियकारिणी इ वा ॥१०६॥

(१०६) श्रमण भगवान महावीर की माता वाशिष्ठ गोत्र की थीं। उनके तीन नाम इस प्रकार हैं–(१) त्रिशला, (२) विदेहदिन्ना, (३) प्रियकारिणी।

(106) Shraman Bhagavan Mahavir's mother belonged to the Vashishtha clan. Her three names were–1. Trishala, 2. Videhdinna, and 3. Priyakarini.

समणस्स णं भगवओ महावीरस्स पित्तिज्जे सुपासे, जिट्ठे भाया नंदिवद्धणे, भगिणी सुदंसणा, भारिया जसोया कोंडिन्ना गोत्तेणं ॥१०७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

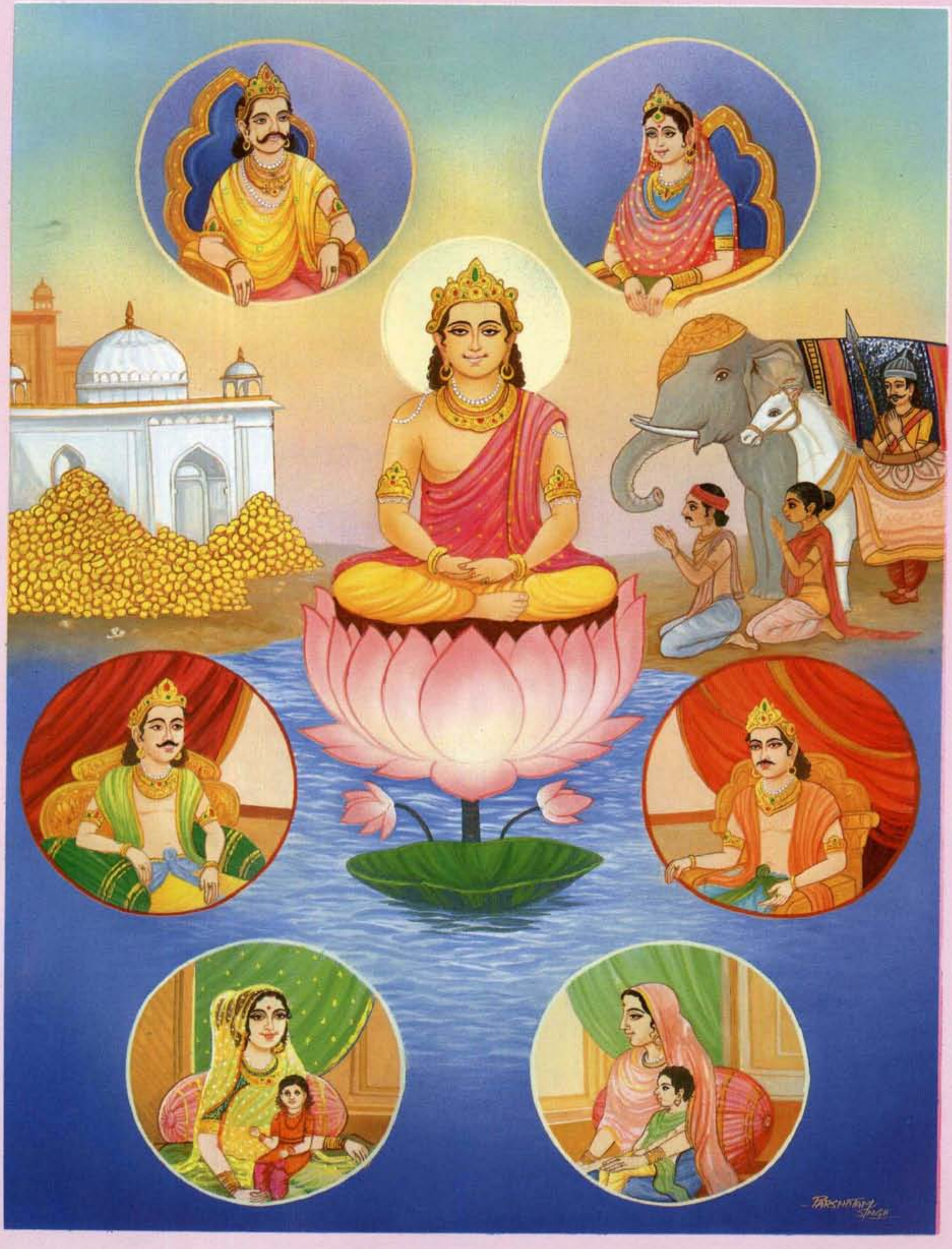

M 11 वर्द्धमान महावीर का परिवार परिचय।
Family of Vardhaman Mahavir

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

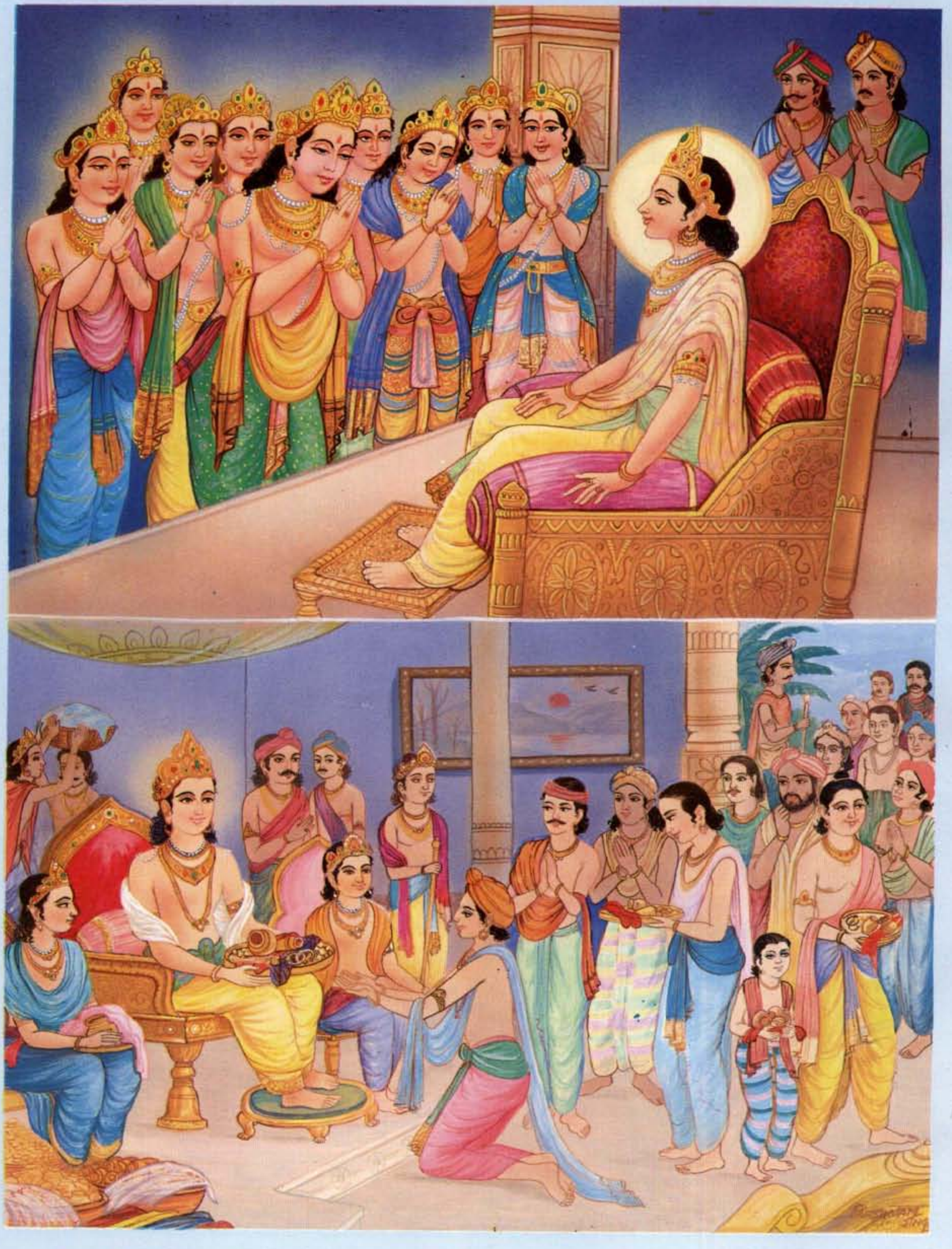

M 12 (१) नव लोकान्तिक देवों द्वारा दीक्षा संकल्प का अभिनन्दन। (२) वर्षीदान।

(a) Felicitation of the resolution of renunciation by nine gods (b) The year long great charity

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(१०७) श्रमण भगवान महावीर के चाचा का नाम सुपार्श्व, बड़े भाई का नाम नन्दीवर्धन, बहन का नाम सुदर्शना और भार्या का नाम यशोदा था। यशोदा कौण्डिण्य गोत्र की थीं।

(107) The name of Shraman Bhagavan Mahavir's uncle (father's younger brother) was Suparshva. His elder brother's name was Nandivardhan and sister's name was Sudarshana. The name of his wife was Yashoda and she belonged to the Kaundinya clan.

समणस्स णं भगवओ महावीरस्स धूया कासवी गोत्तेणं तीसे णं दो नामधेज्जा एवमाहिज्जंति, तं जहा–अणोज्जा इ वा, पियदंसणा इ वा ॥१०८॥

(१०८) श्रमण भगवान महावीर की पुत्री काश्यप गोत्र की थी और उसके दो नाम थे– १. अनवद्या (अनोद्या) और २. प्रियदर्शना (प्रियदर्शना का पाणिग्रहण सुदर्शना के पुत्र राजकुमार जमालि के साथ हुआ)। (चित्र M-11)

(108) The daughter of Shraman Bhagavan Mahavir belonged to the Kashyap clan and had two names—1. Anavadya, and 2. Priyadarshana. (Priyadarshana was married to prince Jamali, the son of Mahavir's sister Sudarshana.) (Illustration M-11)

समणस्स णं भगवओ महावीरस्स नत्तुई कासवी गोत्तेणं; तीसे णं दो नामधेज्जा, एवमाहिज्जंति; तं जहा–सेसवई इ वा, जस्सवई इ वा ॥१०९॥

(१०९) श्रमण भगवान महावीर की दौहित्री काश्यप गोत्र की थी और उसके दो नाम थे– १. शेषवती और २. यशस्वती।

(109) The grand daughter of Shraman Bhagavan Mahavir belonged to the Kashyap clan and had two names—1. Sheshavati, and 2. Yashasvati.

समणे भगवं महावीरे दक्खे, दक्खपइन्ने, पडिरूवे आलीणे भद्दए विणीए नाए नायपुत्ते नायकुलचंदे विदेहे विदेहदिन्ने विदेह-जच्चे, विदेह-सुउमाले, तीसं वासाइं विदेहंसि कट्टु अम्मा-पिउहिं देवत्त-गएहिं गुरु-महत्तरएहिं अब्भणुण्णाए समत्त-पइन्ने पुणरवि लोयंतिएहिं जिय-कप्पिएहिं देवेहिं ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं पियाहिं मणुन्नाहिं मणामाहिं ओरालाहिं कल्लाणाहिं सिवाहिं धन्नाहिं मंगल्लाहिं मिय-महुर-सस्सिरीयाहिं हियय-गमणिज्जाहिं हियय-पल्हायणिज्जाहिं गंभीराहिं अपुणरुत्ताहिं वग्गूहिं अणवरयं अभिनंदमाणा य अभिथुव्वमाणा य एवं वयासी–"जय जय नंदा! जय जय भद्दा! भद्दं ते

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

खत्तिया-वर-वसहा! बुज्झाहि भगवं लोगनाहा! पवत्तेहि धम्मतित्थं हिय-सुह-निस्सेसकरं सव्वलोए सव्वजीवाणं भविस्सइ" त्ति कट्टु जय-जय-सद्दं पउंज्जंति॥११०॥

(११०) श्रमण भगवान महावीर दक्ष थे, दक्ष प्रतिज्ञ थे, असामान्य रूपवान थे, स्वात्मलीन थे, सरल स्वभावी थे, विनीत थे, अनुपम कान्तिवान थे, अत्यन्त सुकुमार थे, सुप्रसिद्ध थे, ज्ञातवंश के चन्द्रमा के समान थे, विदेह थे, विदेहदिन्ना (त्रिशलापुत्र) थे, विदेह जात्य (विदेह वासियों में श्रेष्ठ) थे। वे तीस वर्ष तक गृहस्थवास में रहे, पर अलीन–निर्लेप कमल की तरह होकर। अपने माता-पिता के स्वर्गवास के बाद, गर्भ में लिए अपने संकल्प के पूर्ण हो जाने पर अपने बड़ों (बड़े भाई नंदीवर्धन) की अनुमति प्राप्त कर वे गृह-त्याग के लिए उद्यत हुए।

उस समय लोकान्तिक जीतकल्पी देवों ने परम्परानुसार कान्त, प्रिय, मनोज्ञ, मन को छूने वाली, उदार, कल्याण, शिव और धन्य रूप, मंगलकारी, मृदु, मधुर, मंजुल, शोभाकारी, मन में उतर जाने वाली, चित्त को प्रसन्न करने वाली, गंभीर और पुनरुक्ति रहित वाणी में बारंबार अभिनन्दन करते हुए भगवान की स्तुति की, "हे नन्द! आपकी जय हो, जय हो! हे भद्र! आपकी जय हो, जय हो! आपका कल्याण हो। हे क्षत्रिय-वृषभ! आपकी जय हो, जय हो! हे लोकनाथ! हे भगवान! बोध प्राप्त करो। सारे संसार के सभी प्राणियों के भले के लिए धर्म-तीर्थ का प्रवर्तन करो, जो उनका परम हित, सुख और निःश्रेयस करने वाला होगा।" और देवताओं ने फिर जयघोष किया। (चित्र M-12/1)

(110) Shraman Bhagavan Mahavir was a genius; he was veracious, absolutely self-absorbed simple, and humble. He was extraordinarily handsome, radiant, and delicate. He was famous as moon of the Jnata clan, Videh, Videhdinna (the son of Trishala), and Videhjatya (best of the Videhas). For thirty years he lived as a householder, but with complete detachment like a lotus in a pond. After the death of his parents, according to the resolution he took while in the womb, he sought permission of his elders (elder brother) and prepared for renunciation.

At that moment, the gods from the edge of the universe appeared and, according to the tradition, offered their prayer to Bhagavan in melodious, lovely, attractive, touching, kind, beneficent, auspicious, sweet, musical, soft, rhythmic, hypnotic, pleasing and measured voice, free of repetitions, "Victory be to you, O source of joy! May you be victorious. O noble one! May all go well with you. May you be triumphant, O bull among the Kshatriyas ! O Lord of the universe! O Bhagavan! embrace the great awakening. For the benefit of all the living, establish the ford of Dharma that will bring the

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ultimate welfare, happiness, and spiritual upliftment to them." And the gods hailed again. (Illustration M-12/1)

दीक्षा कल्याणक

पुव्विं पि य णं समणस्स भगवओ महावीरस्स माणुस्साओ गिहत्थधम्माओ अणुत्तरं आहोहिए अप्पडिवाई नाण-दसंणे होत्था।

तए णं समणे भगवं महावीरे तेणं अणुत्तरेणं आहोइएणं नाण-दंसणेणं निक्खमण-कालं आभोएइ, अप्पणो निक्खमणकालं आभोइत्ता चिच्चा हिरण्णं, चिच्चा सुवण्णं, चिच्चा धणं, चिच्चा रज्जं, चिच्चा रट्ठं, एवं बलं, वाहणं, कोसं, कोट्ठागारं चिच्चा पुरं चिच्चा अंतेउरं चिच्चा जणवयं चिच्चा विपुल-धण-कणग-रयण-मणि-मोत्तिय-संख-सिल-प्पवाल-रत्त-रयणमाइयं संत-सार-सावएज्जं विच्छड्डइत्ता विगोवइत्ता दाणं दायारेहिं परिभाएत्ता, दाइयाणं परिभाएत्ता;

जे से हेमंताणं पढमे मासे पढमे पक्खे मग्गसिर-बहुले, तस्स णं मग्गसिर-बहुलस्स दसमी-पक्खेणं पाईण-गामिणीए छायाए पोरिसीए अभिनिविट्ठाए पमाण-पत्ताए सुव्वएणं दिवसेणं विजएणं मुहुत्तेणं चंदप्पभाए सीयाए, सदेवमणुया-सुराए परिसाए, समणुगम्ममाण-मग्गे संखिय-चक्किय-नंगलिय–मुह-मंगलिय-वद्धमाण-पूसमाणग-घंटिय-गणेहिं ताहिं इट्ठाहिं, कंताहिं, पियाहिं, मणुण्णाहिं, मणामाहिं ओरालाहिं, कल्लाणाहिं, सिवाहिं, धन्नाहिं, मंगलाहिं, मिय-महुर-सस्सिरीयाहिं वग्गूहिं अभिणंदमाणा अभिसंथुवमाणा य एवं वयासी–॥१११॥

(१११) श्रमण भगवान महावीर मानव के रूप में गृहस्थ-धर्म में प्रवेश करने से पहले भी अनुत्तर, इन्द्रियातीत, अप्रतिहत (कभी नष्ट न होने वाले) ज्ञान और दर्शन के धारक थे।

जब उन्होंने अपने ज्ञान से यह जाना कि उनके अभिनिष्क्रमण का समय आ गया है तब उन्होंने चाँदी, सोना, धन, राज्य, राष्ट्र, सेना, वाहन, कोष, कोषागार, पुर, अन्तःपुर, जनपद, आदि सभी सांसारिक वस्तुओं का त्याग कर दिया। उन्होंने अपने अधिकार में रहे विपुल धन, सोना, रत्न, मणि, मोती, शंख, शिला, मूँगा, माणक आदि सभी समृद्धिसूचक पदार्थों को अपने संबंधियों में बाँट दिया और याचकों को दान में दे दिया। (चित्र M-12/2)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हेमन्त ऋतु के प्रथम महीने का पहला पक्ष चल रहा था। मार्गशीर्ष कृष्णा दशमी के दिन छाया पूर्व दिशा की ओर ढलने लगी थी और प्रमाणोपेत पौरुषी आ गई थी। उस समय सुव्रत दिवस में, विजय मुहूर्त में श्रमण भगवान महावीर चन्द्रप्रभा नामक पालकी पर पूर्व दिशा की ओर मुख करके बैठे। पालकी के पीछे मार्ग पर देवों, मानवों, और असुरों का समूह चल रहा था। उस दीक्षा महोत्सव यात्रा में आगे कितने ही जन शंख बजाते हुए, चक्र लिये हुए, मुख मांगलिक (विरूदावली बोलने वाले), वर्द्धमानक (कन्धों पर दूसरों को बिठाकर चलने वाले), मंगल पाठक और घण्टा बजाने वाले चल रहे थे। दर्शक लोग इष्ट, मधुर, मन आह्लादित करने वाली वाणी में भगवान का अभिनन्दन और स्तुति करने लगे।

The Great Renunciation

(111) Even before he became a householder Shraman Bhagavan Mahavir possessed unique and unimpeded extra-sensory knowledge and perception.

When he became aware that the moment of his renunciation had arrived he renounced all mundane things including silver, gold, wealth, kingdom, territories, army, carriages, treasures, treasuries, living quarters, palaces, towns, etc. He distributed to his relatives and gave in charity to the needy ones all his enormous wealth, gold, gems, beads, pearls, conch shells, precious stones, corals, rubies, and other embodiments of affluence. (Illustration M-12/2)

It was the first month and first fortnight of the winter season. On the tenth day of the dark half of the month of Margshirsh the hour of the noon had passed and the elongating shadow had reached a human length. On that day, known as Suvrata, at the auspicious moment known as Vijaya, Shraman Bhagavan Mahavir took his seat facing the east in the palanquin named Chandraprabha and set out. Throngs of gods, men, and demons followed his palanquin. This ceremonious parade had numerous people; some blowing conches, some carrying chakras (disc weapons), ploughs and even carrying humans. Also there were bards and singers of devotional songs, and some others were ringing gongs. The onlookers started felicitating Mahavir and singing in his praise in melodious, lovely, (etc.) voices.

"जय जय नंदा! जय जय भद्दा!, भद्दं ते अभग्गेहिं णाण-दंसण-चरित्तेहिं, अजियाइं जिणाहि इंदियाइ, जियं च पालेहि समणधम्मं, जिअविग्घो वि य वसाहि तं देव! सिद्धिमज्झे, निहणाहि राग-दोस-मल्ले तवेणं, थिइ-धणिय-बद्ध-कच्छे, मद्दाहि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अट्ठ-कम्म-सत्तू ज्झाणेणं उत्तमेणं सुक्केणं, अप्पमत्तो हराहि, आराहण-पडागं च वीर! तेलोक्क-रंग-मज्झे, पावय वितिमिर-मणुत्तरं केवल-वरनाणं, गच्छ य मोक्खं परमपयं जिणवरोवदिट्ठेणं मग्गेणं अकुडिलेणं, हंता परीसह-चमूं, जय जय खत्तिय-वर-वसहा! बहुइं दिवसाइं, बहुइं पक्खाइं, बहुइं मासाइं, बहुइं अयणाइं, बहुइं संवच्छराइं, अभीए परीसहोवसग्गाणं, खंतिखमे भयभेरवाणं, धम्मे ते अविग्घं भवउ त्ति कट्टु जय जय सद्दं पउंजंति॥११२॥

(११२) "हे नन्द! तुम्हारी जय हो, जय हो! हे भद्र! तुम्हारी जय हो, जय हो! तुम्हारा कल्याण हो। निर्मल ज्ञान, दर्शन चारित्र द्वारा, नहीं जीती हुई इन्द्रियों को जीतो और श्रमण धर्म का पालन करो। हे देव! बाधाओं पर विजय प्राप्त कर तुम मोक्ष की स्थिति में निवास करो। तप से राग-द्वेष रूपी मल्लों का नाश करो। धैर्य रूपी सुदृढ़ कच्छ बाँधकर श्रेष्ठ शुक्ल ध्यान से आठों कर्म शत्रुओं का मर्दन करो। हे वीर! अप्रमत्त बनकर त्रिलोक के रंग मण्डप पर आराधना की विजय ध्वजा फहराओ। अन्धकार से परे अनुत्तर और श्रेष्ठ केवलज्ञान को प्राप्त करो। जिनेश्वरों द्वारा बताये गये सीधे मार्ग पर चलकर तुम मोक्ष के परम पद को प्राप्त करो। परिषहों की सेना का नाश करो। हे क्षत्रियों में श्रेष्ठ नरपुंगव! तुम्हारी जय जय हो! परिषहों, उपसर्गों और भय-भैरव प्रसंगों के बीच बहुत दिनों, पक्षों, महीनों, ऋतुओं, अयनों और वर्षों तक शांति और क्षमा को धारण कर निर्भीक होकर विचरण करो। तुम्हारी धर्म साधना निर्विघ्न हो।"

(112) "Victory be to you O source of joy! May you be victorious O noble one. May all go well with you. May you win over the indomitable senses with the help of pure knowledge, perception, and conduct and follow the path of the Shramans. O Lord! May you attain the ultimate state of liberation by crossing all hurdles. May you destroy the mighty opponents in the form of attachment and aversion with the help of penance. May you don the athletic garb of patience and perseverence and win the bout with the eight wrestlers, in the form of Karmas, with the help of the purest form of meditation—the Shukla Dhyana. O courageous one! May you furl the flag of spiritual practices over the theatre of the three worlds by being in the state of perpetual awakening. May you rise above the mundane darkness and attain the unique and supreme omniscience. Following the straight and righteous path shown by the omniscients, may you reach the ultimate goal of liberation. May you annihilate the army of afflictions. O best among the Kshatriyas! May you be truimphant. May you tread the path filled with

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

painful, fearful, and terrible afflictions for days, fortnights, months, seasons and years undaunted. May your spiritual practices be interminable."

तए णं समणे भगवं महावीरे नयण-माला-सहस्सेहिं पेच्छिज्जमाणे पेच्छिज्जमाणे, वयण-माला-सहस्सेहिं अभिथुव्वमाणे अभिथुव्वमाणे, हियय-माला-सहस्सेहिं उन्नंदिज्जमाणे उन्नंदिज्जमाणे, मणोरह-माला-सहस्सेहिं विच्छिप्पमाणे विच्छिप्पमाणे, कंति-रूव-गुणेहिं पत्थिज्जमाणे पत्थिज्जमाणे, अंगुलि-माला-सहस्सेहिं दाइज्जमाणे दाइज्जमाणे, दाहिणहत्थेणं बहूणं नर-नारी-सहस्साणं अंजलि-माला-सहस्साइं पडिच्छमाणे पडिच्छमाणे भवण-पंति सहस्साइं समइच्छमाणे समइच्छमाणे तंती-तल-ताल-तुडिय-गीय-वाइय-रवेणं महुरेणं य मणहरेणं जय-जय-सद्द-घोस-मीसिएणं मंजु-मंजुणा घोसेण य पडिबुज्झमाणे पडिबुज्झमाणे, सव्विड्ढीए, सव्वजुईए, सव्वबलेणं, सव्ववाहणेणं, सव्वसमुदएणं, सव्वादरेणं, सव्व-विभूइए, सव्वविभूसाए, सव्व-संभमेणं, सव्व-संगमेणं, सव्व-पगईएहिं, सव्व-नाडएहिं, सव्वतालायरेहिं, सव्वावरोहेणं, सव्व-पुप्फ-गंध-वत्थ-मल्लालंकार-विभूसाए सव्व-तुडिय-सद्द-सण्णिणादेणं, महया इड्ढीए, महया जुईए, महया बलेणं, महया वाहणेणं, महया समुदएणं, महया वर-तुडिय-जमग-समग-प्पवाइएणं संख-पणव-पडह-भेरी-झल्लरी-खरमुहि-हुडुक्क-दुंदुहि-निग्घोस-नाइय-रवेणं कुंडपुरं नयरं मज्झं मज्झेणं निगच्छइ, निगच्छित्ता जेणेव, णाय-संड-वणे उज्जाणे जेणेव असोगवर-पायवे तेणेव उवागच्छइ ॥११३॥

(११३) श्रमण भगवान महावीर को इस यात्रा में हज़ारों नेत्र देख रहे थे। हज़ारों मुख उनकी प्रशंसा कर रहे थे। हज़ारों हृदय उनका अभिनन्दन कर रहे थे। हज़ारों मनोरथ उनके दर्शन की इच्छा कर रहे थे। कान्ति, रूप और गुणों के गान से उनकी प्रार्थना हो रही थी। हजारों अंगुलियाँ उनकी ओर इंगित कर रही थीं। वे अपने दाहिने हाथ से हज़ारों नर-नारियों के नमस्कार को स्वीकार कर रहे थे! वीणा, हस्तताल, त्रुटित, वादिन्न, आदि के संगीत के रव (ध्वनि) तथा मधुर मनोहर जयनाद से वे जागरूक हो रहे थे। उनके साथ उनकी समृद्धि के सभी चिन्ह चल रहे थे। उनका सारा जगमग करता ऐश्वर्य, समस्त सेना, वाहन, समुदाय, सम्मान, शोभा, उत्कण्ठा, प्रजाजन, अन्तःपुर, उत्सव, पुष्प, फल, वस्त्र, गन्ध, माला, अलंकार, एक साथ बजते विभिन्न वाद्य-वृन्द आदि सभी सम्मिलित थे उस यात्रा में। ऐसी ऐश्वर्यशाली धर्म-यात्रा सहित श्रमण भगवान महावीर कुण्डपुर नगर के बीच से होते हुए ज्ञातखण्ड वन नामक उद्यान में जहाँ पर उत्तम अशोक वृक्ष था वहाँ पहुँचे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(113) On this journey Shraman Bhagavan Mahavir was being admired by thousands of eyes and he was being praised by thousands of lips. Thousands of hearts were conveying their salutations and thousands of others were ripe with desire to behold him. Praise of his radiance, beauty and virtues were included in the panegyrics addressed to him. Thousands of fingers pointed at him. He acknowledged the salutations of thousands of men and women with raised right hand. Hails mixed with sweet sounds from musical instruments were creating an atmosphere conducive to his determination. With him could be seen all the signs of his grandeur : his wealth, armies, carriages, family, prestige, glory, spiritual craving, his people, his retinue, festivities, flowers, fruits, perfumes, garlands, ornaments musical instruments, etc. With this grand religious encourage, Shraman Bhagavan Mahavir, passing through Kundgram city, arrived near a grand Ashoka tree in the Jnatakhand-vana garden.

जेणेव असोग-वर-पायवे तेणेव उवागच्छित्ता, असोग-वर-पायवस्स अहे सीयं ठावेइ, अहे सीयं ठावित्ता सीयाओ पच्चोरुहइ, सीयाओ पच्चारुहित्ता सयमेव आहरण-मल्लालंकारं ओमुयइ, आहरण-मल्लालंकारं ओमुइत्ता सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं करेइ; सयमेव पंच-मुट्ठियं लोयं करित्ता छट्ठेणं भत्तेणं अपाणएणं, हत्थुत्तराहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं एगं देवदूससमादय एगे अबीए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइए ॥११४॥

(११४) भगवान की पालकी अशोक वृक्ष के नीचे रखी गई, और वे पालकी से नीचे उतरे। वर्द्धमान ने अपने आप अपने आभरण, माला, अलंकार, आदि उतारे और अपने ही हाथों से पंच-मुष्ठि लोच किया। उन्होंने छट्ठभक्त व्रत ग्रहण किया और हस्तोत्तरा नक्षत्र का योग आने पर मात्र एक देवदूष्य वस्त्र धारण किये हुए गृहवास त्यागकर एकल अनगार बन गये।

(114) Bhagavan Mahavir's palanquin was put down under the Ashoka tree and he got down. With his own hands Vardhaman took off all his ornaments, garlands, dress, etc. and also pulled out all his hair (formally termed as five-fistful pulling out of hair). He took the vow of the Chhattabhakta penance (one day fast) and at the moment when the moon entered the twelfth mansion he became a solitary ascetic donning just a piece of divine cloth.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विस्तार :

श्रमण भगवान महावीर ने जब केश लोच किया तो देवराज इन्द्र ने जीताचार के अनुसार उन केशों को स्वर्ण थाल में ग्रहण कर एक मंजूषा में सुरक्षित रख लिया। इसके पश्चात् भगवान ने सिद्धों को नमस्कार किया और "**करेमि सामाइयं सव्वं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि**" का उच्चारण कर "मैं जीवन पर्यन्त समस्त सावद्य योगों का त्याग करता हूँ" यह प्रतिज्ञा ग्रहण की। सर्व विरति चारित्र धर्म अंगीकार करते ही भगवान को मनःपर्यव ज्ञान प्राप्त हो गया। फिर उन्होंने एक और कठोर संकल्प किया, "जब तक मुझे केवलज्ञान प्राप्त नहीं हो जाता तब तक मैं अपने शरीर के प्रति ममत्व से मुक्त रहकर देव, दानव, मानव, तथा तिर्यंच द्वारा किये गये सभी उपसर्गों को समभावपूर्वक सम्यक् प्रकार से सहन करता रहूँगा।" (चित्र M-13)

Elaboration :

When Shraman Bhagavan Mahavir pulled out his hair, Indra, following the established code, took the hair in a golden dish and preserved the same in a box. After this, Bhagavan offered salutations to the Siddhas (the liberated ones) and took the vow of the abandonment of all intentional sinful activities, and the practice of equanimity. As soon as he took this vow of all-abandoning conduct he acquired extra sensory perception (Manah-paryava-jnana). At this point he made another harsh resolution, "As long as I do not attain omniscience, I will tolerate each and every affliction caused by man, god, demon, or animal equanimously and firmly without a trace of concern for my mundane body". (Illustration M-13)

अन्तिम दान

समणे भगवं महावीरे संवच्छरं साहियं मासं जाव चीवरधारी होत्था, तेण परं अचेले पाणि-पडिग्गहिए ॥११५॥

(११५) श्रमण भगवान महावीर तेरह महीनों तक देवदूष्यधारी रहे। उसके बाद पूर्ण वस्त्र रहित और करपात्री हो गए।

The Last Charity

(115) Shraman Bhagawan moved around with the divine cloth for thirteen months. After this he lost that also and became kara-patri (one who has only his palms as semblence of a pot for accepting alms).

विस्तार :

देवदूष्य वस्त्र के त्याग के विषय में कल्पसूत्र तथा आचारांग सूत्र में संक्षिप्त उल्लेख मात्र ही मिलता है। किन्तु कल्पसूत्र टीका, आवश्यक निर्युक्ति आदि अन्य ग्रन्थों में वस्त्रदान से सम्बन्धित घटना इस प्रकार वर्णित है–

श्रमण भगवान महावीर ने ज्ञातखण्ड वन से प्रस्थान कर कुर्मार ग्राम की ओर विहार किया। तभी एक कृशकाय क्षीणदेह ब्राह्मण लाठी के सहारे चलता भगवान के पीछे हो लिया। तेज कदम चलता वह भगवान

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

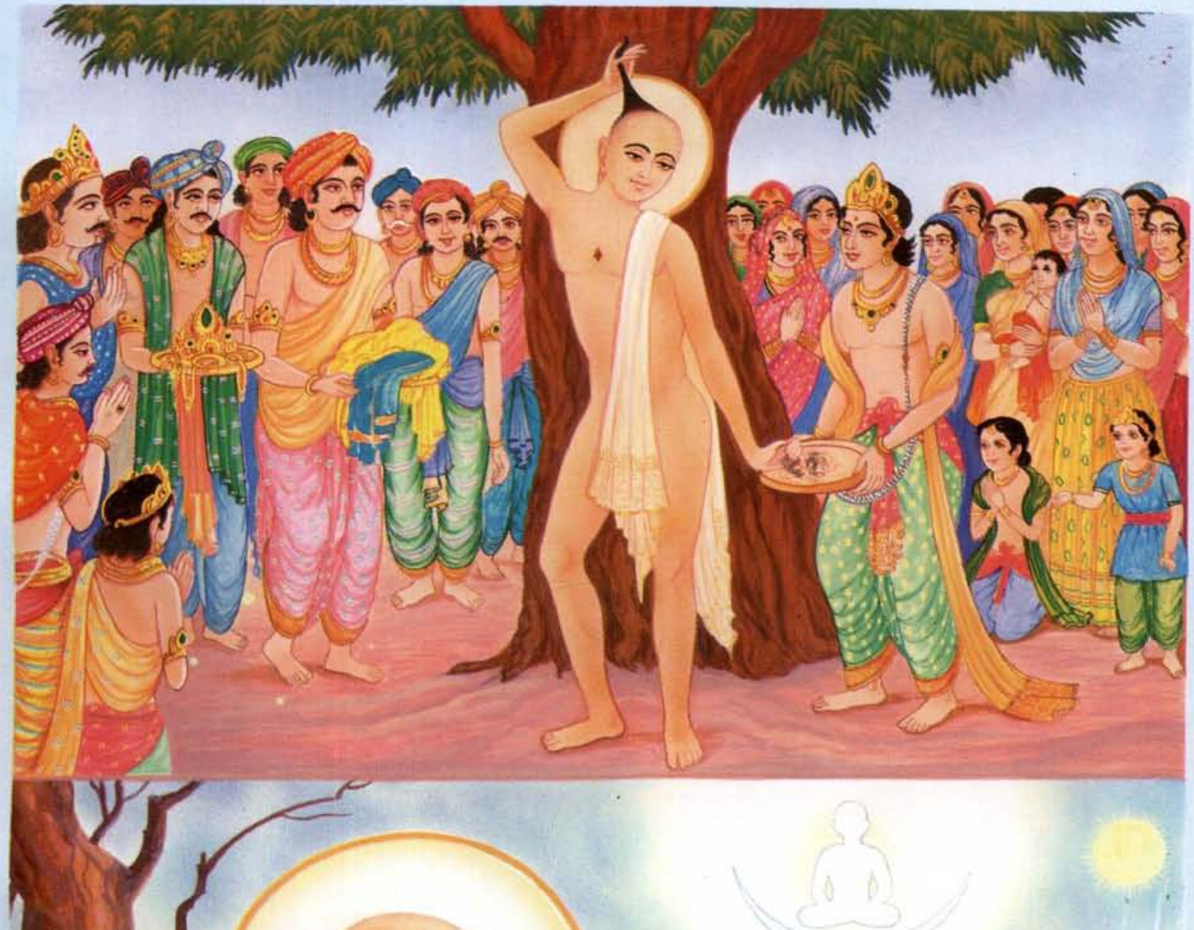

M 13 राजसी वस्त्राभूषण उतारकर केश लोच तथा सिद्धों को नमस्कार सहित कठोर दीक्षा संकल्प।
Plucking of hair after shedding regal dress and ornaments, and the tough resolution after salutations of Siddhas.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

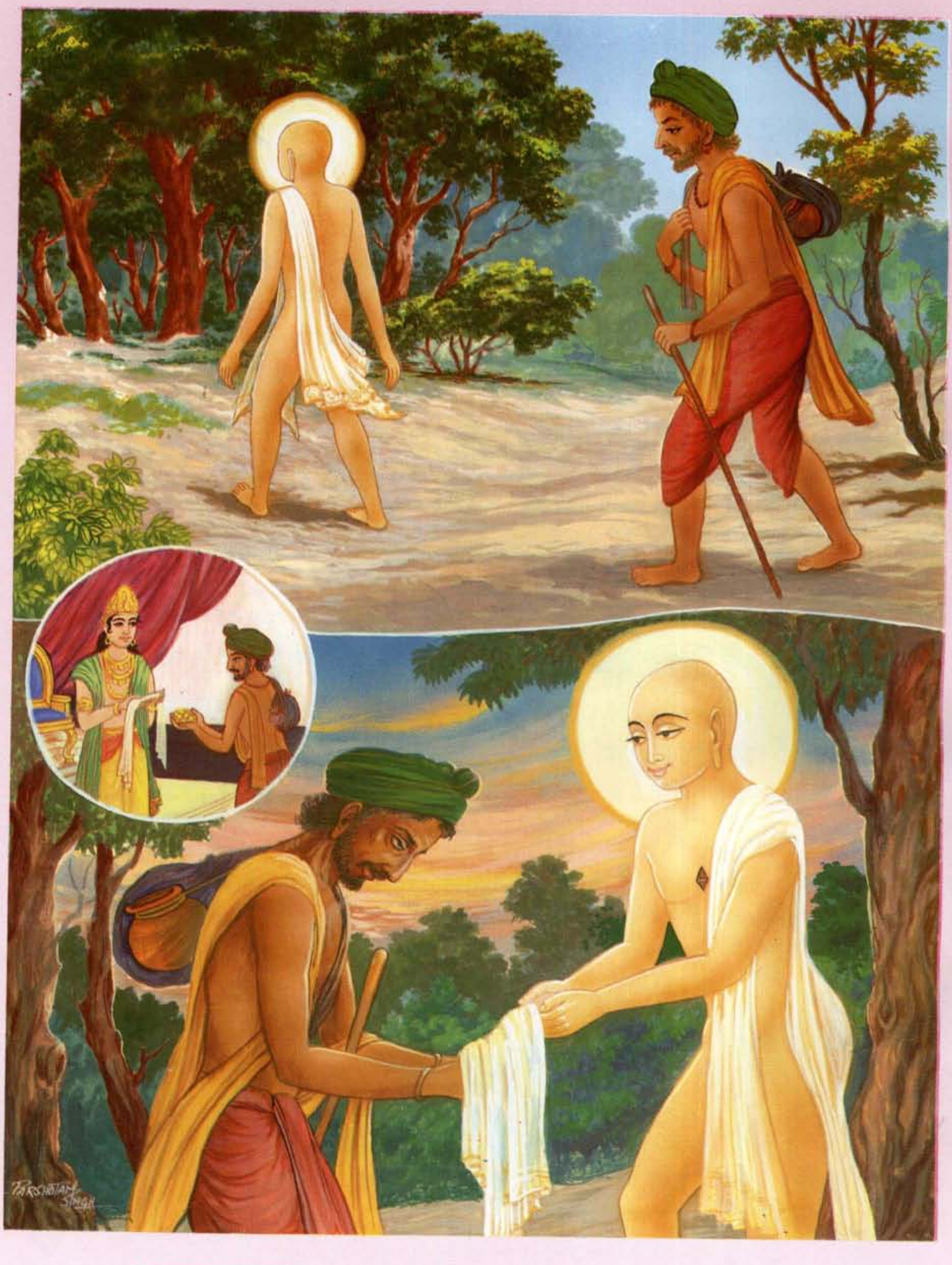

M 14 सोमशर्मा ब्राह्मण को वस्त्रदान।
Presenting the only peice of cloth to Brahman Somasharma.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के निकट पहुँचा और उनके चरणों में गिर पड़ा। ब्राह्मण करुण स्वर में भगवान से बोला, "कुमार वर्द्धमान! मैं आपके कुण्डग्राम का निवासी ब्राह्मण सोम शर्मा हूँ। आपके पिता महाराज सिद्धार्थ, जिनका मैं कृपापात्र था, की मृत्यु के पश्चात् से मैं आजीविका की खोज में यहाँ-वहाँ भटकता रहा हूँ पर कुछ प्राप्त नहीं हुआ। आपके वर्षीदान की सूचना प्राप्त होते ही मैं लौट पड़ा। पर मेरे जैसा भाग्यहीन यहाँ आज पहुँचा है जब आप सर्वस्व दान कर अनगार बन गये। एक वर्ष तक सौभाग्य का महा मेघ बरसता रहा पर मैं दुर्भागी एक बूँद को भी तरसता ही रह गया। हे दीन उद्धारक प्रभु! मैं दुखियारा दरिद्र हूँ और मेरा जीवन क्षुधा और अभावों से भरा पड़ा है। हे करुणा सिन्धु! मुझ पर दया कीजिये और मेरी दरिद्रता को दूर कर दीजिये।"

दरिद्र ब्राह्मण की दयनीय दशा देख महावीर का कोमल हृदय करुणा से ओत-प्रोत हो गया। पर उस समय उनके पास देने को कुछ बचा ही नहीं था। तभी उनकी दृष्टि अपने कंधे पर पड़े देवदूष्य वस्त्र पर गई। उन्होंने उस कपड़े के दो टुकड़े कर एक उस ब्राह्मण को दे दिया। ब्राह्मण उस कपड़े को लेकर एक रफूगर के पास गया और उसका मूल्य पूछा। रफूगर ने बताया कि उस वस्त्र का शेष भाग मिल जावे तो वह उसे रफू कर वापस ज्यों का त्यों बना देगा और तब वह एक लाख स्वर्ण मुद्राओं में बेचा जा सकेगा।

ब्राह्मण पुनः दौड़कर भगवान महावीर के निकट गया किन्तु शेष वस्त्र माँगने का साहस न कर सका। अतः वह श्रमण वर्द्धमान के पीछे हो लिया। तेरह महीने बाद एक दिन तेज हवा के झोंके से वह वस्त्र महावीर के शरीर से सरक कर गिर पड़ा। सोम शर्मा ने प्रसन्न हो वह वस्त्र उठा लिया और रफूगर के पास ले आया। जब रफू होकर वह पूर्ण हो गया तब ब्राह्मण उसे महाराज नन्दीवर्धन के पास ले गया और एक लाख स्वर्ण मुद्राओं के बदले बेच दिया। महावीर के द्वारा सांसारिक वस्तुओं का यह अन्तिम दान था। (चित्र M-14)

Elaboration :

Kalpasutra and Acharangasutra have only briefly mentioned the abandoning of the divine cloth by Mahavir. But in other sources like Commentary on Kalpasutra and Avashyak Niryukti, etc. an account connected with this act is available—

Leaving the Jnatakhand-vana garden Shraman Bhagavan Mahavir commenced his journey towards Kurmara village. A wiry and weak Brahman, moving with the help of a stick followed him. Taking quick steps he caught up with Bhagavan Mahavir and fell at his feet. He uttered humbly, "Prince Vardhaman! I am Brahman Som Sharma from your Kundgram. Since the death of your father and my mentor, king Siddhartha, I have been wandering from place to place in search of livelihood, but in vain. When I heard of your great charity I rushed back. But, ill-fated as I am, I reached here only today when you had already donated all you had and become an ascetic. A year of windfall for every one around but I, the cursed one, still remain deprived. O saviour of all! I am a miserable destitute. I live a tormented life plagued by hunger and deprivation. Have pity on me and remove my poverty, O ocean of compassion!"

Seeing the pitiable condition of the Brahaman, Mahavir's soft heart was filled with compassion. But this day he had nothing to give. After donating all his possessions he had become a mendicant. Then he chanced to look at the divine cloth on his shoulders. He tore it into two and gave one half to the Brahman. The Brahman took this torn piece of the divine cloth to a mender and enquired about its value. The mender informed him that if

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

the other half was brought to him, he could mend it and bring it back to its original shape. And then it could be sold for one hundred thousand gold coins.

The Brahman ran back to Mahavir but could not dare to ask for the remaining piece. So he followed Vardhaman wherever he went. After thirteen months one day the cloth, blown by wind, slipped away from Vardhaman's body. Som Sharma happily picked it up and returned to the mender. When the divine cloth was mended he took it to king Nandivardhan and sold it for one hundred thousand gold coins. This was the last act of mundane charity in Mahavir's life. (Illustration M-14)

साधना काल

समणे भगवं महावीरे साइरेगाइं दुवालस-वासाइं निच्चं वोसट्ठकाए चियत्त-देहे, जे केइ उवसग्गा उप्पज्जंति, तं जहा–दिव्वा वा, माणुस्सा वा, तिरिक्ख-जोणिया वा, अणुलोमा वा, पडिलोमा वा, ते उप्पन्ने सम्मं सहइ खमइ तितिक्खइ अहियासेइ ॥११६॥

(११६) दीक्षा लेने के बाद बारह वर्ष से कुछ अधिक समय तक श्रमण भगवान महावीर अपने शरीर के प्रति सर्वथा उदासीन रहे। वे शरीर के प्रति सदा इतने अनासक्त रहे मानो शरीर का त्याग ही कर दिया हो। उनमें ऐसा सामर्थ्य, धैर्य और संतुलन था कि अपने साधना काल में देवता, मनुष्य अथवा तिर्यंच के द्वारा किये गये अनुकूल या प्रतिकूल सभी उपसर्ग उन्होंने निर्भय होकर समतापूर्वक सहे।

The Period of Spiritual Practices

(116) For more than twelve years after his renunciation Shraman Bhagavan Mahavir completely neglected his body. He remained so much detached from his body and its needs that it appeared as if he had abandoned it. He was endowed with ample capacity, patience and discipline to have tolerated all the painful and pleasent afflictions and disturbances—be they caused by gods, men, or animals—with courage and equanimity.

विस्तार :

यद्यपि कल्पसूत्र के मूल-पाठ में भगवान महावीर के लगभग बारह वर्षीय साधना-काल का विस्तृत विवरण उपलब्ध नहीं है, यह रोचक और प्रेरक प्रसंगों के रूप में कल्पसूत्र टीका, आवश्यक निर्युक्ति, त्रिषष्ठिशलाका पुरुष चरित्र आदि परवर्ती ग्रन्थों में उपलब्ध है। इनमें से कुछ चुने हुए प्रसंग हम यहाँ दे रहे हैं।

१. दैवीय सुरक्षा अस्वीकार

दीक्षा के अगले दिन श्रमण महावीर ने ज्ञातखण्ड उद्यान से प्रस्थान किया। वे सूर्यास्त के समय कूर्मार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ग्राम के निकट पहुँचे (वर्तमान में कामन छपरा)। वहाँ वे एक वृक्ष के नीचे रुके और स्तम्भ के समान स्थिर खड़े हो ध्यानमग्न हो गये। कुछ देर बाद वहाँ एक ग्वाला अपने बैलों सहित पहुँचा। उसे दूध दुहने के लिए गाँव में जाना था। वह ध्यानमग्न श्रमण के निकट गया और कहा, "मुनिवर! मैं गाँव में गायों को दुहने जाऊँ तब तक आप मेरे बैलों का ध्यान रखें। मैं जल्दी ही लौट आऊँगा।" उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना ही ग्वाला वहाँ से चल पड़ा। बिना बँधे अरक्षित बैल घूमते हुए पास के जंगल में चले गये। लौटकर जब ग्वाले ने देखा कि उसके बैल वहाँ नहीं हैं तो उसने पूछा, "मुनिवर! मेरे बैल कहाँ गये?" महावीर मौन रहे। ग्वाला क्रोध में बड़बड़ाया और बैलों को ढूँढ़ने लगा। उसने आस-पास चारों ओर रात भर खोज की पर बैल नहीं मिले। इस बीच वे लौटकर महावीर के निकट आकर बैठ गये थे। थके हुए ग्वाले ने लौटकर यह दृश्य देखा तो क्रोध से आग बबूला हो गया। उसने समझा कि महावीर छद्मवेशी कोई चोर है, जिसने उसके बैलों को रात भर छुपाकर रखा था और अभी उन्हें लेकर भागने ही वाला था और उसने पकड़ लिया। बिना सोचे समझे ग्वाले ने बैल बाँधने की रस्सी से महावीर को पीटना आरम्भ कर दिया। उस मोटी सण की रस्सी की चोट से महावीर की वस्त्ररहित देह पर चौड़े रक्तिम चिन्ह उभर पड़े। इस तीव्र पीड़ा से भी महावीर का ध्यान भंग नहीं हुआ।

तभी एक प्रभावशाली दिव्य व्यक्ति प्रकट हुआ और उच्च स्वर में कहा, "ठहरो, मूर्ख अज्ञानी! तुम घोर पाप कर रहे हो। यह व्यक्ति चोर नहीं है। ये राजा सिद्धार्थ के पुत्र हैं। ये श्रमण महावीर हैं, एक महान् योगी, एक ध्यानमग्न साधु।" ग्वाला महावीर के चरणों में गिर पड़ा और अपनी मूर्खता पर पश्चात्ताप करते हुए उनसे क्षमा प्रार्थना की। जिस दिव्य व्यक्ति ने व्यवधान दिया था वह और कोई नहीं स्वयं देवराज इन्द्र थे। महावीर के शरीर पर उभरे रक्तिम घावों से चिन्तित हो उन्होंने कहा, "प्रभु! ये अज्ञानी लोग अपनी मूर्खतावश आपको पीड़ा देते रहेंगे? कृपया मुझे अपनी सेवा में रहने की आज्ञा प्रदान करें, जिससे मैं आपकी सुरक्षा का प्रबन्ध कर सकूँ।" महावीर ने सहज स्वर में उत्तर दिया, "देवराज! आपको तो यह समझना चाहिए कि आत्म-कल्याण के पथ पर चला साधक केवल अपनी ही साधना, साहस, और संयम के सहारे ही आत्म-शुद्धि के लक्ष्य को प्राप्त करता है। कोई भी आत्मा देवराज अथवा दानवराज की सहायता से अपने समस्त कर्मों का क्षय कर अर्हत् बन सके, मुक्त हो सके ऐसा कभी नहीं होता।" देवराज ने श्रमण महावीर की प्रशंसा करते हुए सादर वन्दना की और प्रस्थान किया। (ई. पू. ५६९) (चित्र M-15)

Elaboration :

Although the basic text of Kalpasutra does not mention in detail the incidents from the twelve year period of spiritual practices of Bhagavan Mahavir, these are available as interesting and inspiring narratives in other later works like Kalpasutra commentary, Avashyak Niryukti, Trishashtishalaka Purush Charitra etc. We have selected some of these incidents, not necessarily in chronological order.

1. Rejection of the Divine Help

The day after his renunciation Shraman Mahavir left Jnatakhand garden. At sunset he arrived near a small village called Kurmaragram (identified as Kaman Chhapra today). He stopped under a tree, and standing unmoving like a rock, started his meditation. After

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

some time a cowherd arrived there with his oxen. He wanted to go into the village to do his job of milking cows. He approached the meditating Shraman and said, "Ascetic! Please look after my oxen while I go into the village to milk cows. I will return soon." Without waiting for a reply the cowherd went away. The oxen, untethered and uncared for, strayed into the nearby jungle. On his return when the cowherd did not find his oxen, he asked, "Ascetic! where are my oxen?" Mahavir remained silent. The cowherd grumbled and started looking around. He searched all around throughout the night in Vain. The oxen, in the meantime, returned and lay down near Mahavir. When the exhausted cowherd returned in the morning and beheld this scene, he lost his temper. He took Mahavir to be a thief in disguise, whom he had caught just before he was to flee with the oxen that he must have hidden during the night. Without a second thought he started hitting Mahavir with the rope he carried for tying the oxen. The hard sisal rope left large inflamed welts on Mahavir's naked body. Even this excruciating pain did not distract, Mahavir from his meditation.

Just then an overpowering divine person appeared and said in his commanding voice, "Stop it, you ignorant idiot! You are committing a grave crime. This person is no thief. He is the son of king Siddhartha. He is Shraman Mahavir, a great yogi and a meditating ascetic." The cowherd fell prostrate at the feet of Mahavir and repenting for his ignorance begged his pardon. The divine person who had interfered was none else but the king of gods, Indra. He bowed before the Mahashraman. Disturbed by the inflamed marks on the body of Mahavir he said, "Prabhu! these ignorant people will continue to cause you pain due to their foolishness. Please allow me to be in your attendance to provide you protection." Mahavir replied in all humility, "Devraj! you should know that an ascetic on the spiritual path reaches the goal of purity with the help of his own practice, courages, and discipline. It is never with the help of the king of gods or the king of demons that a soul sheds all its karmas and becomes an Arhant or gets liberated." Full of reverence and praise the king of gods bowed before Shraman Mahavir and departed. (569 B. C.) (Illustration M-15)

२. *शूलपाणि का परिषह*

विहार करते हुए महावीर एक दिन वेगवती नदी के किनारे एक सुनसान छोटे से गाँव के निकट पहुँचे। गाँव के बाहर एक छोटी-सी पहाड़ी पर नर कंकालों और हड्डियों के ढेरों से घिरा एक चैत्य था। अपनी साधना के लिए उस स्थान को उपयुक्त जान महावीर ने ग्रामवासियों से वहाँ ठहरने की अनुमति माँगी। एक वृद्ध ग्राम जन आगे बढ़ा और भयातुर स्वर में कहने लगा, "देवार्य! यह सुनसान ग्राम कभी वर्द्धमान नाम का समृद्धिशाली नगर था। बरसाती नदी होने के कारण गर्मी में यह वेगवती अंशतः दलदल बन जाती थी। एक बार धनवाह नामक एक धनी व्यापारी अपनी माल से लदी पाँच सौ बैलगाड़ियों सहित यहाँ आया। नदी पार करते समय वे गाड़ियाँ इस सूखी नदी की बालू में फँस गईं। उसने अपने बैलों में श्रेष्ठ एक बैल की सहायता से एक-एक कर सभी गाड़ियों को दलदल से निकाला। अन्तिम गाड़ी को पार लगाते ही वह बलिष्ट बैल थककर धरती पर गिर पड़ा। अथक प्रयत्न करने पर भी वह व्यापारी अपने बैल का उपचार नहीं कर सका। उसने यहाँ के कतिपय नागरिकों से आग्रह किया कि उसके बैल की समुचित देख-रेख करें और इस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

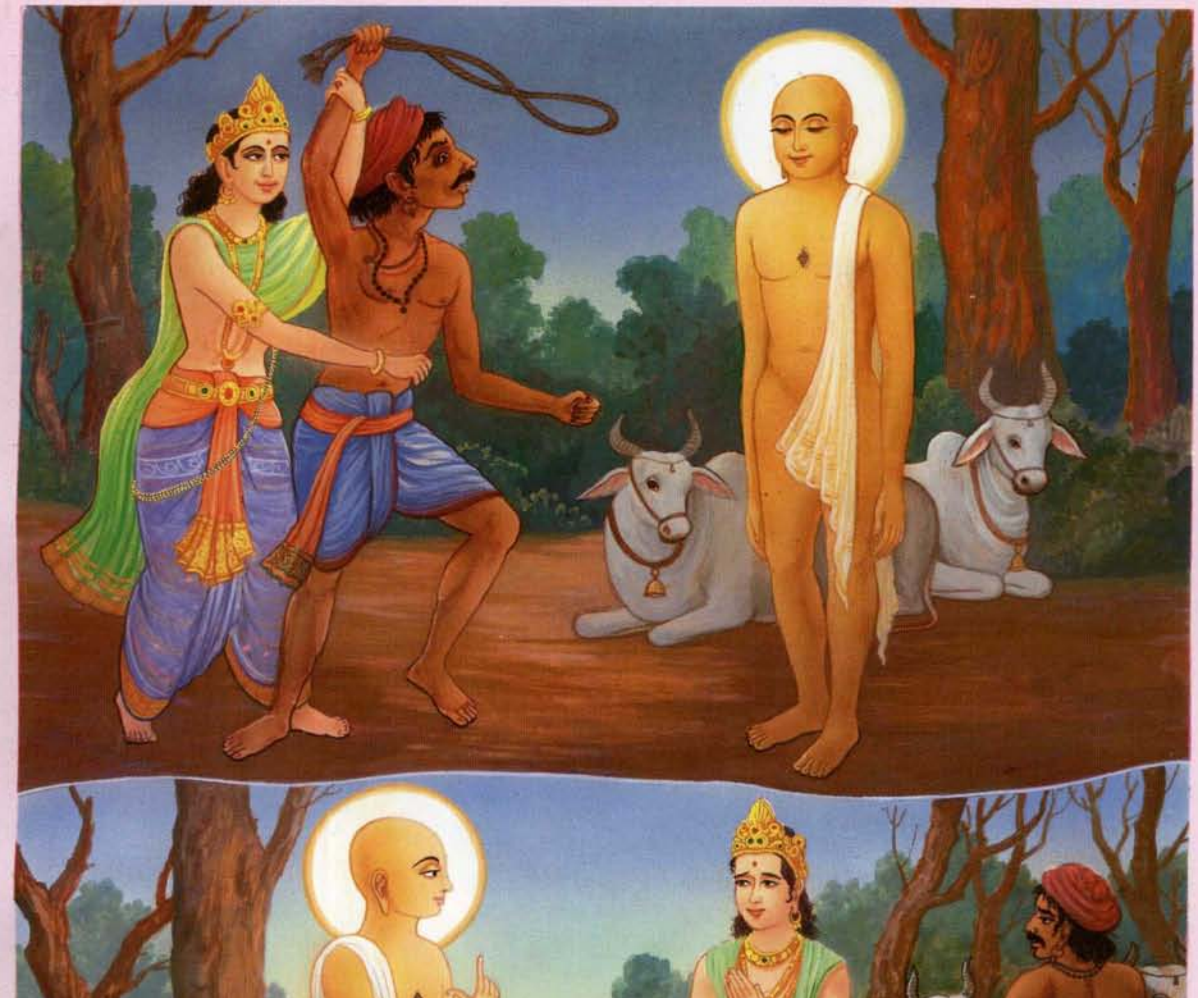

M 15 (१) ग्वाले द्वारा रस्सी से भगवान को उपसर्ग, इन्द्रदेव द्वारा बचाव (२) इन्द्र के सेवा प्रस्ताव का श्रमण महावीर द्वारा अस्वीकार।
(1) Indra interfering in the infliction by the cowherd
(2) Bhagavan Mahavir rejecting Indra's offer to provide protection.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

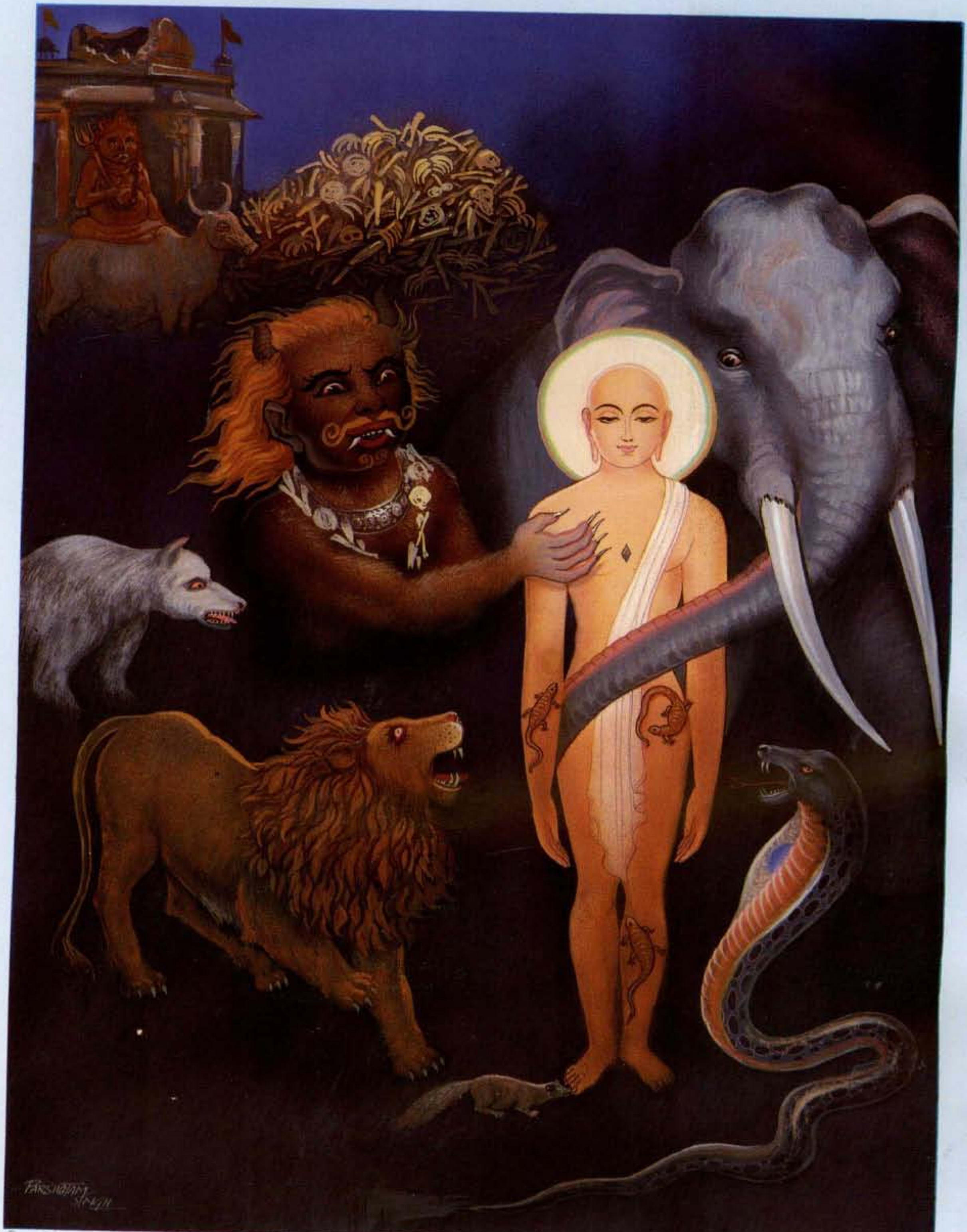

M 16 शूलपाणि यक्ष द्वारा भयावने उपसर्ग।
Fearsome afflictions by Shulpani

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कार्य के लिए उसने उन्हें प्रचुर धन भी प्रदान किया। जैसे ही धनवाह ने अपनी यात्रा पुनः आरम्भ की वे नागरिक भी अपने उत्तरदायित्व को भूल वहाँ से चल दिये। वह रुग्ण बैल प्राकृतिक आपदाओं का सामना करने को अकेला छूट गया। भूख और प्यास की असह्य वेदना भोग उसने अपनी देह त्याग दी।

इस घटना के कुछ दिनों बाद हाथ में शूल लिए एक भयानक दैत्य आकाश में प्रकट हुआ। उसने नगर पर बालू और पत्थरों की वर्षा की और महामारी भी फैला दी। कुछ ही दिनों में वह नगर एक श्मशान घाट में बदल गया। प्रताड़ित नगरवासियों ने तब बलि दी, उस दैत्य से किसी भी नागरिक द्वारा किये गये किसी भी पाप के लिए क्षमा प्रार्थना की। यक्ष ने क्रुद्ध स्वर में कहा, "मैं वही बैल हूँ जिसे पीड़ा भोगते हुए मरने के लिए तुम लोगों ने अकेला छोड़ दिया था। मैं तुम लोगों को उस निर्दय व घृणित कृत्य का फल प्रदान कर रहा हूँ। फिर भी यदि तुम मेरे लिए एक चैत्य बना दो और प्रतिदिन मेरी पूजा अर्चा करो तो मैं तुम्हें सताना बन्द कर दूँगा। पर याद रहे कि यदि मेरे चैत्य में किसी ने भूल से भी रात बिताई तो फिर तुम उस व्यक्ति को जीवित नहीं देख सकोगे।"

"हे श्रमण! उस दिन से वर्द्धमान नगर अस्थिक ग्राम बन गया। यदि आप अपने जीवन से विरक्त नहीं हो गए हैं तो हम आपको इस चैत्य में रात बिताने को नहीं कहेंगे।" इस पर भी महावीर ने उस चैत्य में ध्यान साधना करने की अनुमति प्रदान करने को कहा। ग्रामवासियों ने अनिच्छापूर्वक उनके आग्रह को स्वीकार कर लिया। सूर्यास्त तक महावीर उस चैत्य में एक स्थान पर खड़े हो ध्यानमग्न हो गये। अंधेरा होने पर सारे वातावरण में भयावह ध्वनियाँ गूँजने लगीं। शूलपाणि दैत्य आँगन में प्रकट हुआ और भयकारक स्वर में चिंघाड़ने लगा। ऐसी पैशाचिक ध्वनियों के बीच भी इस मनुष्य को अविचल ध्यानमग्न निष्कंप खड़े देख वह आश्चर्यचकित हो गया। फिर उसने ऐसी तीव्र गरज उत्पन्न की कि मन्दिर की विशाल दीवारें भी हिल उठीं। फिर भी वह श्रमण न तो हिले-डुले और न ही उनके मुख के सौम्य भावों में कोई अन्तर आया। अब तो वह दैत्य क्रोध से आग बबूला हो उठा और अपने क्रूर परिषह आरम्भ कर दिये। एक विशाल मस्त हाथी प्रकट हुआ और महावीर के शरीर को अपने पैने दाँतों से गोदने लगा। उसने उन्हें अपनी सूँड़ में उठा लिया और इधर-उधर उछालने लगा। जब इसका भी कोई प्रभाव नहीं हुआ तो एक क्रूर प्रेत प्रकट हुआ जो महावीर को अपने विशाल पैने दाँतों और नाखूनों से घायल करने लगा। इसके बाद एक काला साँप प्रकट हुआ जिसने महावीर पर अपने विषैले दाँतों और साँसों से आक्रमण किया। जब महावीर इन सभी परिषहों के बीच अविचल रहे तो शूलपाणि ने एक विचित्र परिषह का प्रयोग किया। अपनी राक्षसी शक्ति द्वारा उसने महावीर के शरीर के सात कोमल स्थलों (आँख, कान, नाक, मस्तक, दाँत, नाखून तथा कमर) में अत्यन्त तीव्र पीड़ा उत्पन्न कर दी। महावीर में अनन्त तितीक्षा क्षमता थी। यह तीव्रतम पीड़ा भी उनकी शांत सौम्यता भंग करने में असफल रही।

अपनी दानवी शक्ति का स्रोत सूख जाने पर शूलपाणि के मन में भय व्याप्त हो गया। उसे लगा कि वह अपने से कहीं अधिक प्रभावकारी किसी दैवी शक्ति से सामना कर बैठा है और अपने विनाश की ओर बढ़ रहा है। अनायास ही उसकी आत्मा एक आध्यात्मिक प्रकाश से जगमगा उठी। धीरे-धीरे उसका क्रोध शांत हुआ, भय दूर हुआ और कल्याण की भावना जाग उठी। उसने पश्चात्ताप सहित श्रमण महावीर का चरण स्पर्श किया और नम्रतापूर्वक क्षमा माँगी। महावीर ने आँखें खोलीं और अभय मुद्रा में हाथ उठाकर कहा, "शूलपाणि, क्रोध और भी अधिक क्रोध को जन्म देता है और स्नेह देने से स्नेह प्राप्त होता है। यदि तुम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

किसी को आतंकित नहीं करोगे तो तुम सर्वदा सभी आतंकों से मुक्त हो जाओगे। अतः क्रोध और प्रतिकार की बेल को नष्ट कर दो।''

महावीर ने साधना काल का प्रथम चातुर्मास अस्थिक ग्राम में ही किया। (ई. पू. ५६९) (चित्र M-16)

2. The Afflictions by Shulpani

Wandering Mahavir one day arrived near a small forlorn village on the banks of river Vegavati. Outside the village, on a small hillock stood a temple surrounded by heaps of scattered bones and skeletons. Considering it to be an appropriate place for his practices, Mahavir sought permission from the villagers. A village elder came forward and uttered in a terror stricken voice, "Devarya! this forlorn village was once a prosperous town known as Vardhaman town. Being a seasonal river, this Vegavati turned partly into a swamp during summer. Once a rich merchant, Dhandev, came here with five hundred carts load of merchandise. While crossing, the carts got stuck in the sandy river bed. He used the best one of his oxen to help pull out all the carts one after the other. This giant ox fell exhausted on the ground by the time it helped pull out the last cart. In spite of all his efforts the merchant could not bring about any improvement in its condition. He requested some townsfolk to take proper care of the sick ox and gave them a large sum of money for that purpose. As soon as Dhandev left the town on his onward journey the concerned persons also went away betraying the trust. The sick ox was left alone to the elements. After suffering the agony of hunger and thirst it died.

A few days after this incident a ferocious demon with a lance in his hand appeared in the sky. It showered sand and stones on the town and also caused an epidemic. In a few days the town was turned almost into a funeral ground. The tormented citizens, then offered sacrifices to the demon and begged to be foregiven for any sin committed by any of them. The Yaksha scoffed at them, "I am the disabled ox that was left to die in pain by you. I am repaying you for your dastardly act of cruelty. However, now if you build a temple for me and do worship every day, I will stop tormenting you. But beware, if someone spends a night in my temple, even out of ignorance, you will not see him alive".

"Since that day, O ascetic! Vardhaman town has become Asthik (bone) village. We advise you not to spend the night in this temple unless you are tired of your life." Mahavir still requested them to allow him to meditate in the temple. The villagers reluctantly accepted his request. By evening Mahavir was standing at a spot within the temple, completely lost in his meditation. When darkness descended, the air was filled with eerie sounds. Shulpani, the demon with a lance, appeared in the courtyard and started emitting fearful trumpeting noise. He was surprised to see a human being standing fearlessly in meditation undisturbed by his ominous utterings. He produced thunderous roars that shook the thick walls of the temple. But the ascetic still did not move nor did he show any change in his serene expression. The demon lost his temper and commenced his horrifying atrocities. A mad elephant appeared and goaded Mahavir with its pointed tusks. It lifted him in its trunk and tossed around. When this had no effect on Mahavir, a horrible ghost appeared and attacked Mahavir with its large canines and claws. Next appeared a black

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अस्थिक ग्राम से प्रस्थान करके श्रमण महावीर श्वेताम्बिका नगरी की तरफ आगे बढ़े। मार्ग में एक भयानक सुनसान वीरान जंगल पड़ता था।

कुछ ग्वाल-बाल, जो जंगल में अपनी भेड़-बकरियाँ चरा रहे थे, महावीर को उस सुनसान पथ पर जाते देखा तो खूब जोर से पुकारने लगे–"साधु बाबा, रुक जाना, यह रास्ता बड़ा भयानक है, इस रास्ते पर दृष्टिविष कालिया नाग रहता है। उसकी जहरीली फुंकारों से पेड़-पौधे भी भस्म हो जाते हैं, उड़ते पक्षी तड़फड़ाकर गिर जाते हैं, मनुष्य खड़े-खड़े ही लुढ़क जाते हैं, इधर मत जाना, दूसरे रास्ते जाना बाबा।"

ग्वाल-वालों की भय भरी पुकार महावीर के कानों में पड़ी, उन्होंने स्मित भाव के साथ अभय मुद्रा वाला हाथ उठाया। धीर गंभीर गति से चलते हुए महावीर नागराज की बाँवी के निकट पहुँच गये। आस-पास अनेक पशु-पक्षियों व मनुष्यों के कंकाल पड़े थे, वृक्ष सूखकर ठूँठ बन गये थे। बाँबी के ठीक पास में उजड़ा-सा देवालय था। उसी देहरे के पास में महावीर जाकर खड़े हुए और सूर्य के सामने भुजाएँ सीधी लटकाकर नाक के अग्र भाग पर दृष्टि स्थिर करके ध्यान में लीन हो गये।

कुछ ही देर में फुंकारता हुआ विशालकाय कृष्ण नाग अपनी बाँवी से बाहर निकला। अपनी जहरीली लाल आँखों से उसने महावीर को देखा, अग्नि पिंड से जैसे तेज ज्वालाएँ निकलती हैं, वैसी ही उसकी विष बुझी आँखों से जहरीली ज्वालाएँ निकलने लगीं; भयंकर फुँकारें करने लगा, परन्तु महावीर पर तो कोई प्रभाव नहीं हुआ।

दूसरी बार पुनः सूर्य के सामने देखकर नाग ने जहरीली तीक्ष्ण दृष्टि महावीर पर टिकाई, फुंकारें मारीं, परन्तु अव भी स्थिर।

क्रोधाविष्ट नागराज ने तीसरी बार भी डंक मारा। जहरीली फुँकारें कीं। परन्तु उसके तीनों आक्रमण निष्फल हो गये। महावीर तो अभी भी बिना हिले-डुले शान्त खड़े थे। नाग आश्चर्य में डूबकर देखने लगा। यह क्या? जहाँ डंक मारा था, उस अँगूठे से रक्त के स्थान पर श्वेत दूध की धार बह रही है`````` ?

प्रशमरस निमग्न महावीर ने शान्त गंभीर स्वर में उद्‌बोधन दिया–"उवसम भो चंडकोसिया !" हे नागराज चंडकौशिक ! समझो, समझो। अब शान्त हो जाओ। तुम अपने पूर्व-जन्म का स्मरण करो। बार-बार क्रोध करके जीवन बर्बाद मत करो। क्रोध को शान्त करो।

महावीर की अमृत भरी दृष्टि खुली, नागराज ने अपनी दृष्टि मिलाई, तो जैसे उसके हृदय में अपूर्व शान्ति-सी दौड़ने लगी, सचमुच जहर शान्त होता हुआ प्रतीत हुआ। (चित्र M-17)

नागराज को शान्त हुआ देखकर आस-पास के गाँवों से स्त्री-पुरुषों के झुण्ड के झुण्ड आने लगे, खीर, दूध, चढ़ाकर नाग बाबा की पूजा करने लगे। परन्तु नाग देवता तो अपने बिल में मुँह करके शान्त समाधि लीन थे। उसने मन ही मन अनशन का संकल्प ग्रहण कर लिया। भूख-प्यास, सर्दी की पीड़ा सहता रहा, चींटियों के काटने से असह्य वेदना हो रही थी, उसका शरीर छलनी जैसा हो गया, परन्तु फिर भी उसे खीझ तक नहीं आयी। पन्द्रह दिन बाद शरीर त्यागकर नागराज चंडकौशिक सहस्रार स्वर्ग में देवता बना।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

The Embodiment of Love

Leaving Asthik-gram Mahavir proceeded in the direction of Shvetambika town. The trail to this town passed through a dense and desolate forest. When some shepherds saw Mahavir entering the forest they shouted, "O Monk, stay put for a minute. This is a dangerous trail. There is a black serpent with venomous gaze on this trail. His hissing and gaze burn plants and trees. Even flying birds and standing humans drop dead. Please leave this trail and take a different route."

Mahavir heard this fear filled call of the shepherds. With a serene smile he raised a hand as a gesture of assurance. With firm steps Mahavir went near the snake-hole. All around human and animal skeletons could be seen. There was not a single green leaf as far as the eye could see. Close to the snake-hole was a delepidated temple. Mahavir stood in the shade of this temple and started his meditation.

After some time the giant black serpent came out of its hole hissing fiercely. It had seen a human being after a long time. The man was standing firm and fearless with closed eyes. The serpent was surprised. It looked at Mahavir with its venomous red eyes. Like flames from a ball of fire, its poisonous eyes emitted waves of venom. It hissed awesomely. But all this had no effect whatsoever on Mahavir. The serpent was astonished—till today every man I came across has been consumed by my first venomous hiss and this man stands still, absolutely unmoved.

The serpent glanced at the sun and once again focused its gaze at Mahavir and hissed at him with renewed anger, but in vain. It slithered from the line of the expected fall of the body and than with all its force sank its fangs in Mahavir's toe and injected all its venom. It drew back and waited expectantly, again in vain.

The angry serpent, vexed further by its failure stung Mahavir twice again. All its three attacks were wasted. Mahavir stood undisturbed. The serpent was astonished to see milk oozing out instead of blood from the spots where it had stung on Mahavir's toe.

Involved in his spiritual pursuits, Mahavir uttered in his deep and tranquil voice, "O Chandakaushik ! Open your inner eyes. Be calm and remember your past life. Do not inject venom of anger in your life. Rise above the deadly poison of anger.

Mahavir opened his ambrosia filled eyes. When the serpent met his gaze, it felt as if a wave of peace and tranquility had engulfed its inner self. It appeared that its venom was slowly vanishing.

Knowing that the serpent had become harmless, throngs of people started arriving from nearby villages. They worshipped the serpent-god by offering milk and sweets. But the serpent was lying, keeping its hood in the hole, in meditation without even a trace of movement. Swarms of ants were attracted by the sweets. They started stinging the serpent. But the serpent tolerated these afflications with equanimity. It silently took the last vow (fast unto death). It tolerated the agony of hunger, thirst and the stings of ants. Its body became almost perforated, but it did not react at all. After fifteen days it died and was reborn as a god in the Sahasrar dimension. (M-17)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

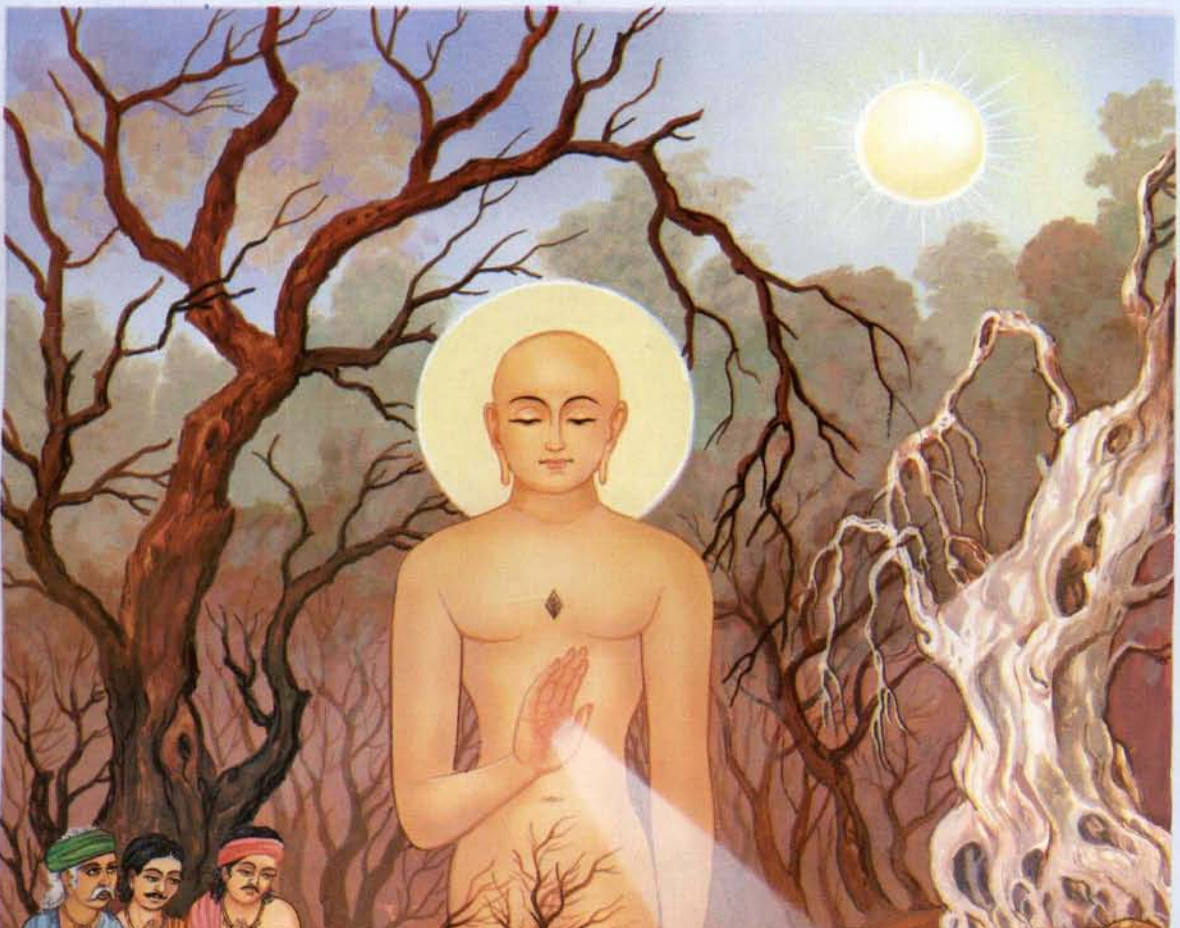

M 17 चंडकौशिक नाग का उपसर्ग।
Affliction by serpent Chanda Kaushik.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

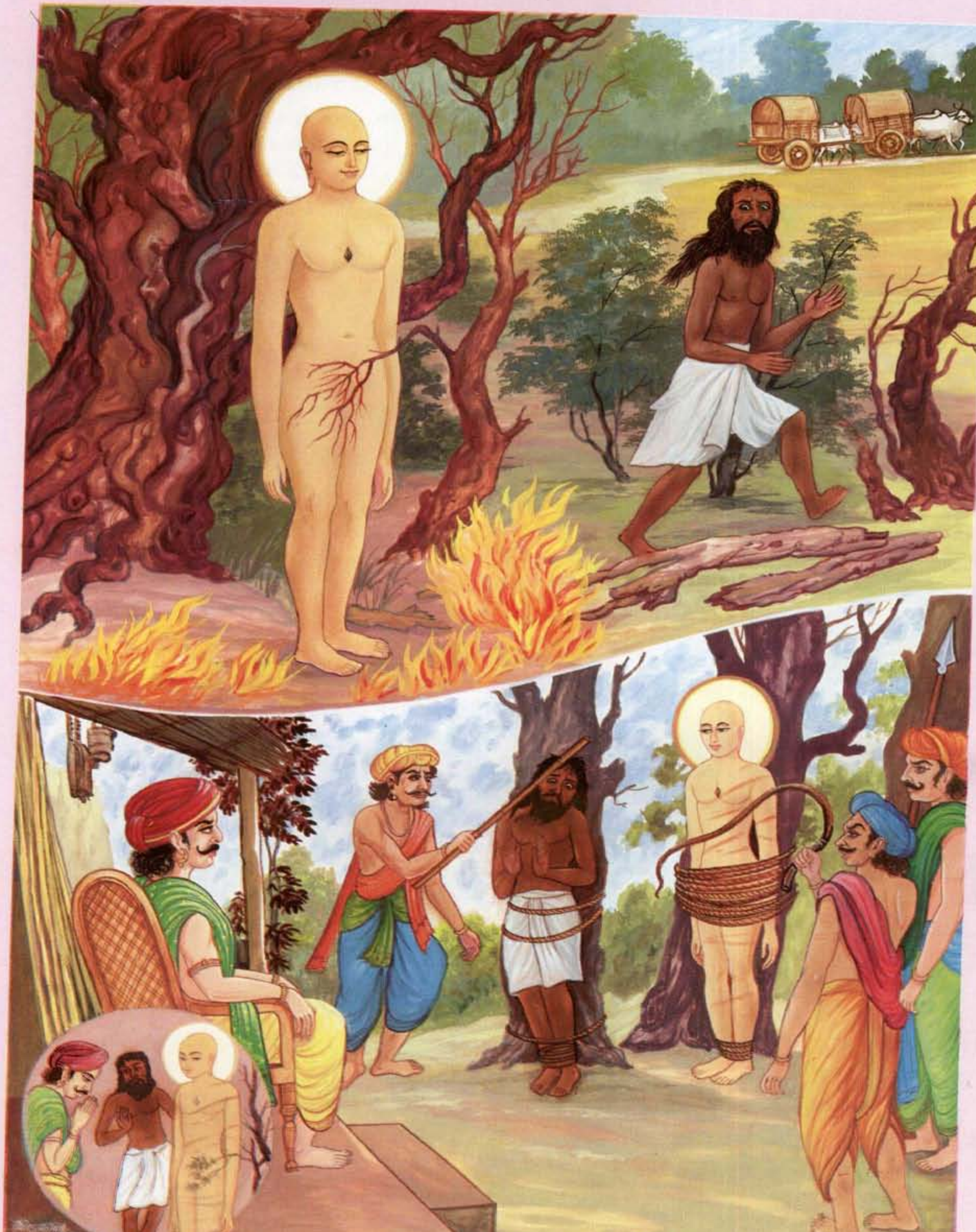

M 18 (१) अग्नि लपटों के बीच अकम्प श्रमण महावीर (२) कालहस्ती द्वारा उत्पीड़न।
(1) Shraman Mahavir unmoved by flames (2) Torture by Kalahasti.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

serpent that attacked Mahavir with its venomous fangs and toxic breath. When Mahavir remained unmoved during all these afflictions, Shulpani devised a strange torture. With his demonic powers he caused extreme pain in seven soft spots within Mahavir's body (eyes, ears, nose, head, teeth, nails, and back). Mahavir had an unending capacity to tolerate pain. Even this extreme agony failed to pierce his composure.

Drained of all his demonic energy, Shulpani became apprehensive. He thought that he was facing some divine power much stronger then he and was heading toward his own destruction. All of a sudden, a divine spiritual light illuminated his inner self. Slowly his anger subsided, fear dissolved, and a feeling of goodwill took over. He touched Mahavir's feet and with repentence and humility begged his pardon. Mahavir opened his eyes, and, raising his hand, said, "Shulpani! Anger supplements anger and love begets love. If you do not cause fear you too will become free of all fears always. So destroy the poison ivy of anger and revenge." Mahavir spent his first monsoon stay at Asthika gram. (569 B. C.) (Illustration M-16)

३. लपटों के बीच अकम्प

एक बार श्रावस्ती से विहार कर श्रमण वर्द्धमान हलीद्दुग ग्राम को जा रहे थे। राह में उन्होंने एक विशाल वट वृक्ष देखा। अपनी साधना के लिए उपयुक्त स्थल जान वे उस पेड़ के नीचे गये और खड़े हो अपना रात्रि-ध्यान आरम्भ कर दिया। सर्दी का मौसम था और ठण्डी हवाएँ चल रही थीं। गौशालक भी महावीर के साथ चल रहा था। ठण्डी हवा की चुभन उससे नहीं सही गयी तो वह पेड़ के पीछे चला गया। कुछ देर बाद कुछ यात्री वहाँ आए और उसी पेड़ के नीचे बैठ गए। उन्होंने कुछ सूखी लकड़ियाँ इकट्ठी कीं और भोजन पकाने के लिए आग जला दी। यात्रियों ने रात वहीं बिताई और आग को जलाए रखा। पौ फटने से पूर्व ही वे आगे बढ़ गए और आग को जलते हुए ही छोड़ गए। धीरे-धीरे वह आग पेड़ के नीचे एकत्र हुए सूखे पत्तों और टहनियों में फैलकर और भी भड़क उठी। हवा का बहाव महावीर की ओर था। आग धीरे-धीरे फैलती गई और वहाँ तक पहुँच गई जहाँ महावीर ध्यानमग्न खड़े थे। गौशालक ने चिल्लाकर चेतावनी दी। पर आत्मलीन महावीर तो अन्य किसी आभास से परे थे। वे उन फैलती हुई लपटों के बीच भी अकम्प थे। वे उस चरम अग्नि को शांत करने में जुटे थे जिसे पुनर्जन्म की आग कहते हैं। आग की लपटें महावीर तक पहुँचीं और उनके पैर झुलस गये। यह तीव्र पीड़ा भी उनकी एकाग्रता की गहराई को नहीं छू सकी। कुछ समय बाद आग अपने आप बुझ गई। (साधना काल का पाँचवाँ वर्ष, ई. पू. ५६५) (चित्र M-18/1)

3. Unmoved by Flames

Once, leaving Shravasti, Shraman Vardhaman was going to Haliddug village. On the way he saw a large banyan tree. Finding it suitable he went under it and started his night meditation. It was winter and a cold wind was blowing. Gaushalak was also following him. As Gaushalak could not tolerate the piercing wind, he shifted to the other side of the tree. After some time some wayfarers also stopped under the tree. They collected dry wood and started a fire to cook food. They spent the night there and kept the fire burning. Early in the morning they broke camp and went away. The fire was left burning. Slowly it spread and engulfed the surrounding dry twigs and leaves gathered under the tree. The wind was

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

blowing in the direction of meditating Mahavir. The fire slowly spread and reached the spot where Mahavir was standing. Gaushalak shouted a warning. But Mahavir had no awareness besides his soul. He was unmoved by the heat of the approaching flames. He was busy quashing the ultimate fire, the fire of rebirth. The flames reached him and scorched his feet. Even this acute pain did not reach the depth of his concentration. After some time the fire subsided on its own. (The fifth year of spiritual practices, 565 B. C.) (Illustration M-18/1)

४. कालहस्ति का उपसर्ग

चोरक ग्राम से विहार कर जब महावीर कलम्बुक ग्राम के निकट पहुँचे तब की है यह घटना। इस ग्राम पर मेघ तथा कालहस्ति नामक दो भाइयों का आधिपत्य था। यद्यपि वे जागीरदार और मुखिया थे फिर भी वे पड़ौसी राज्यों में लूटपाट, राह चलते सार्थों को लूटना, तस्करी, आदि त्याज्य कार्यों में लिप्त थे। जब कालहस्ती ने एकाकी पथ पर महावीर को और उनके पीछे-पीछे गौशालक को चलते देखा तो उन्हें रोककर पूछा कि "वे कौन हैं?" उसे महावीर तथा गौशालक दोनों से ही कोई उत्तर नहीं मिला। उसने उन्हें किसी पड़ौसी राज्य का गुप्तचर समझा और रस्सियों से बाँध उन पर अमानुषी अत्याचार करने लगा। इस पर भी जब उसे उनसे कोई सूचना प्राप्त नहीं हुई तो उसने उन्हें और अधिक यातना देने और प्रश्न पूछने के लिए अपने बड़े भाई मेघ के पास ले जाने की आज्ञा दी।

उन दोनों को चोरों की तरह हथकड़ियों और बेड़ियों से बाँध मेघ के सामने उपस्थित किया गया। महावीर को देख मेघ को लगा उनका चेहरा जाना पहचाना है। उसे अनायास ही याद आया कि उसने एक बार महाराज सिद्धार्थ की राजसभा में कुमार वर्द्धमान को देखा था। उसे यह बेड़ियों से बँधा गुप्तचर कुमार से अनोखी समानता लिए लगा। मेघ ने निकट आकर देखा तो वह तत्काल पहचान गया कि यह बन्दी अन्य कोई नहीं स्वयं कुमार वर्द्धमान हैं जो श्रमण बन गये थे। वह अपनी आँखों में पश्चात्ताप के आँसू लिए श्रमण महावीर के चरणों में गिर पड़ा और उनसे क्षमा याचना की। (चित्र M-18/2)

4. Torture by Kalahasti

This incident occurred when, leaving Chorak village Mahavir arrived at the outskirts of Kalambuka village. This village was ruled by two brothers—Megh and Kalahasti. Although they were landlords and chieftens, they were still involved in unlawful activities like looting the neighbouring kingdoms, raiding passing caravans, smuggling, etc. When Kalahasti saw Shraman Mahavir moving silently on a trail followed by Gaushalak, he stopped Mahavir and asked, "Who are you?" He neither got a reply from Mahavir nor from Gaushalak. He took them to be spies from some neighbouring kingdom. Tying them with ropes, he tortured them inhumanly. When he still could extract no information from them he ordered them to be taken to his elder brother, Megh, for further torture and interrogation.

Shakled like criminals, they were produced before Megh. Megh felt as if he was looking at a known face. He suddenly recalled that once he had seen prince Vardhaman at the court of king Siddhartha. This shakled spy seemed to have an uncanny resemblence with the prince. He came closer and at once recognized that the person in bondage was none else

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

but prince Vardhaman who had become a Shraman. He fell at the feet of Mahavir and with tears of repentence in his eyes he begged to be forgiven. (Illustration M-18/2)

५. *कटपूतना का परिषह*

यह श्रमण महावीर के साधना काल के छठे वर्ष की घटना है। माघ का महीना था और शीतकाल अपने पूर्ण वेग पर था। चुभती हुई बर्फीली हवाएँ चल रही थीं। रात्रि के निस्तब्ध भाग में एकान्त वन में महावीर साधना मग्न खड़े थे। अचानक वहा कटपूतना नामक राक्षसी आई। महावीर को ध्यान मग्न देख वह अकारण ही क्रुद्ध हो गई। वैसे अकारण कुछ भी घटित नहीं होता अतः अवश्य ही पूर्वजन्म का कोई न कोई वैर रहा होगा। जैसे ही वह वैर भावना उदय में आई कटपूतना अपना नियन्त्रण खो बैठी और पूर्वजन्म के किसी भूले बिसरे वैर का बदला लेने के लिए महावीर को सताने लगी। उसने एक विशाल भयावह परिव्राजिका का रूप धरा जिसके लम्बे-लम्बे बाल थे। उन बालों में बर्फीला पानी भर उसने महावीर पर छींटना चालू कर दिया। सारे वातावरण में बर्फीली हवाओं की सांय-सांय और कटपूतना की राक्षसी हँसी की ध्वनि व्याप्त हो रही थी। एक भयावह दृश्य उपस्थित हो गया था। महावीर फिर भी निश्चल और सौम्य हो पूर्ण रूप से साधना के उच्च स्तर पर जा पहुँचे। अन्ततः राक्षसी ने हार मान ली। वह महावीर के चरणों में प्रणाम कर वहाँ से चली गई। आत्म-रूप में इस सम्पूर्ण तल्लीनता और आत्म-शुद्धता के उच्च स्तर के फलस्वरूप तब महावीर को विशिष्ट लोकावधि ज्ञान की प्राप्ति हुई। (ई. पू. ५६४) (चित्र M-21/1)

5. Afflictions by Kataputana

It is an incident from the sixth year of the period of spiritual practices of Shraman Mahavir. It was the month of Magh, the peak of winter season. Chilling and biting winds were blowing, during the quiet part of the night, in a lonely jungle Mahavir was standing in meditation. All of a sudden a witch named Kataputana came there. Seeing Mahavir deep in meditation she became angry for no apparent reason. Mahavir had done no harm to her. But there is nothing that happens without a reason, and there must certainly have been some antagonism from some previous birth. As soon as that feeling surfaced, Kataputana lost her reason, and, in order to take revenge for some forgotten deed from some past life, she started torturing Mahavir. She took the form of a giant and ominous looking Parivrajaka with long strands of hair. Filling ice cold water in her braided hair she sprayed that freezing water on Mahavir. The atmosphere was filled with the moaning sound of icy winds and demonic laughter of the witch. It was a horrific scene. But Mahavir, elevated completely into a higher spiritual realm, remained unmoved and serene. At last the witch accepted her defeat. She bowed at the feet of Shraman Mahavir and left. As a result of his total absorption in the self and his high purity of soul, he acquired the special mental powers of percieving the whole physical world at will (Vishishta Lokavadhi Jnana). (564 B. C.) (Illustration M-21/1)

६. *कारागार में*

अपने साधना काल के छठे वर्ष में एक दिन श्रमण महावीर वैशाली के पश्चिम में स्थित विदेह राज्य के कूपिय ग्राम में आये। दण्ड-नायकों ने उन्हें गुप्तचर समझ बन्दी बना लिया और कारागार में डाल दिया। गाँव

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

में विजया व प्रगल्भा नाम की दो परिव्राजिकाएँ थीं। जब उन्होंने सुना कि नग्न श्रमण के वेश में कोई गुप्तचर पकड़ा गया है तो वे उसे देखने आयीं। श्रमण महावीर कारागार में बँधे हुए ध्यानमग्न खड़े थे। परिव्राजिकाओं ने उन्हें पहचान लिया। दुखित हो उन्होंने प्रहरियों से कहा, "तुम अपने को राज्य के रक्षक कहते हो और एक सभ्य नागरिक और चोर के बीच भेद करना नहीं जानते? तुम्हें तो एक श्रमण और तस्कर में अन्तर ही नहीं जान पड़ता। तुम्हें ज्ञात होना चाहिए कि तुम महाराज सिद्धार्थ के तपस्वी पुत्र श्रमण वर्द्धमान को यातना दे रहे हो। क्या तुम्हें देवताओं के कोप का भय भी नहीं है?"

यह तथ्य जानते ही प्रहरी भय से काँपने लगे। उन्होंने तत्काल महावीर को मुक्त कर दिया और क्षमा-याचना की। श्रमण महावीर ने क्षमा व अभय मुद्रा में हाथ उठाया और अन्य किसी एकान्त स्थान की ओर प्रस्थान किया। (ई. पू. ५६४) (चित्र M-21/2)

6. In the Prison

During the sixth year of his practices, Mahavir one day went to the Kupiya village in the state of Videh, east of Vaishali. The village guards caught him and taking him to be a spy, put him in the prison. There were two female mendicants in the village; when they, Vijaya and Pragalbha, heard that a spy disguised as a nude ascetic had been apprehended, they came to see him. Shraman Mahavir, tied up, was standing in meditation in the prison. The mendicants recognized him and became sad. They approached the guards and said, "You call yourself guardians of the state and you fail to distinguish a thief from an honest citizen. You do not find any difference between a Shraman and a smuggler. For your information, you are torturing Shraman Vardhaman, the ascetic son of king Siddhartha. Have you no fear of the wrath of gods."

With this revelation, the soldiers started trembling. They at once released Mahavir and sought his forgiveness. Shraman Mahavir just raised his palm as a gesture of pardon and assurance and left for some other solitary place. (564 B. C.) (Illustration M-21/2)

७. आदिवासियों के बीच

एक बार श्रमण महावीर के मन में विचार उठा—मैं अपनी साधना शहरों और गाँवों के निकट रहे खण्डहरों तथा वनों में करता हूँ। इससे यह सम्भावना बनी रहती है कि जो लोग मुझसे तथा मेरी साधना-प्रक्रिया से परिचित हैं वे मुझे सुविधाएँ प्रदान करने का प्रयत्न करें। इससे कर्म-बंधनों को काटने का कार्य शिथिल होता है और मेरे आत्म-शुद्धि के लक्ष्य में बाधा पड़ती है। अच्छा होगा कि मैं सुदूर निर्जन स्थानों में विहार करूँ। ऐसा लगता है कि इन विचारों से प्रेरित हो श्रमण महावीर ने राढ (लाढ) क्षेत्र में विहार किया। यह क्षेत्र वज्र भूमि तथा शुभ्र भूमि के नाम से भी प्रसिद्ध था और यहाँ कुछ स्थानों पर केवल असभ्य आदिवासी बसे हुए थे। महावीर के पीछे-पीछे गौशालक भी सभी स्थानों पर गया। इस क्षेत्र के वासी श्रमणों और श्रमणचर्या के सम्बन्ध में पूरी तरह अनभिज्ञ थे। जब वे एक निर्वस्त्र व्यक्ति को एकान्त स्थानों पर मूर्तिवत् खड़े देखते तो वे आश्चर्य से घूरने लगते। उस व्यक्ति को जोर-जोर से पुकारने पर भी जब कोई प्रतिक्रिया नहीं होती तो वे झुँझला जाते और महावीर पर लाठियों, भालों, हड्डियों और पत्थरों से प्रहार करते। अन्य आदिवासी बाँस की पतली खपच्चियों से उन्हें मारते जिससे उनके शरीर पर रक्तिम घाव उभर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

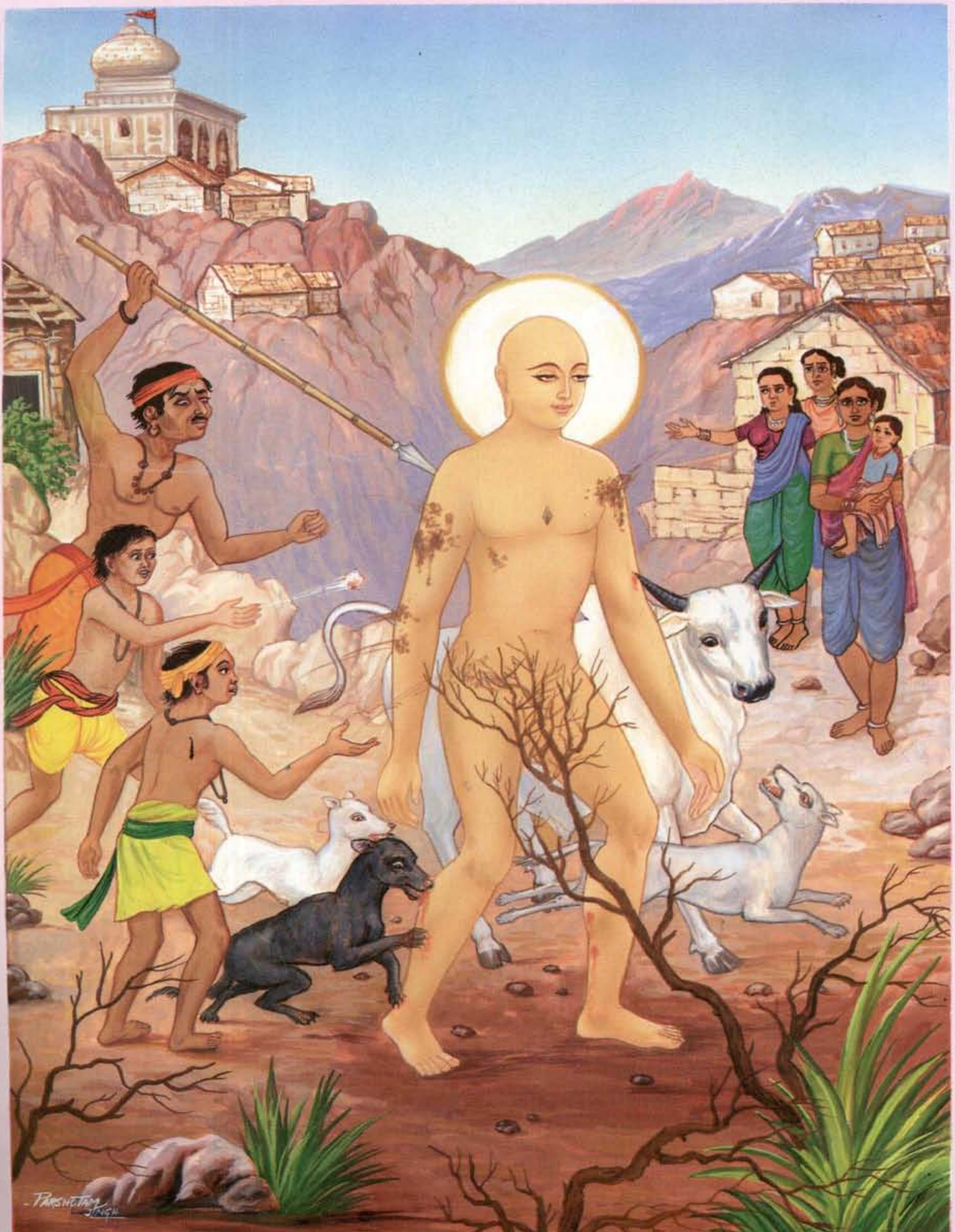

M 19 श्रमण महावीर को आदिवासियों द्वारा विविध उपसर्ग।
Ill treatment of Shraman Mahavir by rustic aborigines

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

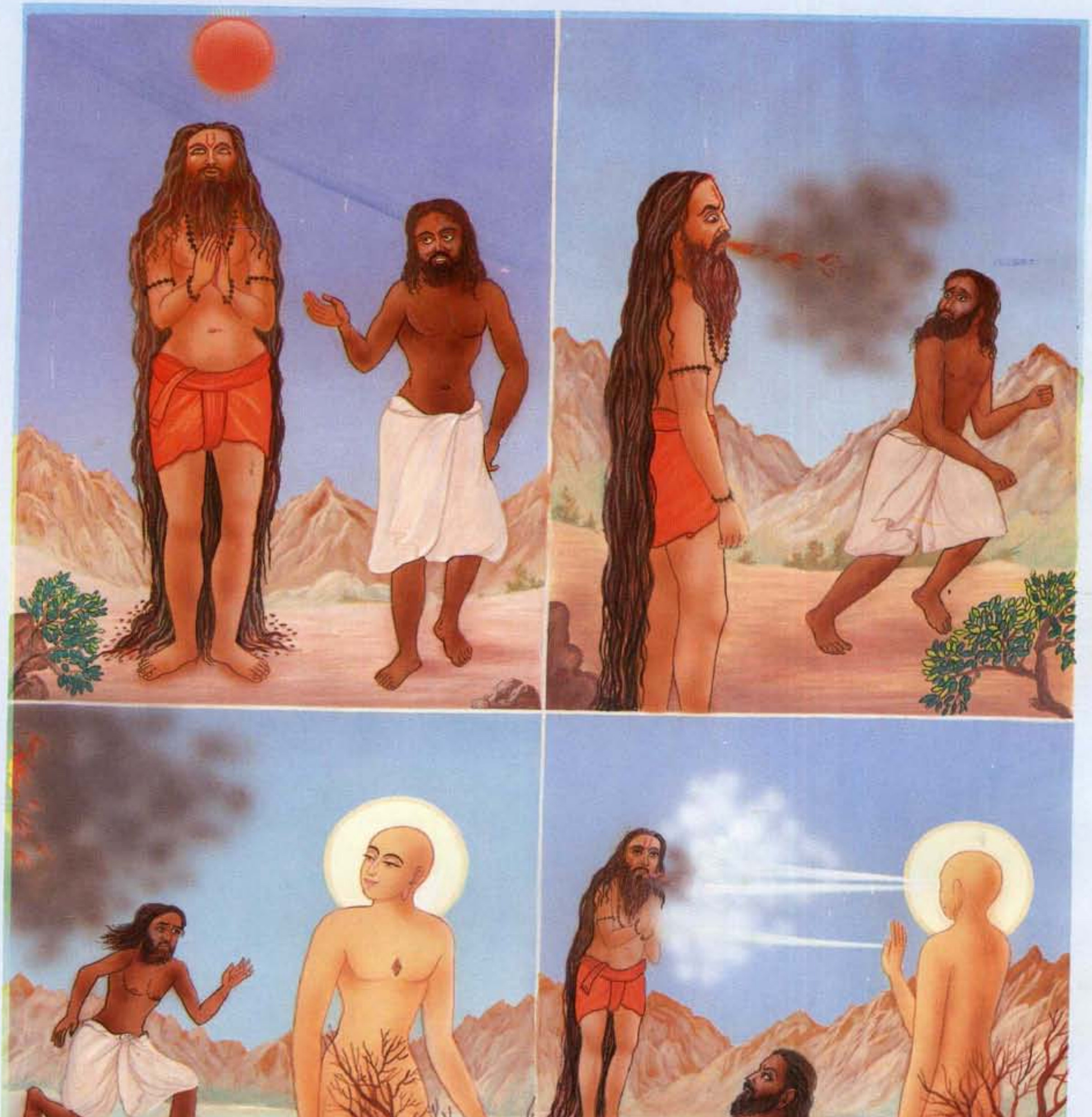

M 20 शीतल तेजोलेश्या द्वारा गौशालक की रक्षा।
Saving Gaushalak using his pacifying power.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

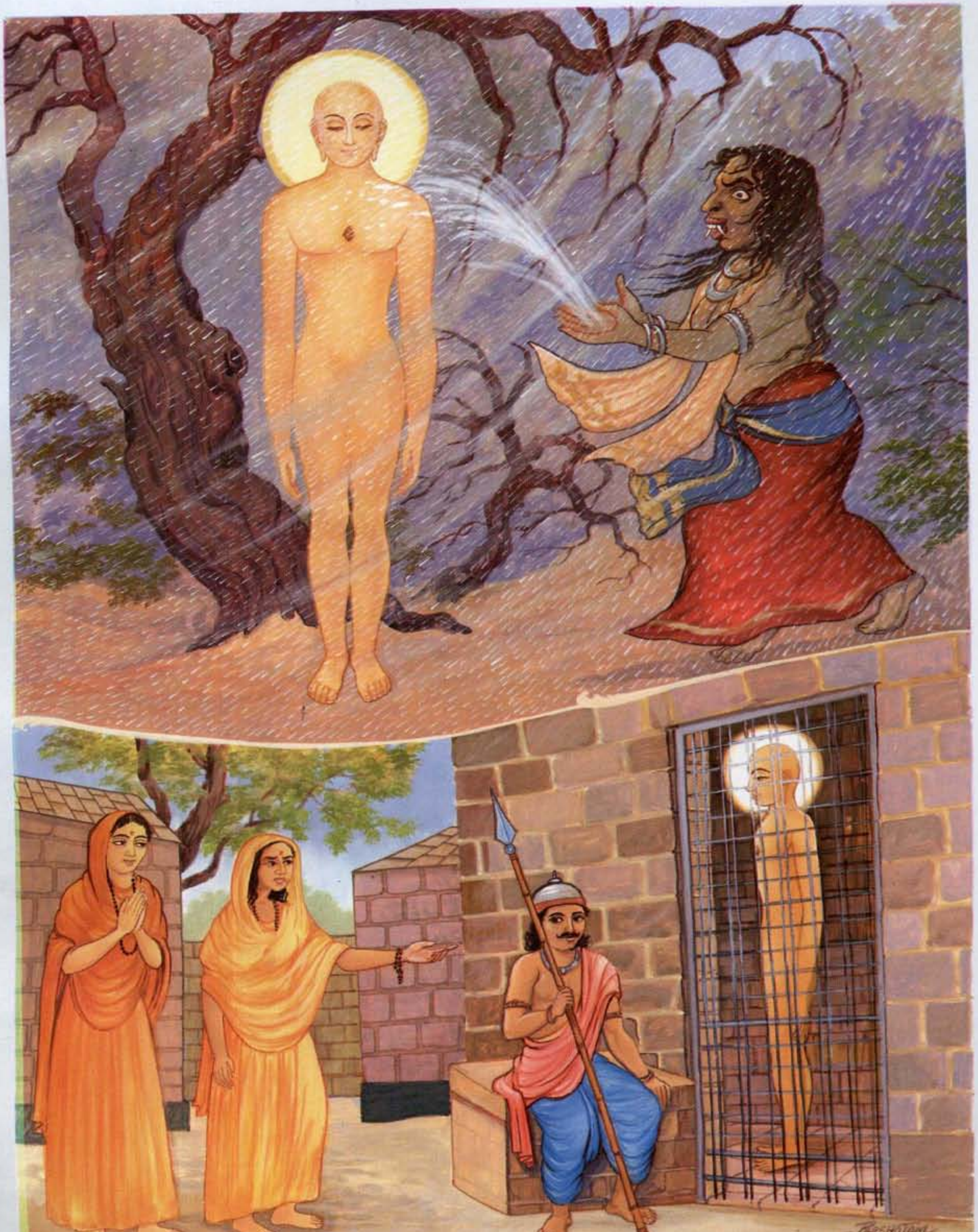

M 21 (१) कटपूतना द्वारा उपसर्ग (२) परिव्राजिका विजया व प्रगल्भा द्वारा श्रमण महावीर को कारागार से मुक्त कराना।
(1) The afflictions by Katputana (2) The release of Shraman Mahavir from the prison by mendicants Vijaya and Pragalbha

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

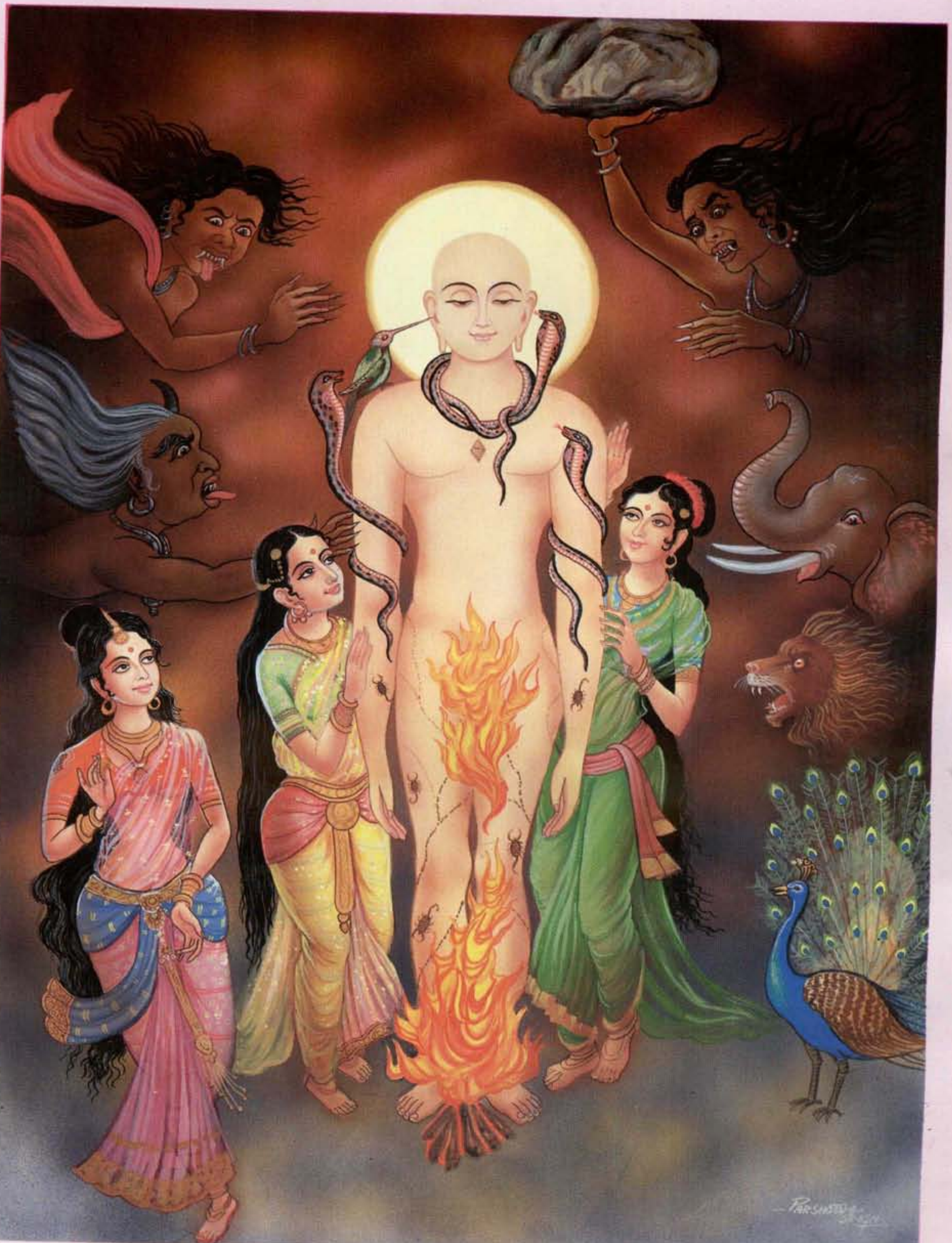

M 22 संगम देव द्वारा एक ही रात्रि में २० भीषण उपसर्ग।
Inhuman tortures by god Sangam

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जाते। ऊपर कीचड़ भी फेंक देते। श्रमण महावीर ने ये सभी यातनाएँ समतापूर्वक सहीं और आत्म-शुद्धि की ओर कदम बढ़ाते रहे।

वे एक स्थान से दूसरे स्थान पर विहार करते थे और यदा-कदा छोटे गाँवों के निकट भी जाते थे। कभी-कभार वे गाँव में भिक्षा के लिए प्रवेश भी करते थे पर अधिकतर उन्हें बासी और शुष्क भोज्य पदार्थ ही मिलते थे। इस क्षेत्र के विहार काल में अधिक समय तक वे निराहार ही रहे। लोग उनकी ओर कौतूहल से ताकते थे और जंगली कुत्ते उन पर झपटते थे और काट भी लेते थे। अपने फूहड़ मनोरंजन हेतु ये आदिवासी कभी-कभी उन्हें उठाकर धरती पर पटक भी देते थे। पर महावीर ने कभी विरोध में एक शब्द भी नहीं कहा। इस मौन के कारण भी उन्हें आदिवासियों के क्रोध का भाजन बनना पड़ता था। ऐसी कष्टदायी विषम परिस्थितियों में महावीर ने उस क्षेत्र के अपने प्रथम विहार काल में लगभग पाँच माह बिताए। वे एक बार फिर अपने साधना काल के नवें वर्ष में इस क्षेत्र में लगभग छः माह के लिए आए थे। (ई. पू. ५६५ तथा ५६१) (चित्र M-19)

7. Among the Aborigines

Once Shraman Mahavir thought—I do my practices in ruins and jungles around towns and villages. There is a chance that people who know about me and my practices may try to provide me with facilities. This impedes the process of shedding karmas and thus it is a hinderance in my progress towards absolute purity. As such, I should go to distant and scarcely populated areas. It appears that guided by these thoughts Shraman Mahavir moved into the Radh (Ladh) country. This area was also known as Vajra Bhumi and Shubhra Bhumi and was inhabited only by scant and scattered population of rustic aborigines. Gaushalak also followed him wherever he went. The people of this area did not know anything about ascetics and their ways. They stared in astonishment when they saw a naked person standing like a statue at godforsaken places. When they did not get any response or even reaction on shouting at him they would get irritated and hit him with sticks, lances, bones and stones. Some others would slash with wet bamboo canes that left inflamed welts and bruises on the body. Shraman Mahavir equanimously tolerated all these tortures and continued his advance toward purity.

He wandered from one place to another and once in a while came across small villages. Not so very often he would enter a village to beg food and generally got dry and stale food. However, most of the time he went without any food. People would curiously stare at him and wild dogs would pounce at him and bite. For their crude entertainment, the aborigines would pick up Mahavir and throw him on the ground. Mahavir never uttered a word of protest. He did not even look at them. This silence also invited abuses from those primitives. Under such gravely adverse circumstance Mahavir spent almost five months in that area during his first visit. Once again, during the ninth year of his practices, Mahavir returned to this area for about six months. (565 and 561 B. C.) (Illustration M-19)

८. गौशालक की रक्षा

एक बार सिद्धार्थपुर से कूर्मा ग्राम की ओर जाते समय महावीर एक घने जंगल से गुजर रहे थे। अचानक पगडण्डी के एक ओर एक खुले स्थान में गौशालक ने एक तापस को देखा। थोड़ा निकट आने पर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उसने देखा कि तापस किसी अनोखी तपस्या में संलग्न था। वह सूर्य की ओर मुँह किये हाथ ऊपर उठाये और सर झुकाए खड़ा था। उसकी लम्बी जटाएँ धरती पर लटक रही थीं मानो वट-वृक्ष की जड़ें हों। तेज धूप की गर्मी के कारण उसके बालों से टपकी जुएँ पीड़ा से छटपटाती थीं और वह उन्हें चुन-चुनकर वापस अपने घने बालों की लटों में रखता जा रहा था।

इस अद्भुत क्रिया-कलाप को देख गौशालक अपनी हँसी नहीं रोक सका। उसने व्यंगोक्ति कसी, "जुओं के शय्यातर! तुम यह क्या कर रहे हो? तुम जुएँ एकत्र किये जा रहे हो और इसे तपस्या समझ रहे हो?" पहले तो वह तापस शान्त रहा पर जब गौशालक ने तीखे व्यंगवाण चलाना बन्द नहीं किया तो उसने क्रोध से जलती आँखों से उसे देखा और कहा, "हे मूर्ख अज्ञानी! मेरा नाम वैश्यायन तापस है और मैं तेरे समान अज्ञानी मूर्खों का काल हूँ!" इस कथन से सँभलकर चुप हो जाने के स्थान पर गौशालक फिर हँस पड़ा। इस पर तापस कुछ कदम पीछे हटा और अपने मुँह से अग्नि स्वरूप तेजोलेश्या छोड़ी (यह शक्ति कठोर और दीर्घ तपस्या से प्राप्त होती है)। क्षण मात्र में आग का धुआँ तेजी से गौशालक की ओर बढ़ा। भयाक्रान्त गौशालक महावीर की ओर सुरक्षा के लिए पुकारता दौड़ा, "भन्ते! मेरी रक्षा करो। यह तापस मुझे भस्म कर देगा।" महावीर के निकट पहुँच वह उनके चरणों में गिर पड़ा।

गौशालक की करुण पुकार सुनकर महावीर के मन में करुणा उमड़ पड़ी। उन्होंने घूमकर, निकट आते आग के धुएँ को देखा। महावीर के करुणामय हृदय से शांत शीतल ऊर्जा का स्वाभाविक स्रोत बहने लगा। जब महावीर की अमृत दृष्टि उस आग के गोले पर पड़ी तो वह शांत हो गया। क्रुद्ध तापस ने अपनी शक्तिशाली तेजोलेश्या को शांत होते देखा तो वह चकित हो गया। उसने श्रमण महावीर को एक अत्यधिक शक्तिशाली शीतललेश्या धारक के रूप में पहचाना और कहा, "क्षमा करें हे कल्याणमूर्ति! मुझे यह पता नहीं था कि यह व्यक्ति आपका शिष्य है।" और इस प्रकार गौशालक की प्राण रक्षा हुई। (ई. पू. ५६०) (चित्र M-20)

8. Saving Gaushalak

Once, while moving from Siddharthapur to Kurma village Mahavir was passing through a dense forest. All of a sudden Gaushalak saw a Tapas ascetic in an opening on one side of the trail. On closer observation he saw that the hermit was busy doing some strange penance. He was standing facing the sun with his head hanging down and arms straight up. Long strands of his hair suspended on the ground like roots of an old banayan tree. Due to the heat of the sun's rays, small insects falling from his unkempt hair were writhing, and out of compassion he was picking them up and putting them back in his dense locks of hair.

Gaushalak could not control his laughter seeing this strange activity. Jokingly he said, "O abode of insects! What do you think you are doing. You are gathering insects and considering the act to be a penance." The hermit remained calm the first time. But when Gaushalak did not stop making biting remarks, the hermit looked at him with his burning eyes and said, "O vicious person! my name is Vaisyayan Tapas and I am the doom of ignorant fools like you." Instead of jolting him to sanity this scornful comment drew an insulting laughter from Gaushalak. The hermit now took a few steps back and angrily started emitting fire from his mouth (this is a miraculous power called Tejoleshya,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

acquired through long and harsh penance). Within no time a ball of fire rushed toward Gaushalak. Gaushalak retreated with fear and ran towards Mahavir, shouting in panic, "Sire! save me. This Tapas will burn me." Reaching Mahavir Gaushalak fell at his feet.

Hearing the pathetic call of Gaushalak, Mahavir was moved. Turning back he saw the approaching fireball. From the compassionate heart of Shraman Mahavir flowed a spontaneous stream of cool pacifying energy. When the nectar-glance of Mahavir fell on the fire ball it subsided. The angry hermit was astonished to see his powerful fire-ball extinguished. He recognized Mahavir as a much greater and more benevolent power then he, and said, "Pardon me O embodiment of benevolence! I did not know that this man was your disciple." Gaushalak was saved from his iminent death. (560 B. C.) (Illustration M-20)

९. संगम के परिषह

एक दिन श्रमण महावीर पेढाल ग्राम के बाहर पेढाल उद्यान के पोलाष चैत्य में कोई विशिष्ट और गहरा ध्यान कर रहे थे। उनकी एकाग्रता की चरम गहराई को देख देवराज इन्द्र अनायास ही कह उठे, "प्रभु वर्द्धमान आप महान् हैं! आज सारे संसार में तपस्वी और शांत, वीर, और समताधारी आत्मवादी के रूप में आपके समान अन्य कोई नहीं है।" यह कथन इन्द्र-सभा में बैठे संगम नामक एक देव को चुभ गया। उसने कहा, "यदि देवराज बाधा नहीं डालने का वचन दें तो मैं महावीर का ध्यान भंग कर सकता हूँ। मेरे लिये तो यह बच्चों का खेल है।" देवराज अनिच्छापूर्वक मौन रहे। इसे स्वीकारोक्ति समझ संगम अपनी शक्ति और चतुराई सहित पोलाष चैत्य में आया। उसने महावीर का ध्यान भंग करने के लिये एक के बाद एक बीस मारक महापरिषह उपस्थित किए—(१) सर्वप्रथम उसने भयानक धूल भरी आँधी चलाई जिससे कुछ ही क्षणों में महावीर बालू के टीले में समा गए। महावीर का निश्चय इतना अटल था कि उन्होंने आँखें तक बन्द नहीं कीं। (२) जैसे ही आँधी बन्द हुई चींटियों का एक झुण्ड आ पहुँचा। महावीर का शरीर काटती, डंक चुभाती चींटियों से ढँक गया। उनका सारा शरीर फफोलों से भर गया पर वे निश्चल रहे। (३) इसके बाद असंख्य मच्छरों ने महावीर की देह पर हमला बोल दिया। उनके शरीर से रक्त इस प्रकार बहने लगा जैसे वृक्ष से गोंद बहता है। (४) मच्छरों के बाद दीमकों का झुण्ड उन पर चढ़ आया उन्हें बांबी के समान कर दिया। (५) फिर उनकी देह पर बिच्छू रेंगने लगे और उन्हें अपने विषैले डंकों से भेदना आरम्भ कर दिया। (६) फिर आक्रमण हुआ नेवलों का, (७) विशाल काले नागों का, और (८) बड़े-बड़े चूहों का। (९) इन सबके बाद एक जंगली हाथी प्रकट हुआ और उसने अपने विशाल तीखे दाँतों से महावीर पर प्रहार किया। (१०) तब उस हाथी ने उन्हें अपनी सूँड से उठाकर उछाल दिया और धरती पर गिरे तो पैरों तले कुचल दिया। (११) तत्पश्चात् आक्रमण किया एक क्रूर पिशाच ने। (१२) फिर एक बाघ उन पर झपट पड़ा और अपने नुकीले पंजों से उनके शरीर पर घाव कर दिये। (१३) जब इन सभी पीड़ादायक परिषहों से महावीर का ध्यान भंग नहीं हुआ तो संगम ने एक नया उपाय सोचा। उसने सिद्धार्थ और त्रिशला के जीवन्त बिम्ब उपस्थित किये जो करुण विलाप कर रहे थे। पर इससे भी महावीर का वज्र निश्चय डिगा नहीं। (१४) तो संगम ने महावीर के पैरों के निकट आग जलाई और भोजन पकाने लगा। (१५) इसके बाद उसने एक बहेलिये का रूप धरा और महावीर के शरीर पर चिड़ियों के पिंजरे टाँग दिये। चिड़ियों ने अपने पंजों और चोंचों से महावीर के शरीर पर नए घाव कर दिये जिससे वे लहूलुहान हो गये। (१६) फिर एक तूफान उठा और तेज वर्षा के साथ बड़े-बड़े ओले

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गिरने लगे। महावीर फिर भी चट्टान के समान निश्चल बने रहे। (१७) अब एक विशाल चक्रवात आया जिसने सभी वस्तुओं को अपने में समेट लिया। महावीर का शरीर तो चक्कर काटने लगा पर मन स्थिर ही रहा। (१८) अन्त में उसने स्वयं एक विशाल दण्ड उठाया और महावीर पर इतना तीव्र प्रहार किया कि वे घुटनों तक धरती में धँस गये। पर उन्होंने पलकें तक नहीं झपकायीं। (१९) शरीर पर इतने प्रहारों के पश्चात् संगम ने मानसिक प्रहार आरंभ किये। वह अपने दैवी रूप में विमान में बैठ महावीर के निकट आया और उनसे कहा, "क्यों इतना कष्ट पाकर भी अभी तक धरती पर ही खड़े हो। मेरे साथ आओ, मैं तुम्हें सशरीर स्वर्ग में ले चलूँगा।" (२०) अन्त में संगम ने अल्प-वसना अप्सरायें प्रकट कीं जो अपनी सुडोल देह और कामुक चेष्टाओं से महावीर को रिझाने के लिए मदमाती चाल से उनके निकट आयीं। संगम ने वसन्त का कामोत्तेजक परिवेश भी उपस्थित कर दिया। महावीर का वज्र मानस तनिक भी चंचल नहीं हुआ। उनका शरीर प्रतिक्रिया रहित ही बना रहा। (चित्र M-22)

संगम की दुराशा पूर्ण नहीं हुई, वह कुंठित तो हो गई पर फिर भी उसने हार नहीं मानी। प्रातःकाल महावीर ने वहाँ से विहार कर दिया, जैसे कुछ हुआ ही न हो। वे तोसाली ग्राम की ओर आये जहाँ संगम ने षड्यन्त्र कर उन्हें चोर बता पकड़वा दिया। पर महाभूतिल नामक एक जादूगर ने उन्हें छुड़वा दिया। वहाँ से महावीर मोसाली ग्राम आये। यहाँ संगम ने यह अफवाह फैला दी कि महावीर अस्त्रों के बड़े तस्कर हैं। महावीर को फाँसी की सजा सुना दी गई। जब उन्हें फाँसी दी गई तो सात बार फंदा टूट गया। वहाँ के दण्डनायकों को यह विश्वास हो गया कि वे कोई दैविक विभूति हैं, और उन्हें सादर छोड़ दिया गया। पूरी तरह पराजित और सत्वहीन हो, संगम देवलोक लौट गया जहाँ उसे आजीवन मंदार पर्वत पर एकान्तवास का दण्ड देवराज द्वारा दिया गया।

9. Torture by Sangam

One day Shraman Mahavir was doing a special one night meditation in the Polash temple in Pedhal garden outside the Pedhal village. Observing the high degree of engrossment in meditation, Indra, the king of gods, exclaimed, "You are great, Prabhu Vardhaman! Today you have no equal as an ascetic and a serene, brave and equanimous spiritualist." Sangam, a god in Indra's assembly, was peeved at this praise of a mortal being. He retorted, "If Devraj promises not to interfere. I can disturb the concentration of Mahavir. It is a child's play for me." Devraj remained silent, though unwillingly. Considering it to be affirmative, Sangam, with all his cunning and power, came to Polash chaitya. One after another he created twenty almost fatal predicaments to disturb Mahavir's meditation— 1. He created a terrible sand storm and in no time Mahavir was submerged in a heap of sand. Mahavir, in his unshakable determination did not even close his eyes. 2. As soon as the storm stopped, arrived a swarm of ants. Mahavir's body was covered with biting and stinging ants. His body became full of blisters but he remained unmoved. 3. After this, innumerable mosquitoes attacked Mahavir's body. Blood dripped from his body as gum drips from a tree. 4. After mosquitoes, came an attack by white ants turning him into a termite hill. 5. Scorpions crawled on his body and pierced it with poisonous stings. 6. This was followed by biting by a mongoose, 7. Large cobras, and 8. Giant field rats. 9. After all this, appeared a wild elephant that goaded Mahavir with its

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

large pointed tusks. 10. This elephant than lifted Mahavir in its trunk and tossed him up. When Mahavir fell on the ground, it crushed him with its legs. 11. This was followed by an attack by an ominous looking ghost. 12. Then a tiger attacked and gored Mahavir with its sharp talons. 13. When all these painful afflictions failed to disturb Mahavir's meditation, Sangam took a different approach. He created a realistic illusion of Siddhartha and Trishala weeping and wailing profusely. But this too could not penetrate Mahavir's iron resolve. 14. Sangam then lit a fire almost touching Mahavir's feet and started cooking. 15. He then took the form of a bird catcher and hung a number of cages on Mahavir. The birds attacked Mahavir with their beaks and talons through the gaps in the cages. Blood oozed from these new wounds. 16. After this came a storm, torrential rain, and a hail-storm. Mahavir still remained unmoved like a rock. 17. Now came a giant whirlwind, lifting and swirling everything that came in its path. Mahavir's body swirled but his mind remained stable. 18. At last Sangam himself lifted a large mace and hit Mahavir. It was a heavy blow that buried Mahavir in the ground up to his knees, but he did not even blink. 19. After all these physical blows, Sangam resorted to a psychological attack. He arrived in his divine form riding a Vimana and said to Mahavir, "Why are you suffering so much and still standing on the ground. Come, I will take you to heaven with this mortal body of yours." 20. Lastly Sangam produced sparsely clad fairies who approached Mahavir and undulated their voluptious bodies invitingly. He also created an atmosphere conducive to lust. Mahavir never even shifted his icy gaze and his body remained reactionless. (Illustration M-22)

The mischievious intention of Sangam lost its edge, but he did not accept defeat. In the morning Mahavir started his journey onwards as if nothing had happened. He went to Tosali village where Sangam caused him to be apprehended as a thief, but a magician, Mahabhutil, got him released. Mahavir then proceeded to Mosali village where Sangam once again spread convincing rumors of his being a big smuggler of weapons. Mahavir was sentenced to death by hanging. When he was hanged, the noose broke down seven times without any apparent reason. Mahavir was finally released by the officials, as they became convinced that he was some divine personage. Completely defeated and humiliated Sangam returned to his abode and was sentenced to complete isolation on the Mandar mountain by the king of gods.

१०. शरणागत असुरराज

विंध्याचल में पूरण नामक एक तापस निवास करता था। कठोर तपस्या के फलस्वरूप उसने असुरराज चमरेन्द्र के रूप में जन्म लिया। उसे अपनी स्वाभाविक आसुरी तथा चमत्कारी शक्तियों के कारण अत्यधिक गर्व उत्पन्न हो गया। जब उसे अपनी आसुरी दृष्टि से यह ज्ञात हुआ कि देवराज शक्रेन्द्र के पास उससे भी अधिक शक्ति और वैभव है, तो उसके अभिमान को ठेस पहुँची, और उसने देवराज को रौंद डालने की ठानी। उसने अपनी आसुरी शक्तियों व अस्त्रों के साथ शक्रेन्द्र के आवास सौधर्म विमान पर आक्रमण की तैयारी कर डाली। पराजय की अवांछित स्थिति में उसे अपने से भी अधिक शक्तिशाली व्यक्ति के सहारे की आवश्यकता लगी। खोजंने पर उसे ज्ञात हुआ कि इस कार्य के लिये सबसे उपयुक्त व्यक्ति श्रमण महावीर ही

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

थे। वह तत्काल सुंसुमारपुर आया जहाँ महावीर ध्यानमग्न खड़े थे। वंदना के पश्चात् उसने कहा, "भंते! मैं, असुरराज चमरेन्द्र, सौधर्मेन्द्र शक्र से युद्ध करने जा रहा हूँ। कृपा कर मेरी रक्षा करें।" उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना वह द्रुत गति से देव सभा में गया और देवराज को ललकारा। क्षण भर को शक्रेन्द्र ठगे से रह गये, पर जब उन्होंने देखा कि ललकारने वाला असुरराज चमरेन्द्र है तो उन्होंने बिना किसी उत्तेजना के अपना सबसे शक्तिशाली अस्त्र वज्र उठाया और असुरराज की ओर चला दिया। वज्र अग्नि-स्फुल्लिंग बिखेरता हुआ तीव्र गति से चमरेन्द्र की ओर बढ़ा। इस अद्‌भुत अस्त्र से भयभीत हो चमरेन्द्र उस वृक्ष की दिशा में भागा जिसके नीचे महावीर ध्यानमग्न खड़े थे। जब देवराज को यह आभास हुआ कि चमरेन्द्र भगवान महावीर की ओर जा रहा है तो उन्हें चिन्ता हुई कि कहीं वज्र के प्रभाव से महावीर को कोई पीड़ा न हो जाए। देवराज तत्काल वज्र को पकड़ उसे निरस्त करने के लिये दौड़ पड़े। आकाश में अद्‌भुत दृश्य उपस्थित हो गया। आगे-आगे भय से चीत्कार करता चमरेन्द्र उसके पीछे स्फुल्लिंग बिखेरता वज्र और सबसे पीछे वज्र को रोकने के लिये देवराज।

असुरराज ने सूक्ष्म रूप धर श्रमण महावीर के चरणों में शरण ली और कहा, "प्रभु! मैं आपका शरणागत हूँ, कृपा कर मेरी रक्षा कीजिये।" जैसे ही वज्र चमरेन्द्र पर गिरने वाला था इन्द्र वहाँ पहुँचे और उसे रोक लिया। चमरेन्द्र भय से काँप रहा था और शक्रेन्द्र क्रोध से उत्तेजित हो रहे थे। महावीर ने अपना वरद हस्त उठा दोनों को आशीर्वाद दिया। देवराज ने असुरराज को श्रमण महावीर की शरण लेने के कारण क्षमा कर दिया। दोनों ने उनके चरणों में वन्दना की और अपने-अपने स्थानों को चले गये। (ई. पू. ५५७) (चित्र M-23)

10. Refuge to the Demon King

In the Vindhya range there lived a hermit named Puran. As a result of his rigorous penances he was reincarnated as the king of demons, Chamarendra. He had a bloated ego due to his natural powers and miraculous capacities. When, through his demonic perception, he came to know that the king of gods, Shakrendra, had more power and glory, his ego was hurt and he decided to subjugate the king of gods. He prepared to attack the abode of Shakrendra, the Saudharma Viman (space vehicle), with his demonic arsenal. But in case he faced defeat he wanted support from someone more powerful than him. On searching he found that Shraman Mahavir was the most suitable person. He immediately rushed to Sumsumarpur where Mahavir was standing in meditation. After Vandana he said, "Bhante! I, demon king Chamarendra, am going to fight with Saudharmendra Shakra. Please protect me." Saying thus, he rushed to the assembly of gods and challanged the king of gods. For a moment Shakrendra was taken aback but when he saw that it was demon king Chamarendra, he calmly lifted his most potent weapon, the Vajra, and launched it at the demon king. As the Vajra sped in the direction of Chamarendra it emitted bright sparks. Afraid of this fierce weapon Chamarendra fled in the direction of the tree where Mahavir stood in meditation. When Shakrendra realized where Chamaredra was heading, he became worried about any possible damage the Vajra could cause to Mahavir. He at once rushed after fleeing Chamarendra to defuse the Vajra. It was a strange seen in the sky; first the demon king crying with fear, then the sparkling Vajra followed by the divine king trying to catch his weapon.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

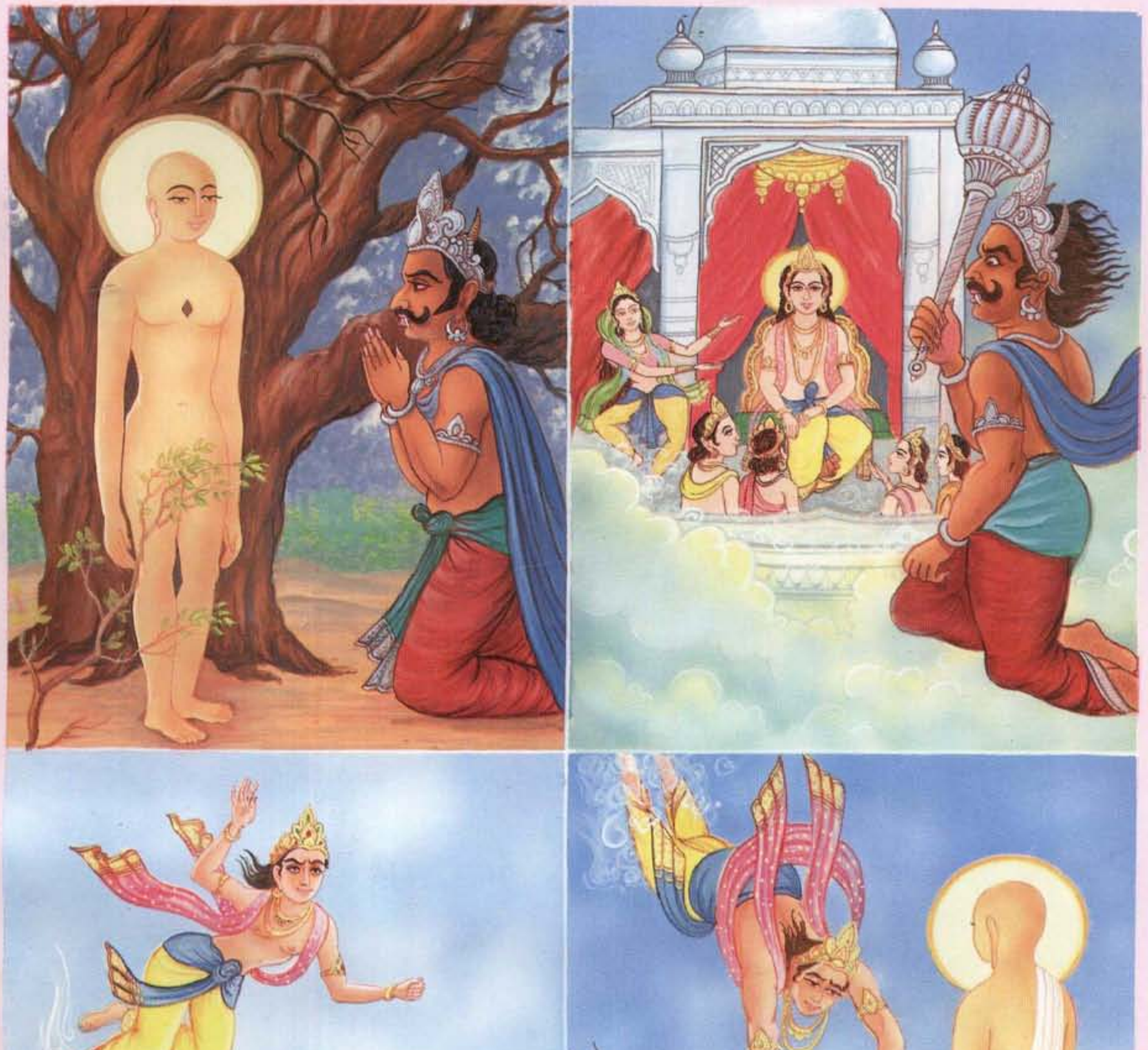

M 23 (१) चमरेन्द्र द्वारा भगवान महावीर की शरण लेकर शक्रेन्द्र को चुनौती (२) अन्त में महावीर की चरण-शरण

The story of Chamarendra challanging Shakrendra and later taking refuge near Mahavir to save himself.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

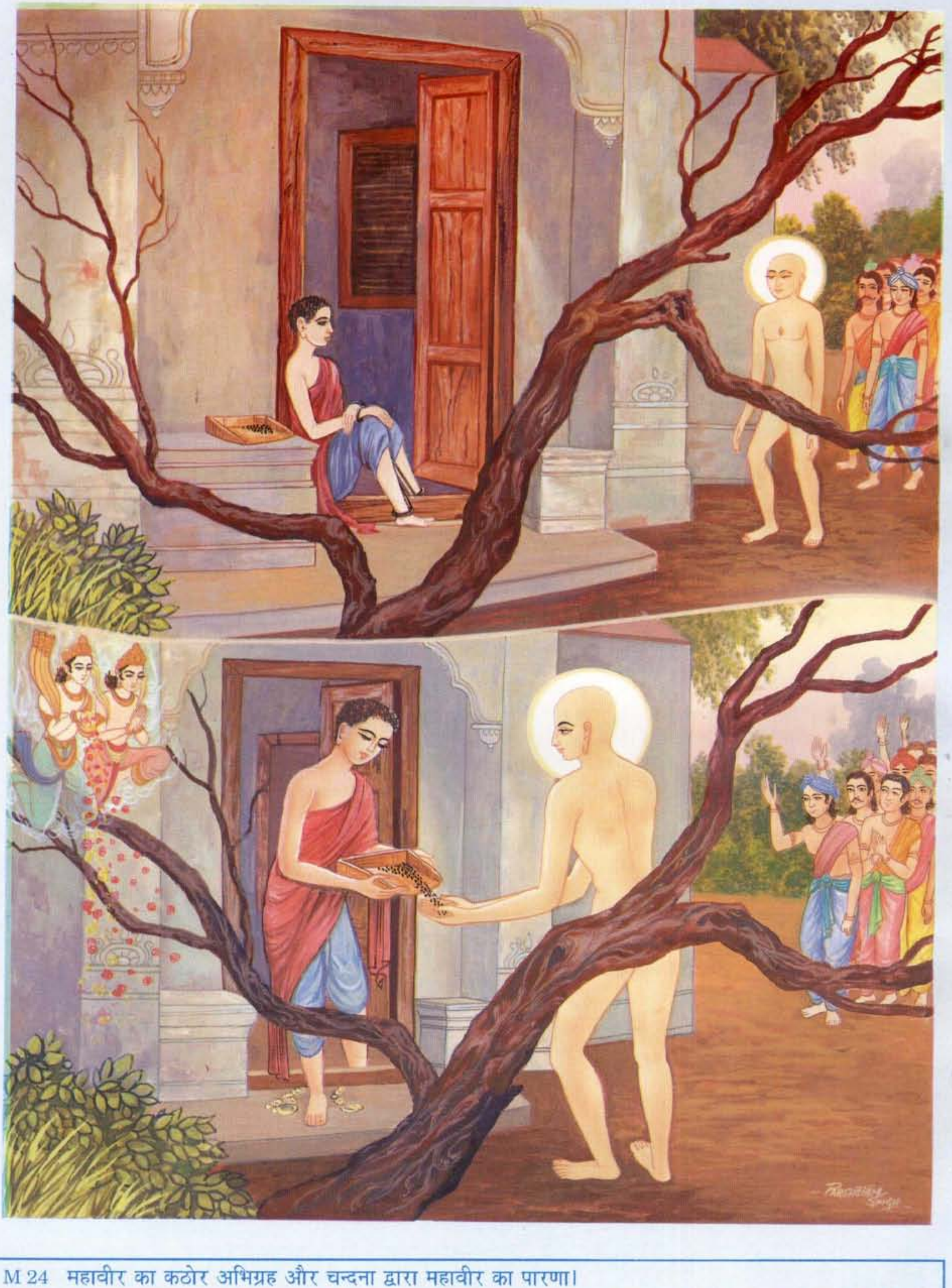

M 24 महावीर का कठोर अभिग्रह और चन्दना द्वारा महावीर का पारणा।
The impossible resolution of Mahavir; and Chandana giving alms to Mahavir for breaking his fast

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

The demon king transformed himself into a tiny thing and took refuge near Mahavir's feet uttering, "Prabhu! I am under your protection, kindly save me." As the Vajra was about to hit him and explode, Indra caught it and disabled it. Chamarendra was trembling with fear and Shakrendra was boiling with anger. Mahavir lifted his open palm and blessed them both. Indra pardoned the demon king as he had taken refuge at the feet of Shraman Mahavir. Both bowed before Mahavir and left for their respective abodes. (557 B. C.) (Illustration M-23)

११. असम्भव अभिग्रह और चन्दना

श्रमण महावीर के साधना काल का बारहवाँ वर्ष चल रहा था। वैशाली में चातुर्मास व्यतीत कर वे कौशाम्बी के एक उद्यान में आये। वहाँ पौष कृष्णा एकम के दिन एक असम्भव-सा अभिग्रह लिया, "मैं अपने पारणे के लिये केवल ऐसी राजकुमारी से भिक्षा ग्रहण करूँगा जिसे दासी बना दिया गया हो। वह भी उस स्थिति में जब उसका सिर मुँडा हो, उसे हथकड़ी-बेड़ी पड़ी हो, वह तीन दिन की भूखी-प्यासी हो, न घर के अन्दर खड़ी हो न बाहर, उसके पास बहराने को एक टोकरी में केवल दाल के बाकले हों, उसके होठों पर मुस्कान हो और आँखों में आँसू। जब तक मेरे अभिग्रह की सभी बातें पूरी नहीं होती मैं पारणा नहीं करूँगा।" यह अभिग्रह ले महावीर प्रतिदिन कौशाम्बी में घर-घर भिक्षा के लिये गये। चार माह बीत चले, पर उनका अभिग्रह पूर्ण नहीं हुआ।

तब एक दिन महावीर कौशाम्बी के महामंत्री सुगुप्त के द्वार की ओर बढ़े। सुगुप्त की पत्नी नन्दा भगवान पार्श्वनाथ की भक्त थी और श्रमणचर्या से परिचित थी। जब महावीर उसके द्वार से भिक्षा लिए बिना लौट गये तो वह समझ गई कि उन्होंने कोई अभिग्रह लिया है। उसने अपने पति से आग्रह किया कि वह अभिग्रह का पता लगाने के लिए अपने गुप्तचरों को नियुक्त करें। श्रमण महावीर के गुप्त अभिग्रह और चार माह से अधिक समय से भोजन ग्रहण न करने की बात नगर में चर्चा का विषय बन गई।

महावीर के अभिग्रह के पूर्ण होने का निमित्त बनने के लिए किसी अन्य स्थान और समय पर एक घटनाक्रम आरम्भ हो चुका था। कौशाम्बी के सम्राट् महाराज शतानीक ने राजा दधिवाहन की अनुपस्थिति में वत्स राज्य की राजधानी चम्पा पर आक्रमण कर दिया। काकमुख नामक एक सेनापति ने राज्य के महल को लूटा और महारानी धारिणी तथा राजकुमारी वसुमति को बन्दी बना लिया। कौशाम्बी लौटते समय उसने उनके शीलहरण की कुचेष्टा की। किन्तु जब रानी धारिणी ने शील-रक्षा के लिए आत्महत्या कर ली और वसुमति ने भी वैसा ही करने की धमकी दी तो उसका हृदय-परिवर्तन हो गया। वह वसुमति को पुत्री सम मान अपने घर ले गया। परन्तु जब उसकी पत्नी को वसुमति का घर में रहना सहन नहीं हुआ तो वसुमति के आग्रह पर वह उसे दास-विक्रय स्थल पर बेचकर अपनी पत्नी को प्रसन्न करने के लिए धन-प्राप्त करने को सहमत हो गया।

नीलामी में सबसे अधिक बोली लगाने वाली थी कौशाम्बी की एक प्रमुख गणिका। वसुमति उसके साथ जाने को सहमत नहीं हुई तो वहाँ झगड़ा हो गया। वसुमति की सहज सुकुमारता और सद्गुणों से प्रभावित हो एक धनी व्यापारी धनावह ने उसे गणिका से बचा लिया। उसने मुँह माँगी मुद्राएँ दीं और वसुमति को अपनी पुत्री बनाकर अपने घर ले आया। जब ऐसी दिव्य सुन्दर कन्या को अपनी गृहस्थी में प्रवेश करते

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देखा तो सेठ की पत्नी मूला शंका और ईर्ष्या से जल उठी। धनावह वसुमति को 'चन्दना' के नाम से पुकारने लगा। एक दोपहर जब धनावह घर लौटा तो उसके पाँव चन्दना धुलाने लगी। जब पानी का प्याला लिए वह झुकी तो उसके लम्बे बाल धरती पर लटक गए। धनावह ने स्नेह से बालों को उठाया। मूला ने इस स्नेह प्रदर्शन का उल्टा अर्थ लगाया। उसके विकारग्रस्त मन ने ईर्ष्या के इस निमित्त को समूल नष्ट करने की एक योजना बना डाली। अगले दिन सेठ दो दिन के लिए यात्रा पर गया। मूला ने घर के सभी नौकरों को छुट्टी दे दी। जब घर में केवल वह और चन्दना रह गये तो उसने चन्दना के सुन्दर वस्त्र उतारकर उसे चीथड़े पहना दिये, उसे हथकड़ी-बेड़ी पहना दी और सिर के लम्बे रेशम जैसे बाल मूँड दिये। इसके बाद उसे एक अँधेरे कमरे (भोंहरे) में बंद कर ताला लगा, वह नगर से बाहर चली गई।

तीसरे दिन जब धनावह घर लौटा तो उसने घर को सूना पाया। वह मूला और चन्दना के नाम पुकारता घर में घूमने लगा। जब वह उस अँधेरे कमरे के पास से गुजर रहा था तो उसने चन्दना का स्वर सुना। सेठ उस कमरे की ओर दौड़ा और लोहे की सलाखों वाले दरवाजे से झाँका। फिर ताला तोड़कर चन्दना को बाहर निकाला। जब चन्दना ने कुछ खाने को माँगा तो धनावह घर में खोज-ढूँढ़कर गायों के लिये बने उर्द के बाकले ही ला सका। उसने वह बाकले की छबड़ी चन्दना को दी और किसी लुहार को लाने चला गया।

महावीर को निराहार रहते पाँच महीने और पच्चीस दिन बीत चुके थे, आज छब्बीसवाँ दिन था। दोपहर बाद भिक्षा को निकले महावीर घूमते-घूमते धनावह के घर की ओर आ निकले। उत्सुक लोगों की भीड़ उनके पीछे चल रही थी। महावीर ने घर की देहरी पर एक पाँव बाहर और दूसरा भीतर रखे चन्दना को बैठे देखा। उसके हाथों में बासी बाकलों की छबड़ी थी। उसके हथकड़ियाँ और बेड़ियाँ पड़ी थीं पर जैसे ही उसने महावीर को आते देखा उसके मुख पर मुस्कान दौड़ गई। उत्साह भरे स्वर में उसने महावीर को अपने हथकड़ी पड़े हाथों से कुछ ग्रहण करने को कहा। महावीर ने उसे भली-भाँति देखा और पाया कि उनके अभिग्रह में अभी भी एक बात की कमी थी। वे लौट जाने के लिए मुड़े। चन्दना की प्रसन्नता तिरोहित हो गई। दुर्भाग्य पर तरस खाकर चन्दना रो पड़ी। महावीर ने फिर मुड़कर देखा। अब उनके अभिग्रह की सभी बातें पूरी हो गई थीं। उन्होंने एक कदम आगे बढ़ाया और अपने अंजलिबद्ध हाथ चन्दना की ओर बढ़ा दिये। हर्ष से विभोर चन्दना ने उड़द के बाकले छबड़ी में से उठाकर महावीर के हाथों में बहरा दिये। महावीर ने पारणा किया। 'अहोदानं-अहोदानं' के दिव्य घोष से दिशाएँ गूँज उठीं। आकाश में देव दुंदुभि बज उठी। बाद में महावीर द्वारा धर्म संघ की स्थापना होने पर चन्दना ने उनसे दीक्षा ली और साध्वी-प्रमुखा बनी। (५५७ ई. पू.) (चित्र M-24)

11. The Impossible Resolution and Chandana

It was the twelfth year of Shraman Mahavir's spiritual practices. Spending the monsoon stay at Vaishali he came to a garden in Kaushambi. There, on the first day of the dark half of the month of Paush he made an almost impossible resolution, "I will accept alms for breaking my fast only from a princess who has become a slave. That too only if she has a shaven head, her limbs are shackled, she has not eaten for three days, she is on the threshold of a house, she has only wet pulse bran lying in a basket, she is smiling and also has tears in her eyes. Unless all these condition are met I resolve to continue my practices

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

and not break my fast." With this resolution Shraman Mahavir started his quest going from one door to another in the big city of Kaushambi. Four months passed and still the conditions were not met.

One day Mahavir approached the house of the chief minister of Kaushambi, Sugupta. Sugupta's wife, Nanda, was a devotee of Bhagavan Parshvanath and was acquainted with the ways of ascetic Shramans. When Mahavir turned back from her door without accepting alms she realized that he had made some resolution. She requested her husband to assign the task of finding about Mahavir's resolution to some of his spies. Mahavir's secret resolution and his going without food for more than four months became the talk of the town.

At some other place and some other time was unfolding a sequence of events that was to become instrumental in fulfiling of the conditions of Mahavir's resolution. King Shatanik of Kaushambi had attacked Champa, the capital of the state of Vats, in absence of its ruler king Dadhivahan. Kakamukha, a general, raided the palace and captured queen Dharini and princess Vasumati. On his way back to Kaushambi, he tried to violate the modesty of his captives. But when queen Dharini committed suicide and Vasumati also threatened to do so, he had a change of heart. He took her to his home as a daughter. When his wife did not tolerate Vasumati, he was persuaded by Vasumati to auction her in the slave market and please his wife with the proceeds.

In the auction the highest bidder was a courtesan from Kaushambi. There was an altercation when Vasumati refused to go with her. Impressed by Vasumati's beauty and her bearing, a rich merchant, Dhanavah, came to her rescue. He paid the bid amount and with Vasumati's consent, took her home as his daughter. But his wife Mula became doubtful and jealous when she saw a divinely beautiful girl joining her household. Dhanavah started calling her Chandana. One afternoon when Dhanavah returned home it was Chandana who helped him wash his feet. When she bent down with a water bowl, her long hair dropped ahead and touched the ground. Dhanavah affectionately lifted her hair. Mula took this display of affection in ill spirit. Her vile mind concocted a scheme to end this source of her irritation once and for all. Next day, the merchant left town for a couple of days. Mula relieved all the household servants, and, when she was alone with Chandana, she replaced the dress Chandana was wearing with rags, put her in shakles, and shaved off her long silky hair. After this she put her in a dark cell and locking it she left the town.

When on the third day Dhanavah returned, he found nobody in the house. He went around the house shouting the names of Mula and Chandana. When he was passing in front of the dark room he heard Chandana's voice. The merchant rushed to the cell and looked into the cell through the bars in the iron gate. He broke the lock and brought Chandana out. When Chandana asked for something to eat Dhanavah went around the house and the only eatables he could fetch was a basket full of wet pulse bran for cows. He gave this basket of pulse bran to Chandana and proceeded to call a blacksmith.

It was the twenty sixth day of the sixth month of Mahavir's fasting. In the afternoon Shraman Mahavir, wandering for alms, was approaching the house of Dhanavah. An expectant crowd followed him. Mahavir saw Chandana sitting on the threshold of the

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

house, one foot inside and the other outside. In her hand was a basket with stale pulsebran. She was shakled, and, as soon as she saw Mahavir approaching, a smile dawned on her face. With a thrill in her voice, she invited, Mahavir to accept something from her shackled hands. Mahavir carefully observed, and when he saw that there still was one thing missing, he turned to leave. Chandana's joy vanished. Filled with self-pity she started crying. Mahavir turned back and looked. All the conditions of his resolution were fulfilled now. He took one step and extended his cupped palms before Chandana. Joyous Chandana took the pulse bran from the basket and put it in Mahavir's extended palms. Mahavir broke his fast. A divine applause echoed in all directions, "Hail the alms giving!" Divine drums sounded in the sky. Later Chandana joined Mahavir's religious order and became the chief of the female ascetics. (557 B. C.) (Illustration M-24)

१२. अन्तिम परिषह : कानों में कीलें

बारहवाँ चातुर्मास चम्पा में व्यतीत कर महावीर विहार कर छम्माणी ग्राम के बाहर पहुँचे और कायोत्सर्ग में खड़े हो गये। गोधूलि बेला थी और एक ग्वाला अपने खेत से लौट रहा था। महावीर को खड़े देख उसने कहा, "बाबा! आप यहाँ खड़े हैं तनिक मेरे बैलों का ध्यान रखें। मैं किसी कार्यवश जा रहा हूँ शीघ्र ही लौट आऊँगा।" ऐसा कहकर ग्वाला चला गया पर लौटने में उसे कुछ विलम्ब हो गया। बैल चरते हुए दूर निकल गये। अपने बैलों को न देख पाने पर उसने महावीर से पूछा, पर वे ध्यानमग्न थे अतः उत्तर नहीं दिया। ग्वाले ने पुनः प्रश्न किया और फिर भी कोई उत्तर न मिलने पर वह क्रोध से तिलमिला उठा। उसने चिल्लाकर कहा, "हे पाखण्डी! लगता है तू बहरा है। एक क्षण ठहर मैं अभी तेरा उपचार किये देता हूँ।" उसने पास ही काँस नामक घास के कील जैसे नुकीले काँटे उठाये और महावीर के कानों में आर-पार ठोंक दिये।

इतनी असह्य वेदना ने भी ध्यानमग्न महावीर को विचलित नहीं किया। न ही उनके भीतर कोई क्रोध अथवा द्वेष की भावना जन्मी। सामान्य रूप से अपनी साधना पूर्ण कर वे गाँव में भिक्षाटन के लिये गये। वहाँ सिद्धार्थ नामक एक व्यापारी के घर पहुँचे। सिद्धार्थ के पास उसका एक मित्र भी बैठा था जो चिकित्सक था। उन लोगों ने आदरपूर्वक श्रमण महावीर को खाद्यान्न बहराए। चिकित्सक खरक ने सिद्धार्थ को बताया कि श्रमण किसी शारीरिक अन्तर्वेदना से पीड़ित हैं। दोनों मित्रों ने महावीर से रुकने का आग्रह किया जिससे चिकित्सा की जा सके। महावीर अपने व्रत के अनुरूप बिना उत्तर दिये वहाँ से चल पड़े। गाँव से बाहर आकर वे एक पेड़ के नीचे बैठे और आगे की साधना का उपक्रम करने लगे। सिद्धार्थ और खरक उनके पीछे-पीछे गये और जब महावीर बैठे तो दोनों ने उनके शरीर का परीक्षण किया। जब उन्होंने दोनों कानों में चुभी कीलें देखीं तो वे तत्काल उपचार में जुट गये। आवश्यक यन्त्र और औषधियाँ एकत्र करके उन्होंने दोनों काँटों को बाहर निकाल दिया। कानों से खून बहने लगा। चिकित्सक ने संरोहण औषधि का लेप कर दिया। महावीर के साधना काल का यह अंतिम उपसर्ग था और सर्वाधिक कष्टदायी भी। (५५७ ई. पू.) (चित्र M-25)

12. The Last Calamity : Nails in the Ears

After spending the twelfth monsoon stay in Champa, Shraman Mahavir arrived outside a village named Chhammani and stood in meditation. It was the hour of dusk and

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

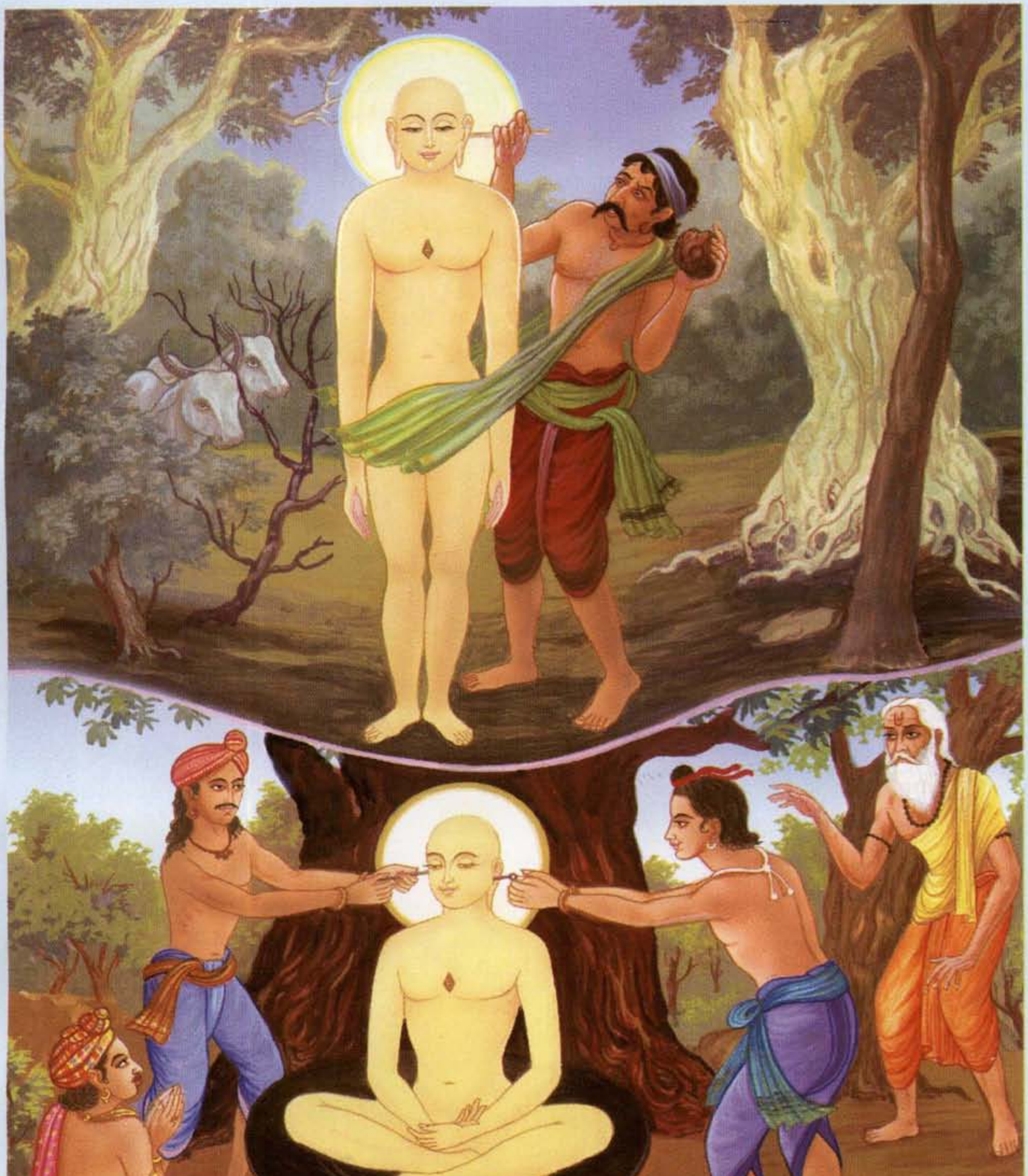

M 25 अंतिम उपसर्ग : कानों में कीलें तथा उनका उपचार
The last affliction : Nails in the ears and the treatment

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

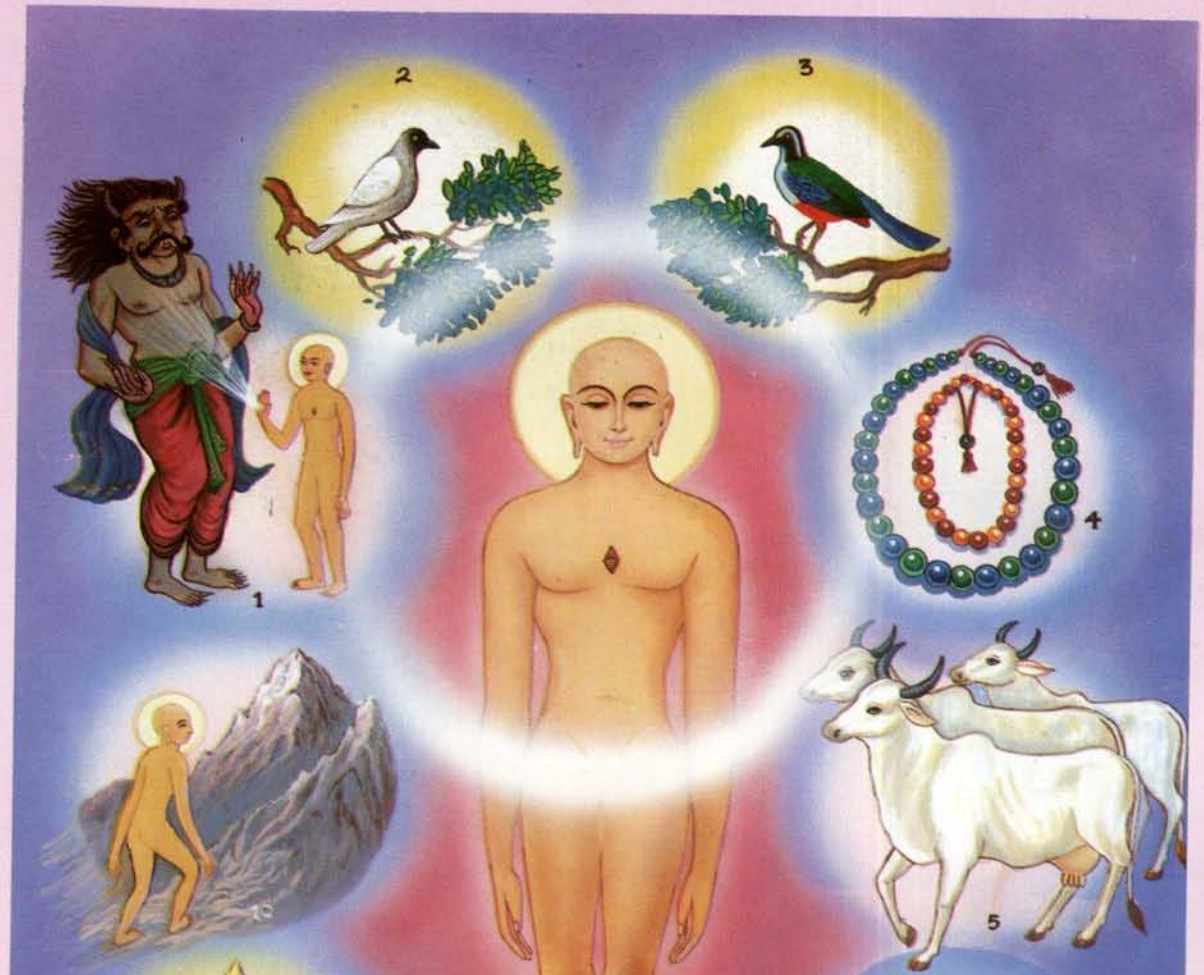

M 26 केवलज्ञान से पूर्व दस महास्वप्न।
Ten great dreams before omniscience

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

a cowherd was returning home from his farm. When he saw Mahavir standing he said, "O ascetic! While you are standing here please look after my oxen. I am going on an errand and will be back in a few minutes." Saying thus he went into the village and returned a little late. The oxen had drifted away grazing. Not finding his oxen he asked Mahavir who was in deep meditation and did not reply. The cowherd repeated his question and when he still got no response he lost his temper. He shouted, "You hypocrite! It seems that you are deaf. Wait a minute, I will give you a proper treatment." He picked long nail like thorns from a nearby shrub of Kansa grass and pierced both the ears of Mahavir deeply by hammering the thorns in.

Even such excruciating pain did not move Mahavir from his deep concentration, neither did it evoke any feelings of anger or aversion. Completing his meditation in due course he went inside the village for alms. He arrived at the house of a trader named Siddhartha. A doctor friend of the trader was also sitting with him. They gave food to Shraman Mahavir with due regard and reverence. The doctor friend, Kharak, informed Siddhartha that the ascetic suffered from some inner agony. They both requested Mahavir to stay and let them try to treat him. Mahavir, as was his resolve, did not reply and walked on. He came out of the village and sat down under a tree to commence his spiritual exploits. Siddhartha and Kharak followed him and when he sat down they examined his body. When they saw two thorns sticking out from each of his ears they were mobilised into action. Bringing necessary instruments and medicines they did the operation and pulled out the deeply imbedded thorns from Mahavir's ears. Blood oozed out from his ears. The doctor dressed the wound with some coagulant ointment. This was the last affliction for Mahavir and the most painful one. (557 B. C.) (Illustration M-25)

१३. दस महान् स्वप्न

एक बार कठोर परिषहों को सहन करने के पश्चात् रात्रि के अन्तिम प्रहर में श्रमण महावीर को कुछ क्षणों के लिए नींद आ गई। तब उन्होंने दस अद्भुत स्वप्न देखे। प्रातःकाल जब ग्रामवासी महावीर के पास एकत्र हुए तो उनमें उत्पल नाम का एक नैमित्तिक भी था। उसे उन स्वप्नों का आभास हो गया और उनके फल का चिन्तन कर वह यह जान गया कि श्रमण वर्द्धमान ही चौवीसवें तीर्थंकर बनने वाले हैं। वे स्वप्न और उनके फल इस प्रकार हैं:

१. **स्वप्न** : महावीर एक ताल-दैत्य को हराते हैं।
   फल : आप शीघ्र ही मोहनीय कर्मों का नाश कर देंगे।

२. **स्वप्न** : महावीर की सेवा में एक श्वेत पक्षी।
   फल : आपकी वृत्ति व भावनाएँ सदा शुद्ध शुक्ल ध्यानमग्न रहेंगी।

३. **स्वप्न** : महावीर के निकट एक रंग-बिरंगा पक्षी।
   फल : आप बहुआयामी ज्ञान का उपदेश बारह अंग सूत्रों के माध्यम से देंगे।

४. **स्वप्न** : महावीर के सम्मुख दो रत्न मालाएँ।
   फल : उत्पल इस स्वप्न को समझ नहीं सका अतः महावीर ने स्वयं बताया–मैं द्विपक्षीय धर्म का उपदेश दूँगा–श्रमणधर्म और श्रावकधर्म।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५. स्वप्न : महावीर के सम्मुख श्वेत गायों का एक झुण्ड।
फल : चतुर्विध संघ आपकी सेवा में रहेगा (श्रमण, श्रमणी, श्रावक, श्राविका)।

६. स्वप्न : खिले पद्मों का सरोवर।
फल : चार लोकों के देव आपकी सेवा में रहेंगे।

७. स्वप्न : महावीर समुद्र की लहरों को तैर कर पार करते हैं।
फल : आप जन्म-मरण के सागर को पार करेंगे।

८. स्वप्न : सूर्य की किरणें चारों दिशाओं में फैल रही हैं।
फल : शीघ्र ही आप संबुद्ध और केवलज्ञानी बनेंगे।

९. स्वप्न : महावीर अपनी नीलाभ आँतों से मानुषोत्तर पर्वत को घेर रहे हैं।
फल : आप अपने विशुद्ध ज्ञान से तीनों लोकों को प्रभावित करेंगे।

१०. स्वप्न : महावीर मेरु पर्वत के शिखर पर रखे सिंहासन पर बैठे हैं।
फल : आप उच्च आसन पर बैठकर अपना उपदेश देंगे। (चित्र M-26)

13. Ten Great Dreams

After the afflictions by Shulpani, Mahavir was exhausted. This resulted in a slumber for a few moments during the last hour of the night. He saw ten strange dreams during this brief sleep. When the villagers assembled around Mahavir in the morning, an augur, Utpal,was also present. He came to know about the dreams and concluded that Shraman Vardhaman was to be the 24th Tirthankar. The dreams and his interpretations are as follows :

1. **Dream** : Mahavir defeats a Tal demon.
   Interpretation : You will soon destroy the Mohaniya karma (illusory Karma).
2. **Dream** : A bird with white feathers is in attendance.
   Interpretation : You will always have purest attitude or feelings.
3. **Dream :** A bird with multicoloured feathers is around.
   Interpretation : You will propagate multifaceted knowledge through the twelve Angas (canons).
4. **Dream :** Two gem strings appear in front.
   Interpretation : Utpal could not give a meaning to this dream. Mahavir himself explained—I will preach a two forked religion, that is, the code for ascetics and the code for laity.
5. **Dream :** A herd of white cows is in front.
   Interpretation : The four dimensional organization will serve you (Shraman, Shramani, Shravak, Shravika).
6. **Dream :** A pond with blooming lotuses.
   Interpretation : Gods from four dimensions will serve you.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

7. **Dream :** Mahavir crossed a wavy ocean swimming.
Interpretation : You will cross the ocean of rebirths.

8. **Dream** : The Sun's rays are spreading in all directions.
Interpretation : Soon you will get enlightenment and omniscience.

9. **Dream** : Mahavir is encircling the Manushottar mountain with his bluish intestines.
Interpretation : You will pervade the universe with your pure knowledge.

10. **Dream** : Mahavir is sitting on a throne placed on the summit of the mountain Meru.
Interpretation : You will give religious discourse sitting on a high throne. (Illustration M-26)

भगवान महावीर के लिए २१ उपमाएँ

तए णं समणे भगवं महावीरे अणगारे जाए, इरियासमिए, भासासमिए, एसणासमिए, आयाण-भंड-मत्त-निक्खेवणा-समिए, उच्चार-पासवण-खेल-सिंघाण-जल्ल-पारिट्ठावणिया-समिए, मणसमिए, वयसमिए, कायसमिए, मणगुत्ते, वयगुत्ते, कायगुत्ते, गुत्ते, गुत्तिंदिए, गुत्त-बंभयारी, अकोहे, अमाणे, अमाए, अलोभे, संते, पसंते, उवसंते, परिनिव्वुडे, अणासवे, अममे, अकिंचणे, छिन्न-गंथे, निरुवलेवे, कंसपाई इव मुक्कतोए, संखे इव निरंजणे, जीवे इव अप्पडिहयगई, गगणमिव निरालंबणे, वाऊ व्व अप्पडिबद्धे, सारय-सलिलं व सुद्धहियए, पुक्खरपत्तं व निरुवलेवे, कुम्मो इव गुत्तिंदिए, खग्गि-विसाणं व एगजाए, विहग इव विप्पमुक्के, भारंड-पक्खी इव अप्पमत्ते, कुंजरो इव सोंडीरे, वसभो इव जायथामे, सीहो इव दुद्धरिसे, मंदरो इव अप्पकंपे, सागरो इव गंभीरे, चंदो इव सोमलेसे, सूरो वि दित्ततेए, जच्च-कंचणं व जायरूवे, वसुंधरा इव सव्व-फास-विसहे, सुहुय-हुयासणो इव तेयसा जलंते॥११७॥

इमेसिं (एएसिं) पयाणं दुन्नि संगहिणी गाहाओ :

कंसे[१] संखे[२] जीवे[३], गगणे[४] वाऊ[५] य सारय-सलिले[६] य।
पुक्खरपत्ते[७] कुम्मे[८], विहगे[९] खग्गे[१०] य भारंडे[११] ॥१॥

कुंजर[१२] वसभे[१३] सीहे[१४], णगराया[१५] चेव सागरमक्खोभे[१६]।
चंदे[१७] सूरे[१८] कणगे[१९], वसुंधरा[२०] चेव हुयवहे[२१] ॥२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(११७) श्रमण भगवान महावीर जब से अनगार हुए तब से वे ईर्या, भाषा, एषणा, आदान-भाण्ड-पात्र-निक्षेपणा और उच्चार प्रस्रवण, खेल-सिंघान-जल्ल परिष्ठापनिका–इन पाँचों समितियों के धारक थे और मन-वचन-काया समितियों का पालन करते थे। वे मन, वचन और काया, इन तीनों गुप्तियों के रक्षक थे और इन्द्रिय-संयमी तथा अंतरंग ब्रह्मचारी थे। वे क्रोध, मान, माया और लोभ से मुक्त थे। वे शान्त, प्रशान्त और उपशान्त होकर सभी प्रकार के सन्तापों से मुक्त हो गये थे। आस्रव, ममता, परिग्रह, ग्रन्थि तथा आसक्ति से रहित हो गये थे।

वे (१) काँसे के बर्तन की तरह निर्लिप्त थे और (२) शंख की तरह निरंजन थे। (३) आत्मा की तरह अबाध रूप से विहार करने वाले वे प्रभु (४) आकाश के समान निरालम्बी थे और (५) वायु की तरह बाधारहित। वे (६) शरद् ऋतु के जल की तरह निर्मल हृदय वाले और (७) कमल के पत्ते के समान निर्लेप थे। वे (८) कछुए के समान गुप्तेन्द्रिय, (९) पक्षियों की तरह स्वतन्त्र विहारी, (१०) गैंडे के सींग के समान एकाकी, (११) भारण्ड पक्षी के समान अप्रमत्त, (१२) हाथी के समान बलवान, (१३) वृषभ के समान पराक्रमी, और (१४) सिंह के समान दुर्द्धर्ष थे। वे (१५) मेरु पर्वत के समान अचल, (१६) सागर की तरह गम्भीर, (१७) चन्द्र के समान सौम्य, (१८) सूर्य के समान देदीप्यमान, (१९) स्वर्ण के समान कांतिरूप, (२०) पृथ्वी की तरह समस्त आघातों को सहने वाले, और (२१) अग्नि के समान तेज से जाज्वल्यमान थे।

21 Metaphors for Bhagavan Mahavir's Virtues

(117) Since becoming a homeless ascetic Shraman Bhagavan Mahavir strictly followed the tri-dimensional (through mind, speech, and body) observance of discipline in movement, utterance, desire, accepting, and discarding. He favoured and practiced complete serenity of mind, speech and action. He commanded absolute control over the physical senses and had total and undeviating immersion in the self every moment. He was free of anger, ego, guile, and greed. Being calm composed and tranquil, he was free of every sort of pain, or sorrow. He had become free of fondness, possessiveness, illusion, and attachment, thereby stopping the Karmic inflow.

He was uncontaminated like the liquid in a bronze vessel (1) and untarnished like a conch-shell (2) or mother of pearl. All pervasive like the spirit (3) in his movement, he was as spontaneous as space (4) and as freeflowing as air (5). His heart was as pure as the autumn dew (6) and as unsullied as the lily leaf (7). His senses were indrawn like the limbs and head of a tortoise (8). He was free like the birds (9), solitary like the horn of

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

the Asian rhinocerous (10), alert like an eagle (11), strong like an elephant (12), courageous like a bull (13), and invincible like a lion (14). He was as stable as the Meru Mountain (15), as profound as the ocean (16), as soothing as the moon (17), as scintillating as the sun (18), as brilliant as gold (19), as all enduring as the earth (20), and radiantly splendourous like fire (21).

नत्थि णं तस्स भगवंतस्स कत्थइ पडिबंधे। से य पडिबंधे चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा– दव्वओ, खेत्तओ, कालओ, भावओ। दव्वओ णं–सचित्ताचित्त-मीसएसु दव्वेसु; खेत्तओ णं–गामे वा, नगरे वा, अरण्णे वा, खित्ते वा, खले वा, घरे वा, अंगणे वा, नहे वा। कालओ णं–समए वा, आवलियाए वा, आणापाणुए वा, थोवे वा, खणे वा, लवे वा, मुहुत्ते वा, अहोरत्ते वा, पक्खे वा, मासे वा, उऊ वा, अयणे वा, संवच्छरे वा, अन्नयरे वा दीहकाल-संजोगे वा; भावओ णं–कोहे वा, माणे वा, मायाए वा, लोभे वा, भए वा, हासे वा, पेज्जे वा, दोसे वा, कलहे वा, अभक्खाणे वा, पेसुन्ने वा, पर-परिवाए वा, अरति-रती वा, माया-मोसे वा, मिच्छा-दंसण-सल्ले वा; तस्स णं भगवंतस्स नो एवं भवई॥११८॥

(११८) उन श्रमण भगवान महावीर को कहीं पर भी किसी प्रकार का प्रतिबन्ध नहीं था। प्रतिबन्ध चार प्रकार के होते हैं–द्रव्य, क्षेत्र, काल, और भाव। द्रव्य से सजीव, निर्जीव और मिश्र; क्षेत्र से ग्राम, नगर, अरण्य, खेत, खलिहान, घर, आँगन और आकाश। काल से समय, आवलिका, आन-प्राण, स्तोक, क्षण, लव, मुहूर्त्त, अहोरात्र, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, वर्ष अथवा अन्य कोई भी लम्बे समय का संयोग (देखें परिशिष्ट)। भाव से क्रोध, मान, माया, लोभ, भय, हास्य, राग, द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन्य, परपरिवाद, अरति-रति, माया-मृषावाद तथा मिथ्यादर्शन शल्य। संयमी महावीर इन चारों प्रकार के प्रतिबन्धों से बाधित नहीं हुए।

(118) Shraman Bhagavan Mahavir was unaffected by any impediment of any sort anywhere. Such impediments are said to be of four types—matter, place time, and attitude. The material impediments manifest in forms including sentient, non-sentient, and mixed. The place or the locational impediments include village, city, jungle, farms, barn, house, courtyard, and the sky. The time impediments include short and long spans of time, like Samaya, Avalika, etc. (see appendix–1 for the time scale). The attitude or

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

vice impediments include anger, conceit, guile, greed, fear, mirth, aversion, attachment, discord (calumny, slander, scandal mongering, indulgence, hypocrisy), and the anguish of misconceptions. The spiritual pursuits of the highly disciplined Mahavir were never impeded by any of these.

से णं भगवं वासावासावज्जं अट्ठगिम्ह-हेमंतिए मासे गामे एगराईए, नगरे पंचराईए, वासी-चंदण-समाण-कप्पे, सम-तिण-मणि-लेट्ठु-कंचणे, सम-सुह-दुक्खे, इहलोग-परलोग-अप्पडिबद्धे, जीविय-मरण-निरवकंखे, संसार-पारगामी, कम्म-सत्तु-(संग)-निग्घायणट्ठाए अब्भुट्ठिए; एवं च णं विहरइ॥११९॥

(११९) वे भगवान वर्षा के चार महीनों को छोड़कर गर्मी और सर्दी के आठ महीनों तक विहार करते रहते थे। गाँव में केवल एक रात और नगर में पाँच रातों से अधिक नहीं ठहरते थे। वसूला (लकड़ी काटने का औजार) हो या चंदन, दोनों के स्पर्श में उनकी प्रतिक्रिया समभावयुक्त रहती थी। तिनका या मणि अथवा पत्थर या स्वर्ण सभी के प्रति उनकी वृत्ति सम रहती थी। वे सुख और दुःख को समान भाव से स्वीकार करते थे। इहलोक और परलोक दोनों की आसक्ति से वे मुक्त थे। जीवन और मृत्यु की आकांक्षा से मुक्त हो वे संसार सागर को पार करने वाले थे। ऐसे समत्व से संयमी महावीर कर्म संतति (शत्रु) का नाश करने के लिये तत्पर हो विचरण करते थे।

(119) Shraman Bhagavan Mahavir was always on the move during eight months of the year including summer and winter. He stayed at one place only during the four months of monsoon. He did not stay in a village for more than a night and in a town for more than five nights. He had an equanimous reaction to the touch of a chisel as well as sandal wood. He was equally detached towards a stone or a gem and straw or gold. He accepted pleasure and pain with exactly the same detached serenity. He was above all the attachments of this life and beyond. Free from any desire for life or death, he continued his journey toward transcendance of the mundane world. Disciplined with such equanimity, Mahavir wandered without pause and prepared to destroy the accumulated chain of karmas.

केवलज्ञानोत्पत्ति

तस्स णं भगवंतस्स अणुत्तरेणं नाणेणं, अणुत्तरेणं दंसणेणं, अणुत्तरेणं चरित्तेणं, अणुत्तरेणं आलएणं, अणुत्तरेणं विहारेणं, अणुत्तरेणं वीरिएणं, अणुत्तरेणं अज्जवेणं,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणुत्तरेणं मद्दवेणं, अणुत्तरेणं लाघवेणं, अणुत्तराए खंतीए, अणुत्तराए मुत्तीए, अणुत्तराए गुत्तीए, अणुत्तराए तुट्ठीए, अणुत्तरेणं सच्च-संजम-तव-सुचरिय-सोवचइय-(सोवचिय)-फल-परिनिव्वाण-मग्गेणं, अप्पाणं भावेमाणस्स, दुवालस-संवच्छराइं विइक्कंताइं, तेरसमस्स संवच्छरस्स अंतरा वट्टमाणस्स जे से गिम्हाणं, दुच्चे मासे, चउत्थे पक्खे, वइसाह-सुद्धे, तस्स णं वइसाह-सुद्धस्स दसमीए पक्खेणं पाईणगामिणीए छायाए, पोरिसीए अभिनिवट्टाए पमाणपत्ताए, सुव्वएणं दिवसेणं, विजएणं मुहुत्तेणं, जंभियगामस्स नगरस्स बहिया उजुवालियाए नईए तीरे वियावत्तस्स चेइयस्स अदूरसामंते सामागस्स गाहावइस्स कट्ठकरणंसि साल (साला)-पायवस्स अहे गोदोहियाए उक्कुडुय-निसिज्जाए आयावणाए आयावेमाणस्स छट्ठेणं भत्तेणं अपाणएणं हत्थुत्तराहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं झाणंतरियाए वट्टमाणस्स अणंते अणुत्तरे निव्वाघाए निरावरणे कसिणे पडिपुण्णे, केवलवरनाण-दंसणे समुप्पन्ने ॥१२०॥

(१२०) अनुत्तरज्ञान, असीम दर्शन, उत्कृष्ट चारित्र, निर्दोष आश्रय, प्रशस्त विहार, अनन्त पराक्रम, सहजतम सरलता व विनम्रता, अनुपम लघुता, सौम्यतम शान्ति, चरम अपरिग्रह, चरम गुप्ति, शाश्वत प्रसन्नता, तथा अनुत्तर सत्य-संयम-तपादि गुणों से आत्मा को परिपूर्ण करते, सम्यक् आचरण करते हुए मोक्ष प्राप्ति के मार्ग पर सफलतापूर्वक आगे बढ़ते भगवान को १२ वर्ष बीत गये। तेरहवें वर्ष के मध्य की गर्मी का दूसरा महीना चौथा पक्ष चल रहा था। वैशाख शुक्ल दशमी के दिन जब छाया पूर्व दिशा की तरफ ढलने लगी थी, प्रमाणोपेत पौरुषी (दिन का अंतिम प्रहर) आ गई थी। सुव्रत नामक दिन था और विजय मुहूर्त्त। जम्भिका गाँव के बाहर ऋजुबालुका नदी के किनारे खंडहर होते विजयावर्त चैत्य से न अधिक दूर, न अधिक पास श्याम नाम के गृहस्थ के खेत में शाल वृक्ष के नीचे भगवान गोदोहिक आसन में तपस्यारत और चरम एकाग्रतापूर्वक ध्यानमग्न थे। उनको निर्जल छट्ठभक्त तप (बेला) चल रहा था। ऐसे में हस्तोत्तरा नक्षत्र का योग आने पर श्रमण भगवान महावीर को अनन्त, सर्वोत्कृष्ट, अव्याघात, निरावरण, समग्र तथा परिपूर्ण केवलज्ञान और केवलदर्शन उत्पन्न हुए। (५५७ ई. पू.) (चित्र M-27/1)

Attaining Omniscience

(120) Enhancing the purity of his soul through virtues like unparalleled knowledge, infinite perception, sagacious conduct, faultless lodging,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

extensive wandering, unending courage, spontaneous simplicity and humility, unique gentleness, most serene tranquility, ultimate detachment, acute introspection, eternal joy, and unprecedented truthfulness, discipline and penance, Shraman Bhagavan Mahavir spent twelve years progressing on the path of liberation, successfully indulging in the most appropriate and perfect practices. It was the fourth fortnight of the second month of the summer season during the middle of the thirteenth year of his practices. It was the tenth day of the bright half of the month of Vaishakha and the shadows had moved to the east, and measured one man-length, indicating that it was the last hour of the day. The day and the moment came under the auspicious classifications named Suvrata and Vijaya respectively. Outside of Jrimbhika village on the bank of river Rijubaluka, neither very far from nor very near to the ruins of Vijayavarta temple in the farm of citizen Shyamak under a Sal tree, Shraman Bhagavan Mahavir was meditating with ultimate concentration while squatting in the Godohik posture. He was doing the Chhattha-bhakta penance (fasting for two days without water) at the same time. In this state when the moon entered the twelfth lunar mansion, the Hastottara, Shraman Bhagavan Mahavir attained the infinite, supreme, uninhibited, unveiled, total and perfect Kewal Jnana (ultimate knowledge), and Kewal Darshan (ultimate perception) or the state of omniscience. (557 B. C.) (Illustration M-27/1)

धर्मतीर्थ-स्थापना

तएणं से भगवं महावीरे अरहा जाए जिणे केवली सव्वन्नू सव्वदरिसी सदेवमणुयासुरस्स लोगस्स परियायं जाणइ पासइ सव्वलोए सव्वजीवाणं आगइं, गइं, ठिइं, चवणं, उववायं, तक्कं, मणो-माणसियं, भुत्तं, कडं, पडिसेवियं आविकम्मं रहोकम्मं अरहा अरहस्स भागी तं तं कालं मण-वयण-काय-जोगे वट्टमाणाणं सव्वलोए सव्वजीवाणं सव्वभावे जाणमाणे पासमाणे विहरइ॥१२१॥

(१२१) और तब श्रमण भगवान महावीर अर्हत् हुए, जिन हुए, वली-सर्वज्ञ-सर्वदर्शी हुए। भगवान अब देव, मनुज, असुरादि के साथ-साथ संसार के सभी पर्यायों को जानने-देखने लगे। समस्त लोक में समस्त जीवों के आने, जाने, रहने, गिरने, उठने की क्रियाएँ, विचार, मनःस्थिति, संकल्पादि भाव; भोग्य, कृत और सेवित सभी प्रकट तथा गुप्त

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

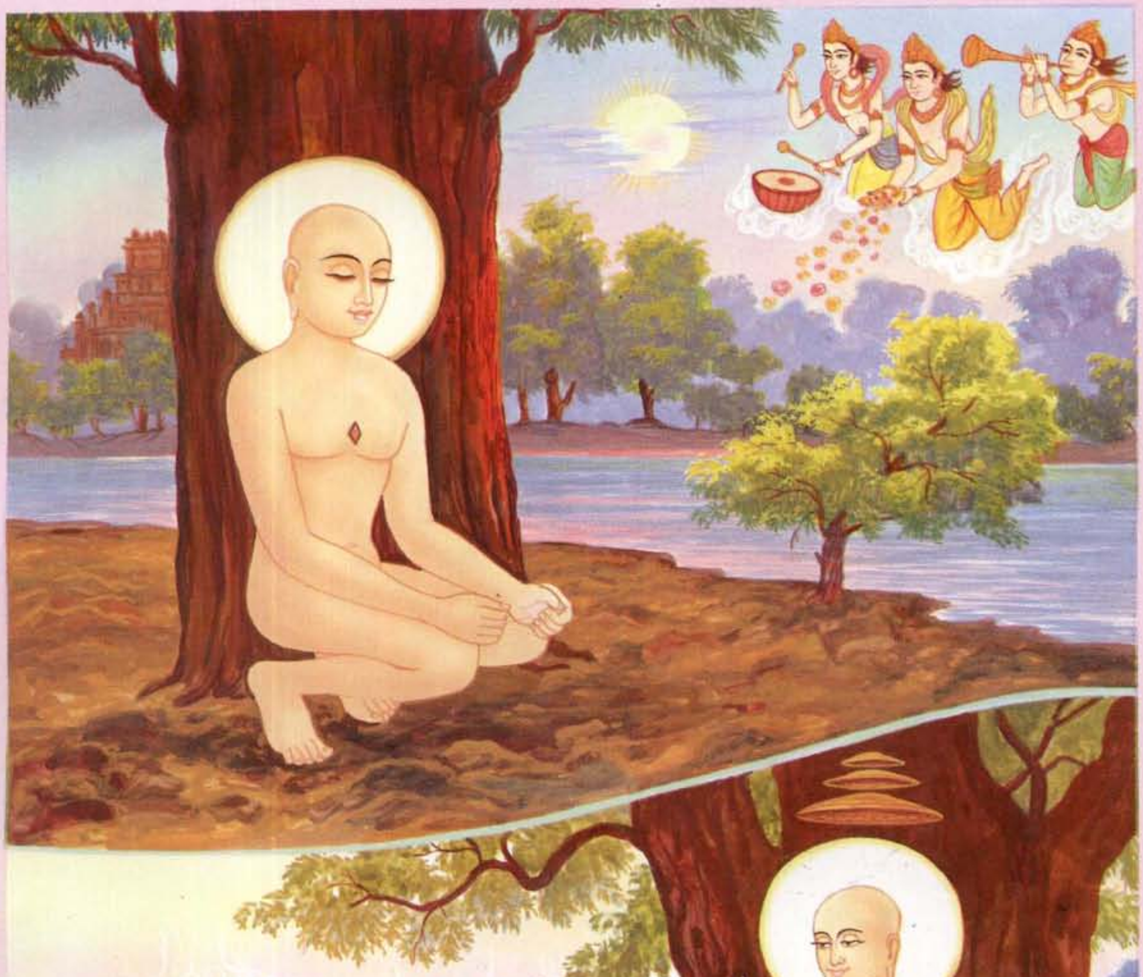

M 27 (१) ऋजुबालुका नदी के तट पर भगवान महावीर को कैवल्य प्राप्ति
(२) भगवान महावीर की देवों की उपस्थिति में प्रथम देशना।
(1) Bhagavan Mahavir attains omniscience on the banks of the river Rijubaluka
(2) The first discourse in presence of gods

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

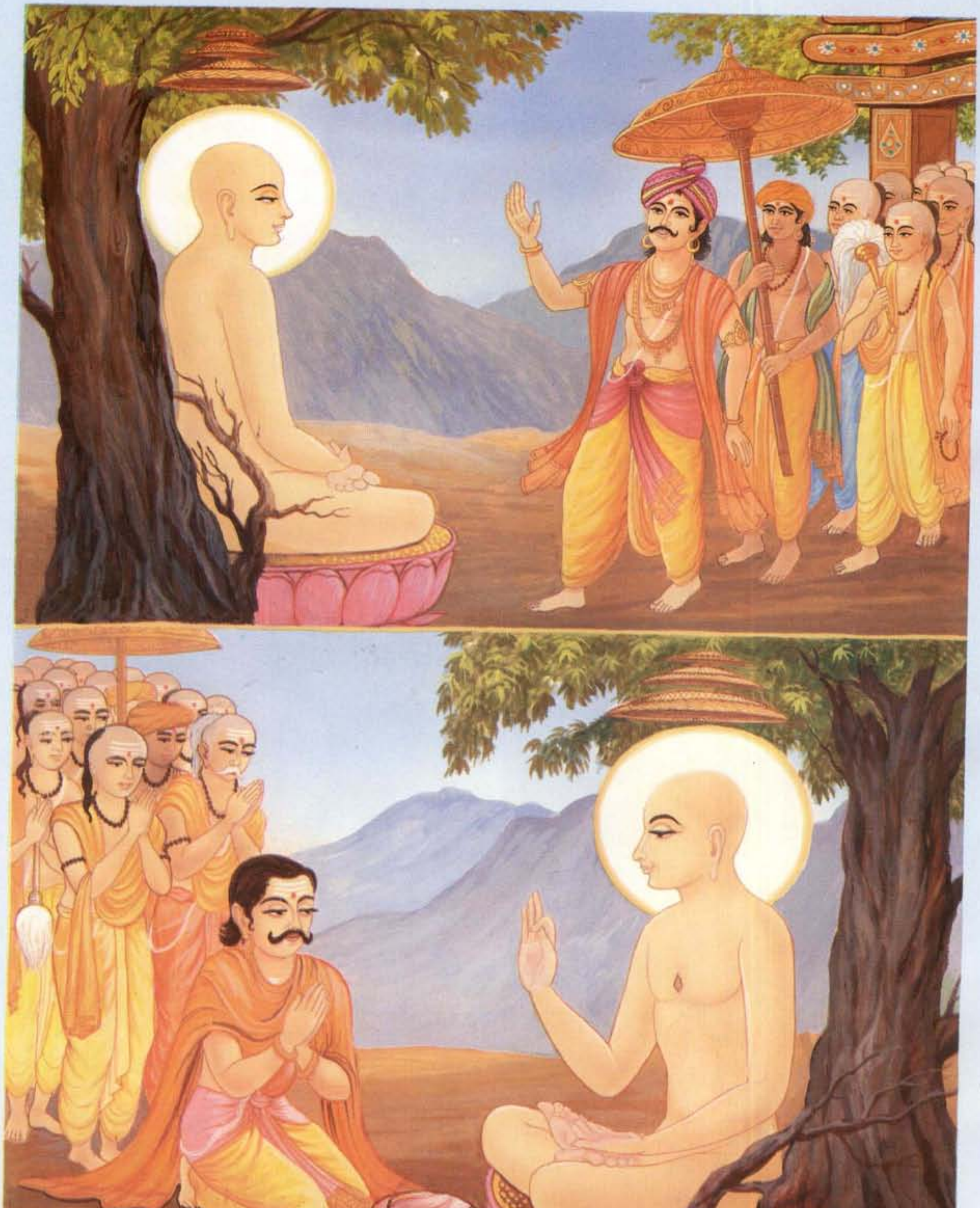

M 28 इन्द्रभूति का आगमन और महावीर के चरणों में सर्वात्मना समर्पण।
Indrabhuti's arrival and total submission before Mahavir.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कार्यों व कर्मों को भगवान जानने-देखने लगे। उनके अर्हत् हो जाने से उनके लिए रहस्य जैसा कुछ भी अजाना बचा नहीं। उस समय सर्वलोकों के मन-वचन-काया की वृत्तियों में लगे हुए सभी जीवों के सभी भावों को जानते-देखते अर्हत् महावीर विचरण करने लगे।

Establishing the Ford

(121) And then Bhagavan Mahavir became Arhat (the revered one), Jina (the conqueror), and omniscient. Now he could observe and understand all forms of life in the world including gods, men, and demons. He could observe and understand all visible and invisible activities of all beings in the universe including their movement, habitation, progress, thoughts, state of mind, attitudes, and all and any involvements, performances, and indulgences. Because he was an Arhat, there remained no secret or unknown for him. During that period—seeing and knowing every thought of every being indulging in any activity of mind-speech-body in every living world in the universe—Arhat Mahavir started moving around.

विस्तार :

परम्परा के अनुसार कैवल्य प्राप्त करने के पश्चात् तत्काल तीर्थंकर समता धर्म का प्रतिपादन करते हैं। भगवान महावीर की प्रथम देशना का लाभ उठाने के लिए देवताओं ने ऋजुवालुका नदी के पावन तट पर समवसरण रचा और अनेक देवता वहाँ उपस्थित हुए। देवगण सत्य, संयम और सद्गुण की प्रशंसा और उपासना तो कर सकते हैं किन्तु वे न तो अध्यात्म-साधना कर सकते और न व्रतादि ग्रहण कर सकते। आत्म-साधना कर संयम ग्रहण करना केवल मनुष्य के लिये ही संभव है। अतः ऐसी मान्यता है कि व्रत ग्रहण करने वालों की अनुपस्थिति में आध्यात्मिक लाभ के संदर्भ में भगवान महावीर की प्रथम देशना निष्फल गई; वहाँ उपस्थित कोई भी जीव व्रत ग्रहण नहीं कर सका। (चित्र M-27/2)

गौतम का संयम ग्रहण

ऋजुवालुका के तट से विहार कर भगवान महावीर मध्य पावा में आये। महसेन वन में देवों ने समवसरण रचा। महावीर के कैवल्य प्राप्ति तथा महसेन वन में देशना देने के समाचार जैसे ही फैले, उत्सुक लोगों के झुण्ड के झुण्ड उपदेश स्थल की ओर प्रस्थान करने लगे। मध्यम पावा वैदिक धर्म का एक महत्वपूर्ण केन्द्र था और सोम शर्मा एक समर्थ क्रियाकाण्डी उपासक। वैशाख माह में सोम शर्मा ने एक विशाल यज्ञ का आयोजन किया था। ग्यारह प्रसिद्ध तथा प्रकाण्ड विद्वान् अपने ४४०० शिष्यों सहित यज्ञ के क्रियाकाण्ड में भाग लेने वहाँ उपस्थित थे। उनमें इन्द्रभूति गौतम प्रमुख थे।

भगवान महावीर के अचानक आने के समाचार सुनकर सोम शर्मा चिन्तित हो गये। उन्हें श्रमण संस्कृति की यज्ञ विरोधी भावना का आभास था। वे इन्द्रभूति के पास गये और अपनी चिन्ता व्यक्त की। इन्द्रभूति ने उन्हें आश्वासन दिया, "श्रमण वर्द्धमान के पास अवश्य ही आध्यात्मिक साधना का बल और तप का तेज है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

फिर भी ज्ञान में वे हमारे सामने नहीं टिक सकते। हमें चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है। हमें उनका समुचित विरोध करने की तैयारी करनी चाहिए।" और महापण्डित इन्द्रभूति अपने ५०० शिष्यों सहित महावीर के समवसरण की ओर चल पड़े।

दूर से उन्हें भगवान महावीर के मुख का अपूर्व तेज दिखाई पड़ा। उनके बढ़ते चरण मन्द हो गए और वे दुविधा से काँपने लगे।

"इन्द्रभूति गौतम! तुम आ गए?"

जैसे ही वे धर्म-सभा में प्रविष्ट हुए भगवान का गंभीर स्वर इन्द्रभूति के कानों में पड़ा, वे चौंक गए। "इन्द्रभूति गौतम, यद्यपि तुम वेदों के प्रकाण्ड विद्वान् हो फिर भी तुम्हारे मन में आत्मा के अस्तित्व के विषय में संशय है।" महावीर के शब्द इन्द्रभूति के कानों में गूँजे और वे स्तम्भित हो गये। उन्होंने सोचा, "यह रहस्य तो कोई नहीं जानता। फिर महावीर ने कैसे जाना? क्या वे वास्तव में सर्वज्ञ हैं?"

"इन्द्रभूति, आत्मा के विषय में तुम्हारे संदेह तुम्हारे वेद-ज्ञान पर आधारित हैं। पर उन्हीं वेदों में आत्मा के स्वतन्त्र अस्तित्व के अकाट्य प्रमाण भी उपलब्ध हैं ...." महावीर ने मधुर पर प्रभावी वाणी में गौतम को समझाया। महावीर के अकाट्य तर्कों ने इन्द्रभूति के सन्देहों को दूर कर दिया, उनका अहं पिघल गया। और तब इन्द्रभूति गौतम भगवान महावीर के प्रथम शिष्य बने। उनके पाँच सौ शिष्य भी संघ में दीक्षित हो गये। (चित्र M-28)

इसके पश्चात् एक के बाद एक बाकी बचे सभी दसों प्रकाण्ड पण्डित, जिनके प्रमुख इन्द्रभूति थे, महावीर के पास गये और अपने संदेहों के निराकरण के बाद अपने शिष्यों सहित उनके शिष्य बन गये। महावीर के धर्म संघ के स्तम्भ स्वरूप इन ग्यारह गणधरों तथा उनके शिष्यों की सूची (विस्तृत वर्णन परिशिष्ट में देखें) निम्न है :

१. इन्द्रभूति, २. अग्निभूति, ३. वायुभूति, ४. आर्य व्यक्त, ५. सुधर्मा, ६. मण्डित, ७. मौर्यपुत्र, ८. अकम्पित, ९. अचलभ्राता, १०. मेतार्य और ११. प्रभास।

तीर्थ-स्थापना

वैशाख शुक्ला एकादशी के उस दिन सहस्रों अन्य स्त्री-पुरुषों ने श्रमण धर्म स्वीकार किया। कुछ साधु बने और अन्यों ने श्रावक धर्म के व्रत ग्रहण किये। चन्दनबाला महावीर की प्रथम श्रमण शिष्या बनीं। शंख और शतकादि प्रमुख श्रावकों सहित बहुतों ने श्रावक धर्म के व्रत लिये और सुलसा सहित अन्य अनेक स्त्रियों ने श्राविकाओं के रूप में संघ में प्रवेश लिया। महावीर ने अपने धर्म संघ को विशुद्ध गणतांत्रिक पद्धति से गठित किया। समस्त संघ के चार स्थूल विभाजन किये--१. साधु, २. साध्वी, ३. श्रावक, ४. श्राविका। यह चतुर्विध संघ के नाम से जाना जाने लगा। संघ की संगठनात्मक संरचना आत्मशुद्धि तथा त्याग के स्तरानुसार की गई, न कि किसी व्यक्ति की सांसारिक उपलब्धियों तथा प्रभाव के अनुसार। इन चार तीर्थों की स्थापना के साथ ही भगवान महावीर का तीर्थंकर पद सार्थक हुआ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Elaboration :

Traditionally, immediately after his gaining omniscience, a Tirthankar preaches the religion of equanimity. To take advantage of the first divine discourse of Mahavir, the gods created the divine pavilion (Samavasaran) on the pious banks of Rijubaluka river and numerous gods attended it. The gods may admire and eulogize truth, discipline, and virtues, but they cannot do spiritual practices or take vows. Only man is capable of entering the discipline of spiritual practices. As such, it is said that in absence of human beings, the first discourse of Bhagavan Mahavir was a failure in the context of spiritual gains, as none of those present took any vow. (Illustration M-27/2)

The Indoctrination of Gautam

From the banks of Rijubaluka, Mahavir came to Madhya Pava. A divine pavilion was created in the Mahasen jungle. As soon as the news of Mahavir's attaining omniscience and his discourse in Madhyam Pava spread, masses of people became curious and set out to visit the place of congregation. Madhyam Pava was a prominent centre of Vedic religion and Som Sharma a resourceful follower. During the month of Vaishakh, Som Sharma had organized a great Yajna. Eleven famous and great scholars headed by Indrabhuti Gautam and with their 4400 disciples were there to take part in the ritual ceremonies.

On hearing of the sudden arrival of Bhagavan Mahavir, Som Sharma became worried. He was aware of the anti-Yajna attitude of the Shraman culture. He went to Indrabhuti and conveyed his misgivings. Indrabhuti reassured him, "Shraman Vardhaman certainly has the power of spiritual practice and the fire of penance but still he is no match for us in knowledge. We need not worry. We should prepare ourselves to oppose him effectively." And Mahapandit Indrabhuti with his 500 disciples, started for Mahavir's Samavasaran.

From a distance he saw the astonishing glow on the face of Shraman Mahavir. His advancing steps lost firmness and he started shaking with uncertainty.

"Indrabhuti Gautam ! You have arrived?"

The deeply resonent words of Mahavir fell on Indrabhuti's ears the moment he entered the assembly, and he was dumbstruck. "Indrabhuti Gautam, although you are a great scholar of the Vedas, you are still doubtful about the existence of the soul." Mahavir's words echoed in the ears of Indrabhuti and he was stunned. "This is a secret nobody knows. How is it that Mahavir knows about it? Is he really a Sarvajna (omniscient)?", he thought.

"Indrabhuti, your doubt about soul is based on your knowledge of the Vedas. But the same Vedas contain undeniable proofs of the independent existence of the soul ...." Mahavir explained everything in his penetratingly sweet voice. Mahavir's irrefutable logic removed all Indrabhuti's doubts and his ego melted. Indrabhuti Gautam then became the first disciple of Bhagavan Mahavir. His five hundred disciples were also initiated into the order. (Illustration M-28)

After this, one after the other, all the remaining ten great scholars of the group headed by Indrabhuti came to Mahavir, and removing their doubts, became Mahavir's disciples alongwith their own disciples. The list of the eleven great scholars and their disciples that formed the core of Mahavir's religious order is as follows (see for Appendix) :

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

1. Indrabhuti, 2. Agnibhuti, 3. Vayubhuti, 4. Arya Vyakt, 5. Sudharma, 6. Mandit, 7. Mauryaputra, 8. Akampit, 9. Achalbhrata, 10. Metarya and 11. Prabhas.

The Establishment of the Ford

On this eleventh day of the bright half of the month of Vaishakh thousands of other men and women were also converted to the Shraman religion. Some became ascetics and others took the vows for the laity. Chandanbala became the first woman disciple of Mahavir. Shankha and Shatak with many others joined Mahavir's order as lay followers. Sulasa and many other women also joined the religious family. Mahavir organized all his followers in an ideally democratic system. The total mass of followers was divided into four broad groups 1. Sadhu, 2. Sadhvi, 3. Shravak, 4. Shravika. It became known as the four fold organization or the Chaturvidh Sangha. The organisational hierarchy was formed according to the level of spiritual development and abstinence of the individual, and not on any mundane achievement or power. The title Tirthankar became meaningful the moment Mahavir founded these four Tirths or fords.

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे अट्ठियगामं नीसाए पढमं अंतरावासं वासावासं उवागए। चंपं च पिट्ठिचंपं च निस्साए तओ अंतरावासे वासावासं उवागए। वेसालिं नयरिं वाणियगामं च निस्साए दुवालस अंतरावासे वासावासं उवागए। रायगिहं नगरं नालंदं च बाहिरियं निस्साए चोद्दस अंतरावासे वासावासं उवागए। छम्मिहिलाए, दो भद्दियाए, एगं आलंभियाए, एगं सावत्थीए, एगं पणियभूमीए, एगं पावाए मज्झिमाए हत्थिवालस्स रन्नो रज्जुग-सहाए अपच्छिमं अंतरावासं वासावासं उवागए॥१२२॥

(१२२) उस काल के उस भाग में श्रमण भगवान महावीर ने पहला वर्षावास (चौमासा) अस्थिक ग्राम के आश्रय में किया। चम्पानगरी और पृष्ठ-चम्पा में उन्होंने तीन चातुर्मास किए। वैशाली और वाणिज्यग्राम में उन्होंने बारह वर्षावास बिताए। राजगृह में तथा उसके निकट नालन्दा में भगवान ने चौदह चातुर्मास व्यतीत किये। इनके अलावा छह मिथिला में, दो भद्दिया (बंगाल का भेदिया ग्राम) में, एक आलम्भिका में, एक श्रावस्ती में और एक प्रणीतभूमि (वीरभूम) में किये। अन्तिम एक चातुर्मास के लिए भगवान मध्यम पावा के राजा हस्तिपाल के लेखन-मण्डप में गये।

(122) During that time in that period Shraman Bhagavan Mahavir spent his first monsoon in Asthik village. He did three monsoon-stays in Champanagari and Prishtha-champa. Twelve of his monsoon-stays were in Vaishali and Vanijyagram. In Rajagriha and nearby Nalanda he spent fourteen monsoon-stays. Besides these he did one Chaturmas each at Alambhika, Shravasti, Praneetbhumi, two in Bhaddiya, and six in Mithila.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

For the last Chaturmas he selected the writing hall of king Hastipal of Madhyam Pava.

परिनिर्वाण

तत्थ णं जे से पावाए मज्झिमाए हत्थिवालस्स रन्नो रज्जुगसभाए अपच्छिमं अंतरावासं वासावासं उवागए। तस्स णं अंतरावासस्स जे से वासाणं चउत्थे मासे सत्तमे पक्खे कत्तिय-बहुले, तस्स णं कत्तिय-बहुलस्स पन्नरसी-पक्खेणं जा सा चरिमा (चरमा) रयणी, तं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे कालगए विइक्कंते, समुज्जाए छिन्नजाइ-जरा-मरण-बंधणे, सिद्धे, बुद्धे, मुत्ते, अंतगडे, परिनिव्वुडे सव्व-दुक्ख-पहीणे, चंदे नामं से दोच्चे संवच्छरे, पीइवद्धणे मासे, नंदिवद्धणे पक्खे, अग्गिवेसे (सुव्वयग्गी) नामं से दिवसे उवसमित्ति पवुच्चइ; देवाणंदा नामं सा रयणी निरई त्ति पवुच्चइ, अच्चे लवे, मुहुत्ते पाणू, थोवे सिद्धे, नागे करणे, सव्वट्ठसिद्धे मुहुत्ते, साइणा नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं कालगए विइक्कंते जाव सव्वदुक्ख-पहीणे॥१२३॥

(१२३) मध्यम पावा में हस्तिपाल राजा की रज्जुक सभा में अंतिम चातुर्मास के समय वर्षा ऋतु का चौथा महीना, सातवाँ पक्ष चल रहा था। कार्तिक माह के कृष्ण पक्ष की अंतिम रात्रि अर्थात् अमावस्या को श्रमण भगवान महावीर काल धर्म को प्राप्त हुए। वे पुनर्जन्म की शृंखला का मूल सहित नाश करके चले गये। उनके जन्म, जरा और मरण के सभी बन्धन नष्ट हो गये। भगवान सिद्ध हुए, बुद्ध हुए, मुक्त हुए, अन्तकृत् हुए और समस्त दुःखों का नाश कर परिनिर्वाण को प्राप्त हुए।

श्रमण भगवान महावीर जिस क्षण सिद्ध हुए उस समय चन्द्र नाम के दूसरे संवत्सर का प्रीतिवर्द्धन नाम का महीना और नन्दिवर्धन नाम का पक्ष चल रहा था। वह सुव्रताग्नि अथवा उपशम नाम के दिन के बाद की देवानन्दा अथवा निरति नामक रात्रि में नाग नामक करण था। उस क्षण सर्वार्थसिद्ध नामक मुहूर्त्त में अर्च नामक लव के सिद्ध नामक स्तोक का नाग नामक करण था। काल के उस सूक्ष्मांश में जब स्वाति नक्षत्र का योग आया तो भगवान इस संसार को छोड़ समस्त दुःखों का नाश कर परिनिर्वाण को प्राप्त हुए।

The Liberation

(123) It was the fourth month and the seventh fortnight of the monsoon season during his last Chaturmas in the Madhyam Pava. On the fifteenth

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

day of the dark half of the month of Kartik, Shraman Bhagavan Mahavir breathed his last. Destroying the chain of rebirth completely, he passed away. All the ties of birth, decay and death became extinct for him. He attained the state of ultimate perfection, enlightenment, liberation, and absolute purity of soul. Destroying all sorrows, he got nirvana.

The precise moment when Shraman Bhagavan Mahavir attained liberation is defined in astrological terms as follows—it was the second year (of the five year cycle) named Chandra, and the Nandivardhan fortnight of the Preetivardhan month. It was the Karan (a twelve hour specific astrological division of a fortnight) named Naga during the night named Devananda or Nirati following the day named Suvratagni or Upasham. It was the Prana (fraction of time elapsed in one inhalation and exhalation) named Muhurta of the Stok (seven Pranas) named Siddha of the Lava (seven Stok) named Archa of the Muhurta (77 Lava which is equal to 48 minutes) named Sarvarthasiddha. At that moment of time, when the moon entered its fifteenth mansion named Swati, Bhagavan Mahavir left this world, and destroying all sorrows, attained nirvana.

दीपोत्सव

जं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे कालगए जाव सव्व-दुक्ख-पहीणे, सा णं रयणी बहूहिं देवेहिं य देवीहिं य ओवयमाणेहिं उप्पयमाणेहिं य उज्जोविया यावि होत्था॥१२४॥

जं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे कालगए जाव सव्व-दुक्ख-पहीणे, सा णं रयणी बहूहिं देवेहिं य देवीहिं य ओवयमाणेहिं य उप्पयमाणेहिं य उप्पिंजलग-माणभूया कहकहगभूया या वि होत्था॥१२५॥

(१२४) जिस रात को श्रमण भगवान महावीर के समस्त दुःख नष्ट हो गये और उनका निर्वाण हुआ वह रात बहुत से देव-देवियों के ऊपर-नीचे आने-जाने के कारण प्रकाश से जगर-मगर हो गई थी।

(१२५) देवताओं के इस आवागमन से उस रात बहुत हलचल मच गई और चारों ओर कोलाहल व्याप्त हो गया था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

The Festival of Lights

(124) The night of Shraman Bhagavan Mahavir's nirvana became resplendent with divine light as numerous gods descended and ascended in the sky.

(125) This movement of the gods caused much disturbance and clamour all around.

जं रयणिं च समणे भगवं महावीरे कालगए जाव सव्व-दुक्ख-पहीणे तं रयणिं च णं जेट्ठस्स गोयमस्स इंदभूइस्स अणगारस्स अंतेवासिस्स नायए पेज्जबंधणे वोच्छिन्ने, अणंते अणुत्तरे जाव केवलवरनाण-दंसणे समुप्पन्ने ॥१२६॥

(१२६) उसी रात श्रमण भगवान महावीर के ज्येष्ठ अन्तेवासी शिष्य गौतम गोत्र के इन्द्रभूति अनगार का अपने गुरु के प्रति जो अटूट स्नेह बन्धन था वह टूट गया और फलस्वरूप उन्हें अनन्त अभूतपूर्व केवलज्ञान व केवलदर्शन की प्राप्ति हुई।

(126) The same night the strong bond of reverential affection that Indrabhuti Gautam, the senior disciple of Shraman Bhagavan Mahavir, had with his Guru shattered and consequently he acquired infinite and unprecedented Kewal Jnana and Kewal Darshan.

जं रयणिं च णं समणे जाव सव्वदुक्ख-पहीणे, तं रयणिं च णं नव मल्लइ, नव लच्छई, कासी-कोसलगा अट्ठारस्स वि गणरायाणो अमावासाए पाराभोयं पोसहोववासं पट्ठविंसु, गए से भावुज्जोए, दव्वुज्जोयं करिस्सामो ॥१२७॥

(१२७) उसी रात काशी प्रदेश के नौ मल्लवंशीय और कौशल प्रदेश के नौ लिच्छवी-वंशीय, कुल अठारह गणराजाओं ने अमावस्या का आठ पहर का पौषध उपवास व्रत किया हुआ था। उन गणराजाओं के मन में विचार उठा, "ज्ञान के प्रकाश का अन्त हो गया है इसलिए अब हम भौतिक प्रकाश (दीप जलाकर) करेंगे।"

(127) The same night also saw the nine chiefs of the Malla clan of Kashi and nine of the Lichchhavi clan of Kaushal practicing the one day partial detachment vow (Paushadh Vrata) prescribed for the fifteenth day of the dark half of a month. These chiefs had an inspiration that night, "The lamp of knowledge is extinguished we shall light the earthen lamps now."

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दुष्टग्रह की छाया

जं रयणिं च णं समणे जाव सव्व-दुक्ख-पहीणे, तं रयणिं च णं खुद्दाए भास-रासी महग्गहे दो-वास-सहस्स-ट्ठिई समणस्स भगवओ महावीरस्स जम्म-नक्खत्तं संकंते॥१२८॥

(१२८) श्रमण भगवान महावीर के निर्वाण की उस रात हानिकारक प्रभावों वाला भस्मराशि नामक महाग्रह, जो दो हजार वर्ष तक प्रभावी रहता है, उनके जन्म नक्षत्र में आया।

Shadow of the Evil

(128) On the night of the nirvana of Shraman Bhagavan Mahavir a great planet called Bhasmarashi (the planet of ashes) came in conjunction with the constellation of Mahavir's birth. It remains effective for two thousand years, and casts off evil effects.

जप्पभिइं च णं से खुड्डाए भास-रासी-महग्गहे दो-वास-सहस्सट्ठिई समणस्स भगवओ महावीरस्स जम्मनक्खत्तं संकंते, तप्पभिइं च समणाणं निग्गथाणं निग्गंथीण य नो उदिए-उदिए पूया-सक्कारे पवत्तइ॥१२९॥

(१२९) जब से यह दुष्ट ग्रह प्रभावी हुआ तब से श्रमण तथा निर्ग्रन्थ साधु-साध्वियों के पूजा-सत्कार में निरन्तर वृद्धि बाधित हो गई।

(129) Since this evil planet has become effective, the ever-increasing reverence and influence of Shraman and Nirgrantha (bondless) ascetics has been obstructed.

जया णं से खुड्डाए जाव जम्म-नक्खत्ताओ विइक्कंते भविस्सइ, तया णं समणाणं निग्गंथाणं निग्गंथीण य उदिए उदिए पूया-सक्कारे पवत्तिस्सति (भविस्सइ)॥१३०॥

(१३०) जब यह दुष्ट-ग्रह भगवान महावीर के जन्म नक्षत्र पर से हट जायेगा तब से पुनः श्रमण-श्रमणी के पूजा-सत्कार में निरन्तर वृद्धि होने लगेगी।

(130) When this planet finally moves out of the constellation of Mahavir's birth, they will regain their enhancing reverence and influence.

जं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे कालगए जाव सव्व-दुक्ख-पहीणे, तं रयणिं च णं कुंथु अणुद्धरी नामं समुप्पन्ना, जा ठिया अचलमाणा छउमत्थाणं निग्गंथाणं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निग्गंथीण य नो चक्खुफासं हव्वमागच्छइ, जा अठिया चलमाणा छउमत्थाणं निग्गंथाणं निग्गंथीण य चक्खुफासं हव्वमागइच्छइ, जं पासित्ता बहुहिं निग्गंथेहिं निग्गंथीहिं य भत्ताइं पच्चक्खायाइं ॥१३१॥

(१३१) श्रमण भगवान महावीर की निर्वाण रात्रि को कुन्थु नाम के सूक्ष्म जीव समूह उत्पन्न हुए। ये जीव जब स्थिर रहते तो छद्मस्थ साधु-साध्वियों को दिखाई नहीं देते पर जब वे हिलते-डुलते तो उन्हें दिखाई देते। इन जीव समूहों को देख बहुत से साधु-साध्वियों ने अनशन कर लिया था।

(131) On the night of the nirvana of Shraman Bhagavan Mahavir, a micro-organism called Kunthu came into existence. When these organisms are still they are not normally visible to the ascetics; they are seen only when there is some activity in them. Many ascetics took the vow of fasting after seeing these organisms.

से किमाहु भंते?, अज्जप्पभिइं संजमे दुराराहए भविस्सइ ॥१३२॥

(१३२) ऐसा किसलिए किया? इस प्रश्न का समाधान है, "आज के बाद संयम का पालन कठिन (दुःसाध्य) होगा (इस संभावना से)।"

(132) "Why so?" The answer is, "Starting from this day the observance of the discipline and code of conduct of an ascetic would be very difficult.

भगवान महावीर की शिष्य-संपदा

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स इंदभूइ-पामोक्खाओ चउद्दस-समण-साहस्सीओ उक्कोसा समण-संपया होत्था ॥१३३॥

समणस्स भगवओ महावीरस्स अज्जचंदणा-पामोक्खाओ छत्तीसं अज्जिया-साहस्सीओ उक्कोसिया अज्जिया-संपया होत्था ॥१३४॥

समणस्स भगवओ महावीरस्स संख-सयग-पामोक्खाणं समणोवासगाणं एगा सय-साहस्सी अउणट्ठिं च सहस्सा उक्कोसिया समणोवासयाणं संपया होत्था ॥१३५॥

समणस्स भगवओ महावीरस्स सुलसा-रेवई-पामोक्खाणं समणोवासियाणं तिन्नि-सय-साहस्सीओ अट्ठारस य सहस्सा उक्कोसिया समणोवासियाणं संपया होत्था ॥१३६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समणस्स णं भगवओ महावीरस्स तिन्नि सया चोद्दस-पुव्वीणं अजिणाणं जिणसंकासाणं सव्वक्खर-सन्निवाईणं जिणो वि व अवितहं वागरमाणाणं उक्कोसिया चोद्दस-पुव्वीणं संपया होत्था ॥१३७॥

समणस्स णं भगवओ महावीरस्स तेरस-सया ओहिनाणीणं अइसेसपत्ताणं उक्कोसिया ओहिनाणीणं संपया होत्था ॥१३८॥

समणस्स णं भगवओ महावीरस्स सत्तसया केवलनाणीणं संभिन्न-वर-नाण-दंसण-धराणं उक्कोसिया केवलनाणीणं संपया होत्था ॥१३९॥

समणस्स णं भगवओ महावीरस्स सत्तसया वेउव्वीणं अदेवाणं देविड्ढिपत्ताणं उक्कोसिया वेउव्विअ-संपया होत्था ॥१४०॥

समणस्स णं भगवओ महावीरस्स पंचसया विउलमईणं अड्ढाइज्जेसु दीवेसु दोसु य समुद्देसु सण्णीणं पंचिंदियाणं पज्जत्तगाणं जीवाणं मणोगए भावे जाणमाणाणं उक्कोसिया विउलमईणं संपया होत्था ॥१४१॥

समणस्स णं भगवओ महावीरस्स चत्तारि-सया वाईणं, सदेव-मणुयासुराए परिसाए वाए अपराजियाणं उक्कोसिया वाई-संपया होत्था ॥१४२॥

(१३३) काल के उस भाग में श्रमण भगवान महावीर के अनुयायी श्रमणों की उत्कृष्ट सम्पदा चौदह हजार थी जिनके प्रमुख इन्द्रभूति थे।

(१३४) उनके शिष्य समुदाय में श्रमणियों की संख्या छत्तीस हजार थी और उनकी प्रमुख आर्या चन्दना थीं।

(१३५) श्रमणोपासकों अथवा श्रावकों की अधिकतम संख्या एक लाख उनसठ हजार थी जिनमें मुख्य थे शंख, शतक, आदि।

(१३६) श्रमणोपासिकाओं अथवा श्राविकाओं की संख्या तीन लाख अठारह हजार थी, जिनमें मुख्य थीं सुलसा, रेवती, आदि।

(१३७) जो जिन न होने पर भी जिन के समान ही सत्य प्रतिपादन तथा शंका समाधान करने वाले थे और जिन के समान ही सर्वाक्षर सन्निपाती या चौदह पूर्वों में संकलित जिनोपदेशित वाणी के पूर्ण ज्ञाता, ऐसे चौदह पूर्वधरों की श्रमण भगवान महावीर की शिष्य संपदा में उत्कृष्ट संख्या तीन सौ थी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(१३८) उनके विशिष्ट अतिशय संपन्न तेरह सौ अवधिज्ञानियों की उत्कृष्ट संपदा थी।

(१३९) सम्पूर्ण श्रेष्ठ ज्ञान व दर्शन प्राप्त कर लेने वाले केवलज्ञानियों की संख्या उनके शिष्य समुदाय में सात सौ थी।

(१४०) श्रमण भगवान महावीर के निकट वैक्रिय लब्धिधारक देव तो नहीं थे, किन्तु देवों जैसी समृद्धि प्राप्त सात सौ वैक्रिय लब्धिधारक श्रमणों की उत्कृष्ट संपदा थी।

(१४१) अढाई द्वीप और दो समुद्रों में रहने वाले छह पर्याप्तियों से युक्त संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों के मनोगत भावों को जानने वाले विपुलमति संपन्न मनःपर्यव ज्ञानियों की संख्या महावीर के शिष्य समुदाय में पाँच सौ थी।

(१४२) देवों, मनुष्यों और असुरों की परिषदा में शास्त्रार्थ करते हुए पराजित न हों ऐसे चार सौ वादी उनके शिष्य समुदाय में थे।

The Mass of Bhagavan Mahavir's Disciples

(133) During that period of time the maximum number of male ascetics among his disciples was fourteen thousand and their chief was Indrabhuti.

(134) The number of female ascetics among his disciples was thirty six thousand and their chief was Arya Chandana.

(135) The maximum number of Shravakas (male members of the laity) was one hundred and fifty nine thousand; prominent among them were Shankh, Shatak, etc.

(136) The number of Shravikas (female members of the laity) was three hundred and eighteen thousand, and prominent among them were Sulasa, Revati, etc.

(137) Among the disciples of Shraman Bhagavan Mahavir, there were three hundred all-knowing ascetics. They were also called Chaudah Purvadharas because they had complete knowledge of and complete command over the fourteen volumes of works that enveloped all the knowledge propagated by the Jina. Although they were not Jina, they were none the less capable of removing doubts and explaining truth just like Jina.

(138) There were thirteen hundred highly accomplished ascetics in his organisation who possessed Avadhi Jnana (complete knowledge of the material world).

(139) He had seven hundred ascetic disciples who acquired the supreme knowledge and perception and became omniscients.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(140) He had seven hundred ascetic disciples who possessed occult powers. Although they were not gods, like gods they had the capacity to attain any desired form.

(141) Among his disciples were five hundred ascetics who possessed Manah-paryava Jnana (para-psychological powers, extra sensory perception). They had the capacity to read thoughts of all the living beings having fully developed five senses and six parameters.

(142) He had four hundred disciples who were such accomplished logicians that they could come out with flying colours in any debate in any assembly of humans, gods and demons.

समणस्स णं भगवओ महावीरस्स सत्त अंतेवासि-सयाइं सिद्धाइं जाव सव्व-दुक्ख-पहीणाइं, चउद्दस अज्जियासयाइं सिद्धाइं ॥१४३॥

समणस्स णं भगवओ महावीरस्स अट्ठसया अणुत्तरोववाइयाणं गइकल्लाणाणं ठिइकल्लाणाणं आगमेसिभद्दाणं उक्कोसिया अणुत्तरोववाइयाणं संपया होत्था ॥१४४॥

(१४३) श्रमण भगवान महावीर के अन्तेवासी शिष्यों में से सात सौ साधु और चौदह सौ साध्वियाँ समस्त दुःख नष्ट कर सिद्ध हुए, निर्वाण को प्राप्त हुए।

(१४४) उनके शिष्य समुदाय में आठ सौ अनुत्तरोपपातिक श्रमण थे। ये शुद्धि के उस स्तर पर पहुँच चुके थे जहाँ प्रत्येक गति में कल्याण ही प्राप्त होता है, प्रत्येक स्थिति में कल्याण ही का अनुभव होता है। ये श्रमण अनुत्तरविमानों में जन्म ले भविष्य में मनुष्य गति में उत्पन्न होकर कल्याणमय निर्वाण प्राप्त करने वाले हैं।

(143) Out of all these disciples of Shraman Bhagavan Mahavir, seven hundred male and fourteen hundred female ascetics destroyed all miseries and attained liberation.

(144) Out of all these disciples, eight hundred were extremely pure ones. They had reached a level of purity where every action and state is beneficent. These disciples were to be reborn as gods in the highest dimension, and from there to be reborn as human beings and attain liberation.

समणस्स णं भगवओ महावीरस्स दुविहा अंतगडभूमि होत्था, तं जहा–जुगंतकडभूमी य परियायंतकडभूमी य, जाव तच्चाओ पुरिसजुगाओ जुगंतकडभूमी, चउवास-परियाए अंतमकासी ॥१४५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(१४५) श्रमण भगवान महावीर के केवलज्ञान के पश्चात् श्रमणों या अन्य भव्य आत्माओं के मोक्ष गमन का काल दो सीमाओं में बँधा है–युगान्तकृत् भूमि और पर्यायान्तकृत् भूमि। युग प्रधान शिष्य परम्परा में एक के बाद एक मोक्ष गमन का क्रम न टूटने तक का काल युगान्तकृत् भूमि है (महावीर-सुधर्मा-जम्बू)। तीर्थंकर के केवलज्ञान प्राप्ति के समय से जब प्रथम कोई जीव मोक्ष में जाये तब तक के समय का अन्तराल पर्यायान्तकृत् भूमि है (महावीर के केवलज्ञान के पश्चात् चार वर्ष)। अतः श्रमण भगवान महावीर के कैवल्य प्राप्ति के चार वर्ष पश्चात् मोक्ष गमन काल आरंभ हुआ जो उनके प्रपट्टधर जम्बू स्वामी के मोक्ष गमन तक चला।

(145) On the time scale, the period during which deserving souls attained liberation after Shraman Bhagavan Mahavir attained omniscience is bracketed between two specific periods known as Yugantakrit Bhumi and Paryayantakrit Bhumi. The Yugantakrit Bhumi is the period starting with the Nirvana of Mahavir and ending when the chain of the Nirvana-attaining heads of the organisation is broken, viz. Mahavir-Sudharma-Jambu. The Paryayantakrit Bhumi is the period starting with the Tirthankar attaining omniscience and ending when the first pure soul attains Nirvana (it was after four years of Mahavir's attaining omniscience that the first pure soul attained Nirvana). As such the period of liberation started after four years of Mahavir's attaining omniscience and ended at the moment Jambu attained Nirvana.

आयु तथा समय

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे तीसं वासाइं अगारवास-मज्झे वसित्ता, साइरेगाइं दुवालस-वासाइं छउमत्थ-परियाणं पाउणित्ता, देसूणाइं तीसं वासाइं केवलि-परियागं पाउणित्ता, वायालीसं वासाइं सामन्नपरियायं पाउणित्ता, बावत्तरिं वासाइं सव्वाउयं पालइत्ता, खीणे वेयणिज्जाउय-नाम-गोत्ते इमीसे ओसप्पिणीए दुसम-सुसमाए समाए बहु-विइक्कंताए तिहिं वासेहिं अद्धनवमेहिं मासेहिं सेसेहिं पावाए मज्झिमाए हत्थिवालगस्स रन्नो रज्जुगसभाए, एगे अबीए छट्ठेणं भत्तेणं अपाणएणं साइणा नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं पच्चूस-काल-समयंसि संपलियंक-निसन्ने पणपन्नं अज्झयणाइं कल्लाण-फल-विवागाइं, पणपन्नं अज्झयणाइं पावफल-विवागाइं, छत्तीसं च अपुट्ठवागरणाइं वागरित्ता पहाणं नाम अज्झयणं विभावेमाणे विभावेमाणे कालगए,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विइक्कंते समुज्जाए छिन्न-जाइ-जरा-मरण-बंधणे, सिद्धे, बुद्धे, मुत्ते, अंतगडे, परिनिव्वुडे, सव्व-दुक्ख-प्पहीणे॥१४६॥

(१४६) उस काल के उस भाग में श्रमण भगवान महावीर जन्म के बाद तीस वर्ष तक गृहस्थ अवस्था में रहे। बारह वर्ष से कुछ अधिक समय तक छद्मस्थ अथवा सामान्य श्रमण अवस्था में रहे, और तीस वर्ष से कुछ कम समय तक केवलज्ञानी श्रमण अवस्था में रहे। गृहस्थावस्था के तीस और श्रमणावस्था के बयालीस मिलाकर उनकी पूर्ण आयु बहत्तर वर्ष की थी। यह आयु पूर्ण होने पर उनके सभी वेदनीय, आयुष्य, नाम और गोत्र कर्मों का क्षय हो गया। उस समय वर्तमान अवसर्पिणी का दुषम-सुषम नामक चौथा आरा बीत जाने में तीन वर्ष साढ़े आठ महीने बाकी थे। भगवान मध्यम पावा नगरी में हस्तिपाल राजा के लेखन-मण्डप रज्जुक सभा में निर्जल छट्ठभक्त-तप का पालन कर रहे थे। वे पद्मासन में बैठे थे और कल्याण फल विपाक के पचपन अध्ययन, पाप फल विपाक के पचपन अध्ययन तथा अपृष्ट व्याकरण (प्रश्न किये बिना समाधान) के छत्तीस अध्ययन पूर्ण करने के बाद प्रधान नामक अध्ययन का प्रतिपादन कर रहे थे। तभी चार घड़ी रात्रि शेष रहने (उषाकाल से पूर्व) पर स्वाति नक्षत्र का योग आने पर वे काल धर्म को प्राप्त हुए। पुनर्जन्म की शृंखला और जन्म-जरा-मरण के बंधनों को तोड़ वे सिद्ध-बुद्ध-मुक्त-अन्तकृत् हो गए। समस्त दुःखों से मुक्त होकर परिनिर्वाण को प्राप्त हुए।

Age and Era

(146) During that period in that age, after his birth, Shraman Bhagavan Mahavir spent thirty years as a householder, twelve years in the illusory state (or as a common ascetic), and a little less than thirty years as an omniscient ascetic. Adding all these up, his total age comes to be seventy two years. At the end of this age all his Karmas responsible for pain, life span, social position and physical constitution were destroyed. At that moment the end of the fourth phase of the current six phase cycle of time, Dusham-Susham, was three years and eight and a half months away. Bhagavan was observing the Chhatthabhakta penance (two day fast) in the writing-hall of king Hastipal in the town of Madhyam Pava. He was sitting in the lotus posture and preaching the chapter titled Pradhan after completing fifty five chapters of Kalyan Phala Vipak, fifty five chapters of Papa Phala Vipak, and thirty six chapters of Aprishta Vyakaran. Just then, during tne last quarter of the night when the moon entered the fifteenth lunar mansion, the Swati, he left his earthly body. Terminating the chain of

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

reincarnations and breaking the bonds of birth, decay and death he attained the state of ultimate perfection, enlightenment, liberation and absolute purity of soul. Getting free of all miseries he attained Nirvana.

समणस्स णं भगवओ महावीरस्स जाव सव्व-दुक्ख-पहीणस्स नव-वास-सयाइं विइक्कंताइं दसमस्स य वास-सयस्स अयं असीइमे संवच्छरे काले गच्छइ। वायणंतरे पुण अयं तेणउए संवच्छर-काले गच्छइ, इति दीसइ॥१४७॥

(१४७) जब श्रुत-परम्परा के बाद ये शास्त्र लिपिबद्ध हुए उस समय श्रमण भगवान महावीर का निर्वाण हुए नौ सौ वर्ष बीत चुके थे। सहस्राब्दि या दसवीं शताब्दि का अस्सीवाँ वर्ष चल रहा था अर्थात् उनके निर्वाण के बाद नौ सौ अस्सीवाँ वर्ष चल रहा था। (ऐसा लगता है कि इस समय के संबंध में मतांतर है। अन्य वाचना के अनुसार नौ सौ तिरानवेवाँ वर्ष चल रहा था।)

(147) Nine hundred years had passed since the Nirvana of Shraman Bhagavan Mahavir when the canonical literature was compiled in writing, after the long tradition of memorising them. It was the eightieth year of the following tenth century, which means that it was the 980th year after his Nirvana. (It appears that there is a difference of opinion about this period. Another school believes that it was the 993rd year.)

■■

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुरुषादानीय अर्हत् पार्श्वनाथ

तेणं कालेणं तेणं समएणं पासे अरहा पुरिसादाणीए पंच विसाहे होत्था;

तं जहा–विसाहाहिं चुए, चइत्ता गब्भं वक्कंते १, विसाहाहिं जाए २, विसाहाहिं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइए ३, विसाहाहिं अणंते अणुत्तरे निव्वाघाए निरावरणे कसिणे पडिपुण्णे केवल-वर-नाण-दंसणे समुप्पन्ने ४, विसाहाहि परिनिव्वुए ५॥१४८॥

(१४८) काल के उस भाग में पुरुषादानीय (सर्वोत्कृष्ट, अनुकरणीय) अर्हत् पार्श्वनाथ के पाँच कल्याणक विशाखा नक्षत्र में हुए। वे सब इस प्रकार हैं–(१) देवलोक से प्रयाण कर गर्भ में आए, (२) जन्म हुआ, (३) गृहत्याग, मुंडन कर अणगार बने, (४) अनुत्तरादि केवलज्ञान दर्शन प्रकट हुए, और (५) निर्वाण हुआ।

PURUSHADANIYA ARHAT PARSHVANATH

(148) During that period in that age the five auspicious events in the life of Purushadaniya (supreme, exemplary) Arhat Parshvanath occurred when the moon was in the sixteenth (Vishakha) lunar mansion. These are—1. descent from the dimension of gods, 2. birth, 3. renunciation, 4. omniscience, and 5. nirvana.

तेणं कालेणं तेणं समएणं पासे अरहा पुरिसादाणीए जे से गिम्हाणं पढमे मासे, पढमे पक्खे, चित्तबहुले, तस्स णं चित्त-बहुलस्स चउत्थी-पक्खेणं पाणयाओ कप्पाओ वीसं सागरोवम-ट्ठिइयाओ अणंतरं चयं, चइत्ता, इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे वाणारसीए नयरीए आससेणस्स रण्णो वामाए देवीए पुव्वरत्तावरत्त-काल-समयंसि विसाहाहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं आहार-वक्कंतीए भव-वक्कंतीए, सरीर-वक्कंतीए, कुच्छिंसि गब्भत्ताए वक्कंते॥१४९॥

(१४९) काल के उस भाग में गर्मी का पहला महीना और पहला पक्ष चल रहा था। चैत्र कृष्ण चतुर्थी के दिन बीस सागरोपम की आयु पूरी हो जाने पर, भावी अर्हत् पार्श्व के जीव ने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्राणत देवलोक से प्रयाण किया। वह मानवीय आहार, भव और शरीर प्राप्त कर जम्बूद्वीप के भारतवर्ष क्षेत्र की वाराणसी नगरी में मध्य रात्रि के समय विशाखा नक्षत्र का योग आने पर अश्वसेन राजा की रानी वामादेवी की कोख में अवतरित हुआ।

(149) During that time in that age, it was the first month and the first fortnight of the summer season. On the fourth day of the dark fortnight of the month of Chaitra, the soul that was to be Arhat Parshva descended from the Pranat Devlok (a specific dimension of gods). Transforming the state, constitution, and factors of sustenance from the divine to human realm, Lord Parshva was conceived by queen Vamadevi of king Ashvasen of Varanasi around midnight when the moon entered the sixteenth lunar mansion, the Vishakha.

विस्तार :

भगवान महावीर के समान ही भगवान पार्श्वनाथ का जीवनवृत्त भी कल्पसूत्र में संक्षेप में ही दिया है। अन्य ग्रन्थों में उनके पूर्व भवों का वर्णन विस्तार से मिलता है। पार्श्वनाथ की आत्मा के विकासक्रम का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है :

प्रथम भव : मरुभूति

पार्श्वनाथ के जीव ने आत्म-शुद्धि की दिशा प्राप्त की थी मरुभूति के रूप में। भरत-क्षेत्र के पोतनपुर नगर में विश्वभूति पुरोहित के घर जन्म लिया मरुभूति ने। उनके बड़े भाई का नाम कमठ था। ज्येष्ठ पुत्र होने के नाते पिता की मृत्यु के बाद कमठ ही राज-पुरोहित पद का अधिकारी था, परन्तु उसके क्रूर, अभिमानी और व्यभिचारी होने के कारण मरुभूति को राज-पुरोहित का पद मिला। लम्पट कमठ मरुभूति की स्त्री वसुन्धरा पर आसक्त हो गया और उसे वासना जाल में फँसा लिया। कमठ की पत्नी को ज्ञात होने पर उसने पहले कमठ को समझाने की चेष्टा की और जब वह नहीं माना तो मरुभूति को सब कुछ बता दिया। मरुभूति ने चतुराई से इस बात की सत्यता का पता लगाया और राजा को सूचना दी। उसने कमठ को निर्वासित कर दिया। कमठ तापस बन गया और तप करने लगा। कुछ समय बाद मरुभूति उससे अपने द्वारा दिये गये कष्ट के लिये क्षमा माँगने गया। मरुभूति निश्छल हृदय से कमठ को नमन करने झुका तो कमठ ने उसके सिर पर एक भारी पत्थर से प्रहार किया और उसका प्राणान्त हो गया। (चित्र P-1/1)

द्वितीय भव : यूथपतिहस्ती

मरुभूति के जीव ने विंध्याचल के जंगलों में हाथी के रूप में जन्म लिया और अपने यूथ का स्वामी बना। उधर पोतनपुर नरेश संसार से विरक्त हो श्रमण बन गये और एक दिन विंध्याचल के जंगल में ध्यानमग्न हुए। यूथपति मुनिवर के निकट आया तो उसे जाति-स्मरण ज्ञान उत्पन्न हो गया। पूर्व जन्म के संस्कारों वश वह मुनि का भक्त बन गया। एक बार जब वन में आग लग गई तो वह गजराज प्राण बचाने के लिए एक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सरोवर में जा खड़ा हुआ। कमठ का जीव कुर्कुट जाति का साँप बन गया था। उसने सरोवर के बीच खड़े गजराज को देखा तो पूर्व-जन्म का वैर उसके मन में जाग उठा। उसने गजराज के मस्तक पर डंक मारकर सारा विष उसके शरीर में उँडेल दिया। गजराज ने समतापूर्वक विष की पीड़ा को सहन किया और शान्ति से शरीर छोड़ दिया। (चित्र P-1/2)

तृतीय भव : अष्टम देवलोक

मरुभूति के जीव ने तीसरे भव में आठवें सहस्रार नामक देवलोक में जन्म लिया।

चतुर्थ भव : राजकुमार किरणवेग

देवलोक से च्यव कर मरुभूति के जीव ने अपने चौथे भव में महाविदेह क्षेत्र के विद्याधर राजा के पुत्र किरणवेग के रूप में जन्म लिया। युवावस्था में क्रीड़ा करते समय सन्ध्या की लालिमा देख उसे सहसा वैराग्य उत्पन्न हो गया। मुनि अवस्था में वह पुष्करवर द्वीप के हिमशैल पर्वत पर ध्यानारूढ़ था उस समय कमठ का जीव नरक भोगकर पुनः एक बार सर्प बना और उसे डस गया। मुनि ने समतापूर्वक पीड़ा सहते हुए प्राण त्याग किया।

पंचम भव : अच्युतकल्प देवलोक

अपने पाँचवें भव में मरुभूति का जीव अच्युतकल्प में देवता के रूप में जन्मा।

षष्ठम भव : वज्रनाभ मुनि

मरुभूति का जीव छठे भव में पश्चिम महाविदेह क्षेत्र की शुभंकरा नगरी के राज वज्रवीर्य के पुत्र के रूप में जन्मा। उसका नाम वज्रनाभ था। क्षेमंकर तीर्थंकर का प्रवचन सुन वे श्रमण बन गये। एकदा जब वे ध्यानमग्न खड़े थे तो कमठ के जीव ने, जो इस जन्म में भील के रूप में जन्मा था, उन्हें वाण से बींध दिया। वज्रनाभ मुनि ने शुक्ल ध्यानपूर्वक देह त्याग दी।

सप्तम भव : मध्यम ग्रैवेयक देवलोक

अपने सातवें भव में मरुभूति का जीव मध्यम ग्रैवेयक देवलोक में देवरूप में जन्मा। कमठ का जीव सातवें नरक में गया।

अष्टम भव : सुवर्णबाहु चक्रवर्ती

आठवें भव में मरुभूति का जीव पूर्व महाविदेह के पुराणपुर नगर के राजा कुशलबाहु के घर में जन्मा। उसका नाम सुवर्णबाहु था और वह छह खण्डों को जीत चक्रवर्ती बना। समस्त ऐश्वर्य भोगने के पश्चात् उसे वैराग्य उत्पन्न हो गया और श्रमण बन उसने उग्र तपस्या की। इसी तपस्या काल में बीस स्थानक सेवन के फलस्वरूप उसने तीर्थंकर नाम-कर्म गोत्र-कर्म का बंधन किया। एक बार जब वह कायोत्सर्ग मुद्रा में ध्यानरत थे तब सिंह के रूप में जन्मे कमठ के जीव ने उन पर घातक आक्रमण किया। मुनि ने सारी पीड़ा सहन कर अत्यन्त विशुद्ध परिणामों के साथ आयुष्य पूर्ण की।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

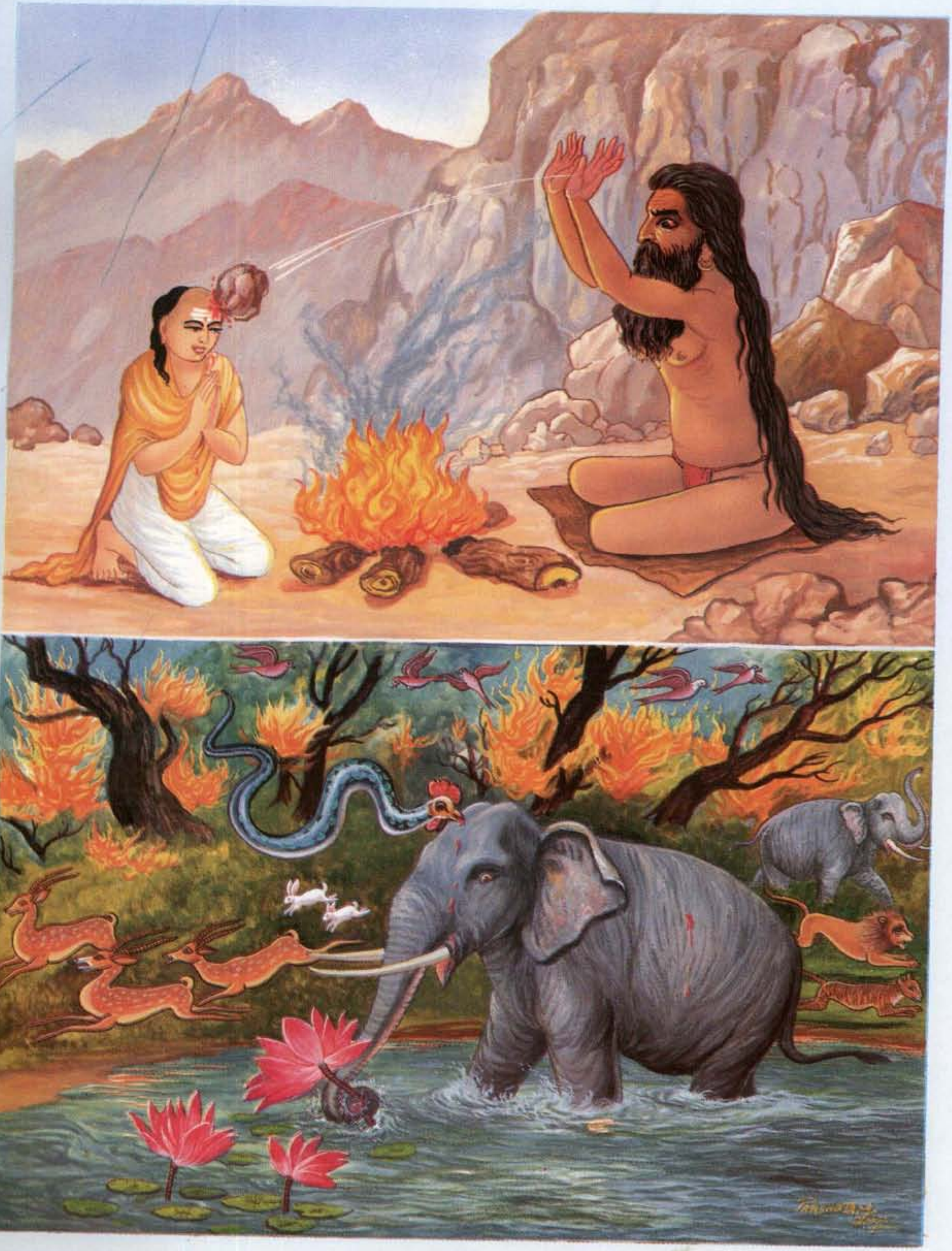

P 1 (१) क्षमा मांगते मरुभूति पर कमठ द्वारा पत्थर मारना (२) कुर्कुट सर्प द्वारा यूथपति हस्ती के मस्तक पर दंश।
(1) Kamath hitting bowing Marubhuti with stone (2) Kurkut serpant biting the king elephant on its head

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

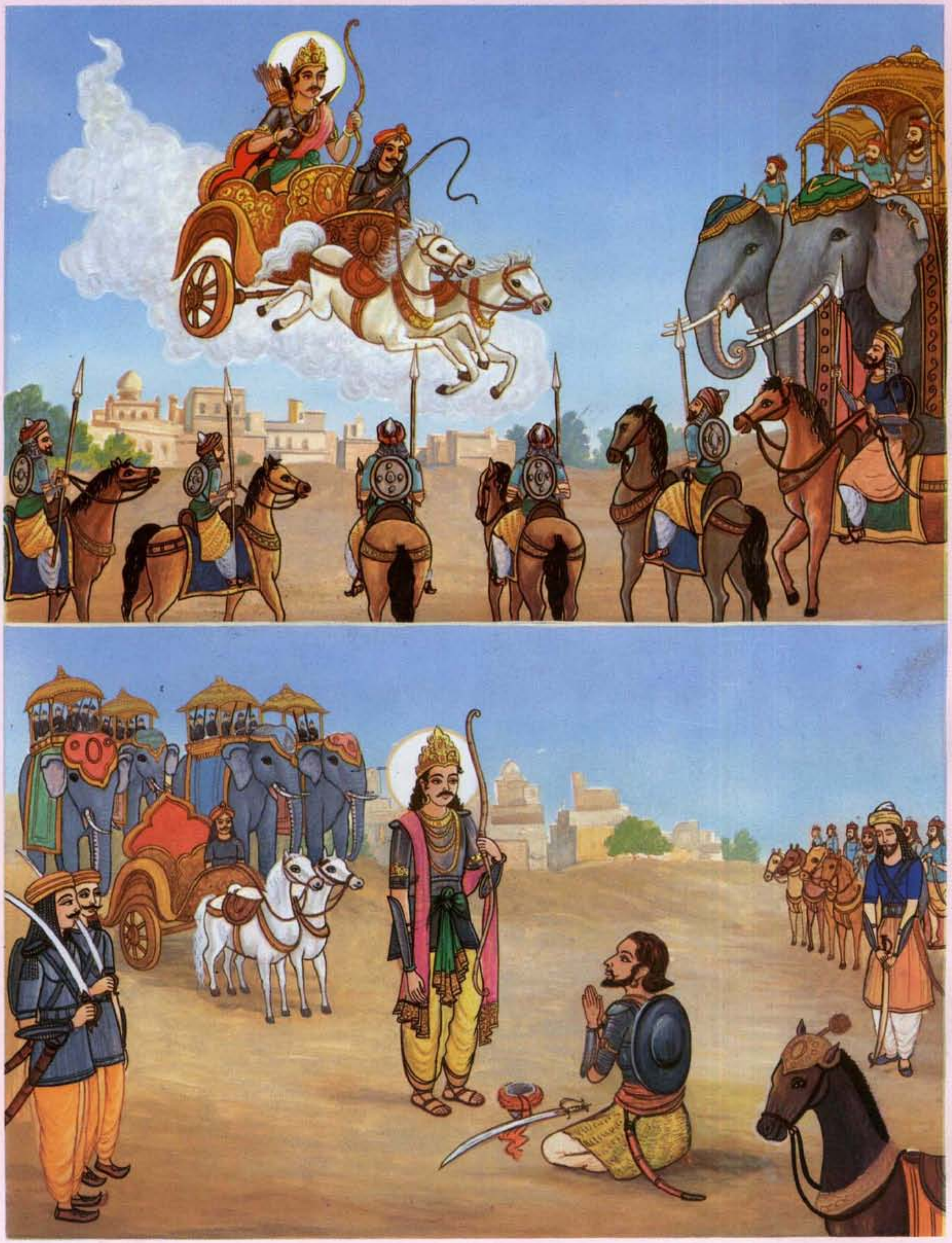

P 2 पार्श्वकुमार द्वारा यवनराज विजय।
Victory over Yavan by Parshwa kumar

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नवम भव : दसवाँ देवलोक

अपने नवें भव में मरुभूति का जीव प्राणत देवलोक में देवरूप में जन्मा। कमठ का जीव नरक में गया।

दशम भव : तीर्थंकर पार्श्वनाथ

प्राणत देवलोक से च्यवन कर मरुभूति का जीव वाराणसी नगरी के अश्वसेन राजा की रानी वामादेवी की कोख में अवतरित हुआ।

Elaboration :

Like Bhagavan Mahavir, the story of the life of Bhagavan Parshvanath has also been mentioned in brief in the Kalpasutra. Other works mention it in greater detail. The sequence of the ascent of the soul that was to be Arhat Parshva, in brief, is as follows :

First Birth : Marubhuti

The soul that was to be Arhat Parshvanath was inspired to take the direction of purity in its birth as Marubhuti. He was born to the wife of Purohit Vishvabhuti living in Potanpur city in Bharat-kshetra. His elder brother was Kamath. As Kamath was cruel, conceited, and a debauch, in spite of being the elder son it was Marubhuti who succeeded his father on the post of Rajpurohit (the director of ritual ceremonies of the king and the state). Attracted towards the beautiful wife of Marubhuti, Vasundhara, Kamath seduced her. When Kamath's wife came to know about the affair, she tried to dissuade him in vain and told Marubhuti about it. Marubhuti made a secret enquiry and conveyed everything in detail to the king. The king exiled Kamath who then became a mendicant and started doing rigorous penances. When Tapas Kamath became famous, Marubhuti went to him to seek pardon for whatever distress he had caused. When marubhuti went near Kamath and bowed before him, Kamath hit him with a heavy stone. Marubhuti died on the spot. (Illustration P-1/1)

Second Birth : The King-elephant

The soul of Marubhuti was reborn as an elephant in the forests of Vindhyachal and became king of the herd. The king of Potanpur became detached and turned to an ascetic. One day when the ascetic was standing in meditation in the Vindhyachal area, the king-elephant came near him. The memory of his past life precipitated and he became a disciple of the ascetic. One day to save itself from a forest fire the elephant entered and stood in the middle of a pond. The being that was Kamath had taken birth as a serpant of the Kurkut species. When the serpant saw the elephant in the middle of the pond it recognized the elephant as its enemy from the last birth. Piercing the skin on the head of the elephant with its fangs, the serpant injected all its venom. The elephant equanimously tolerated the agony and died peacefully. (Illustration P-1/2)

Third Birth : Eighth Dimension of Gods

The being that was Marubhuti was then born as a god in the eighth dimension of gods, known as Sahasrar Devlok, in its third birth.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Fourth Birth : Prince Kiranveg

In its fourth birth the being that was Marubhuti, descending from the dimension of gods, was born as prince Kiranveg, the son of king Vidyadhar in the area of Mahavideh. Admiring the crimson horizon one evening during his youthful activities, he suddenly had a feeling of detachment from mundane things. He became an ascetic and went to Himshail mountain in Pushkarvar island for meditation. The being that was Kamath once again took birth as a snake after suffering a life time in hell. It bit the meditating ascetic who tolerated the agony equanimously before breathing his last.

Fifth Birth : Achyutkalpa Devlok

In his fifth birth the being that was Marubhuti took birth as a god in the Achyutkalpa dimension of gods.

Sixth Birth : Vajranabh

In its sixth birth the being that was Marubhuti took birth as the son of king Vajravirya of Shubhankara city in Mahavideh area. His name was Vajranabh. After listening to the discourse of Tirthankar Kshemankar he became a Shraman. One day while he was standing in meditation, the being that was Kamath, who was born as an aborigine in the Bhil clan, shot him with an arrow. Ascetic Vajranabh rose into the state of purest meditation before his death.

Seventh Birth : Madhyam Graiveyak Devlok

The being that was Marubhuti was born as a god in the Madhyam Graiveyak dimension of gods and the being that was Kamath went to the seventh hell.

Eighth Birth : Suvarnabahu Chakravarti

In its eighth birth the being that was Marubhuti took birth as the son of king Kushalbahu of Puranapur town in East Mahavideh. His name was Suvarnabahu, and conquering the six continents, he became a Chakravarti. After enjoying all the grandeur of the state he got detached. He became a Shraman and did harsh penance. During this period of spiritual practices he earned the Tirthankar Nama-karma gotra-karma as a result of the twenty link chain of practices known as Bis Sthanak. Once when he was standing in meditation the being that was Kamath, born as a lion in this birth, fatally mauled him. The ascetic tolerated all the pain equanimously and maintained a pure attitude till his death.

Ninth Birth : Tenth Dimension of Gods

The being that was Marubhuti in its ninth birth was born as a god in the tenth dimension of gods. The being that was Kamath went to hell.

Tenth Birth : Tirthankar Parshvanath

Descending from the Pranat dimension of the gods, the being that was Marubhuti came into the womb of queen Vamadevi of king Ashvasen of Varanasi.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पासे णं अरहा पुरिसादाणीए तिण्णाणोवगए यावि होत्था–चइस्सामि त्ति जाणइ, चयमाणे न जाणइ, चुएमि त्ति जाणइ। तेणं चेव अभिलावेणं सुविण-दंसण-विहाणेणं सव्वं जाव नियगं गिहं अणुप्पविट्ठा जाव सुहं सुहेणं तं गब्भं परिवहइ॥१५०॥

(१५०) पुरुषादानीय अर्हत् पार्श्व तीन ज्ञान (मति, श्रुत, अवधि) संपन्न थे। इस घटना से लेकर माता के गर्भ को सुखपूर्वक धारण-पालन करने की घटना तक का सारा वर्णन श्रमण भगवान महावीर से संबंधित प्रकरण के समान ही है। (गाथा ३३ से ९२)

(150) Purushadaniya Arhat Parshvanath was endowed with three levels of knowledge—sensory perception, literal or scriptural knowledge, and extra sensory perception (of physical dimension). All other details from this moment to the moment before birth are the same as those mentioned in context with Shraman Bhagavan Mahavir (para 33 to 92 except for specific incidents like Mahavir's stillness in the womb.)

तेणं कालेणं तेणं समएणं पासे अरहा पुरिसादाणीए जे से हेमंताणं दोच्चे मासे, तच्चे पक्खे, पोस-बहुलस्स दसमी पक्खेणं नवण्हं मासाणं बहु-पडिपुण्णाणं अद्धट्ठमाणं राइंदियाणं विइक्कंताणं पुव्वरत्तावरत्त-काल-समयंसि विसाहाहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं आरोग्गा आरोग्गं दारयं पयाया।

जं रयणिं च णं पासे अरहा पुरीसादाणीए जाए, तं रयणिं च णं बहूहिं देवेहिं देवीहिं य जाव उप्पिंजलगमाणभूया कहकहगभूया यावि होत्था, सेसं तहेव, नवरं जम्मणं सव्वं पासाभिलावेण भाणियव्वं, जाव तं होउ णं कुमारे पासे नामेणं॥१५१॥

(१५१) उस काल के उस भाग में जब सर्दी का दूसरा महीना और तीसरा पक्ष चल रहा था; पौष कृष्ण दशमी के दिन गर्भ धारण को नौ महीने और साढ़े सात अहोरात्र बीत चुके थे। तब मध्यरात्रि के समय विशाखा नक्षत्र का योग आने पर स्वस्थ माता ने सुखपूर्वक पुत्र-रत्न को जन्म दिया। जिस रात पुरुषादानीय पार्श्वनाथ का जन्म हुआ उस घटना से नामकरण हो जाने की घटना तक का सारा वर्णन श्रमण भगवान महावीर से संबंधित प्रकरण के समान ही है। (गाथा ९४ से १०३)

(151) At that time during that period it was the second month and the third fortnight of the winter season. Nine months and seven and a half days had passed since conception. On the tenth day of the dark half of the month of Paush, at midnight when the moon entered its sixteenth lunar mansion,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

the healthy mother gave birth to a son normally. From this moment till the naming ceremony, all details are similar to those mentioned in paras relating to Shraman Bhagavan Mahavir, save the name. (para 94 to 103)

विस्तार :

अन्य ग्रन्थों में उपलब्ध भगवान पार्श्वनाथ के जीवन चरित्र में से उनकी युवावस्था की दो घटनाएँ विशेष उल्लेखनीय हैं :

(१) यवनराज विजय–पार्श्वकुमार अपूर्व सौन्दर्य और मेधा के धनी थे तथा उनकी प्रसिद्धि दूर-दूर तक फैल गई थी। कुशस्थलपुर के राजा प्रसेनजित् की पुत्री प्रभावती ने मन ही मन पार्श्वकुमार का वरण कर लिया। इससे पहले कि विवाह का प्रस्ताव वाराणसी जाता, कलिंग नरेश यवनराज जो प्रभावती पर आसक्त था, ने कुशस्थलपुर को घेर लिया और संदेश भेजा कि या तो प्रभावती को दे दिया जाये अन्यथा युद्ध में पराजय का मुँह देखना पड़ेगा। प्रसेनजित् यवनराज की शक्ति से परिचित था। उसने सहायता के लिए वाराणसी दूत भेजा। महाराज अश्वसेन यवनराज के दुराग्रह पर क्रुद्ध हुए और अपनी सेना को प्रयाण का आदेश दिया। पार्श्वकुमार ने अपने पिता से प्रार्थना की कि इस युद्ध का संचालन उन्हें करने दिया जाय। अश्वसेन पार्श्वकुमार की अपार शक्ति और रण-चातुर्य से परिचित थे अतः निस्संकोच सहमति दे दी।

युद्ध के लिए तत्पर पार्श्वकुमार प्रयाण करते, इससे पूर्व ही देवेन्द्र ने अपना दिव्य-रथ उनके पास भेजा जो गगनगामी था। पार्श्वकुमार ने प्रयाण से पूर्व एक दूत यवनराज के पास भेजा और संदेश कहलवाया कि प्रसेनजित् अब अश्वसेन के शरणागत हैं, अतः कुशस्थलपुर का घेरा हटा लिया जाय अन्यथा उन्हें वाराणसी की विशाल सेना और पार्श्वकुमार की दिव्य शक्तियों का सामना करना पड़ेगा। यवनराज व उनके युवा दरबारी उत्तेजित हो गये किन्तु उनके वृद्ध मंत्री ने समझाया कि पार्श्वकुमार की सेवा में स्वयं इन्द्रदेव रहते हैं। उनके पास दिव्य शक्तियाँ ही नहीं, इन्द्रदेव का आकाशगामी रथ भी है। उनसे युद्ध करना पराजय का वरण करने के समान है। यवनराज वृद्ध मंत्री की बात से प्रभावित हुए और पार्श्वकुमार के सामने समर्पण कर दिया। (चित्र P-2)

राजा प्रसेनजित् ने पार्श्वकुमार से प्रभावती के विवाह का प्रस्ताव किया किन्तु वे असमर्थता प्रकट कर लौट आये। राजा अश्वसेन ने बाद में बहुत आग्रह कर उनका विवाह प्रभावती से कर दिया।

(२) नाग का उद्धार–एक दिन पार्श्वकुमार अपने महल के झरोखे से नगर निरीक्षण कर रहे थे। झुंड के झुंड नर-नारी पूजा सामग्री लिए एक ओर जाते देख उन्होंने कौतूहलवश सेवकों से पूछा कि उस दिन कोई महोत्सव तो नहीं है ? सेवकों ने उन्हें बताया कि नगर के बाहर कमठ नामक कोई तापस पंचाग्नि तप कर रहा है। उस उग्र तपस्वी के दर्शन हेतु भेंट सामग्री सहित नगरवासी जा रहे हैं। पार्श्वकुमार भी उत्सुकतावश सेवकों सहित तापस को देखने चले। पार्श्वकुमार जन्म से ही तीन ज्ञान के धारक थे। उन्होंने तापस के विषय में तत्काल संपूर्ण जानकारी प्राप्त कर ली। तापस वही कमठ था जिसका उनसे अनेक भवों से वैर संबंध चला आ रहा था। वह नरक की आयुष्य पूरी कर एक दीन-हीन कुल में जन्मा था। भूख और अभाव से पीड़ित हो तापस बन गया था और अज्ञानवश उग्र तप कर लोगों को प्रभावित कर रहा था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

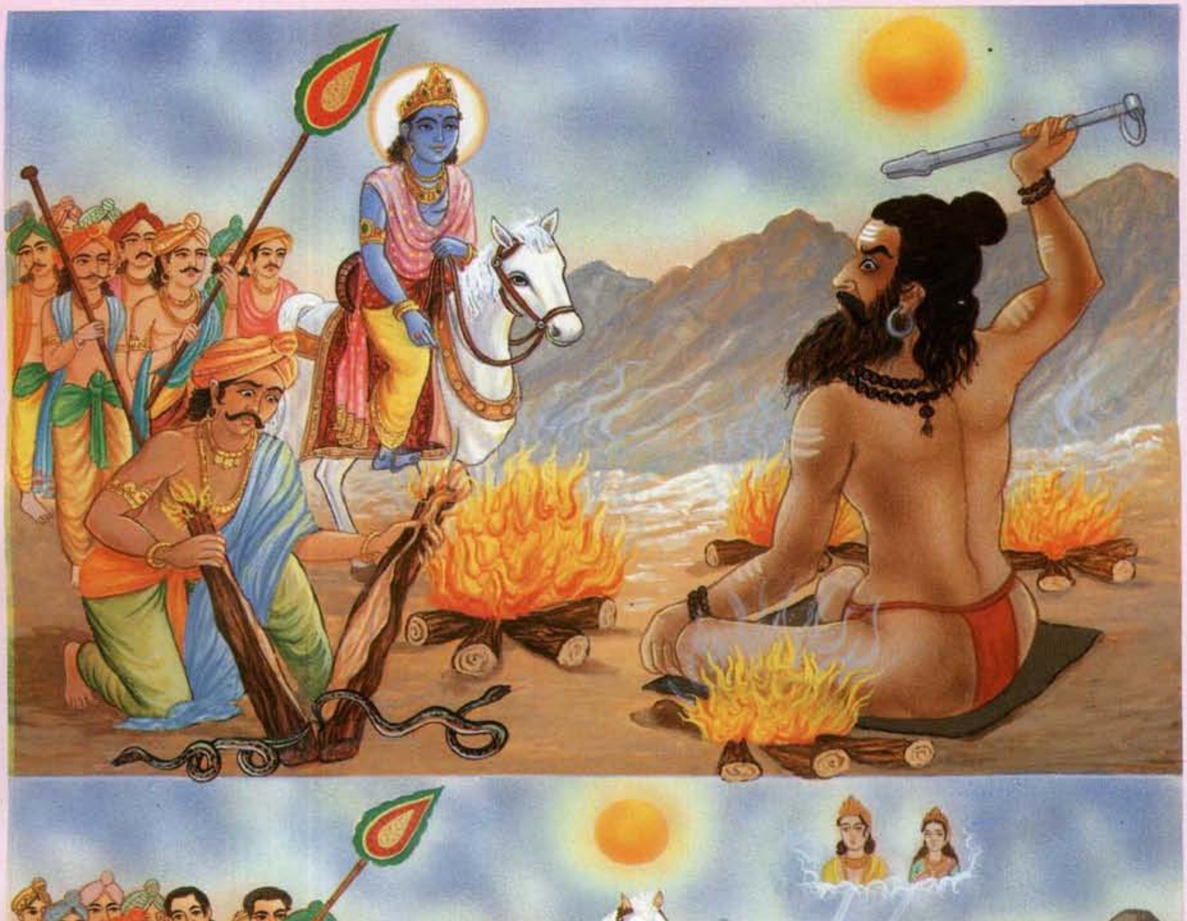

P 3 कमठ के अग्नि कुण्ड से सर्प युगल की रक्षा और उनका धरणेन्द्र-पद्मावती वनना।
Saving the pair of serpants from the fire of kamath and their reincarnation as Dharnendra—Padmavati

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

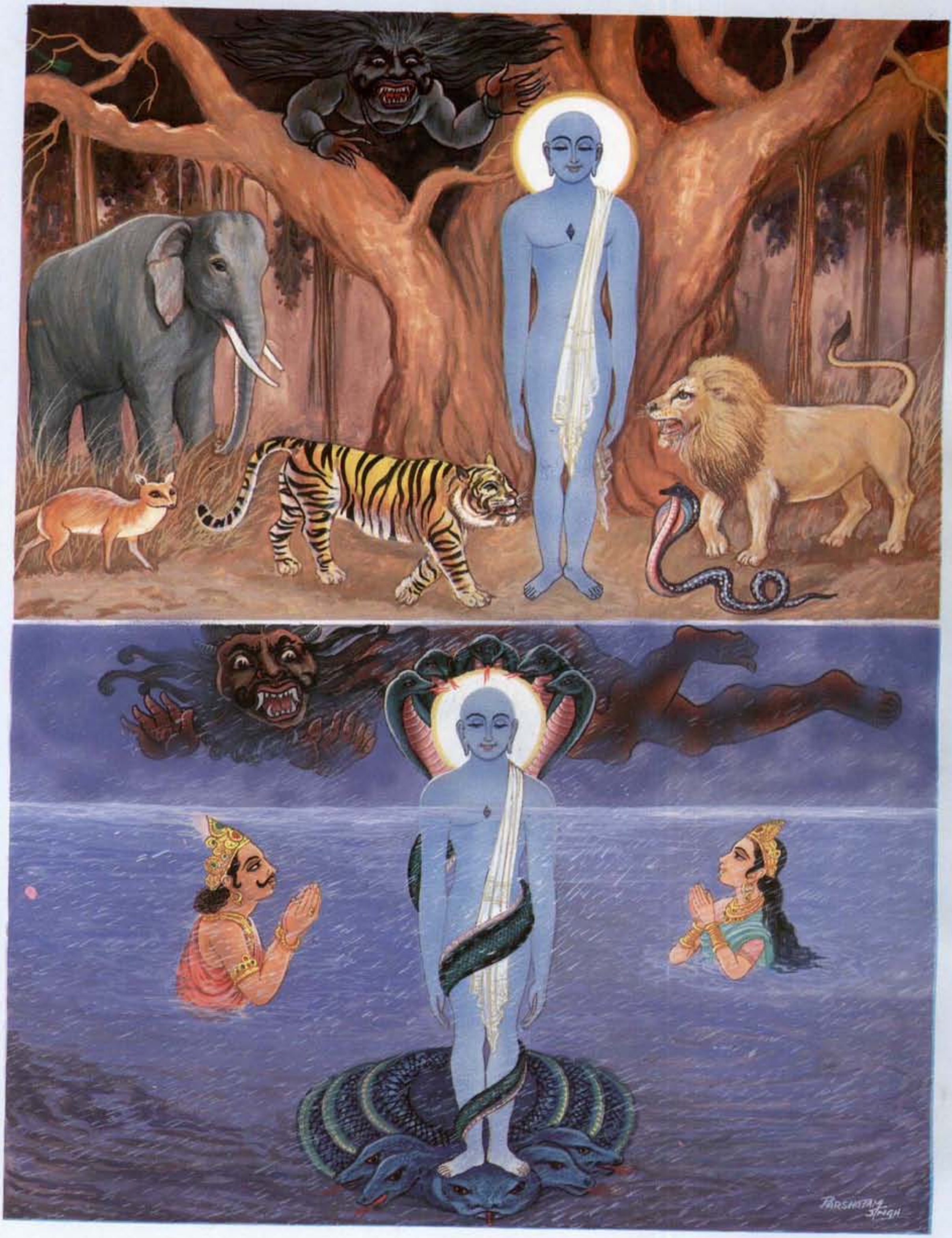

P 4 मेघमाली (कमठासुर) द्वारा उपसर्ग और धरणेन्द्र-पद्मावती का प्रकट होना।
The afflictions by Meghmali and appearance of Dharnendra-Padmavati

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तापस के निकट पहुँचकर पार्श्वकुमार ने देखा कि उसके चारों ओर लकड़ी के बड़े-बड़े लट्ठे जल रहे थे। उनमें से एक के भीतर एक सर्प भी अग्नि के तीव्र ताप से तड़प रहा था और आग में जलने को ही था। करुणा से द्रवित पार्श्वकुमार ने तापस से कहा, "पंचेन्द्रिय जीवों को आग में होम कर आप कैसे आत्म-कल्याण की अपेक्षा कर रहे हैं?" तापस ने उत्तेजित हो उत्तर दिया, "कुमार! अभी तुम बालक हो। अपनी राजसी क्रीड़ाएँ करो। धर्म के विषय में तुम नहीं, हम तापस ही समझते हैं। तुम क्या जानो कि मेरी पंचाग्नि में कोई जीव जल रहा है?" पार्श्वकुमार के बहुत समझाने पर कि उस लक्कड़ में सर्प जल रहा है, तापस नहीं माना। तब उन्होंने अपने सेवक द्वारा लक्कड़ को अलग कर उसे चिरवाया। अधजला सर्प ताप पीड़ा से तिलमिलाता धरती पर आ पड़ा। उसका अन्त समय निकट जान पार्श्वकुमार ने उन्हें अज्ञानी तापस पर क्रोध न करने और समतापूर्वक देह त्याग का उपदेश दिया और नवकार मंत्र सुनाया। नवकार मंत्र● सुनते हुए समाधिमरण के फलस्वरूप उस सर्प ने नागकुमार जाति के देवों के इन्द्र के रूप में जन्म लिया।

तापस क्रोधावेश में बदले की भावना पालने लगा और मृत्यु के बाद मेघमाली देव बना। (चित्र P-3)

Elaboration :

Out of various incidents about Arhat Parshva's life in other works, two incidents of his youth are worth mentioning :

(1) *Defeat of Yavan*—Prince Parshva was extraordinarily handsome and talented and he became widely famous. Princes Prabhavati, daughter of king Prasenjit of Kushasthalpur, determined to become his wife. Before a proposal for marriage could be sent to Varanasi, Yavan, the king of Kalinga, who was infatuated with the beauty of Prabhavati, surrounded Kushasthalpur. He sent a message to the king to send Prabhavati or face defeat in the battle. Prasenjit was aware of the power of Yavan. He sent a massanger to Varanasi for help. King Ashvasen got irritated at the misconduct of Yavan and ordered his army to march. Prince Parshva requested his father to let him command the army in this battle. Ashvasen was well aware of the prowess and ability of Parshva. He accepted Parshva's proposal without any hesitation.

Before the prince started for the battlefield the king of gods sent a divine and air worthy chariot for Parshva. Prior to giving the armies the command to march, Parshva sent a massage to Yavan that now Prasenjit was under the protection of king Ashvasen, and as such he should discontinue the siege of Kushasthalpur or face the great army of Varanasi and divine powers of Parshva. Although the youthful Yavan and some of his young ministers were provoked, a senior minister informed him that the king of gods himself sided Parshva. He not only had divine powers but also the flying chariot of Indra. To fight him was to embrace defeat. Yavan accepted the advice of the senior minister and surrendered to prince Parshva without a fight. (Illustration P-2)

King Prasenjit offered the hand of Prabhavati to Parshva who excused himself and returned. Later on, king Ashvasen persuaded him and got him married to Prabhavati.

● त्रिषष्टिशलाका पुरुष चरित्र आदि में एक महानाग का उल्लेख है जबकि उत्तर-पुराण में नाग युगल का। चित्र पहले नाग युगल के वर्णन अनुसार बन चुका है। अतः पाठक उचित संशोधन कर लेवें।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(2) *Saving the Serpent-couple*—One day prince Parshva was having a view of the town from the balcony of his palace. When he saw groups of men and women carrying items for worship passing by, he asked out of curiosity if it was some day of religious ceremonies. His attendants informed him that some mendicant named Kamath is doing a harsh penance named Panchagni Tap. The citizens are going to pay homage to him with all these presents. Prince Parshva also went to behold this strange scene. As he was endowed with three levels of knowledge since birth, Parshva percieved everything worth knowing about this person at once. This was the same being that had been nurturing an intense feeling of vengeance for him for many births. After completing his age in the hell he was born in a poor family. Driven by hunger and poverty he had become a mendicant and was influencing the ignorant masses with his harsh penances.

When prince Parshva came near the mendicant he saw that some logs of wood were burning all around him. Inside one of the logs was a serpent, writhing in pain due to the intense heat of the burning flames. Moved by compassion the prince said to the mendicant, "Burning a five sensed being in fire, what sort of self improvement are you striving for?" The mendicant replied angrily. "Prince! You are a child; go and enjoy your princely games. It is mendicants like me who know about religion, not you. How can you claim that some being is burning in the fire around me?" All the efforts to persuade him that a serpent was burning in the fire went in vain. Parshva then ordered his attendents to draw the specific log aside and split it. As the attendents did that, a serpent, partially scorched, fell on the ground writhing in pain. Realizing that it was about to die, prince Parshva preached to it saying that it should not be annoyed with the ignorant mendicant and should remain equanimous during the last moments of its life. He also recited the Namokar Mantra. As a result of equanimous thoughts and hearing the Namokar Mantra, after death it was born as king of the gods of the Nagakumar clan (Dharanendra).

The mendicant was angry and kept on adding more fuel to the fire of vengeance. After death he took birth as god Meghamali.• (Illustration P-3)

पासे णं अरहा पुरिसादाणीए दक्खे दक्खपइन्ने पडिरूवे अल्लीणे भद्दए विणीए तीसं वासाइं अगारवास-मज्जे वसित्ताणं पुणरवि लोगंतिएहिं जियकप्पिएहिं देवेहिं ताहिं इट्ठाहिं, जाव एवं वयासी–'जय जय नंदा! जय जय भद्दा! भद्दं ते जाव जय जय सद्दं पउंज्जंति ॥१५२ ॥

(१५२) पुरुषादानीय अर्हत् पार्श्वनाथ दक्ष थे, दक्ष प्रतिज्ञ थे, अनुपम रूपवान थे, आत्मा में लीन थे, स्वभाव से सरल और विनयवान थे। वे तीस वर्ष तक गृहास्थाश्रम में रहे। उसके बाद परम्परा के अनुसार लोक के अन्त में रहने वाले देवताओं ने आकर इष्ट व आनन्ददायक

• In the Uttar-purana their is a mention of a serpent, whereas Trishashtishalaka Purush Charitra mentions of a giant serpent. The illustration has been made according to Uttar-purana. Readers may view accordingly.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गंभीर वाणी में कहा, "हे नन्द! जय जय हो। हे भद्र! जय जय हो। आपका कल्याण हो। आप धर्मतीर्थ का प्रवर्तन करें।"

(152) Purushadaniya Arhat Parshvanath was a genius, he was veracious, absolutely introspective, simple, humble and extraordinarily handsome. For thirty years he lived as a householder. After this, following the tradition, the gods from the edge of the universe appeared and said in pleasant and serene tone, "Victory be to you, O source of joy! May you be victorious, O noble one! May all go well with you. Please establish the ford of religion."

दीक्षा ग्रहण

पुव्विं पि णं पासस्स अरहओ पुरिसादाणीयस्स माणुस्सगाओ गिहत्थधम्माओ अणुत्तरे आहोहियए, तं चेव सव्वं जाव दायं दाइयाणं परिभाएत्ता, जे से हेमंताणं दोच्चे मासे, तच्चे पक्खे, पोस-बहुले, तस्स णं पोस-बहुलस्स एकारसी-दिवसेणं पुव्वण्ह-काल-समयंसि विसालाए सिवियाए सदेव-मणुयासुराए परिसाए; तं चेव सव्वं, नवरं वाणारसिं नयरिं मझं मज्झेणं निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता, जेणेव आसम-पए उज्जाणे, जेणेव असोग-वर-पायवे, तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता असोग-वर-पायवस्स अहे सीयं ठावेइ, ठावित्ता सीयाओ पच्चोरुहइ, सीयाओ पच्चोरुहित्ता सयमेव आभरण-मल्लालंकारं ओमुयइ, ओमुइत्ता सयमेव पंच-मुट्ठियं लोयं करेइ, पंच-मुट्ठियं लोयं करित्ता अट्ठमेणं भत्तेणं अपाणएणं विसाहाहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं एगं देवदूसमादाय तिहिं पुरिससएहिं सद्धिं मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइए॥१५३॥

(१५३) पुरुषादानीय अर्हत् पार्श्व मनुष्य जन्म के गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने से पहले भी अनुत्तरादि ज्ञान-दर्शन के धारक थे। उनके अभिनिष्क्रमण की घटना का विस्तृत वर्णन श्रमण भगवान महावीर के चरित्र में दिये वर्णन के समान ही है। केवल समय और स्थान इस प्रकार हैं–उस समय शीत ऋतु का दूसरा महीना और तीसरा पक्ष चल रहा था। पौष कृष्ण एकादशी के दिन पूर्वाह्न में विशाला नामक पालकी में बैठ वाराणसी नगरी के बीच से निकलते हुए वे आश्रमपद नामक उद्यान में गये और अशोक वृक्ष के नीचे तीन सौ पुरुषों के साथ अनगार बने।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Renunciation

(153) Even before he became a householder, Purushadaniya Arhat Parshva, possessed unique and unimpeded extra sensory knowledge and perception. The detailed description of the incident of his renunciation is similar to that of Shraman Bhagavan Mahavir, only the time and place are as follows—It was the second month and the third fortnight of the winter season. On the eleventh day of the dark half of the month of Paush at forenoon, sitting in the palanquin named Vishala and passing through the city of Varanasi, he went to a garden named Ashrampad and became an ascetic under a Ashoka tree along with three hundred persons.

पासे णं अरहा पुरिसादाणीए तेसीइं राइंदियाइं निच्चं वोसट्ठकाए चियत्त-देहे, जे केइ उवसग्गा उप्पज्जंति, तं जहा–दिव्वा वा, माणुस्सा वा, तिरिक्ख-जोणिया वा, अणुलोमा वा, पडिलोमा वा ते उप्पन्ने सम्मं सहइ, तितिक्खई, खमइ, अहियासेइ ॥१५४॥

(१५४) पुरुषादानीय अर्हत् पार्श्व तिरासी दिनों तक शरीर की ओर से पूरी तरह उदासीन रहे; इतने अनासक्त मानो शरीर का त्याग ही कर दिया हो। छद्मस्थ काल में देवता, मनुष्य अथवा तिर्यंच जाति द्वारा किए गये जो भी अनुकूल या प्रतिकूल उपसर्ग उन्हें मिले उनको निर्भय होकर भली-भाँति सहन किया। ऐसे में उन्होंने अपना सामर्थ्य, धैर्य और संतुलन बनाये रखा।

(154) For eighty three days after his renunciation, Purushadaniya Arhat Parshva completely neglected his body. He remained so detached from his body and its needs that it appeared as if he had abandoned it. During this period he tolerated all the painful as well as pleasent afflictions caused by gods, man, or animals without any fear. He did not lose his capacity, patience, and poise during these afflictions.

विस्तार :

अर्हत् पार्श्व का साधना काल केवल ८३ दिन का था। इस बीच उन्होंने जो परिषह सहे उनमें उल्लेखनीय है :

मेघमाली का उपसर्ग

एक दिन अर्हत् पार्श्व किसी गाँव के पास तापसों के एक आश्रम में वट-वृक्ष के नीचे ध्यानस्थ खड़े थे। मेघमाली देव, जो कमठ के जीव का पुनर्जन्म था, को अपने विभंगज्ञान द्वारा यह जानकारी मिली। पूर्व जन्म का वैर जाग्रत हुआ और मेघमाली उस स्थान पर आया जहाँ पार्श्व ध्यान में खड़े थे। मेघमाली ने वेताल का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रूप धारण किया और तीव्र अट्टहास कर अर्हत् पार्श्व का ध्यान भंग करने का प्रयत्न किया। जब वे विचलित नहीं हुए तो उसने हाथी, सिंह, भालू, साँप, बिच्छू आदि अनेक प्रकार के जीवों का रूप धर उन्हें प्रचुर पीड़ा दी। पार्श्वनाथ समतापूर्वक इन सभी परिषहों को सहते रहे। मेघमाली का क्रोध अपने चरम पर पहुँच गया। अब उसने आकाश में गहरे काले बादल उत्पन्न किए। घनघोर घटाओं से समस्त आकाश मण्डल आच्छादित हो गया। बिजलियाँ चमकने लगीं और भयावह गड़गड़ाहट के साथ मूसलाधार वर्षा होने लगी। मेघमाली ने इतना पानी बरसाया कि जल प्लावन हो गया। अर्हत् पार्श्व उस घोर वृष्टि की मार को मेरु के समान अचल रहकर सह गये। जल स्तर निरन्तर बढ़ता गया और पार्श्वनाथ के नासिकाग्र तक जा पहुँचा। वे फिर भी अविचल ध्यानमग्न खड़े रहे। परिषह के इस चरम बिन्दु पर धरणेन्द्र का आसन डोल गया। उन्होंने अपने अवधिज्ञान से सारी घटना को जान लिया और पद्मावती सहित वहाँ आ पहुँचे। एक ने प्रभु के नीचे आसन बनाया और दूसरे ने फनों से प्रभु के ऊपर छत्र बनाया। धरणेन्द्र ने मेघमाली को ताड़ना दी और उसने पार्श्वनाथ के चरणों में गिर क्षमा-याचना की। (चित्र P-4)

Elaboration :

The period of spiritual practices of Arhat Parshva lasted only for eighty three days. Of the afflictions he faced during this period, the one caused by Meghmali needs mention here:

Affliction of Meghmali

One day Arhat Parshva was standing in meditation under a banyan tree in an Ashram outside a village. The deity Meghmali, the Kamath of earlier birth, through his divine partial perception became aware of this. Driven by the animosity of earlier births, Meghmali arrived at the spot where Parshvanath was standing in meditation. He took the form of a ghost and tried to disturb Parshvanath with his extremely loud and fearsome laughter. When Parshva remained unmoved, Meghmali inflicted pain on him by attacking in the form of various animals. Parshva tolerated all these afflictions with equanimity. Meghmali's anger reached its peak. Now he created dark and dense clouds in the skys. The sky was completely covered by dark rain-bearing clouds. With fearsome rumbling and thunder and lightening it started raining heavily. Meghmali caused so much rain that it flooded the whole area. Arhat Parshva tolerated the torment of this torrential rain like the Meru Mountain. The water level rose and it reached the tip of Parshvanath's nose. He was still unmoved in his meditation. At this peak of the affliction, the throne of god Dharanendra trembled. He came to know about the incident through his divine powers and reached the spot with Padmavati. One of these snake-gods created a platform under the feet of Parshvanath and the other a canopy of its multiple hoods over his head. Dharanendra admonished Meghmali who then fell at the feet of Parshvanath and sought his forgiveness. (Illustration P-4)

तए णं से पासे भगवं अणगारे जाए, इरियासमिए जाव अप्पाणं भावेमाणस्स तेसीइं राइंदियाइं विइक्कंताए चउरासी-इमस्स राइंदियस्स अंतरा वट्टमाणस्स जे से गिम्हाणं पढमे मासे, पढमे पक्खे, चित्तबहुले, तस्स णं चित्त-बहुलस्स चउत्थी पक्खेणं, पुव्वण्ह-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

काल-समयंसि धायइ-पायवस्स अहे छट्ठेणं भत्तेणं अपाणएणं विसाहाहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं झाणंतरियाए वट्टमाणस्स अणंते अणुत्तरे निव्वाघाए निरावरणे जाव केवल-वर-नाण-दंसणे समुप्पन्ने, जाव जाणमाणे पासमाणे विहरइ॥१५५॥

(१५५) भगवान पार्श्व के अनगार बनने के बाद ईर्यासमिति, सत्य, संयम, तपादि गुणों से आत्मा को परिपूर्ण कर साधना करते हुए तिरासी दिन बीत गये थे और चौरासीवाँ दिन चल रहा था। वह गर्मी का पहला महीना और पहला पक्ष था। चैत्र कृष्ण चतुर्थी के दिन पूर्वाह्न के समय आँवले के पेड़ के नीचे वे छट्ठभक्त (बेला) तप का पालन करते हुए ध्यानमग्न थे। तब विशाखा नक्षत्र का योग आने पर उन्हें अनन्त, अनुत्तर, निरावरण, श्रेष्ठ केवलज्ञान और केवल दर्शन उत्पन्न हुए। वे सभी कुछ जानते-देखते विचरण करने लगे।

(155) After becoming an ascetic, Arhat Parshvanath spent eighty three days purifying his soul with sagacious conduct, truth, discipline, penance etc. (as detailed in para 120). It was the eighty fourth day. It was the first month and the first fortnight of the summer season. On the fourth day of the dark half of the month of Chaitra at forenoon Parshvanath was observing a two day fast and sitting in meditation under an emblic tree. At that time, when the moon entered the sixteenth lunar mansion–the Vishakha–he attained the infinite (etc. as in para 120) Kewal Jnana and Kewal Darshan. Seeing and knowing everything he started moving around.

अर्हत् पार्श्व की शिष्य-संपदा

पासस्स णं अरहओ पुरिसादाणीयस्स अट्ठ गणा, अट्ठ गणहरा होत्था, तं जहा–

सुंभे य अज्जघोसे य, वसिट्ठे बंभयारि य।

सोमे सिरिहरे चेव, वीरभद्दे जसे वि य ॥१५६॥

(१५६) पुरुषादानीय अर्हत् पार्श्वनाथ के आठ गण और आठ गणधर थे। उनके नाम हैं– शुम्भ, आर्यघोष, वसिष्ठ, ब्रह्मचारी, सोम, श्रीधर, वीरभद्र और यश।

Disciples of Arhat Parshva

(156) Purushadaniya Arhat Parshvanath had eight groups of disciples (Gana) and eight chief disciples and group leaders. There names are Shumbh, Aryaghosh, Vasishtha, Brahmachari, Som, Shridhar, Virbhadra, and Yash.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पासस्स णं अरहओ पुरिसादाणीयस्स अज्जदिन्न-पामोक्खाओ सोलस-समण-साहस्सीओ उक्कोसिया समण-संपया होत्था। पासस्स णं अरहओ पुरिसादाणीयस्स पुप्फचूलापामोक्खाओ अट्ठ-तीसं अज्जिया-साहस्सीओ उक्कोसिया अज्जिया-संपया होत्था। पासस्स णं अरहओ पुरिसादाणीयस्स सुव्वय-सुनंद-पामोक्खाणं समणोवासगाणं एगा सय-साहस्सी चउसट्ठिं च सहस्सा उक्कोसिया समणोवासग-संपया होत्था। पासस्स णं अरहओ पुरिसादाणीयस्स सुनंदा-पामोक्खाणं समणोवासियाणं तिन्नि सय-साहस्सीओ सत्तावीसं च सहस्सा उक्कोसिया समणोवासियाणं संपया होत्था। पासस्स णं अरहओ पुरिसादाणीयस्स अद्धुट्ठ-सया चोद्दसपुव्वीणं अजिणाणं जिण-संकासाणं सव्वक्खर-सन्निवाइणं जाव चोद्दसपुव्वीणं संपया होत्था। पासस्स णं अरहओ पुरिसादाणीयस्स चोद्दस-सया ओहिनाणीणं, दस सया केवलनाणीणं, एक्कारस-सया वेउव्वियाणं, अद्धट्ठमसया विउलमईणं, छस्सया रिउमईणं, छस्सया वाईणं, दस-समण-सया सिद्धा, वीसं अज्जिया-सया सिद्धा, बारस-सया अणुत्तरोववाइयाणं संपदा होत्था॥१५७॥

(१५७) पुरुषादानीय अर्हत् पार्श्वनाथ के शिष्य समुदाय में सोलह हजार श्रमण थे जिनके प्रमुख आर्य दिन्न थे, श्रमणियों की संख्या अड़तीस हजार थी और उनकी प्रमुख आर्या पुष्पचूला थीं, श्रमणोपासकों या श्रावकों की संख्या एक लाख चौसठ हजार थी और उनके प्रमुख सुव्रत थे, श्राविकाओं की संख्या तीन लाख सत्ताइस हजार थी और उनकी प्रमुख सुनन्दा थीं। उनके संघ में साढ़े तीन सौ श्रमण चौदह पूर्वधर थे, चौदह सौ अवधिज्ञानी, एक हजार केवलज्ञानी, ग्यारह सौ वैक्रिय लब्धिधारी, साढ़े सात सौ विपुलमति मनःपर्यव ज्ञानी, छह सौ ऋजुमति मनःपर्यव ज्ञानी और छह सौ वादी थे। उनके शिष्यों में बारह सौ अनुत्तरोपपातिक श्रमण भी थे। इस शिष्य समुदाय में से एक हजार श्रमण तथा दो हजार श्रमणियों ने सिद्ध पद प्राप्त किया।

(157) In the mass of his disciples were sixteen thousand male ascetics headed by Arya Dinna, thirty eight thousand female ascetics headed by Arya Pushpachula, one hundred sixty four thousand male members of the laity headed by Suvrat, and three hundred twenty seven thousand female members of the laity headed by Sunanda. Among his ascetic disciples were three hundred fifty Chaudah-purvadhars, one thousand four hundred Avadhi Jnanis, one thousand Kewal Jnanis, one thousand one hundred

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Vaikriya Labdhidharis, seven hundred fifty major Manahparyava Jnanis, six hundred minor Manahparyava Jnanis and six hundred Vadis. These also included one thousand Anutaropapatik ascetics. Of all these disciples, one thousand male and two thousand female ascetics got liberated. (definitions of the titles as in para 133-144)

पासस्स णं अरहओ पुरिसादाणीयस्स दुविहा अंतकड-भूमी होत्था, तं जहा—जुयंत-कड-भूमी य, परियायंतकड-भूमी य, जाव चउत्थाओ पुरिसजुगाओ जुयंतकड-भूमी तिवास परियाए अंतमकासी ॥१५८॥

(१५८) पुरुषादानीय अर्हत् पार्श्वनाथ के कैवल्य के तीन वर्ष बाद प्रथम भव्य आत्मा मोक्ष गई और मोक्ष-गमन का यह क्रम उनके निर्वाण के पश्चात् चौथे पट्टधर तक चला। यह उनकी युगान्तकृत् तथा पर्यायान्तकृत् नामक अन्तकृत् भूमि कही जाती है।

(158) It was after three years of his attaining omniscience that the first deserving soul was liberated. This sequence of liberation continued till the forth generation of his chief disciples after his Nirvana. These are known as the Yugantakrit and Paryayantakrit brackets of time of Arhat Parshvanath. (explained in para 145)

अर्हत् पार्श्व का निर्वाण

तेणं कालेणं तेणं समएणं पासे अरहा पुरिसादाणीए तीसं वासाइं अगारवास-मज्झे वसित्ता, तेसीइं राइंदियाइं छउमत्थ-परियायं पाउणित्ता, देसूणाइं सत्तरि-वासाइं केवलि-परियायं पाउणित्ता, बहु-पडिपुण्णाइं सत्तरि-वासाइं सामन्न-परियायं पाउणित्ता, एक्कं वास-सयं सव्वाउयं पालइत्ता, खीणे वेयणिज्जाउयनाम-गोत्ते इमीसे ओसप्पिणीए दुसम-सुसमाए समाए बहु-विइक्कंताए जे से वासाणं पढमे मासे, दोच्चे पक्खे, सावण-सुद्धे, तस्स णं सावण-सुद्धस्स अट्ठमी पक्खेणं उप्पिं सम्मेय-सेल-सिहरंसि अप्प-चोत्तीसइमे मासिएणं भत्तेणं अपाणएणं विसाहाहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं पुव्वण्हकाल-समयंसि वग्घारिय-पाणी काल-गए जाव सव्व-दुक्ख-पहीणे ॥१५९॥

(१५९) उस काल के उस भाग में पुरुषादानीय अर्हत् पार्श्वनाथ तीस वर्ष तक गृहस्थाश्रम में रहे, तिरासी दिन छद्मस्थ अर्थात् सामान्य श्रमण, और सत्तर वर्ष से कुछ कम समय तक केवलज्ञानी श्रमण अवस्था में रहे। इस प्रकार तीस वर्ष गृहस्थ और सत्तर वर्ष श्रमण रहकर एक सौ वर्ष की आयु पूर्ण होने पर उनके वेदनीय, आयु, नाम तथा गोत्र कर्मों का क्षय हो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गया। उस समय वर्तमान अवसर्पिणी के दुषम-सुषम नामक चौथे आरे का अधिकतर भाग बीत चुका था। वर्षा ऋतु का प्रथम महीना और दूसरा पक्ष चल रहा था। श्रावण शुक्ल अष्टमी के दिन सम्मेतशिखर पर अन्य तेतीस श्रमणों के साथ वे जल-रहित मासिक-भक्त तप का पालन करते हुए कायोत्सर्ग मुद्रा में दोनों हाथ लम्बे किये ध्यानमग्न थे। पूर्वाह्न के समय विशाखा नक्षत्र का योग आने पर वे कालधर्म को प्राप्त हुए। समस्त दुःखों को नष्ट कर परिनिर्वाण को प्राप्त हुए।

Nirvana of Arhat Parshva

(159) During that period in that age, after his birth Purushadaniya Arhat Parshva spent thirty years as a householder, eighty three years in illusory state or as a common ascetic, and a little less than seventy years as an omniscient ascetic. At the end of this one hundred year period all his karmas responsible for pain, life span, social position, and physical constitution were destroyed. At that moment major portion of the fourth phase of the current six phase cycle of time, Dusham-Susham, had elapsed. It was the first month and the second fortnight of the monsoon season. On the eighth day of the bright half of the month of Shravan he was doing the one month fast and was sitting in meditation with thirty three other ascetics on the Sammet Shikhar hill. In the forenoon, when the moon entered the sixteenth lunar mansion—Vishakha—he breathed his last. Destroying all sorrows he attained Nirvana.

पासस्स णं अरहओ पुरिसादाणियस्स, कालगयस्स जाव सव्व-दुक्ख-पहीणस्स दुवालस-वास-सयाइं विइक्कंताइं तेरसमस्स य वास-सयस्स अयं तीसइमे संवच्छरकाल गच्छइ ॥१६०॥

(१६०) आगमों के लिपिबद्ध होने के समय अर्हत् पार्श्व का निर्वाण हुए बारह सौ वर्ष बीत चुके थे और तेरहवीं शताब्दी का तीसवाँ वर्ष चल रहा था अर्थात् बारह सौ तीसवाँ वर्ष चल रहा था।

(160) At the time the canonical literature was compiled in writing, one thousand two hundred years had passed, and the thirtieth year of the thirteenth century since the Nirvana of Bhagavan Parshvanath was running. This means that it was in the 1230th year after his Nirvana that the canonical literature was compiled.

■■

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्हत् अरिष्टनेमि

तेणं कालेणं तेणं समएणं अरहा अरिट्ठनेमी पंच-चित्ते होत्था, तं जहा–चित्ताहिं चुए चइत्ता गब्भं वक्कंते, तहेव उक्खेवो, जाव चित्ताहिं परिनिव्वुए॥१६१॥

(१६१) उस काल के उस भाग में अर्हत् अरिष्टनेमि के च्यवन, जन्मादि पाँच कल्याणक चित्रा नक्षत्र में हुए।

ARHAT ARISHTANEMI

(161) During that period in that age the five auspicious events in the life of Arhat Arishtanemi occurred when the moon was in the fourteenth lunar mansion called Chitra.

तेणं कालेणं तेणं समएणं अरहा अरिट्ठनेमी जे से वासाणं चउत्थे मासे, सत्तमे पक्खे कत्तिय-बहुले, तस्स णं कत्तिय-बहुलस्स बारसी-पक्खेणं अपराजियाओ महाविमाणाओ बत्तीसं सागरोवम-ट्ठिइयाओ अणंतरं चयं, चइत्ता, इहेव जंबूद्दीवे दीवे भारहे वासे सोरियपुरे नयरे समुद्दविजयस्स रन्नो भारियाए सिवादेवीए पुव्वरत्तावरत्त-काल-समयंसि जाव चित्ताहिं गब्भत्ताए वक्कंते, सव्वं तहेव सुमणि-दंसण-दविण-संहरणाइयं एत्थ भाणियव्वं॥१६२॥

(१६२) उस काल के उस भाग में वर्षा ऋतु का चौथा महीना और सातवाँ पक्ष चल रहा था। कार्तिक कृष्ण तेरस के दिन भावी अर्हत् अरिष्टनेमि के जीव ने अपराजित नामक देवलोक से तेतीस सागरोपम की आयु पूर्ण कर प्रयाण किया। वह जीव जम्बूद्वीप के भारतवर्ष क्षेत्र के शौर्यपुर (सौरीपुर) नामक नगर में राजा समुद्रविजय की भार्या शिवादेवी की कुक्षि में मध्यरात्रि के समय चित्रा नक्षत्र का योग आने पर गर्भ रूप में अवतरित हुआ। इसके बाद स्वप्न-दर्शन से लेकर धनवृष्टि तक की घटनाएँ महावीर चरित के समान ही हैं।

(162) During that time in that age it was the fourth month and the seventh fortnight of the monsoon season. On the thirteenth day of the dark half of the month of Kartik, the soul that was to be Arhat Arishtanemi left the Aparajit dimension of the gods after completing its age of thirty three Sagaropam (a superlative measure of time). It descended into the womb of

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

queen Shiva Devi, wife of king Samudravijaya of Shauryapur (Sauripur) in the Bharat area of the Jambu continent, at midnight when the moon entered the fourteenth lunar mansion. From this point on, the incidents of dreams etc. upto the "rain of wealth" are similar to those mentioned in context with life of Mahavir.

तेणं कालेणं तेणं समएणं अरहा अरिट्ठनेमी जे से पढमे मासे दोच्चे पक्ख सावण-सुद्धे, तस्स णं सावण-सुद्धस्स पंचमी पक्खेणं नवण्हं मासाणं बहु-पडिपुण्णाणं जाव चित्ताहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं आरोग्गा आरोग्गं दारयं पयाया। जम्मणं समुद्दविजयाभिलावेणं नेयव्वं, जाव तं होउ णं कुमारे अरिट्ठनेमी नामेणं॥१६३॥

(१६३) उस काल के उस भाग में वर्षा ऋतु का पहला महीना और दूसरा पक्ष चल रहा था। श्रावण शुक्ल पंचमी को नौ महीने पूरे होने पर चित्रा नक्षत्र का योग आने पर स्वस्थ शिवादेवी ने सुखपूर्वक पुत्र-रत्न को जन्म दिया। इसके बाद नामकरण तक का वर्णन महावीर चरित के समान ही है।

(163) During that time in that age it was the first month and second fortnight of the monsoon season. On the fifth day of the bright half of the month of Shravan, when nine months had elapsed since the conception, healthy Shiva Devi gave birth to a son normally when the moon entered the fourteenth lunar mansion. From this point on, up to the incident of his naming celebration, the details are similar to those mentioned in the context of the life of Mahavir.

अरहा अरिट्ठनेमी दक्खे जाव तिन्नि वाससयाइं अगारवास-मज्झे वसित्ता णं पुणरवि लोयंतिएहि जीय-कप्पिएहिं देवेहिं तं चेव सव्वं भाणियव्वं, जाव दायं दाइयाणं परिभाएत्ता।

जे से वासाणं पढमे मासे दोच्चे पक्खे सावण-सुद्धे, तस्सणं सावण-सुद्धस्स छट्ठी पक्खेणं पुव्वण्ह-काल-समयंसि उत्तरकुराए सीवियाए सदेव-मणुयासुराए परिसाए अणुगम्ममाण-मग्गे जाव बारवईए नयरीए मज्झं मज्झेण निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता जेणेव रेवयए उज्जाणे, तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता असोगवर-पायवस्स अहे सीयं ठावेइं, सीयं ठावित्ता सीयाओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता सयमेव आभरण-मल्लालंकारं ओमुयइ, ओमुइत्ता सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं करेइ, करित्ता छट्ठेणं भत्तेणं अपाणएणं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्ताहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं एगं देवदूसमादाय एगेणं पुरिस-सहस्सेणं सद्धिं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइए॥१६४॥

(१६४) अर्हत् अरिष्टनेमि दक्षप्रज्ञ आदि थे। वे तीन सौ वर्ष तक गृहस्थाश्रम में रहे और फिर गृह त्यागने को उद्यत हुए। याचकों को दान देने तक इस सबका विस्तृत वर्णन महावीर चरित के समान ही है।

वर्षा ऋतु का पहला महीना और दूसरा पक्ष चल रहा था। श्रावण शुक्ल छठ के दिन पूर्वाह्न के समय अर्हत् अरिष्टनेमि उत्तरकुरा नामक पालकी में बैठकर द्वारिका नगरी के बीच होते हुए रैवतक नामक उद्यान में आये। चित्रा नक्षत्र का योग आने पर अशोक वृक्ष के नीचे एक हजार पुरुषों के साथ वे अनगार बन गए। इसका विस्तृत विवरण महावीर चरित के समान ही है। (चित्र AN-3/1)

(164) Arhat Arishtanemi was a genius (as mentioned with reference to Mahavir). For three hundred years he remained as a householder, and then prepared for renunciation. The details up to his year of gift giving charity are similar to those mentioned in the context of the life of Mahavir.

It was the first month and the second fortnight of the monsoon season. On the sixth day of the bright half of the month of Shravan, in the forenoon, Arhat Arishtanemi sat in a palanquin named Uttarkura, and, passing through the town of Dwarika, arrived in the Raivatak garden. When the moon entered the fourteenth lunar mansion he became an ascetic along with one thousand persons under an Ashok tree. The details are similar to those mentioned in connection with life of Mahavir. (Illustration AN-3/1)

विस्तार :

अन्य प्राचीन ग्रन्थों के अनुसार अर्हत् अरिष्टनेमि के गृहस्थ जीवन की कुछ महत्वपूर्ण घटनाएँ हैं :

(१) अपूर्व बल–अर्हत् अरिष्टनेमि के चाचा वसुदेव के पुत्र थे वासुदेव श्रीकृष्ण। वासुदेव अपने काल का सर्वश्रेष्ठ बलशाली व्यक्ति होता है और उसके दिव्य अस्त्रों को चलाना तो क्या, उठा पाना भी कठिन होता है। युवा अरिष्टनेमि एक दिन घूमते हुए श्रीकृष्ण की आयुधशाला में जा पहुँचे। श्रीकृष्ण के दिव्य आयुध देख सहज कौतूहलवश उन्होंने पहले सुदर्शन चक्र को उँगली पर धारण कर सहज ही घुमाया। श्रीकृष्ण के विशाल सारंग धनुष को भी सरकण्डे की तरह झुका दिया, और फिर पाञ्चजन्य शंख को होठों पर लगा बजा दिया। उससे जो तीव्र ध्वनि निकली उसने समस्त नगर को ही नहीं, स्वयं श्रीकृष्ण को भी भयाक्रान्त कर दिया। श्रीकृष्ण दौड़कर आयुधशाला में आये तो देखते क्या हैं कि युवा नेमि ने शंख बजा दिया था। उन्हें आश्चर्य हुआ और आशंका भी कि वासुदेव से बलशाली यह कौन महान् आत्मा है। उन्होंने नेमि के बाहुबल का परीक्षण करने के लिए स्पर्धा का आमंत्रण दिया। दोनों व्यायामशाला में गए। पहले

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

AN 1 तीर्थंकर नेमिनाथ का जन्म कल्याणक (सूतिका कर्म) मनाते हुए—५६ दिशा कुमारियां।
Assembly of 56 goddesses of directions performing birth-celebrations (Janma Kalyanaka) of Tirthankar Neminath after post birth cleaning.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

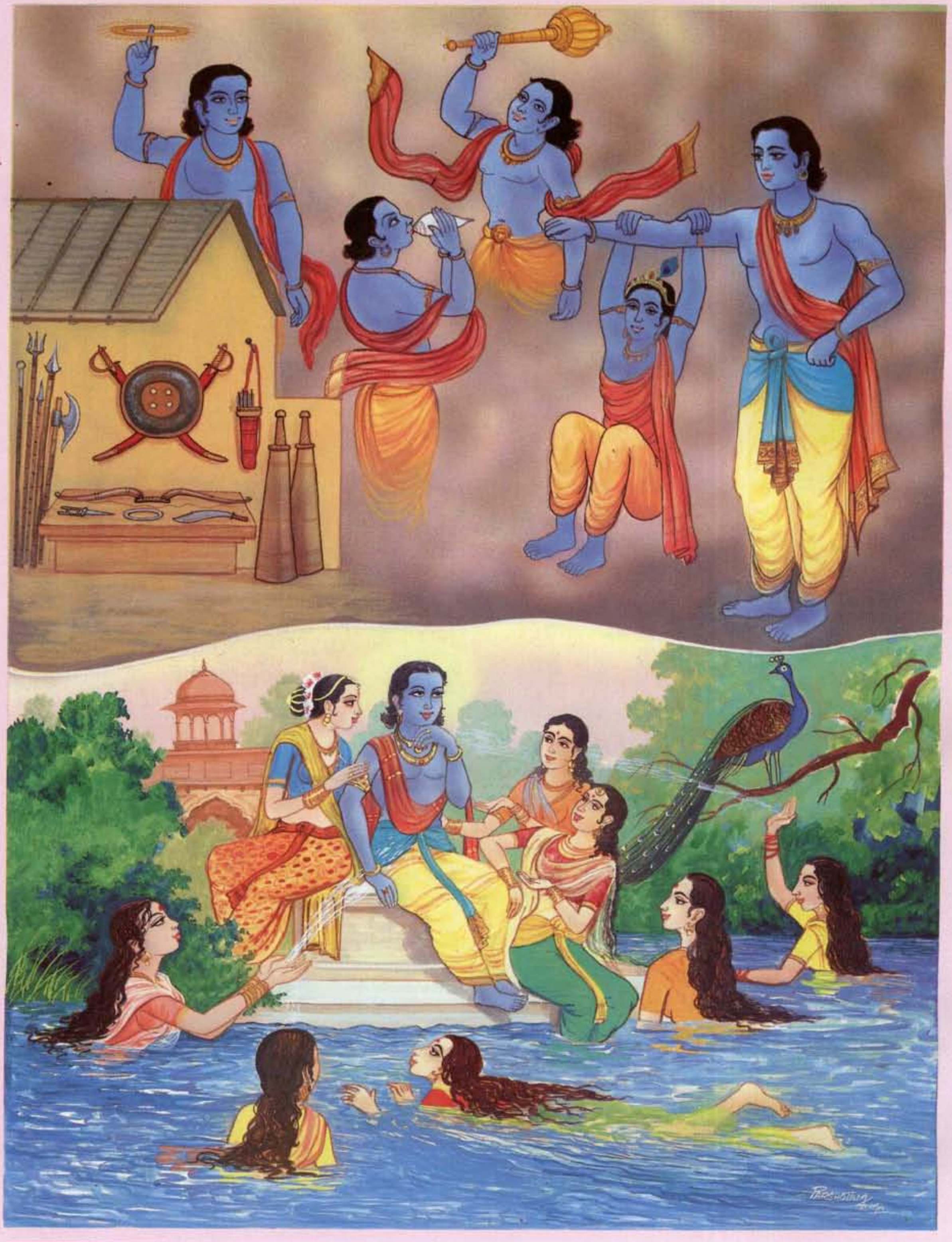

AN 2 (अ) श्रीकृष्ण की व्यायामशाला में नेमिकुमार की बल-परीक्षा
(ब) जल क्रीड़ा के समय श्रीकृष्ण की रानियों द्वारा नेमिकुमार को विवाह के लिए सहमत करना।
(a) Trial of strength between Shrikrishna and Nemikumar in his gymnasium
(b) Shrikrishna's queens persuading Nemikumar for marraige while playing water games

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रीकृष्ण ने अपनी बाहु उठाकर सीधी की और नेमिकुमार को उसे झुकाने का प्रयत्न करने को कहा। नेमिकुमार ने सहज ही श्रीकृष्ण की बलशाली भुजा को नीचे झुका दिया। फिर नेमिकुमार ने अपनी भुजा उठाई। श्रीकृष्ण बहुत प्रयत्न करने पर भी उसे नहीं झुका सके। यहाँ तक कि दोनों हाथ से नेमिकुमार की भुजा पकड़कर लटक गए फिर भी वह लौह दण्ड के समान स्थिर ही रही। श्रीकृष्ण चकित रह गये। (चित्र AN-1/1)

(२) जल क्रीड़ा–नेमिकुमार का अतुल बल पराक्रम देख श्रीकृष्ण को अनुभव हुआ कि मुझसे भी अधिक बलशाली यह कुमार अवश्य ही चक्रवर्ती के तुल्य है। किन्तु इन्हें तो संसार के प्रति सर्वथा विरक्ति है, ये षट्खण्ड चक्रवर्ती कैसे बनेंगे? संसार के प्रति अनुरक्त करने का उन्हें एक उपाय सूझा। उन्होंने नेमि-कुमार से विवाह कर लेने का प्रस्ताव किया। नेमिकुमार ने उस ओर कोई रुचि नहीं दिखाई। श्रीकृष्ण ने तब वसन्तोत्सव का आयोजन किया और अपनी प्रमुख रानियों से कहा कि जल क्रीड़ा के समय वे नेमिकुमार को विवाह करने के लिए मनावें। श्रीकृष्ण की रानियाँ आग्रहपूर्वक नेमिकुमार को जल क्रीड़ा के लिए ले गईं और वहाँ अनेक प्रकार से उन्हें विवाह कर लेने को समझाया। श्रीकृष्ण ने भी पुनः आग्रह किया। नेमिकुमार मुस्कराते हुए कुछ सोचते रहे। अपने विशिष्ट ज्ञान से जब उन्हें यह आभास हुआ कि विवाह का आयोजन ही उनके आत्म-कल्याण हेतु प्रयाण का निमित्त बनेगा, तो उन्होंने मना नहीं किया। उनके मौन को स्वीकृति सूचक मानकर यह घोषणा कर दी गई कि नेमिकुमार विवाह के लिये सहमत हैं। (चित्र AN-1/2)

श्रीकृष्ण ने भोजकुल की अत्यन्त सुन्दर कन्या राजीमती को चुना और प्रस्ताव भेजकर विवाहोत्सव की तैयारी कर दी। निश्चित दिन अरिष्टनेमि को गंधहस्ती पर बिठाकर बारात निकाली गई। यादव कुल के सभी राजा और कुमार अपनी सुसज्जित सेनाओं सहित बारात में सम्मिलित हुए। बारात जब अपने गन्तव्य के निकट पहुँच रही थी तब मार्ग में नेमिकुमार ने बाड़ों और पिंजरों में बन्द अनेक पशु-पक्षियों को आर्त्तनाद करते देखा। उनका कोमल हृदय सहानुभूति व करुणा से भर गया और उन्होंने महावत से पूछा कि ये पशु-पक्षी क्यों बन्दी बनाए गए हैं? महावत ने बताया कि ये सब उनके विवाह में आए अतिथियों के भोजन के लिये वध करने को एकत्र किये गए हैं। नेमिकुमार यह सब सुनकर विरक्त हो गए और विवाह न करने का निश्चय कर लिया। उन्होंने अपने सभी मूल्यवान आभूषण वहीं उतारकर महावत को दे दिये और कहा, "मेरे निमित्त इतने जीवों की हत्या मुझे इहलोक-परलोक में कष्टदायी होगी। मैं विवाह नहीं करूँगा अतः इन सभी जीवों को मुक्त करवा दो और द्वारिका लौट चलो।" (चित्र AN-2)

बारात में खलबली मच गई। सभी वरिष्ट यादव नेमिकुमार को समझाने आये पर उनका निश्चय दृढ़ था। उन्होंने सभी को माँसाहार छोड़ने का उपदेश दिया और द्वारिका लौट आये। बारात लौटने का समाचार जब सजी-धजी दुल्हन राजीमती के पास पहुँचा तो वह शोक से मूर्च्छित होकर गिर पड़ी। जब वह होश में आई तो उसने निश्चय किया कि जिन्हें पति मान चुकी अब उन्हीं के मार्ग पर मैं भी चलूँगी। (चित्र AN-3/2)

Elaboration :

Some important incidents from Arhat Arishtanemi's life according to other ancient sources are as follows :

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(1) *Superlative Strength*—Shrikrishna was the son of Arishtanemi's uncle, Vasudev. He was the Vasudev (Appendix) the most powerful person of his era, and it was almost impossible even to lift his weapons to say nothing of using them. One day while wandering around, youthful Arishtanemi reached the hall of weapons of Vasudev Shrikrishna. Seeing the divine weapons and becoming curious he first lifted the Sudarshan Chakra (the disc weapon) on his finger and whirled it easily. He then lifted the giant bow, Saranga, and bent it as effortlessly as a thin cane. After this he lifted the Panchjanya conch, put it to his lips, and blew it hard. The piercing and loud sound emanating from the great conch shocked the town including Shrikrishna. He rushed to the armoury and saw that it was Nemi who had blown the Panchajanya. He was surprised and apprehensive and wondered who was this great soul who was even more powerful than the Vasudev. He invited Nemi to his gymnasium for a friendly trial of strength. They went to the gymnasium and first Shrikrishna raised his arm and held it straight asking Nemi to bring it down. Nemi forced Shrikrishna's arm down without any apparent effort. After this, Nemi raised his arm and Shrikrishna, in spite of all his strength, could not force it down. He even put all his weight on it, but as if it was a beam of steal, the arm of Nemi did not move even a fraction of an inch. Shrikrishna was surprised. (Illustration AN-1/1)

(2) *The Marriage Procession*—Shrikrishna thought that this great person, much more powerful than me, is capable of becoming a Chakravarti. But how could he become a Chakravarti if his apparent attitude of detachment is not altered. He formulated a plan. He asked Nemi to marry and start his family life. Nemi did not show any interest. Shrikrishna then organized a spring festival and asked his queens to persuade Nemi to marry while they were indulging in the water games. The ladies dragged Nemi Kumar to the pond for water games and there they used all their guile to persuade him to agree for marraige. Shrikrishna also requested once again. Nemi presented a smiling but thoughtful look. With his divine knowledge he became aware that it was the marriage celebrations that would initiate him on the path of liberation. As such, he did not oppose the proposal. His silence was taken as a sign of affirmation and it was joyously announced that Nemi Kumar had finally agreed for marriage. (Illustration AN-1/2)

Shrikrishna selected a beautiful girl named Rajimati from the royal family called Bhoj and sent the proposal. He also made all the arrangements for the marriage. On the arranged date the marriage procession started with Nemi Kumar on the decorated King-elephant. All the kings and princes of the Yadav clan joined the procession with their royal regalia and retinue. When the procession was approaching the destination, Nemi Kumar saw that on the side of the road there were large fenced areas and cages full of wailing animals and birds. Filled with sympathy and compassion he asked the elephant driver why those animals and birds were being kept in bondage. The driver informed him that these creatures were collected to be butchered for meat for the large number of guests attending the marriage. Nemi was filled with despair and a feeling of detachment. He decided not to marry. He took out all the valuables and ornaments on his body and handed them over to the elephent driver. He conveyed his feeling saying, "If I agree to be the cause of the butchering of so many living beings, my life and the one to come will be filled with pain and

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

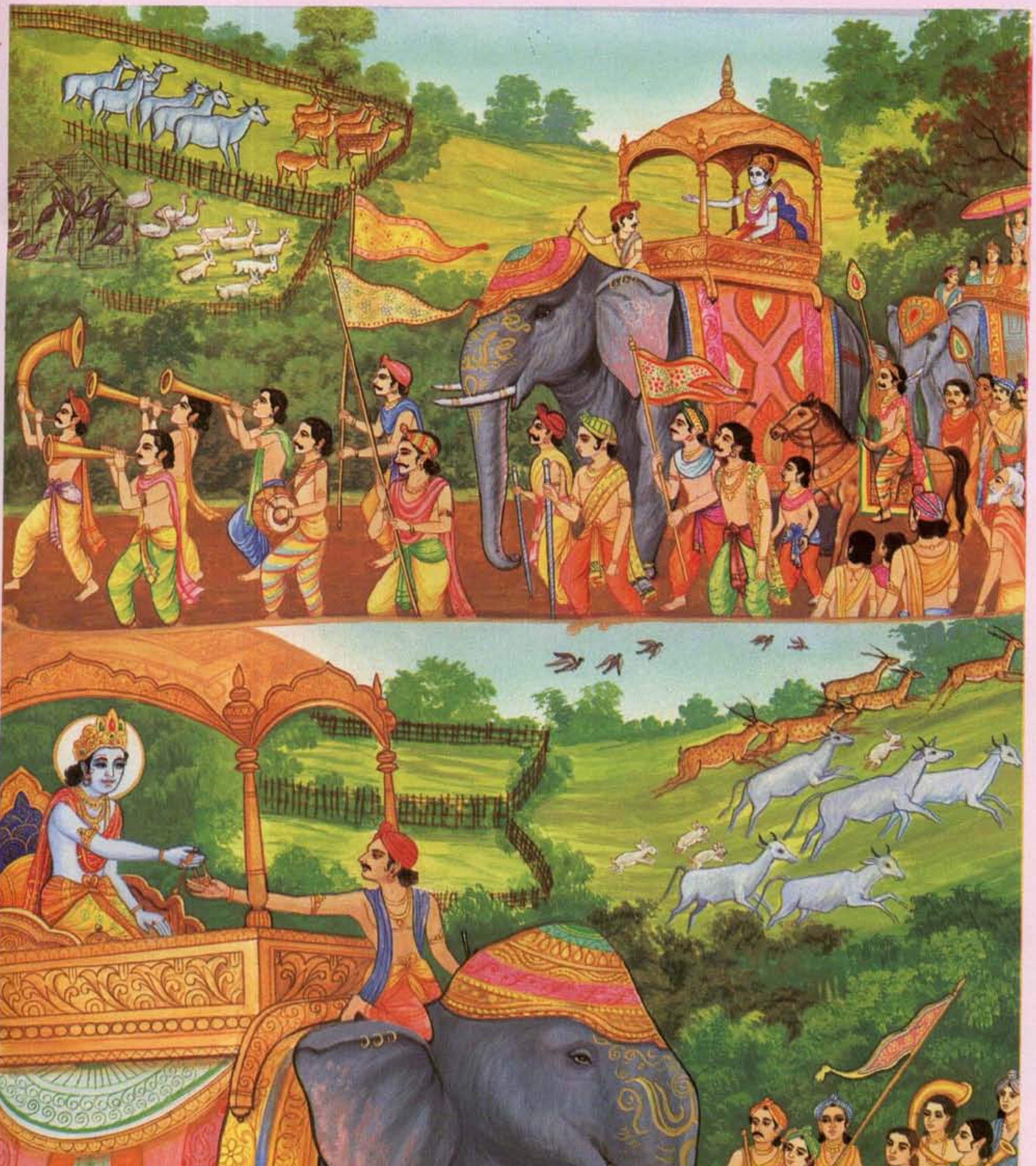

AN 3 नेमिकुमार की बारात, वध के निमित्त बंद निरीह पशुओं की मुक्ति तथा वैराग्य लेने का निर्णय।
The marraige procession of Nemikumar, liberation of mute animals meant to be butchered, and decision to become ascetic

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

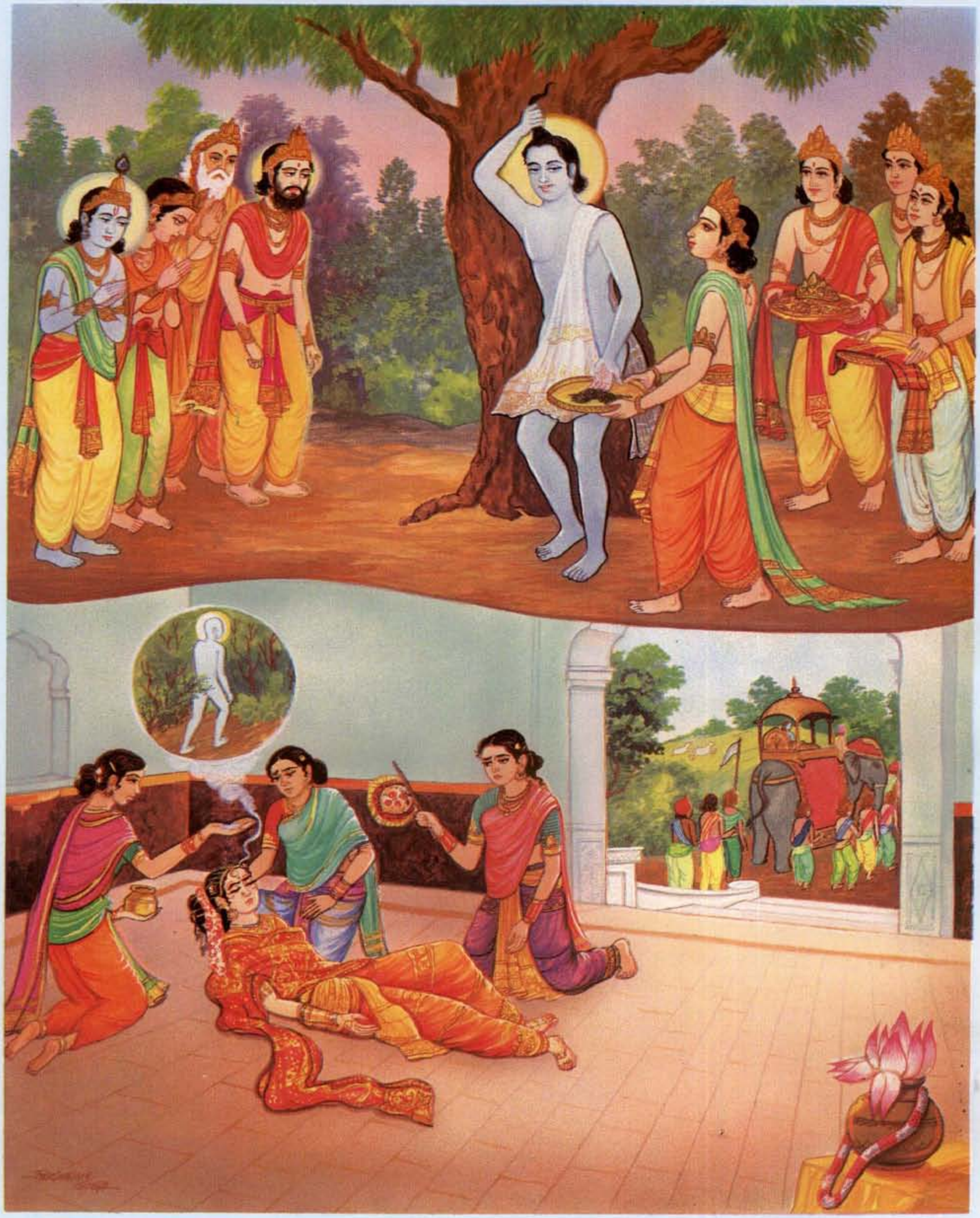

AN 4 (अ) नेमिकुमार के वैराग्य की सूचना से दुःखित राजीमती का मूर्च्छित होना
(व) नेमिकुमार का केश लोच कर अणगार बनना।
(a) Rajimati becomes unconscious hearing the shocking news of Nemikumar's renunication
(b) Plucking his hair Nemikumar turns ascetic

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

misery. I will not marry, so arrange for the release of all these creatures; turn back an
head for Dwarika. (Illustration AN-2)

The news spread panic in the marriage procession. All the seniors of the Yadav cla tried to change the mind of Nemi Kumar but his determination was unyielding. Nem urged them to abandon eating meat and returned to Dwarika. When Rajimati, dressed a bride, heard of this she fainted with shock. On recovering she decided to follow the path o the person whom she had accepted as her husband. (Illustration AN-3/2)

अरहा णं अरिट्ठनेमी चउप्पन्नं राइंदियाइं निच्चं वोसट्ठकाए चियत्तदेहे तं चेव सव्व जाव पणपन्नइमस्स राइंदियस्स अंतरा वट्टमाणे जे से वासाणं तच्चे मासे पंचमे पक्ख अस्सोयबहुले, तस्स णं अस्सोयबहुलस्स पन्नरसी-पक्खेणं दिवसस्स पच्छिमे भागे उप्पिं उज्जिंत-सेल-सिहरे वेडस-पायवस्स अहे छट्ठेणं भत्तेणं अपाणएणं चित्ताहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं झाणंतरियाए वट्टमाणस्स जाव अणंते अणुत्तरे केवलवर नाण-दंसणे समुप्पन्ने। जाव सव्व-लोए सव्वजीवाणं भावे जाणमाणे पासमाणे विहरइ॥१६५॥

(१६५) अर्हत् अरिष्टनेमि अनगार बनने के बाद चौवन दिनों तक शरीर के प्रति सर्वथा उदासीन रहे। (विस्तृत वर्णन पूर्व-सम)। वर्षा ऋतु का तीसरा महीना और पाँचवाँ पक्ष चल रहा था। आश्विन कृष्ण अमावस्या के दिन दोपहर बाद उज्जयंत पर्वत (गिरनार) की चोटी पर अर्हत् अरिष्टनेमि बेडस (बाँस) वृक्ष के नीचे छट्ठभक्त तप का पालन करते हुए ध्यानमग्न थे। तब चित्रा नक्षत्र का योग आने पर उन्हें अनन्त, अनुत्तर केवलज्ञान और केवलदर्शन प्राप्त हुए। (विस्तृत विवरण पूर्व-सम)।

(165) After becoming an ascetic, Arhat Neminath spent fifty four days completely neglecting his body (detailed description same as Mahavir's). It was the third month and fifth fortnight of the monsoon season. On the fifteenth day of the dark half of the month of Ashvin, in the afternoon, Arhat Arishtanemi was observing a two day fast and was meditating under a bamboo tree on the peak of the Ujjayant hill (Girnar). At that time when the moon entered the Chitra lunar mansion he attained the infinite (etc.) Kewal Jnana and Kewal Darshan. The detailed description is as before.

अर्हत् अरिष्टनेमि की शिष्य-संपदा

अरहओ णं अरिट्ठनेमिस्स अट्ठारस गणा गणहरा होत्था। अरहओ णं अरिट्ठनेमिस्स वरदत्त-पामोक्खाओ अट्ठारस्स समण-साहस्सीओ उक्कोसिया समण-संपया होत्था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अरहओ णं अरिट्ठनेमिस्स अज्ज-जक्खिणी-पामोक्खाओ चत्तालीसं अज्जिया-साहस्सीओ उक्कोसिया अज्जिया-संपया होत्था। अरहओ अरिट्ठनेमिस्स नंद-पामोक्खाणं समणोवासगाणं एगा सय-साहस्सी अउणत्तरिं च सहस्सा उक्कोसिया समणोवासग-संपया होत्था। अरहओ अरिट्ठनेमिस्स महासुव्वया-पामोक्खाणं समणोवासियाणं तिन्नि सय-साहस्सीओ छत्तीसं च सहस्सा उक्कोसिया समणोवासियाणं संपया होत्था।

अरहओ अरिट्ठनेमिस्स चत्तारि सया चोद्दस-पुव्वीणं अजिणाणं जिण-संकासाणं सव्वक्खर जाव संपया होत्था। पन्नरस-सया ओहिनाणीणं, पन्नरस-सया केवलनाणीणं, पन्नरस-सया वेउव्वियाणं, दस सया विउलमईणं, अट्ठ-सया वाईणं, सोलस-सया अणुत्तरोववाईयाणं, पन्नरस-समण-सया सिद्धा, तीसं अज्जिया-सयाइं सिद्धाइं॥१६६॥

(१६६) अर्हत् अरिष्टनेमि के अठारह गण और अठारह गणधर थे। उनके संघ में अठारह हजार श्रमण थे जिनके प्रमुख वरदत्त थे। चालीस हजार श्रमणियाँ थीं जिनकी प्रमुख आर्या यक्षिणी थीं। एक लाख उनहत्तर हजार श्रावक थे जिनमें प्रमुख नन्द थे और तीन लाख छत्तीस हजार श्राविकाएँ थीं जिनमें प्रमुख महासुव्रता थीं।

उनके शिष्य समुदाय में चार सौ श्रमण चौदह पूर्वधर थे, पन्द्रह सौ अवधिज्ञानी, पन्द्रह सौ केवलज्ञानी, पन्द्रह सौ वैक्रियलब्धिधारी, एक हजार विपुलमति मनःपर्यवज्ञानी और आठ सौ वादी श्रमण थे। इनमें से सौलह सौ श्रमण अनुत्तरौपपातिक देवलोक में गए और तीन हजार श्रमणियाँ तथा पन्द्रह सौ श्रमण मोक्ष में गए।

Disciples of Arhat Arishtanemi

(166) Arhat Arishtanemi had eighteen groups of disciples (Gana) and eighteen chief disciples and group leaders. In the mass of his disciples were eighteen thousand male ascetics headed by Varadatta, fourteen thousand female ascetics lead by Arya Yakshini, one hundred and sixty nine thousand male members of laity headed by Nanda, and three hundred and thirty six thousand female members of laity headed by Mahasuvrata.

Among his ascetic disciples were four hundred Chaudah-purvadhars, one thousand five hundred Avadhi Jnanis, one thousand five hundred Kewal Jnanis, one thousand five hundred Vaikriya Labdhidharis, one thousand Manahparyava Jnanis and eight hundred Vadis. (definitions of the titles as in paras 133-144)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Out of these, one thousand six hundred ascetics were reincarnated in the Anutaraupapatic dimension of gods and three thousand female and one thousand five hundred male ascetics attained liberation.

अरहओ णं अरिट्ठनेमिस्स दुविहा अंतगड-भूमी होत्था; तं जहा–जुगंतकड-भूमी य परियायंत कड-भूमी य। जाव अट्ठमाओ पुरिस-जुगाओ जुगंतकड-भूमी, दुवालस-परियाए अंतमकासी ॥१६७॥

(१६७) अर्हत् अरिष्टनेमि के केवलज्ञान प्राप्त करने के दो वर्ष बाद प्रथम भव्य जीव मोक्ष गया। मोक्ष गमन का यह क्रम उनके आठवें पट्टधर तक चलता रहा। यह उनके युग की युगान्तकृत् और पर्यायान्तकृत् दो अन्तकृत भूमियाँ थीं।

(167) It was after two years of his attaining omniscience that the first deserving soul was liberated. This chain of liberations continued till the eighth generation of his chief disciples after his Nirvana. These are known as the Yugantakrit and Paryayantakrit brackets of the time of Arhat Arishtanemi. (explained in para 145)

तेणं कालेणं तेणं समएणं अरहा अरिट्ठनेमि तिन्नि वास-सयाइं कुमार-वास-मज्झे वसित्ता, चउप्पन्नं राइंदियाइं छउमत्थ-परियायं पाउणित्ता, देसूणाइं सत्त-वास-सयाइं केवलि-परियायं पाउणित्ता, पडिपुन्नाइं सत्तवास-सयाइं सामण्ण-परियायं पाउणित्ता, एगं वास-सहस्सं सव्वाउयं पालइत्ता, खीणे वेयणिज्जाउय-नाम-गोत्ते इमीसे ओसप्पिणीए दुसम-सुसमाए समाए बहु-विइक्कंताए, जे से गिम्हाणं चउत्थे मासे, अट्ठमे पक्खे, आसाढ-सुद्धे, तस्स णं आसाढ-सुद्धस्स अट्ठमी-पक्खेणं, उप्पिं उज्जिंत-सेल-सिहरंसि पंचहिं छत्तीसेहिं अणगार-सएहिं सद्धिं मासिएणं भत्तेणं अपाणएणं चित्ताहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं पुव्वरत्तावरत्त-काल-समयंसि नेसज्जिए कालगए, जाव सव्व-दुक्खप्पहीणे ॥१६८॥

(१६८) उस काल के उस भाग में अर्हत् अरिष्टनेमि तीन सौ वर्ष तक गृहस्थाश्रम में, चौवन दिन तक छद्मस्थ अवस्था में तथा सात सौ वर्ष से कुछ कम समय तक केवलज्ञानी श्रमण अवस्था में रहे। एक हजार वर्ष की आयु पूर्ण होने पर उनके वेदनीय, आयु, नाम, और गोत्र कर्मों का क्षय हो गया। उस समय वर्तमान अवसर्पिणी के दुषम-सुषम नामक चौथे आरे का बहुत समय बीत चुका था। गर्मी का चौथा महीना और आठवाँ पक्ष चल रहा था। आषाढ़

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शुक्ल अष्टमी के दिन गिरनार पर्वत पर पाँच सौ छत्तीस श्रमणों के साथ अर्हत् अरिष्टनेमि जलरहित मासिक भक्त तप का पालन करते हुए ध्यानमग्न बैठे थे। मध्य रात्रि के समय चित्रा नक्षत्र का योग आने पर वे काल धर्म को प्राप्त हुए। (विस्तृत वर्णन पूर्व-सम)

(168) During that period in that age, after his birth, Arhat Arishtanemi spent three hundred years as a householder, fifty four days as a common ascetic, and a little less than seven hundred years as an omniscient ascetic. At the end of this age of one thousand years all his Karmas responsible for pain, life span, social position, and physical constitution were destroyed. At that time a major portion of the fourth phase, Dusham-Susham, of the six phase time cycle had elapsed. It was the fourth month and the eighth fortnight of the summer season. On the eighth day of the bright half of the month of Ashadh, Arhat Arishtanemi, with five hundred thirty six ascetics, was observing a month long fast without water and was sitting in meditation. At midnight, when the moon entered the fourteenth lunar mansion, he breathed his last. (details as mentioned earlier)

अरहओ अरिट्ठनेमिस्स कालगए जाव-सव्वदुक्ख-पहीणे चउरासीइं वाससयाइं विइक्कंताइं, पंचासीइमस्स य वास सहस्सस्स नव-वास-सयाइं विइक्कंताइं दसमस्स य वास सयस्स अयं असीइमे संवच्छरे काले गच्छइ ॥१६९॥

(१६९) इन शास्त्रों के लिपिबद्ध होने के समय अर्हत् अरिष्टनेमि के निर्वाण को चौरासी हजार नौ सौ अस्सी वर्ष बीत गए थे।

(169) Eighty four thousand nine hundred and eighty years had passed since the Nirvana of Arhat Arishtanemi when these scriptures were transcribed.

■■

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अन्य तीर्थंकर

नमिस्स णं अरहणो कालगयस्स जाव प्पहीणस्स पंचवास-सय-सहस्साइं चउरासीइं च वास-सहस्साइं नव य वाससयाइं विइक्कंताइं; दसमस्स य वास-सयस्स अयं असीइमे संवच्छरे काले गच्छइ॥१७०॥

इस ग्रन्थ के लिखे जाने के समय—

(१७०) अर्हत् नमिनाथ के निर्वाण के बाद का पाँच लाख चौरासी हजार नौ सौ अस्सीवाँ वर्ष चल रहा था।

OTHER TIRTHANKARS

At the time this book was being written—

(170) It was the five hundred eighty four thousand nine hundred and eightieth year after the Nirvana of Arhat Naminath (the twenty first Tirthankar).

मुणिसुव्वयस्स णं अरहओ कालगयस्स जाव प्पहीणस्स एक्कारस-वास-सय-सहस्साइं चउरासीइं च वास-सहस्साइं, नववास-सयाइं विइक्कंताइं; दसमस्स य वास-सयस्स अयं असीइमे संवच्छरे काले गच्छइ॥१७१॥

(१७१) अर्हत् मुनिसुव्रत के निर्वाण के बाद का ग्यारह लाख चौरासी हजार नौ सौ अस्सीवाँ वर्ष चल रहा था।

(171) It was the one million one hundred eighty four thousand nine hundred and eightieth year (1,184,980) after the Nirvana of Arhat Munisuvrata (the twentieth Tirthankar).

मल्लिस्स णं अरहओ जाव प्पहीणस्स पन्नट्ठिं वास-सय-सहस्साइं चउरासीइं वास-सहसस्साइं, नव य वास-सयाइं विइक्कंताइं; दसमस्स य वास-सयस्स अयं असीइमे संवच्छरे काले गच्छइ॥१७२॥

(१७२) अर्हत् मल्लिनाथ के निर्वाण के बाद का पैंसठ लाख चौरासी हजार नौ सौ अस्सीवाँ वर्ष चल रहा था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(172) It was the six million five hundred eighty four thousand nine hundred and eightieth year after the Nirvana of Arhat Mallinath (the nineteenth Tirthankar).

विस्तार :

अर्हत् मल्लिनाथ का संक्षिप्त जीवन चरित्र

अपर विदेह क्षेत्र की वीतशोका नगरी के राजा महाबल ने उपयुक्त समय जानकर अपने छः बाल मित्र राजाओं से वैराग्य लेने के विषय में उनका मंतव्य चाहा। छहों राजाओं ने एकमत हो उत्तर दिया कि जिस प्रकार सांसारिक जीवन में हमने एक-दूसरे का साथ दिया है वैसे ही वैराग्य पथ पर भी साथ-साथ चलेंगे। सातों ने वरधर्म मुनि के पास दीक्षा ले ली। सातों ने यह प्रण किया कि जो व्रत-तपस्या उनमें से एक करेगा वही सब करेंगे और मोक्ष साथ-साथ जायेंगे। महाबल मुनि सबसे छुपाकर कोई न कोई बहाना बनाकर सबसे अधिक तपस्या करने लगे। उत्कट तपस्या के फलस्वरूप महाबल मुनि ने तीर्थंकर नामकर्म का उपार्जन किया किन्तु साथ ही मायामिश्र तपस्या के कारण स्त्रीवेद बंधन भी कर लिया। ये सातों मित्र अपनी-अपनी आयुष्य पूर्ण कर अनुत्तर विमान में देवता हुए।

देवलोक से च्यवकर महाबल का जीव भरत क्षेत्र की मिथिलानगरी के राजा कुंभ की भार्या रानी प्रभावती की कोख में अवतरित हुआ। स्त्रीवेद के बंधन के कारण यह तीर्थंकर कन्या रूप में जन्मे और इनका नाम मल्लिकुमारी रखा गया। महाबल के मित्र अन्य राजाओं के जीव भी भरत क्षेत्र के अन्य राजाओं के घरों में जन्मे, वे इस प्रकार हैं–साकेतपुर के राजा प्रतिबुद्ध, चंपापुरी के राजा चंद्रच्छाय, श्रावस्तीपुरी का राजा रुक्मि, वाराणसी का राजा शंख, हस्तिनापुर का राजा अदीनशत्रु तथा कंपिल्यपुर का राजा जितशत्रु।

जब मल्लिकुमारी युवावस्था को प्राप्त हुई तो एक दिन उनके पास चोक्षा नामकी एक परिव्राजिका आई। यह परिव्राजिका स्थान-स्थान पर घूमकर अपने इस मत का प्रचार करती थी कि दान तथा तीर्थाभिषेक द्वारा किया गया धर्म ही मोक्ष का हेतु है। सिंहासन पर बैठी मल्लिकुमारी के सामने वह धरती पर आसन बिछाकर बैठ गई और उन्हें अपने मत का उपदेश देने लगी। मल्लिकुमारी ने उसकी बातें सुनकर कहा, "सभी दान धर्म हेतु नहीं किये जाते। तीर्थाभिषेक में भी यदि जीव हिंसा होती हो तो वह पवित्र नहीं होता। रक्त से सने वस्त्र को रक्त से धोने से वह स्वच्छ नहीं हो सकता। धर्म का आधार तो दया एवं विवेक है। अविवेकी को तो तपस्या भी क्लेश ही देती है।" निरुत्तर चोक्षा के मन में आक्रोश उत्पन्न हुआ और उसने किसी प्रकार मल्लिकुमारी का अहित करने की ठान ली। (चित्र ML-1/1)

चोक्षा ने मन में यह निश्चय किया कि इस राजकुमारी के दर्पचूर्ण के लिये इसका विवाह किसी ऐसे राजा से करवाना चाहिए कि जिसके पहले से ही अनेक रानियाँ हों। यह योजना बना वह कंपिल्यपुर के राजा जितशत्रु के पास गई जिसके एक हजार रानियाँ थीं। राजा से उसने मल्लिकुमारी के अपूर्व सौन्दर्य का वर्णन कर कहा कि जब तक वह इस सुन्दरी से विवाह नहीं करता उसके जीवन और अन्तःपुर दोनों सूने हैं। जितशत्रु ने कुंभ राजा के पास प्रस्ताव सहित दूत भेज दिया। (चित्र ML-1/2)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

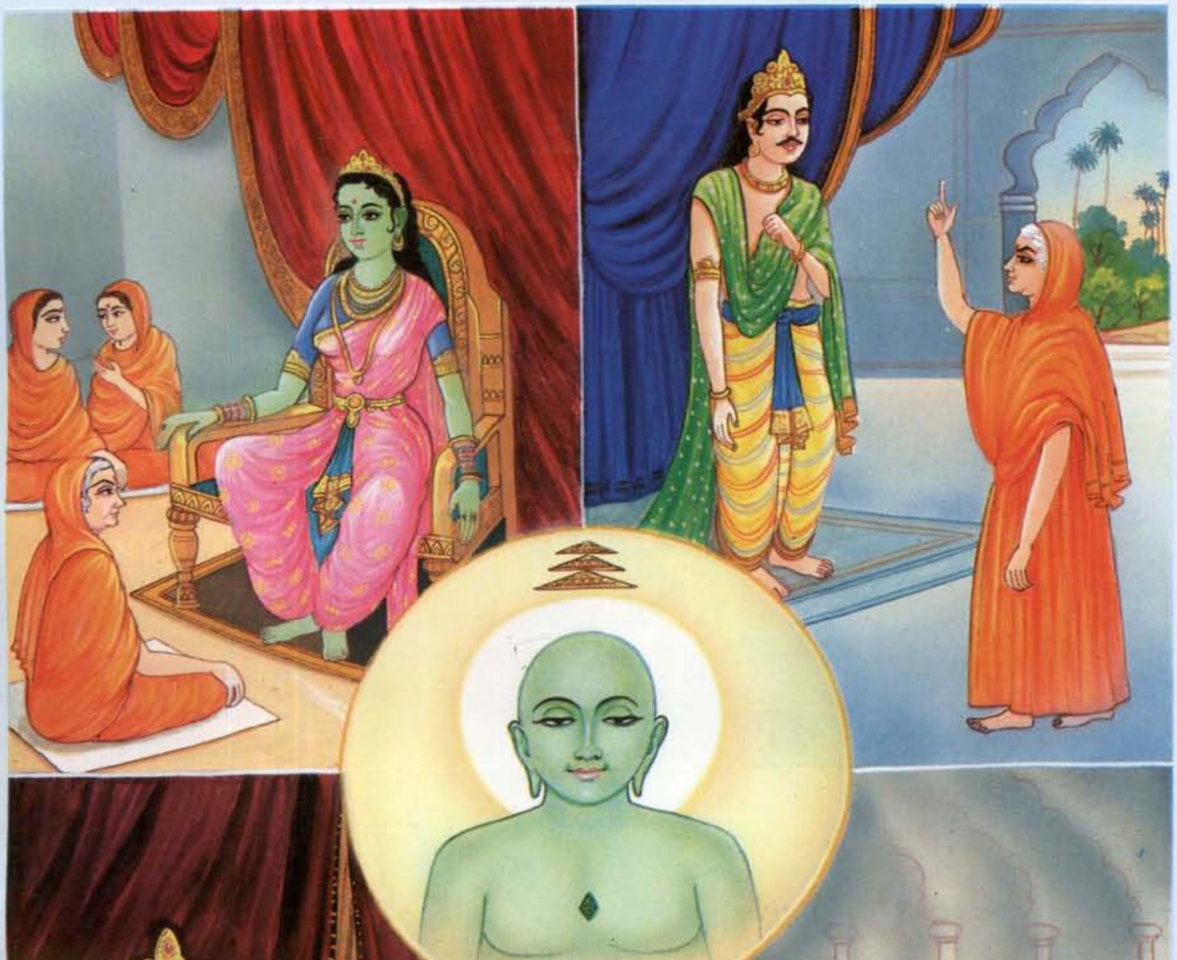

ML 1 (अ) चोखा परिव्राजिका का मल्लीकुमारी के सामने उपदेश (ब) क्रुद्ध चोखा का राजा जितशत्रु के समक्ष मल्लीकुमारी का सौन्दर्य वर्णन (स) छः राजाओं द्वारा मल्लीकुमारी की मूर्ति को निहारना

(a) Mendicant Chokha preaching before mallikumari (b) Annoyed chokha describing the beauty of Mallikumari before king Jitshatru (c) The six kings admiring the statue of Mallikumari

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

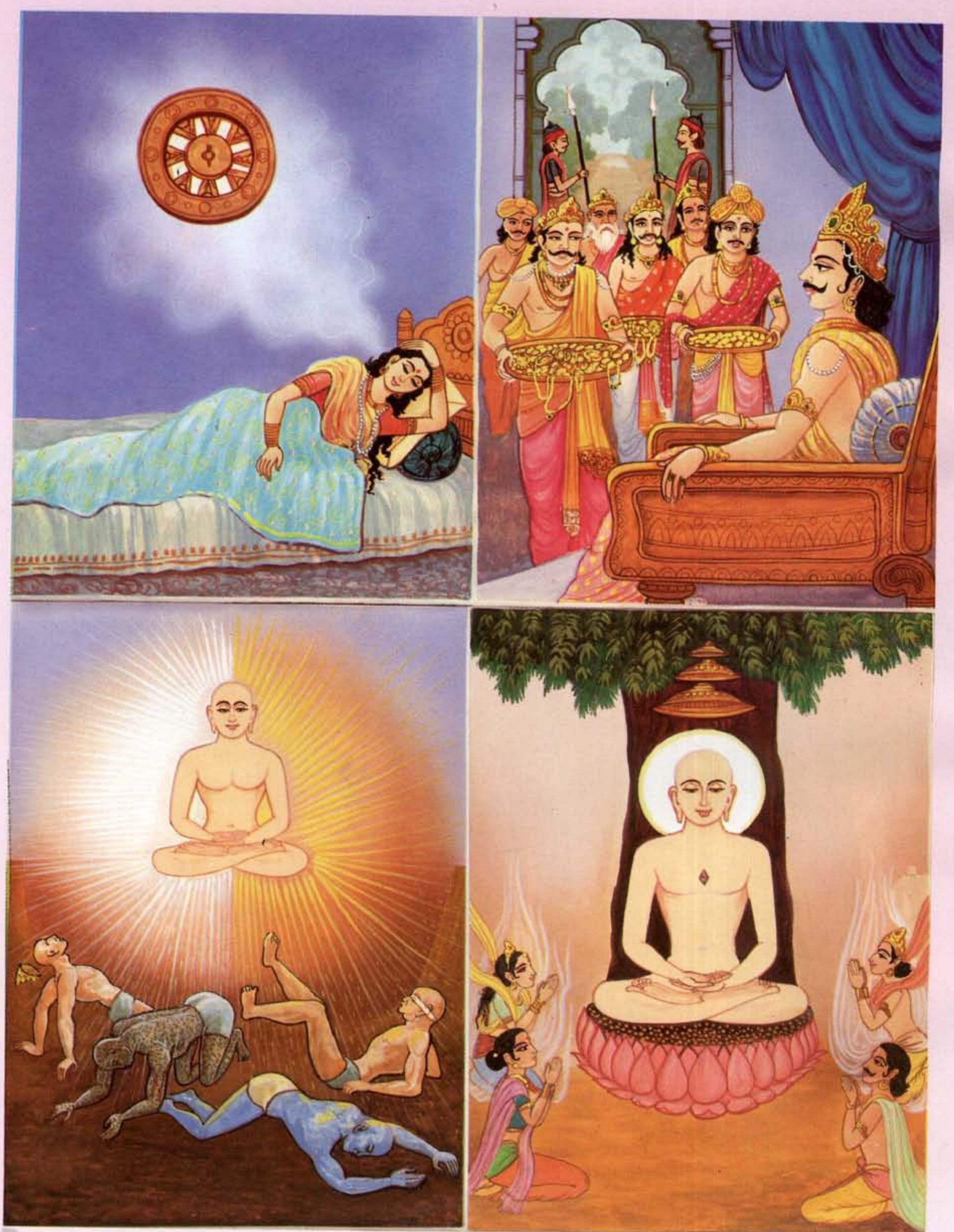

A 1 तीर्थंकर अरनाथ का अवतरण, चक्रवर्तीत्व, घातिकर्म क्षय कर कैवल्य तथा निर्वाण प्राप्ति।
The states of descent, sovereignty, omniscience after destroying Ghatikarmas, and liberation of Tirthankar Aranath

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मल्लिकुमारी के पूर्वभव के मित्र अन्य पाँचों राजाओं ने भी उनके सौन्दर्य की ख्याति सुन अपने-अपने दूत विवाह प्रस्ताव सहित राजा के पास भेज दिये। कुंभ राजा ने सभी दूतों को यह कहकर लौटा दिया कि मेरी पुत्री के योग्य इनमें से कोई भी नहीं है। तब इन राजाओं ने अपने को अपमानित जानकर सैन्य बल सहित आकर मिथिला नगर को चारों ओर से घेर लिया।

मल्लिकुमारी को अपने अवधिज्ञान के कारण सब कुछ ज्ञात था। उन्होंने अपने पूर्वभव के मित्रों को बोध देने हेतु एक योजना बनाई। उन्होंने एक कक्ष बनवाया और उसके बीच में अपनी अनुकृति की एक सुन्दर प्रतिमा बनवाकर रखी। इस प्रतिमा का पेट खोखला था और ग्रीवा के पास से वह खुलती थी। इस कक्ष के चारों ओर छः अन्य कक्ष बनवाये जिनके द्वार इस कक्ष में इस प्रकार खुलते थे कि मूर्ति को छोड़ अन्य कुछ भी दिखाई न दे। यह सब बनवाकर मल्लिकुमारी अपने भोजन में से प्रतिदिन एक कौर उस मूर्ति के भीतर डालने लगी।

मिथिला के घेरे से चिन्तित कुंभ राजा को मल्लिकुमारी ने एक दिन कहा, "आप व्यर्थ चिंतित न हों। इन सब राजाओं को अलग-अलग यह कहलवा भेजें कि मैं उनसे मिलना चाहती हूँ।" प्रत्येक राजा ने यह सोचकर कि केवल मुझे ही बुलाया गया है, स्वीकृति दे दी। निश्चित समय पर सब राजा अलग-अलग आये और उनके निमित्त बनाये छह कक्षों में ले जाए गये। वे अपने-अपने कक्ष से उस मनमोहिनी मूर्ति को मल्लिकुमारी समझ निहारने लगे। तभी मल्लिकुमारी ने मूर्ति का गले वाला ढकना खोल दिया। उसके भीतर से कई दिनों के सड़े अन्न की दुर्गन्ध निकल चारों ओर फैल गई। तीव्र दुर्गन्ध से सभी राजाओं के चेहरे विकृत हो उठे। मल्लिकुमारी ने तब उचित अवसर जान उन्हें प्रतिबोध दिया, "अन्न का एक कौर प्रतिदिन डालने से जो दुर्गन्ध निकली है वह असह्य है। यह शरीर तो इसी अन्न से पोषित हाड़-माँस का पुतला मात्र है। इस पर आसक्ति कैसी? आप सभी मेरे पूर्व जन्म के मित्र हैं, यह आसक्ति त्याग दीजिये और आत्म-कल्याण की अधूरी यात्रा पूरी कीजिये। (चित्र ML-1/3)

छहों राजाओं को जाति-स्मरण ज्ञान उत्पन्न हुआ और वे दीक्षा लेने का निश्चय कर अपने-अपने राज्य को लौट गये। मल्लिकुमारी ने भी अणगार बनने की घोषणा की और वर्षीदान के पश्चात् तीन सौ स्त्रियों और तीन सौ पुरुषों के साथ दीक्षा ग्रहण की। उन्हें दीक्षा के साथ ही मनःपर्यव ज्ञान उत्पन्न हुआ और वे ध्यानमग्न हो गईं। उसी दिन तीसरे प्रहर उन्हें केवलज्ञान उत्पन्न हो गया। दीर्घकाल तक धर्म प्रसार कर वे पाँच सौ श्रमणियों और एक हजार श्रमणों के साथ मोक्ष गईं।

Elaboration :

Brief Story of the Life of Arhat Mallinath

In the area known as Apar Videh, seeing an opportune moment, king Mahabal of Vitashoka city sought the opinion of six other kings, his childhood friends, about renunciation. All the six kings unanimously answered that as they had given company in all mundane activities so would they on the path of renunciation. All these seven kings took Diksha from Varadharma Muni. They also resolved that, whatever penance any one of them will do, the others would follow, so that even in liberation they would be together. Mahabal, however, secretly did more vigorous penance on some pretext or another. As a

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

result of these harsh penances and practices, he earned the Tirthankar nam-karma. At the same time, due to his guileful methods he also acquired the Karma that would make him a female (Strived). Completing their respective ages all these friends reincarnated in the Anuttar dimension of gods.

The being that was Mahabal, leaving the abode of gods, descended into the womb of queen Prabhavati, wife of king Kumbha of Mithila town in the Bharat area. As the result of the 'Strived', this Tirthankar was born as a daughter and was named Malli Kumari. The friends of Mahabal were also born in other ruling families; they are—Pratibuddha of Saket, Chandrachchhay of Champapur, Rukmi of Shravastipur, Shankh of Varanasi, Adinshatru of Hastinapur and Jitshatru of Kampilyapur.

One day, after Malli Kumari had grown older a female mendicant, Choksha, visited her. This mendicant wandered around and taught that charity and the annointing of Tirth (sacred place) are the only religious activities that lead to liberation. She approached the throne on which Malli Kumari was sitting and sat down on the floor after spreading her small carpet. She started expressing her ideas to Malli Kumari. After hearing the talk Malli Kumari said, "Every charity is not done with a religious purpose. Even the annointing of a Tirth is not sacred if it causes the destruction of living organisms. A blood stained cloth can never be cleaned by washing it with blood. The basis of religion is a discerning attitude. To an irrational person, even penance causes discomfort and irritation." This silenced Choksha, but she became angry and decided to do some harm to Malli Kumari. (Illustration ML-1/1)

Choksha decided that, in order to shatter the pride of this princess, it would be best if she could be manipulated into marrying some king who already had many wives. Cooking up her plan, she approached the king of Kampilyapur who had one thousand queens. She gave a titilating description of the divine beauty of Malli Kumari and added that his life and palace both were lack-lustre as long as he did not marry and bring her to his palace. Jitshatru sent his emissary to king Kumbha with a marriage proposal for his daughter. (Illustration ML-1/2)

The fame of the beauty of Malli Kumari also inspired the other five kings, the friends of her last birth, to send proposals of marriage to king Kumbh. Kumbh rejected all these proposals with a comment that his divinely beautiful daughter deserved no less than a king of gods as her husband. The proposing kings felt insulted and marched on Mithila with their armies and surrounded it.

Malli Kumari was aware of all these activities through her Avadhi Jnana (the capacity to know all about the physical world). She made a plan to enlighten these friends of her last birth. She got a chamber made and in its centre installed a statue that was her exact replica. Its inside was hollow and there was an opening hidden under the neck. Six adjacent chambers were also constructed. These had windows opening in the larger chamber; from these openings an onlooker could only see the statue and nothing else. Making all these arrangements, Malli Kumari started putting in one handful of the food she ate everyday.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

One day Malli Kumari said to king Kumbh, who was worried due to the long siege of Mithila, "Stop worrying, father, and inform these kings individually that I want to meet them." Believing that only he had been invited, every one of the kings accepted the invitation. At the predetermined time they all came one by one and were led to the six chambers allotted for them. From the windows in their chambers each one of them gazed at the divinely beautiful statue believing it to be Malli Kumari. All of a sudden Malli Kumari removed the concealed cover from the hole in the neck. The obnoxious smell of decomposed food, collected for several days, filled the chamber. The foul smell hit the peeping kings and there faces distorted with revulsion. Finding the right opportunity Malli Kumari said to them, "The stink caused by just one handfull of food is intolerable. Mind you, this body is nothing but a statue made up of bones and flesh and maintained by the same food. Why so much infatuation for such a decomposable body? You are all friends from my last birth. Get rid of this infatuation and commence once again the terminated pursuit of purification of the self." (Illustration ML-1/3)

All the six kings acquired Jati-smaran Jnana (the knowledge of earlier births). Resolving to follow the path of renunciation they left for their respective kingdoms. Malli Kumari also announced her decision to become ascetic. After the great charity she became an ascetic alongwith three hundred males and three hundred females. Immediately after her Diksha, she acquired Manah-paryava Jnana (the ultimate para-psychological knowledge) and started deep meditation. The same afternoon she attained omniscience. After enhancing the spread of religion for a long period she attained Nirvana with five hundred female and one thousand male ascetics.

अरस्स णं अरहओ जाव प्पहीणस्स एगे वास-कोडि-सहस्से विइक्कंते, सेसं जहा मल्लिस्स। तं च एयं-पंचसट्ठिं लक्खा, चउरासीइ-सहस्सा विइक्कंता, तम्मि समये महावीरो निव्वुओ। तओ परं नवसया विइक्कंता, दसमस्स य वास-सयस्स अयं असीइमे संवच्छरे काले गच्छइ एवं अग्गओ जाव सेयंसो ताव दट्ठव्वं॥१७३॥

(१७३) अर्हत् अरनाथ का निर्वाण अर्हत् मल्लिनाथ के निर्वाण से एक हजार करोड़ वर्ष पहले हुआ था।

(173) Arhat Mallinath attained Nirvana after a hundred billion years of the nirvana of Arhat Arnath (the eighteenth Tirthankar).

विस्तार :

अर्हत् अरनाथ का संक्षिप्त जीवन चरित्र

पूर्वभव में तीर्थंकर अरनाथ का जीव पूर्व विदेह क्षेत्र की सुसीमा नगरी का राजा धनपति था। प्रजा-पालक राजा के रूप में व्यवस्थित राज्य कर उन्होंने संवर मुनि के पास दीक्षा ग्रहण की। उच्चतम साधना से कर्म-निर्जरा कर तीर्थंकर नाम-गोत्र-कर्म अर्जित किया और आयुष्य पूर्ण कर ग्रैवेयक देवलोक में देव बना।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देवलोक से च्यवकर वे हस्तिनापुर के महाराज सुदर्शन की भार्या रानी महादेवी की कुक्षि में अवतरित हुए। अवतरण के समय चौदह महा स्वप्नों के अतिरिक्त, उनके जन्म से पूर्व महादेवी ने एक अन्य स्वप्न में रत्न जड़ित चक्र (अर) देखा था अतः उनका नाम अरकुमार रखा गया।

युवावस्था में प्रवेश करने पर अनेक सुन्दर राजकन्याओं के साथ उनका विवाह हुआ। उपयुक्त समय पर राजा सुदर्शन ने उन्हें राज्य सौंप कर दीक्षा ग्रहण कर ली। कुछ वर्षों तक अरकुमार मांडलिक राजा रहे और तब आयुधशाला में चक्र-रत्न उत्पन्न होने के बाद सार्वभौम चक्रवर्ती बने। उनकी सेवा में बत्तीस हज़ार राजा रहते थे।

दीर्घकाल तक चक्रवर्ती पद भोगकर अरनाथ ने एक हजार राजाओं सहित दीक्षा ली। इनके छद्मस्थ काल के विषय में दो मत हैं—कुछ लोग तीन वर्ष मानते हैं और अन्य तीन दिन। कैवल्य प्राप्ति के बाद इनके समवसरण में भारी संख्या में देव-मानव सभी उपस्थित हुए और अनेकों ने दीक्षा ली। इक्कीस हजार से तीन वर्ष कम समय तक केवली अवस्था में विचरण कर अरनाथ सम्मेत-शिखर पर पधारे और वहाँ मासखमण तप कर ध्यानस्थ हो गये। उन्होंने चारों अघाती कर्मों का नाश कर सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हो निर्वाण प्राप्त किया। (चित्र A-1)

Elaboration :

Brief Story of the Life of Arhat Arnath

The being that became Tirthankar Arnath, in his earlier life, was king Dhanapati of Susima city in the Purva Videh area. After benevolently conducting the affairs of his state he took Diksha from Samvar Muni. By shedding Karmas through higher meditation, he earned the Tirthankar nam-gotra-karma. Completing his age he was reincarnated in the Graiveyaka dimension of gods.

The being that was Dhanapati then left the abode of gods and descended into the womb of queen Mahadevi, wife of king Sudarshan of Hastinapur. Besides the fourteen great dreams that precede the conception of a Tirthankar, Mahadevi also saw a gem studded wheel (Ara) and, accordingly, after the birth the boy was named Ara Kumar.

When Ara Kumar grew to be a young man he was married to many a beautiful princess. At the right moment, king Sudarshan gave the throne to his son and took Diksha. For some years Arnath ruled as a regional king and then the disc weapon appeared in his armoury (the sign of a Chakravarti). He then became Chakravarti, the sovereign monarch of the six continents. In his attendance were thirty two thousand kings.

After ruling for a long period, Arnath renounced everything and took Diksha with one thousand kings. There are two beliefs about the time he spent as an ordinary ascetic. Some believe it to be three years and others three days. After he attained omniscience, gods, human beings and others attended his discourse in large numbers. Spending a long period of twenty one thousand years wandering and promoting religion as an omniscient ascetic, he finally arrived at Sammetshikhar (the Parasnath hills). Observing a month long fast, he started his final meditation. Destroying and getting rid of the four Aghati (non-vitiating or

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

resultant) Karmas, he attained ultimate perfection, enlightenment and liberation and got nirvana. (Illustration A-1)

कुंथुस्स णं अरहओ जाव प्पहीणस्स एगे चउभाग-पलिओवमे विइक्कंते, पंचसट्ठिं च सय-सहस्सा सेसं जहा मल्लिस्स ॥१७४॥

(१७४) अर्हत् कुन्थुनाथ का निर्वाण अर्हत् मल्लिनाथ के निर्वाण से चौथाई पल्योपम वर्ष पहले हुआ था।

(174) Arhat Mallinath attained Nirvana after a quarter Palyopam (a superlative count of time in the Jain system which is the smallest in the sequence of such superlative counts but much larger than the countable numbers) years of the Nirvana of Arhat Kunthunath (the seventeenth Tirthankar).

विस्तार :

अर्हत् कुन्थुनाथ का संक्षिप्त जीवन चरित्र

पूर्व महाविदेह क्षेत्र की खड्गी नामक नगरी के राजा थे प्रबल प्रतापी सिंहावह। वे बहुत धार्मिक प्रवृत्ति के थे। वे भोजनादि भोग्य सामग्री का भोग भी निस्पृह योगी के समान करते थे। पुत्र के योग्य हो जाने पर उसे राज्य दे उन्होंने संवराचार्य के पास दीक्षा ले ली। विकट तपस्या और अर्हत् आराधना आदि के फलस्वरूप उन्होंने तीर्थंकर नाम-गोत्र-कर्म अर्जित किया। आयुष्य पूर्ण कर उन्होंने सर्वार्थसिद्ध नामक देवलोक में जन्म लिया।

सिंहावह राजा का जीव सर्वार्थसिद्ध देवलोक से च्यवकर हस्तिनापुर के राजा शूरसेन की भार्या रानी श्रीदेवी की कुक्षि में अवतरित हुआ। जन्म से पूर्व रानी श्रीदेवी ने कुन्थु नामक रत्नों की राशि का स्वप्न दर्शन किया था अतः शिशु का नाम कुन्थुकुमार रखा गया। युवावस्था प्राप्त होने पर कुंथुकुमार का विवाह अनेक सुन्दर गुणवती राज कन्याओं से किया गया। उपयुक्त समय पर राजा शूरसेन ने कुंथुकुमार का राज्याभिषेक किया और स्वयं दीक्षा ग्रहण कर ली।

कुछ समय बाद आयुधशाला में चक्र-रत्न प्रकट हुआ और कुंथुनाथ ने षट्खण्ड विजय के लिए सैन्य सहित प्रयाण किया। बिना युद्ध के समस्त राजाओं ने उनका आधिपत्य स्वीकार कर लिया और कुंथुनाथ चक्रवर्ती बन गए। तेईस हजार साढ़े सात सौ वर्ष के चक्रवर्ती काल के बाद वे एक हजार राजाओं के साथ अणगार बन गये। दीक्षा के तत्काल बाद ही उन्हें मनःपर्यव ज्ञान उत्पन्न हो गया। उनका छद्मस्थ काल सोलह वर्ष का था। इसके पश्चात् वे सहस्राम्र वन में आये और वहाँ तिलक वृक्ष के नीचे ध्यानमग्न हो गये जहाँ उन्हें केवलज्ञान प्राप्त हुआ।

केवलज्ञान प्राप्त होने के बाद कुंथुनाथ ने तेईस हजार सात सौ चौंतीस वर्ष तक विहार कर धर्म प्रभावना की। इसके बाद वे सम्मेत शिखर पहुँचे, जहाँ एक माह का निर्जल उपवास कर निर्वाण को प्राप्त

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हुए। कुंथुनाथ के प्रति लोगों के हृदय में गहरी आस्था थी इस कारण उनकी निर्हरण क्रिया के समय असंख्य लोग एकत्र हो गये थे। निर्हरण क्रिया को इन लोगों ने भारी हृदय और आँसू भरे नेत्रों से देखा। प्रभु के अस्थि अवशेष देवता पूजन हेतु अपने साथ ले गये। (चित्र K-1)

Elaboration :

Brief Story of the Life of Arhat Kunthunath

The name of the powerful and illustrious king of Khadgi town in Purva Mahavideh area was Simhavaha. He was very devoted and religious. His indulgence in essentials like food was also like that of a detached yogi. When his son became young and capable he handed over his kingodm to the son and took Diksha from Samvaracharya. As a result of his vigorous penances and devotion for the Arhat, he earned the Tirthankar nam--gotra-karma. Completing his age he reincarnated in the Sarvarthasiddha dimension of gods.

The being that was Simhavaha descended from the Sarvarthasiddha dimension of gods into the womb of queen Shridevi wife of king Shursen of Hastinapur. As before the birth of her son the queen saw in her dream a heap of gemstones known as Kunthu, the name given to the new born was Kunthu Kumar. When the boy grew into a young man he was married to several beautiful and virtuous princesses. At the proper time, king Shursen arranged for the coronation of prince Kunthu and became an ascetic.

After some time the divine disc weapon appeared in Kunthunath's armoury and he set out with his army to conquer the six continents. Without any war all the kings accepted his sovereignty and Kunthunath became a Chakravarti (sovereign monarch of six continents). After a long and peaceful reign of twenty three thousand seven hundred and fifty years, he became an ascetic along with one thousand kings. Immediately after his taking Diksha, he attained Manahparyava Jnana. He spent sixteen years as an ordinary ascetic. Then he attained omniscience when he was standing in meditation under a Tilak tree in the Sahasramra Jungle.

As an omniscient ascetic Kunthunath wandered around and promoted true religion for twenty three thousand seven hundred thirty four years. He then went to Sammetshikhar and observed a month-long fast before breathing his last. His followers were deeply devoted to him. As such, a large crowd was present at the moment of his Nirvana and cremation ceremony. They witnessed the ceremony with heavy hearts and tear filled eyes. The mortal remains of the Arhat were taken away by the gods for worship. (Illustration K-1)

संतिस्स णं अरहओ जाव प्पहीणस्स एगे चउभागूणे पलिओवमे विइक्कंते पन्नट्ठिं च । सेसं जहा मल्लिस्स ॥१७५॥

(१७५) अर्हत् शान्तिनाथ का निर्वाण अर्हत् मल्लिनाथ के निर्वाण से पौन पल्योपम वर्ष पहले हुआ था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

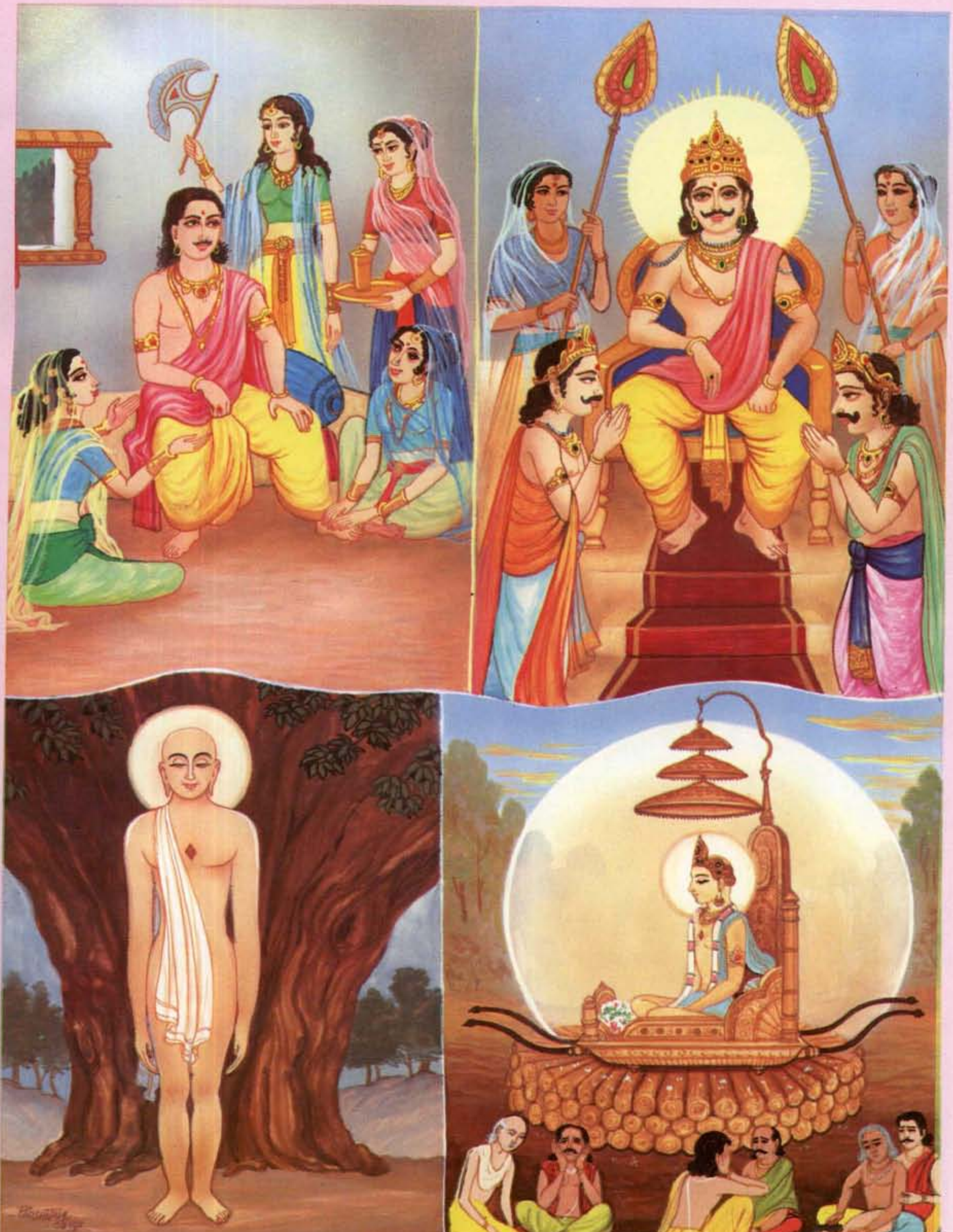

K 1 अर्हत् कुन्थुनाथ का भोगमय जीवन, चक्रवर्तीत्व, कायोत्सर्ग तपश्चरण तथा निर्हरण क्रिया।
The states of earlier birth, sovereignty, meditation, and passing away of Arhat kunthunath

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

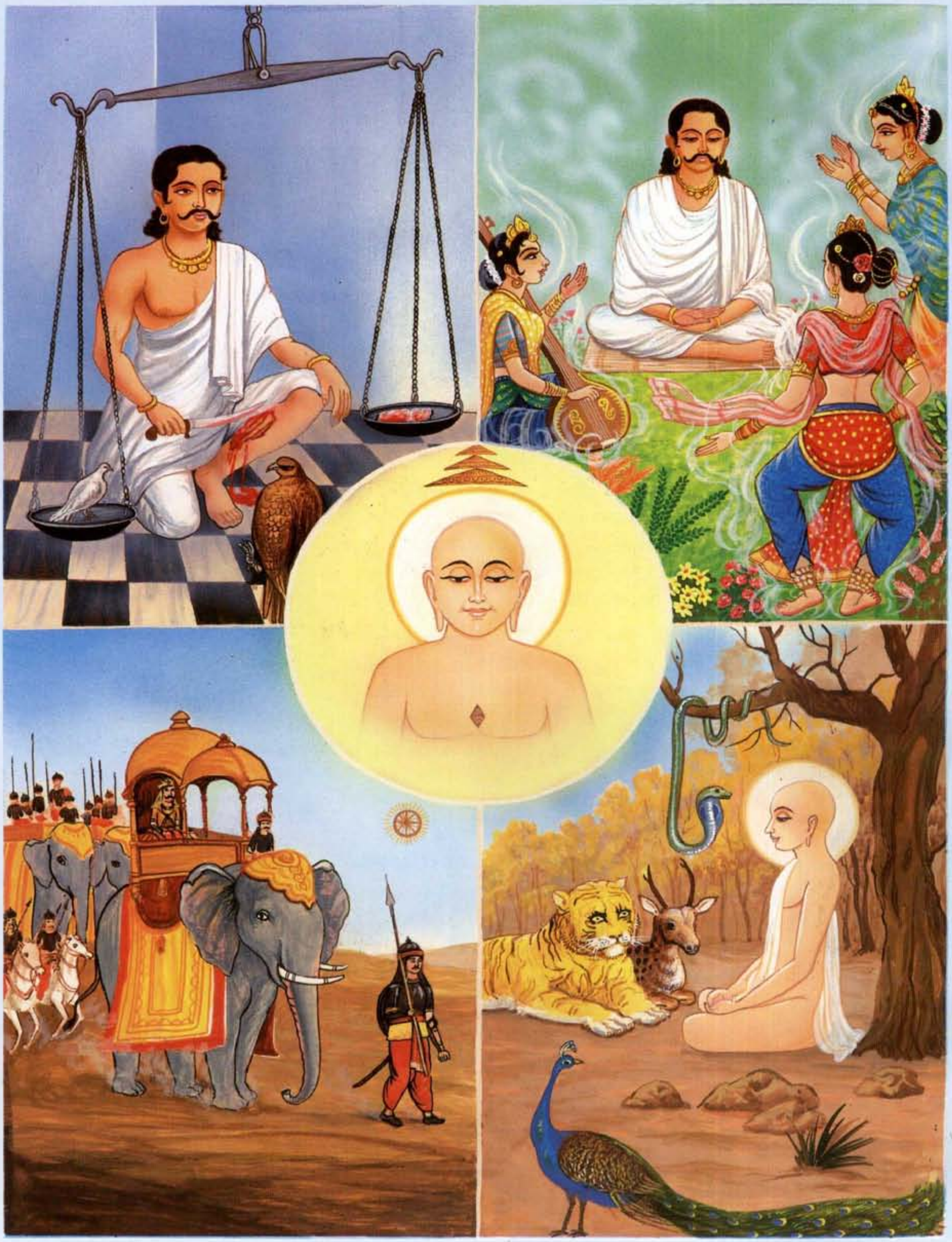

S 1 (अ) राजा मेघरथ का देहदान (व) ध्यान योग मग्न राजा मेघरथ (स) चक्र के पीछे शांतिनाथ की दिग्विजय यात्रा (द) वन में ध्यानलीन अर्हत् शान्तिनाथ।

(a) Charity of his own flesh by king Meghrath (b) Meghrath in deep meditation (c) Shantinath's war march following the Chakra (d) Arhat Shantinath meditating in Jungle

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(175) Arhat Mallinath attained Nirvana after three quarters of Palyopam years of the Nirvana of Arhat Shantinath (the sixteenth Tirthankar).

विस्तार :

अर्हत् शान्तिनाथ का संक्षिप्त जीवन चरित्र

अर्हत् शान्तिनाथ के जीव ने आत्मशुद्धि की दिशा में अपनी यात्रा आरंभ कर श्रीसेन व वज्रायुध के भवों में यथेष्ट विकास किया। इसके बाद पूर्व महाविदेह क्षेत्र की पुण्डरीकिणी नगरी के धनरथ राजा के पुत्र मेघरथ के रूप में जन्म लिया। उचित समय पर राजा धनरथ ने मेघरथ को राज्य सौंप कर दीक्षा ले ली। मेघरथ धार्मिक प्रवृत्ति के प्रजापालक राजा थे। एक दिन वे पौषध ले तीर्थंकर प्रदत्त धर्म का व्याख्यान देने को तत्पर हुए। उनके सभासद व्याख्यान सुनने सम्मुख बैठे थे। तभी भय से काँपता एक कपोत उनकी गोद में आ गिरा। राजा ने दयार्द्र हो उसे अभय का आश्वासन दिया। इतने में एक बाज पक्षी वहाँ आया और मानवी भाषा में राजा से कहा, "हे राजन्! यह कपोत मेरा भक्ष्य है, इसे छोड़ दो।" राजा ने उसे समझाते हुए कहा कि यह मेरा शरणागत है अतः इसकी प्राणरक्षा मेरा धर्म है। बाज ने पुनः कहा, "इसे न छोड़ने से क्षुधा से मेरी मृत्यु हो जायगी। मैं किसकी शरण में जाऊँ। मैं तो स्वभावतः माँसभक्षी हूँ, मेरी भूख कौन मिटाएगा।" मेघरथ ने कहा, "हे बाज! मेरे रहते तू नहीं मरेगा, ले मैं अपने शरीर से इस कपोत के तोल के बराबर माँस काटकर देता हूँ। तू अपनी भूख मिटा ले।" और राजा ने तराजू के एक पलड़े में कबूतर को रखा और दूसरे में अपने शरीर से माँस काट-काटकर रखने लगा। आश्चर्य! राजा जितना माँस डालता कबूतर का वजन उतना ही बढ़ता जाता। राजा के सभासदों में हाहाकार मच गया। अंत में राजा स्वयं तुला के पलड़े में बैठ गये। तभी एक दिव्य व्यक्ति प्रकट हुआ और बोला, "महाराज! ईशानेन्द्र अपनी सभा में आपकी प्रशंसा कर रहे थे। मुझसे सुनकर रहा नहीं गया। मैं आपकी परीक्षा लेने चला आया। आप धन्य हैं। मेरा अपराध क्षमा करें।" और उस देवता ने राजा को पुनः स्वस्थ कर प्रस्थान किया। (चित्र S-1/1)

कपोत और बाज की इस घटना और उन दोनों प्राणियों के पूर्वभव का वृत्तान्त जानकर राजा मेघरथ में वैराग्य भावना का संचार हुआ और वे कायोत्सर्ग मुद्रा में ध्यानमग्न हो गये। उनके शुद्ध ध्यान को देख ईशानेंद्र ने उन्हें श्रद्धापूर्वक वन्दन किया। उनकी सुरूपा और अतिरूपा नाम की दो मुख्य इन्द्राणियों को इससे आश्चर्य हुआ। वे दोनों राजा का ध्यान भंग करने हेतु वहाँ आईं और अनेक सुन्दर युवतियों को प्रकट कर अनेक प्रकार के हाव-भाव व नृत्यादि से राजा का ध्यान भंग करने की चेष्टा की। सारी रात अनुकूल परिषह करने पर भी जब राजा मेघरथ अचल रहे तो इन्द्राणियों ने प्रकट हो क्षमा-याचना की और अपने स्थान को लौट गईं। (चित्र S-1/2)

राजा मेघरथ ने फिर अपने पुत्र को राज्य सौंप अर्हत् धनरथ के पास दीक्षा ली। अनेक उपसर्ग सहन करते हुए शुद्ध ध्यान के फलस्वरूप तीर्थंकर नाम-गोत्र-कर्म अर्जित किया और आयुष्य पूर्ण कर सर्वार्थसिद्ध विमान में देवता बने।

मेघरथ का जीव सर्वार्थसिद्ध विमान से आयुष्य पूर्ण कर हस्तिनापुर के राजा विश्वसेन की भार्या रानी अचिरा के गर्भ में अवतरित हुआ। ज्येष्ठ कृष्णा तेरस के दिन भरणी नक्षत्र का योग आने पर बालक का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जन्म हुआ। पुत्र के गर्भ में आने के बाद राज्य में सभी प्रकार के उत्पात शांत हो गये थे इस कारण उसका नाम शांतिनाथ रखा गया। युवावस्था प्राप्त होने पर उनका विवाह अनेक सुन्दर राज-कन्याओं के साथ किया गया। उपयुक्त समय पर राजा विश्वसेन ने शांतिनाथ का राजतिलक किया और स्वयं दीक्षा ग्रहण कर ली।

कुछ वर्षों बाद उनके एक पुत्र हुआ जिसका नाम चक्रायुध रखा गया। इसके भी कई वर्ष बाद शांतिनाथ की आयुधशाला में चक्र-रत्न प्रकट हुआ। परम्परानुसार जब उस चक्र की पूजा की गई तो वह स्वतः ही पूर्व दिशा की ओर चलने लगा। शान्तिनाथ ने भी अपने सैन्य बल सहित चक्र के पीछे प्रयाण किया। अधिकांश राजाओं ने शान्तिनाथ के सम्मुख समर्पण कर दिया। केवल कुछ स्थानों पर युद्ध कर, शान्तिनाथ ने षट्खण्ड पर अधिकार कर चक्रवर्ती पद प्राप्त किया। (चित्र S-1/3)

अनेक वर्षों तक शान्तिपूर्वक राज्य कर, उपयुक्त समय आया जानकर शान्तिनाथ ने सहस्राम्र वन में दीक्षा ग्रहण की और ध्यान में लीन हो गये। एक वर्ष विहार करने के बाद वे पुनः उसी वन में आये और वहाँ पौष शुक्ल नवमी के दिन उन्हें केवलज्ञान उत्पन्न हुआ। इसके बाद दीर्घकाल तक विहार कर धर्म प्रभावना करते हुए वे सम्मेत-शिखर पधारे। वहाँ नौ सौ मुनियों के साथ मासखमण तप कर ध्यानमग्न हो गये। ज्येष्ठ कृष्णा त्रयोदशी के दिन अर्हत् शांतिनाथ का निर्वाण हुआ। (चित्र S-1/4)

Elaboration :

Brief Story of the Life of Arhat Shantinath

After commencing its journey toward purity the being that was to be Arhat Shantinath, developed considerably during its incarnations as Shrisen and Vajrayudh. Then it reincarnated as Meghrath, the son of king Dhanarath of Pundarikini town in Purva Mahavideh area. At the proper time, king Dhanarath gave the resposibility of the kingdom to Meghrath and took Diksha.

Meghrath was a benevolent and religious ruler. One day, while observing the partial renunciation vow (Paushadha), he was about to start a discourse on the religion propagated by the Tirthankaras. All of a sudden a pigeon, trembling with fear, fell in his lap. The compassionate king comforted and took the bird under his protection. The pigeon was followed by a falcon who uttered in human language, "O king! This pigeon is my food, leave it alone." The king explained, "It has taken refuge with me, as such I am duty bound to protect it." The falcon replied, "If you do not leave it I will die of hunger. Where shall I take refuge? I am a carnivore; who will provide me food?" Meghrath said, "O falcon! As long as I exist, I will not allow you to die. I will cut out flesh from my body equivalent to the weight of this pigeon and give it to you. Satisfy your urge to eat." And the king put the pigeon in one pan of a balance and in the other started putting pieces of flesh cut out from his body. Surprisingly, the weight of the pigeon continued to increase as king went on putting his flesh in the other pan. The people present in the assembly were panic stricken. At last the king got up from his seat and sat down in the pan. There was a flash of divine light and a divine personage appeared. He addressed the king as follows, "Maharaj! The king of gods was praising you in his assembly. I could not contain myself and came around

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

to test you. You are worthy of the praise. Please forgive me." The god filled Meghrath's wounds instantaneously and left for his abode. (Illustration S-1/1)

After this incident, and knowing about the earlier births of pigeon and the falcon, the king was filled with a feeling of detachment and he started deep meditation. Knowing about the higher level of his meditation, the king of gods bowed to him with reverence. His two senior consorts, Surupa and Atirupa, did not like this gesture. They both came to disturb the meditation of Meghrath. They made several beautiful and voluptuous damsels appear before the king. These beauties tried to disturb Meghrath by a display of dances and inviting gestures. When these night long seductive afflictions failed to disturb king Meghrath, the goddesses appeared and asked the king to forgive them before returning to their abode. (Illustration S-1/2)

King Meghrath, then, coronated his son and took Diksha from Arhat Dhanarath. Due to his increasing purity in meditation in the face of many afflictions, he earned the Tirthankar-nam-gotra-karma. Completing his age he was reincarnated in the Sarvartha-siddh dimension of gods.

Completing his age in the dimension of gods, the being that was Meghrath descended into the womb of queen Achira, wife of king Vishvasen of Hastinapur. On the thirteenth day of the dark half of the month of Jyeshtha, when the moon entered the second lunar mansion--Bharani--the queen gave birth to a son. As all types of disturbances in the state were pacified since the day of conception, the boy was named Shanti (peace) nath. When he came of age he was married to several beautiful princesses. At the proper time, king Vishvasen gave the kingdom to Shantinath and took Diksha.

After a few years Shantinath got a son who was named Chakrayudh. Several years later, the divine disc weapon appeared in the armoury of Shantinath. When the traditional worship rituals of this weapon were concluded, it started moving toward the east on its own. Shantinath followed the Chakra with his armed forces. Most of the kings on the way surrendered to Shantinath. After defeating a few rulers, Shantinath conquered the six continents and became a Chakravarti. (Illustration S-1/3)

When after a long and peaceful reign, he realised that the moment for his renunciation was approaching, Shantinath went into the Sahasramra jungle, and, becoming an ascetic, commenced his practices. After wandering as an ascetic for one year he returned to the same jungle and there, on the ninth day of the bright half of the month of Paush, he attained omniscience. He came to Sammetshikhar after a long period of wandering and propagating true religion. There alongwith nine hundred other ascetics. He observed a month long fast that started his final meditation on the thirteenth day of the dark half of the month of Jyeshtha Arhat Shantinath attained Nirvana. (Illustration S-1/4)

धम्मस्स णं अरहओ जाव प्पहीणस्स तिन्नि सागरोपमाइं विइक्कंताइं पन्नट्ठिं च। सेसं जहा मल्लिस्स ॥१७६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(१७६) अर्हत् धर्मनाथ का निर्वाण अर्हत् मल्लिनाथ के निर्वाण से तीन सागरोपम पहले हुआ था।

(176) Arhat Dharmanath (fifteenth Tirthankar) attained nirvana three Sagaropam (a superlative unit of count larger than palyopam) years before the nirvana of Arhat Mallinath.

अणंतस्स णं जाव प्पहीणस्स सत्त-सागरोवमाइं विइक्कंताइं-पन्नट्ठिं च। सेसं जहा मल्लिस्स ॥१७७॥

(१७७) अर्हत् अनन्तनाथ का निर्वाण अर्हत् मल्लिनाथ के निर्वाण से सात सागरोपम पहले हुआ था।

(177) Arhat Anantnath (fourteenth Tirthankar) attained nirvana seven Sagaropam years before the nirvana of Arhat Mallinath.

विमलस्स णं जाव प्पहीणस्स सोलह सागरोवमाइं विइक्कंताइं पन्नट्ठिं च। सेसं जहा मल्लिस्स ॥१७८॥

(१७८) अर्हत् विमलनाथ का निर्वाण अर्हत् मल्लिनाथ के निर्वाण से सोलह सागरोपम वर्ष पहले हुआ था।

(178) Arhat Vimalnath (thirteenth Tirthankar) attained nirvana sixteen Sagaropam years before thr nirvana of Arhat Mallinath.

वासुपुज्जस्स णं अरहओ जाव प्पहीणस्स छायालीसं सागरोवमाइं विइक्कंताइं, पण्णट्ठिं च। सेसं जहा मल्लिस्स ॥१७९॥

(१७९) अर्हत् वासुपूज्य का निर्वाण अर्हत् मल्लिनाथ के निर्वाण से छियालीस सागरोपम वर्ष पहले हुआ था।

(179) Arhat Vasupujya (twelfth Tirthankar) attained nirvana forty six Sagaropam years before the nirvana of Arhat Mallinath.

सेज्जंसस्स णं अरहओ जाव प्पहीणस्स एगे सागरोवम-सए विइक्कंते, पन्नट्ठिं च। सेसं जहा मल्लिस्स ॥१८०॥

(१८०) अर्हत् श्रेयांस का निर्वाण अर्हत् मल्लिनाथ के निर्वाण से एक सौ सागरोपम वर्ष पहले हुआ था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(180) Arhat Shreyansa (eleventh Tirthankar) attained nirvana one hundred Sagaropam years before the nirvana of Arhat Mallinath.

सीयलस्स णं जाव प्पहीणस्स एगा सागरोवम-कोडी तिवास-अद्धनव-मासाहिय-बायालीस-वास-सहस्सेहिं ऊणिया विइक्कंता, एयम्मि समए महावीरे निव्वुए। तओ वि य णं परं नववास-सयाइं विइक्कंताइं, दसमस्स य सयस्स अयं असीइमे संवच्छरे काले गच्छइ ॥१८१॥

(१८१) अर्हत् शीतलनाथ का निर्वाण अर्हत् महावीर के निर्वाण से एक करोड़ सागरोपम में बयालीस हजार तीन वर्ष और साढ़े आठ महीने कम समय पूर्व हुआ था।

(181) Arhat Sheetalnath (tenth Tirthankar) attained nirvana before a period of forty two thousand three years and eight and a half months less than ten million Sagaropam years of the nirvana of Arhat Mahavir.

विस्तार :

अर्हत् शीतलनाथ का संक्षिप्त जीवन चरित्र

भावी अर्हत् शीतलनाथ का जीव अपने पूर्व जन्म में पुष्करवर द्वीप की सुसीमा नामक नगरी का राजा पद्मोत्तर था। धर्मशील राजा ने अपने पुत्र के योग्य होने पर उसे राज्य सौंप त्रिस्ताध मुनि के पास दीक्षा ली। अपूर्व तपस्या और आगमोक्त बीस स्थानकों की आराधना के फलस्वरूप पद्मोत्तर ने तीर्थंकर नाम-गोत्र-कर्म का उपार्जन किया। आयुष्य पूर्ण कर वे प्राणत देवलोक में इन्द्र बने।

भरत क्षेत्र के भद्दिलपुर नगर में दृढरथ नामक राजा राज्य करते थे। दृढरथ की रानी नंदा की कोख में प्राणत देवलोक से पद्मोत्तर का जीव आयुष्य पूर्ण कर अवतरित हुआ।

एक दिन महाराज दृढरथ के शरीर में किसी व्याधि के कारण तीव्र जलन होने लगी। अनेक प्रकार की औषधियों का लेप करवाने पर भी उन्हें शान्ति नहीं मिली। तभी अनायास ही गर्भवती महारानी नंदा ने उनके शरीर पर हाथ फेरा। इस स्पर्शमात्र से उनकी देह की जलन शान्त हो गई और सारे शरीर में अपूर्व शीतलता व्याप्त हो गई। इस घटना के पश्चात् महाराज ने निश्चय किया कि जन्म के बाद पुत्र का नाम शीतल रखेंगे। (चित्र G/3)

शीतलनाथ का जन्म माघ कृष्णा द्वादशी के दिन हुआ। युवा होने पर माता-पिता के आग्रह से उन्होंने विवाह किया। उपयुक्त समय पर राजा दृढरथ ने उन्हें राज्य सौंप कर दीक्षा ले ली। दीर्घकाल तक अपने राज्य का व्यवस्थित शासन कर, शीतलनाथ गृह त्याग कर अणगार बन गये। पौष कृष्णा चतुर्दशी के दिन पीपल वृक्ष के नीचे उन्हें केवलज्ञान उत्पन्न हुआ। धर्म प्रभावना करते अनेक वर्ष बाद सम्मेत शिखर पर वैशाख कृष्णा द्वितीया के दिन प्रभु का निर्वाण हुआ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Elaboration :

Brief Story of the Life of Arhat Sheetalnath

The being that was to be Arhat Sheetalnath in his previous but one birth was the king of Susima town in the Pushkarvar island. His name was Padmottar. When his son reached adulthood the religious king gave his kingdom to the son and took Diksha from Tristadha Muni. Vigorous spiritual practices and worship of the pious states as mentioned in the scriptures resulted in his acquiring the Tirthankar-nam-karma-gotra-karma. Completing his age he reincarnated as the king of the Pranat dimension of gods.

In Bhaddilpur town in the sub-continent of Bharat ruled king Dridharath. In the womb of his queen, Nanda, descended the being that was Padmottar after completing his age in the Pranat dimension of gods.

One day, due to some strange ailment, king Dridharath had an acute burning sensation in his body. He did not get any relief even after applying a variety of ointments. Out of anxiety the queen put her palm on his body. This simple touch of the queen relieved the burning sensation and a feeling of soothing relief swept his body. After this incident the king decided to name the new born as Sheetal (cool/calm). (Illustration G/3)

Sheetalnath was born on the twelfth day of the dark half of the month of Magh. When he grew older he married at the request of his parents. At the proper time, king Dridharath coronated him and took Diksha. After a long and successful reign Sheetalnath left his home and became an ascetic. He attained omniscience under a Peepal tree on the fourteenth day of the dark half of the month of Paush. After wandering and preaching for a long time he came to Sammetshikhar and attained nirvana on the second day of the dark half of the month of Vaishakha.

सुविहिस्स णं अरहओ पुप्फदंतस्स काल जाव प्पहीणस्स दस-सागरोवम-कोडीओ विइक्कंताओ, सेसं जहा सीयलस्स। तं च इमं-तिवास-अद्ध-नवमासाहिय-बायालीस-वास-सहस्सेहिं ऊणिया विइक्कंता इच्चाइ ॥१८२॥

(१८२) अर्हत् सुविधिनाथ (अपर नाम पुष्पदन्त) का निर्वाण अर्हत् महावीर के निर्वाण से दस करोड़ सागरोपम में बयालीस हजार तीन वर्ष और साढ़े आठ महीने कम समय पूर्व हुआ था।

(182) Arhat Suvidhinath a Puspadant (the ninth Tirthankar) attained nirvana before a period of forty two thousand three years and eight and a half months less than a hundred million Sagaropam years of the nirvana of Arhat Mahavir.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चंदप्पहस्स णं अरहओ जाव प्पहीणस्स एगं सागरोवम-कोडीसयं विइक्कंतं । सेसं जहा सीयलस्स, तं च इमं-तिवास-अद्ध-नवमासाहिय-बायालीस-वास-सहस्सेहिं ऊणगमिच्चाइ ॥१८३॥

(१८३) अर्हत् चन्द्रप्रभ का निर्वाण अर्हत् महावीर के निर्वाण से एक सौ करोड़ सागरोपम में बयालीस हजार तीन वर्ष और साढ़े आठ महीने कम समय पूर्व हुआ था।

(183) Arhat Chandraprabh (the eighth Tirthankar) attained nirvana before a billion Sagaropam less forty two thousand three years and eight and a half months of the nirvana of Arhat Mahavir.

सुपासस्स णं जाव प्पहीणस्स एगे सागरोवम-कोडी-सहस्से विइक्कंते, सेसं जहा सीयलस्स। तं च इमं-तिवास-अद्ध-नव-मासाहिय-बायालीस-सहस्सेहिं ऊणिया विइक्कंता इच्चाइ ॥१८४॥

(१८४) अर्हत् सुपार्श्वनाथ का निर्वाण अर्हत् महावीर के एक हजार करोड़ सागरोपम में बयालीस हजार तीन वर्ष और साढ़े आठ महीने कम समय पूर्व हुआ था।

(184) Arhat Suparshvanath (the seventh Tirthankar) attained nirvana before ten billion Sagaropam less forty two thousand years and eight and a half months of the nirvana of Arhat Mahavir.

पउमप्पहस्स णं अरहओ जाव प्पहीणस्स णं दस-सागरोवम-कोडि-सहस्सा विइक्कंता, सेसं जहा सीयलस्स। तं च इमं-तिवास-अद्ध-नव-मासाहिय-बायालीस-सहस्सेहिं ऊणिया विइक्कंता इच्चाइयं।॥१८५॥

(१८५) अर्हत् पद्मप्रभ का निर्वाण अर्हत् सुपार्श्व के निर्वाण से नौ हजार करोड़ सागरोपम वर्ष पूर्व हुआ था।

(185) Arhat Padmaprabh (the sixth Tirthankar) attained nirvana before a period of forty two thousand three years and eight and a half months less than ninety billion Sagaropam years of the nirvana of Arhat Mahavir.

विस्तार :

अर्हत् पद्मप्रभ का संक्षिप्त जीवन चरित्र

पूर्व विदेह क्षेत्र की सुसीमा नगरी के राजा थे महाराज अपराजित। वे बड़े सरल हृदय व धार्मिक व्यक्ति थे। एक बार अर्हत् वचन सुनकर उन्हें वैराग्य भावना उत्पन्न हुई और उन्होंने आचार्य पिहिताश्रव के पास

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दीक्षा ग्रहण कर ली। दीर्घकाल की आध्यात्मिक साधना के फलस्वरूप तीर्थंकर नाम-गोत्र-कर्म का उपार्जन कर आयुष्य पूर्ण कर ये ग्रैवेयक देवलोक में देवता बने।

देवलोक से आयुष्य पूर्ण कर, कौशांबी नगर के राजा धर की महारानी सुसीमा के गर्भ में अपराजित का जीव अवतरित हुआ। गर्भवती महारानी सुसीमा को एक बार कमल पुष्पों की सेज पर सोने का दोहद उत्पन्न हुआ, जिसे देवताओं ने पूर्ण किया। कार्तिक कृष्ण द्वादशी के दिन चित्रा नक्षत्र का योग आने पर महारानी सुसीमा ने पुत्र को जन्म दिया। यह पुत्र भी कमल पुष्पों की सी कान्ति वाला था। महाराज धर ने उसका नाम पद्मप्रभ रखा। (चित्र G/2)

युवावस्था में उपयुक्त समय पर महाराज धर ने आग्रहपूर्वक उनका विवाह किया और फिर राजतिलक कर स्वयं दीक्षा ग्रहण कर ली। दीर्घकाल तक राज्य करने के बाद पद्मप्रभ अणगार बने। चैत्री पूर्णिमा के दिन वट वृक्ष के नीचे उन्हें केवलज्ञान उत्पन्न हुआ। अनेक वर्षों तक धर्म प्रभावना करने के पश्चात् अर्हत् पद्मप्रभ का सम्मेत-शिखर पर मार्गशीर्ष कृष्णा एकादशी के दिन निर्वाण हुआ।

Elaboration :

Brief Story of the Life of Arhat Padmaprabh

Maharaj Aparajit ruled over Susima town in the Purva Videh area. He was a simple and religious person. He got detached after listening to the discourse of an Arhat and took Diksha from Acharya Pihitashrava. As a result of long spiritual practices he earned the Tirthankar-nam-karma-gotra-karma. Completing his age, he was reincarnated as a god in the Graiveyak dimension of gods.

Completing his age in the dimension of gods, the being that was Aparajit descended into the womb of queen Susima, wife of the king of Kaushambi town. One day queen Susima, had a desire of sleeping on a bed made up of lotus flowers. As this was a desire of a pregnant mother, the gods made arrangements for its fulfilment. On the twelfth day of the dark half of the month of Kartik the queen gave birth to a son. The new born also had a soft pink glow like lotus flowers. The king named him as Padmaprabh. (Illustration G/2)

When the prince became older the king persuaded him to marry, and, at an opportune time giving the throne to him, the king took Diksha. After a long and successful reign Padmaprabh became an ascetic. On the full moon day of the bright half of the month of Chaitra he attained omniscience under a banyan tree. Propagating religion for a long time, Padmaprabh wandered and at last arrived at Sammetshikhar. He got nirvana on the eleventh day of the dark half of the month of Margshirsh.

सुमइस्स णं अरहओ जाव प्पहीणस्स एगे सागरोवम-कोडिसय-सहस्से विइक्कंते; सेसं जहा सीयलस्स। तिवास अद्ध-नवमासाहिय-बायालीस-सहस्सेहिं इच्चाइयं ॥१८६॥

(१८६) अर्हत् सुमतिनाथ का निर्वाण अर्हत् पद्मप्रभ के निर्वाण से नब्बे हजार करोड़ सागरोपम वर्ष पूर्व हुआ था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(186) Arhat Sumatinath (the fifth Tirthankar) attained nirvana before nine hundred billion Sagaropam years of the nirvana of Arhat Padmaprabh.

विस्तार :

अर्हत् सुमतिनाथ का संक्षिप्त जीवन चरित्र

पूर्व महाविदेह क्षेत्र के शंखपुर नगर के राजा विजयसेन थे। उनके पुरुषसिंह नामक पुत्र था। एक दिन राजकुमार उद्यान में घूमने गया था तब वहाँ आचार्य विनयनंदन देव का प्रवचन सुन उसे वैराग्य उत्पन्न हुआ और उसने दीक्षा ग्रहण कर ली। उत्कृष्ट तप और आध्यात्मिक साधना के पश्चात् उसने तीर्थंकर नाम-गोत्र-कर्म का उपार्जन किया और आयुष्य पूर्ण कर वह विजयंत देवलोक में देव बना।

अयोध्या के राजा मेघ की रानी मंगलावती के गर्भ में पुरुषसिंह का जीव देवलोक का आयुष्य पूर्ण कर अवतरित हुआ। पुत्र जन्म के बाद नामकरण उत्सव के समय राजा मेघ ने इस घटना का उल्लेख किया :

कुछ माह पूर्व मेरी राज्यसभा में एक जटिल समस्या आई। एक व्यापारी के दो पत्नियाँ थीं जिनमें से एक के एक पुत्र था तथा दूसरी के कोई सन्तान नहीं थी। पुत्र का लालन-पालन दोनों ने ही स्नेहपूर्वक किया था। अकस्मात् व्यापारी का देहान्त हो गया और तब उसकी दोनों पत्नियाँ सम्पत्ति तथा पुत्र के लिये झगड़ने लगीं। बालक भी दोनों का समान स्नेह-भाजन होने के कारण यह इंगित कर पाने में असमर्थ था कि उसकी वास्तविक माता कौन थी। बालक का जन्म भी कहीं दूर स्थान में हुआ था, अतः उस घटना का साक्षी भी उपलब्ध नहीं था। नगर के पंच व अन्य अधिकारी जब कोई निर्णय नहीं ले सके तो मेरे पास आये। बहुत चेष्टा के बाद मैं भी इस समस्या का हल नहीं कर सका। जब गर्भवती महारानी को इस बात का पता चला तो उन्होंने कहा कि पुत्र सहित दोनों माताओं को उनके समक्ष प्रस्तुत किया जाय वे इस समस्या का समाधान करेंगी।

महारानी के पास दोनों वणिक पत्नियों को उपस्थित किया गया। उन्होंने सारा विवाद शान्तिपूर्वक सुन कर कहा, "इस समस्या का कोई सामान्य हल नहीं निकल सकता। वस्तु एक है और अधिकार जताने वाले दो। हमारे गर्भ में एक पुण्यात्मा जीव पल रहा है, जब इसका जन्म होगा तब वही इसका निर्णय करेगा। तब तक दिवंगत सेठ की संपत्ति और सन्तान राजकीय संरक्षण में रहेगी।" यह सुनते ही असली माता ने कातर स्वर में कहा, "महारानी जी! मुझे अन्य कुछ भी नहीं चाहिए। किन्तु मैं अपने पुत्र से विलग नहीं हो सकती। सारी संपत्ति उसको दे दीजिए, मुझे सिर्फ मेरा पुत्र दिला दीजिए।" दूसरी माता भी इस पर सहमत हो गई। तब रानी मंगलावती ने मातृ-हृदय की पीड़ा पहचानते हुए कहा कि असली माता तो वह है। इसको पुत्र मिलना चाहिए। संपत्ति लोभी माता को दण्डित करने पर उसने और सच्चाई उगल दी।

"गर्भ स्थित बालक के प्रभाव के कारण महारानी की न्याय-बुद्धि विकसित हुई इस कारण इस बालक का नाम सुमति रखा जायेगा।" (चित्र G/1)

युवावस्था प्राप्त होने पर सुमतिकुमार का विवाह हुआ और फिर राजा मेघ ने उन्हें राज्य सौंप दीक्षा ले ली। दीर्घकाल तक धर्मपूर्वक शासन कर वे अणगार बने। चैत्र शुक्ला एकादशी को प्रियंगु वृक्ष के नीचे उन्हें केवलज्ञान प्राप्त हुआ तथा चैत्र शुक्ला नवमी के दिन सम्मेत-शिखर पर उनका निर्वाण हुआ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Elaboration :

Brief Story of the Life of Arhat Sumatinath

Vijayasen was the king of Shankhpur town in the Purva Mahavideh area. He had a son named Purushasimha. One day the prince, while he had gone for a walk in the garden, listened to the discourse of Acharya Vinayanadan Dev. He became detached and became an ascetic. As a result of vigorous penances and higher spiritual practices, he earned the Tirthankar nam-gotra-karma. Completing his age, he reincarnated as a god in the Vijayant dimension of gods.

After completing his age in the dimension of gods, the being that was Purushasimha descended into the womb of queen Mangalavati, wife of king Megh of Ayodhya. After the birth of the son, at the time of the naming ceremony, the king related the following incident :

A few months back in my assembly a complicated case was brought to my notice. A merchant had two wives. One of them had a son and the other had no issue. The son was brought up by both ladies with due care and affection. All of a sudden the merchant expired and both his wives started claiming his property as well as the son. The son could not indicate his true mother with confidence as he got equal affection from both. As the boy was born in some remote place there was no eye witness available. When the town elders and other officers could not resolve the dispute, they approached me. Even after a lot of probing and analysis, I too could not arrive at any conclusion. When the pregnant queen heard of this she asked both the women and their son to be presented before her, for she wanted to solve the problem herself.

Both the wives of the merchant were brought before the queen. She patiently heard the details of the dispute and said, "This enigma has no simple solution. There is one object and two claiments. I carry a pious soul in my womb. Let us wait till he is born and is ready to resolve this issue. During this period of waiting, let the son and the property of the deceased be taken into the custody of the state". On hearing this the real mother pleaded, "Your Highness! I do not require anything. But I cannot live without my son. You may give all the wealth to the other woman but kindly let me have my son". The other woman also agreed to this proposal. Appreciating the feeling of a mother, queen Mangalavati decided that the woman pleading to get the child is the real mother. As such, she should certainly get her son. The greedy woman confirmed the truth when she was punished.

"Due to the influence of the foetus the queen had developed a sense of discernment and justice; because of this the new born would be named Sumati (right thinking)". (Illustration G/1)

When he became a young man, Sumati Kumar was married and in due course inherited the kingdom. King Megh became an ascetic. After a long and peaceful reign Sumatinath became an ascetic. He attained omniscience under a Priyangu tree on the eleventh day of the bright half of the month of Chaitra. He got nirvana on Sammetshikhar on the ninth day of the bright half of the month of Chaitra.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

G (अ) महारानी मंगलावती का न्याय (ब) महारानी सुसीमा का पद्म शैय्या पर सोने का दोहद (स) महाराज दृढ़रथ के शरीर के ताप को महारानी के स्पर्श से शान्ति

(A) The justice of queen Mangalavati (B) Queen Susima's desire to sleep on lotus bed (C) The relief to king Dridharath by touch of his queen.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अभिणंदणस्स णं जाव प्पहीणस्स दस सागरोवम-कोडी-सय-सहस्सा विइक्कंता; सेसं जहा सीयलस्स, तिवास-अद्ध-नव-मासाहिय-बायालीस-सहस्सेहिं इच्चाइयं॥१८७॥

(१८७) अर्हत् अभिनन्दन का निर्वाण अर्हत् सुमतिनाथ के निर्वाण से नौ लाख करोड़ सागरोपम वर्ष पहले हुआ था।

(187) Arhat Abhinandan (the fourth Tirthankar) attained nirvana before nine trillion Sagaropam years of the nirvana of Arhat Sumatinath.

विस्तार :

अर्हत् अभिनन्दन का संक्षिप्त जीवन चरित्र

पूर्व विदेह की रत्नसंचया नगरी के राजा थे महाबल। उपयुक्त समय पर उन्होंने वैराग्य भावना से प्रेरित होकर विमल सूरि के पास दीक्षा ली। गहन ध्यान और बीस स्थानक की आराधना के फलस्वरूप महाबल ने तीर्थंकर नाम-गोत्र-कर्म का बन्धन किया। आयुष्य पूर्ण कर वे विजय विमान में देवता बने।

महाबल का जीव विजय विमान से आयुष्य पूर्ण कर अयोध्या नगरी के महाराज संवर की रानी सिद्धार्था की कोख में अवतरित हुआ। यथा समय पुत्र जन्म हुआ। उसकी गर्भावस्था में समस्त राज्य में अभूतपूर्व शांति छायी रही। सभी प्रजाजनों में परस्पर अद्‌भुत सौहार्द बना रहा। सभी परस्पर एक-दूसरे का अभिनन्दन करते रहते थे। हर्ष और आनन्द के प्रेरक होने के कारण भी माता-पिता ने शिशु का नाम अभिनन्दन रखा। (चित्र G-2/4)

अर्हत् अभिनन्दन ने अनेक वर्ष राज्य कर दीक्षा ले ली और कठोर तपस्या व ध्यान साधना के बाद पौष कृष्ण चतुर्दशी के दिन केवलज्ञान प्राप्त किया। इनका निर्वाण वैशाख शुक्ला अष्टमी को सम्मेत-शिखर पर हुआ।

Elaboration :

Brief Story of the Life of Arhat Abhinandan

Mahabal was the king of Ratnasanchaya town in Purva Videh. When a feeling of detachment grew in him, he found an opportune moment and took Diksha from an ascetic named Vimal Suri. As a result of deep meditation and worship of the twenty auspicious things he earned the Tirthankar-nam-karma-gotra-karma. Completing his age, he reincarnated as a god in the Vijaya dimension.

The being that was Mahabal, after completing his age in the Vijaya dimension of gods, descended into the womb of queen Siddhartha, wife of king Samvar of Ayodhya. During his period of conception there was unprecedented peace all over the kingdom. All the groups of citizens had an astonishing deep feeling of fraternity and goodwill. As all this happiness and joy appeared to have been inspired by his coming into mundane existence the parents named the new born Abhinandan. (Illustration G-2/4)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

After a long reign Arhat Abhinandan became an ascetic. After rigorous penance and deep spiritual practices, he attained omniscience on the fourteenth day of the dark half of the month of Paush. He attained nirvana on the eighth day of the bright half of the month of Vaishakha.

संभवस्स णं अरहओ जाव प्पहीणस्स वीसं सागरोवम-कोडिसय-सहस्सा विइक्कंता। सेसं जहा सीयलस्स, तिवास-अद्ध-नवमासाहिय-बायालीस-वास-सहस्सेहिं इच्चाइयं ॥१८८॥

(१८८) अर्हत् संभवनाथ का निर्वाण अर्हत् अभिनन्दन के निर्वाण से दस लाख करोड़ सागरोपम वर्ष पहले हुआ था।

(188) Arhat Sambhavanath (the third Tirthankar) attained nirvana before ten trillion Sagaropam years of the nirvana of Arhat Abhinandan.

विस्तार :

अर्हत् संभवनाथ का संक्षिप्त जीवन चरित्र

धातकीखंड की क्षेमपुरी नगरी के राजा थे विपुलवाहन। वे सहृदय तथा प्रजापालक राजा थे। एक बार अकाल पड़ने पर उन्होंने अपनी भोजनशाला के द्वार साधु श्रमणों के लिए खोल दिये, खाद्यान्न के गोदामों के द्वार प्रजा के लिए और खजाने के द्वार विदेश से अन्न मँगाने के लिए। इस निस्पृह मैत्री व दया भाव के कारण जो आत्मिक शुद्धि हुई उससे उन्हें तीर्थंकर नाम-गोत्र-कर्म का उपार्जन हुआ। एक दिन छत पर खड़े उन्होंने पवन के वेग से घने बादलों को तितर-बितर होते देखा तो उन्हें वैराग्य उत्पन्न हो गया और पुत्र को राज्य सौंप उन्होंने स्वयंप्रभ सूरि के पास दीक्षा ले ली। तपस्या, साधना और आराधना से आत्मा को और निर्मल किया और आयुष्य पूर्ण कर आनत देवलोक में जन्म लिया।

आनत देवलोक से आयुष्य पूर्ण कर विपुलवाहन का जीव श्रावस्ती के राजा जितारि की भार्या रानी सेनादेवी की कोख में अवतरित हुआ। उनके गर्भ काल में महाराज जितारि और महारानी सेना जब भी महल की ऊँची छत से चारों ओर देखते उन्हें हरियाली ही हरियाली नजर आती और सारे खेत शंबा (मूँगफली) धान से भरे पूरे दिखाई देते। इस कारण, जन्म होने पर इस पुत्र का नाम उन्होंने शंभव या संभवनाथ रखा। (चित्र G-2/3)

युवा होने पर संभवनाथ का विवाह और राजतिलक हुए। व्यवस्थित और समृद्धिपूर्ण शासन के पश्चात् वे मार्गशीर्ष सुदी पूर्णिमा को अणगार बने। चौदह वर्ष के साधना काल के बाद उन्हें केवलज्ञान उत्पन्न हुआ। अर्हत् संभवनाथ का निर्वाण चैत्र शुक्ला पंचमी को हुआ।

Elaboration :

Brief Story of the Life of Arhat Sambhavanath

Vipulvahan was the king of Kshempuri town in Dhatakikhand (a mythical area). He

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

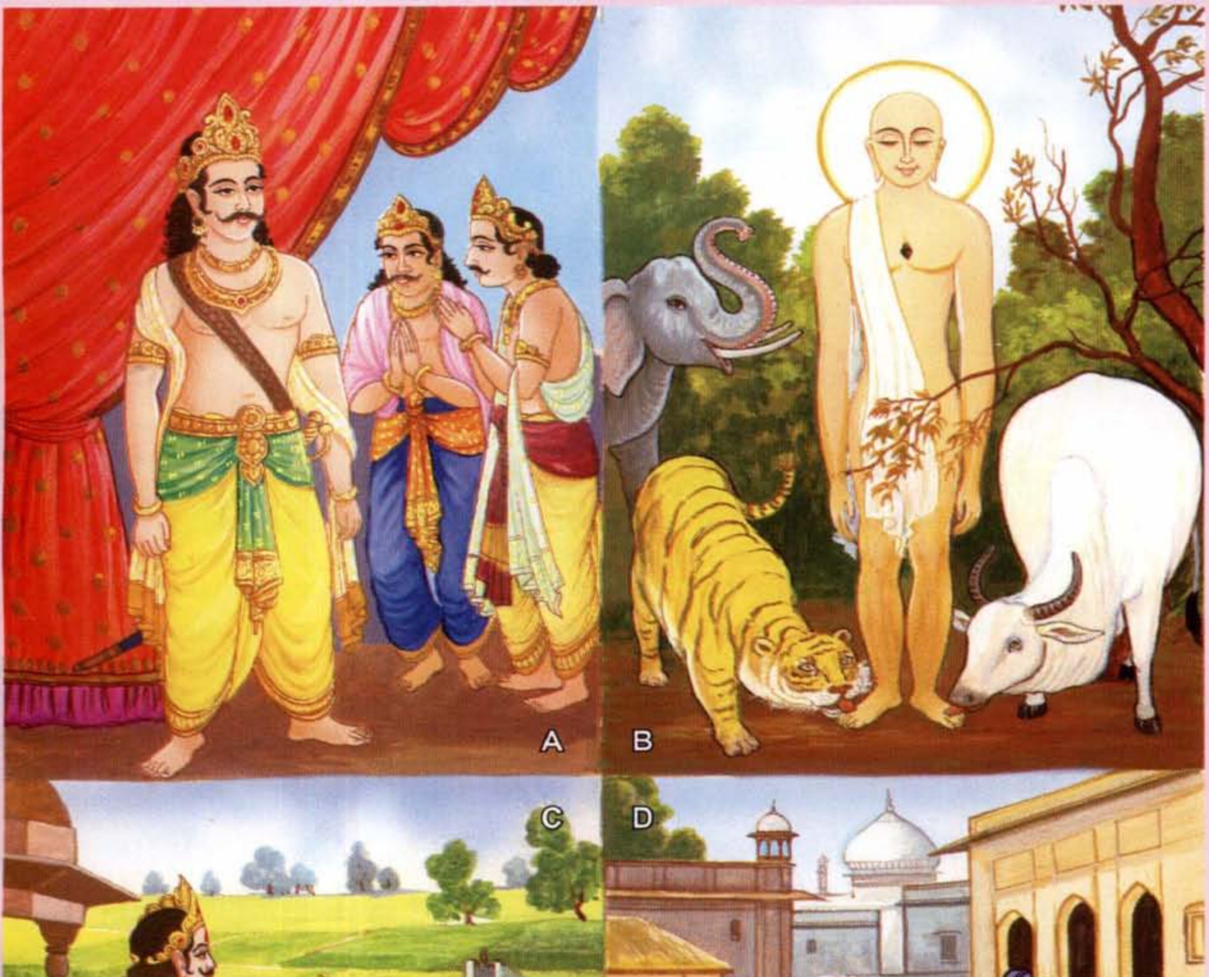

G2 (अ) राजा जितशत्रु दूसरों के समक्ष स्वयं को अजेय समझने लगे (ब) भ. अजितनाथ की ध्यान साधना
(स) राजा जितारि एवं सेना देवी द्वारा नगरावलोकन (द) अयोध्या के प्रजानन परस्पर अभिवादन करने लगे
(A) King Jitashatru believing himself to be unconquerable (B) Ajitnath in meditation
(C) King Jitari and Senadevi enjoying the view of the city (D) Citizens of Ayodhya greeting one another

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

was a soft hearted king who loved his subjects. Once, when there was a draught, he opened his grain yards for the public, his kitchen for the monks and mendicants, and his treasury for the import of food grains. As a result of this detached feeling of fraternity and compassion, he acquired a unique purity of soul and also earned the Tirthankar-nam-karma-gotra-karma. One day while he was standing on the roof top he witnessed dense clouds being scattered by winds. A feeling of intense detachment grew in him. He handed over his kingdom to his son and took Diksha from Svayamprabh Suri. With the help of penance, worship and spiritual practices he further purified his soul; after completing his age, he reincarnated in the Anat dimension of gods.

Completing his age in the Anat dimension, the being that was Vipulvahan descended into the womb of queen Senadevi, wife of king Jitari of Shravasti town. During her pregnancy, whenever the queen went to the high roof top with the king both of them saw lush green fields all around. All the farms appeared to be full of ground-nut (Shamba) plants. This inspired them to name their son as Shambhava or Sambhavanath. (Illustration G-2/3)

At the appropriate age Sambhavanath was married and coronated. After a peaceful reign he became an ascetic on the fifteenth day of the bright half of the month of Mangasar. After a fourteen year period of spiritual practices, he attained omniscience. Arhat Sambhavanath got nirvana on the fifth day of the bright half of the month of Chaitra.

अजियस्स णं जाव प्पहीणस्स पन्नासं सागरोवम कोडि-सय-सहस्सा विइक्कंता। सेसं जहा सीयलस्स। तिवास-अद्ध-नवमासाहिय-बायालीस-वास-सहस्सेहिं इच्चाइयं॥१८९॥

(१८९) अर्हत् अजितनाथ का निर्वाण अर्हत् संभवनाथ के निर्वाण से तीस लाख करोड़ सागरोपम वर्ष पहले हुआ था।

(189) Arhat Ajitnath (the second Tirthankar) attained nirvana before thirty trillion Sagaropam years of the nirvana of Arhat Sambhavanath.

विस्तार :

अर्हत् अजितनाथ का संक्षिप्त जीवन चरित्र

विदेह क्षेत्र की सुसीमा नगरी के शासक थे महाराज विमलवाहन। राज्य वैभव के बीच उन्होंने समत्वपूर्ण जीवन बिताया और उचित समय आने पर अरिंदम सूरि के पास दीक्षा ले ली। अर्हत् आदि शुद्ध आत्माओं के ध्यान में लीन उन्होंने उत्कृष्ट तपस्या की और अपनी आत्मा को शुद्धि के उस स्तर पर ले गये जहाँ तीर्थंकर नाम-गोत्र-कर्म का उपार्जन होता है। आयुष्य पूर्ण कर वे विजय नामक अनुत्तर विमान में देवता बने।

देवलोक में अपनी आयुष्य पूर्ण कर विमलवाहन का जीव भरत क्षेत्र की विनीता नगरी के राजा जितशत्रु की रानी विजयादेवी की कोख में अवतरित हुआ। उस समय एक अद्भुत घटना घटी। जैसे रानी विजयादेवी ने चौदह स्वप्न देखे ठीक वही चौदह स्वप्न राजा के छोटे भाई सुमित्र की पत्नी ने भी देखे। स्वप्नवेत्ताओं से परामर्श करने पर उन्होंने बताया कि विजयादेवी का पुत्र तीर्थंकर बनेगा और वैजयन्ती का पुत्र चक्रवर्ती।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुत्र की गर्भावस्था में महाराज जितशत्रु का प्रभाव इतना बढ़ा कि शत्रु राजा भी उनसे मित्रता करने को तत्पर हो उठे। इससे प्रेरित हो उन्होंने अपने पुत्र का नाम अजित रख दिया। उसी रात वैजयन्ती ने भी एक पुत्र को जन्म दिया जिसका नाम सगर रखा गया। दोनों के युवा होने पर उनके विवाह कर दिये गये। फिर महाराज जितशत्रु ने वैराग्य लेने का निश्चय किया। उन्होंने अपने छोटे भाई सुमित्र को राज्य देना चाहा पर उसने भी वैराग्य लेने का निश्चय किया। तब जितशत्रु ने अजितनाथ का राज्याभिषेक किया। दोनों के पुत्रों के आग्रह पर सुमित्र घर में ही रहकर साधना करने को राजी हो गये और जितशत्रु ने दीक्षा ले ली। (चित्र G-2/1)

दीर्घकाल तक शान्तिपूर्वक शासन कर अजितनाथ सगर को राज्य सौंप अणगार बन गये। बारह वर्ष की कठोर तपस्या और उत्कृष्ट साधना के बाद उन्हें केवलज्ञान उत्पन्न हुआ। अर्हत् अजितनाथ लम्बे समय तक धर्म प्रभावना कर सम्मेत-शिखर आये और वहाँ उन्हें चैत्र शुक्ला पंचमी के दिन निर्वाण प्राप्त हुआ। (चित्र G-2/2)

Elaboration :

Brief Story of the Life of Arhat Ajitnath

King Vimalavahan ruled over Susima town in the Videh area. He led a pious life amidst the princely grandeur, and at an appropriate time became an ascetic under Arindam Suri. Meditating about the omniscient and liberated souls and indulging in harsh penance, he purified his soul to a level where he could earn the Tirthankar nam-gotra-karma. Completing his age, he reincarnated as a god in the Vijay-anuttar dimension.

After completing his age in the dimension of gods, he descended into the womb of queen Vijayadevi, wife of king Jitshatru of Vinita town in Bharata area. As it happens, queen Vijayadevi had fourteen auspicious dreams. Vaijayanti, the wife of king Jitshatru's younger brother, Sumitra, also had the same fourteen dreams; which was a queer coincidence. When the augurs were consulted they proclaimed after deliberations that Vijayadevi will give birth to a Tirthankar and Vaijayanti to a Chakravarti (monarch of six continents).

During the period of the queen's pregnancy the influence of king Jitshatru was elevated to an extant that even the enemy kingdoms sought and negotiated for friendly treaties with him. Inspired by this, he named the new born as Ajit. The same night Vaijayanti also gave birth to a son who was named Sagar. When both the princes came of age they were married. Later when king Jitshatru decided on renunciation he called his younger brother and asked him to accept the throne. Sumitra had no desire for the throne as he too wanted to become an ascetic. The king then called Ajitnath and put him on the throne with due ceremonies. At the request of both the young princes, Sumitra agreed to pursue his spiritual goal while remaining at home and king Jitshatru became an ascetic (Illustration G-2/1)

After a long and peaceful reign Ajitnath handed over his kingdom to Sagar and became an ascetic. After a twelve year period of deep meditation and other spiritual practices he attained omniscience on the eleventh day of the bright half of the month of Paush. Wandering and propagating true religion he arrived at Sammetshikhar and attained nirvana on the fifth day of the bright half of the month of Chaitra. (Illustration G-2/2) ■■

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कौशलिक अर्हत् ऋषभदेव

तेणं कालेणं तेणं समएणं उसहेणं अरहा कोसलिए चउ उत्तरासाढे अभीइ-पंचमे होत्था; तं जहा–उत्तरासाढाहिं चुए, चइत्ता गब्भं वक्कंते, जाव अभीइणा परिनिव्वुए॥१९०॥

(१९०) काल के उस भाग में कौशलिक अर्हत् ऋषभदेव के चार कल्याणक उत्तराषाढ़ा नक्षत्र में हुए। वे इस प्रकार हैं–च्यवन, जन्म, प्रव्रज्या और केवलज्ञान। अन्तिम एक निर्वाण कल्याणक अभिजित् नक्षत्र में हुआ।

KAUSHALIK ARHAT RISHABHDEV

(190) During that period in that age, the four auspicious events in the life of Kaushalik Arhat Rishabhdev occurred when the moon was in the twenty first (Uttarashadha) lunar mansion. They are—Descent, Birth, Renunciation, and Omniscience. The last auspicious event, Nirvana, occurred when the moon was between twenty first and twenty second lunar mansions (this phase is popularly known as the Abhijit lunar mansion).

तेणं कालेणं तेणं समएणं उसभेणं अरहा कोसलिए जे से गिम्हाणं चउत्थे मासे सत्तमे पक्खे, आसाढ-बहुले, तस्स णं आसाढ-बहुलस्स चउत्थी-पक्खेणं सव्वट्ठ-सिद्धाओ महाविमाणाओ तेत्तीस-सागरोवम-ट्ठिईयाओ अणंतरं चयं चइत्ता, इहेव जंबूद्दीवे दीवे भारहे वासे इक्खागभूमीए नाभिस्सकुलगरस्स मरुदेवीए भारियाए पुव्वरत्तावरत्त-काल-समयंसि आहार-वक्कंतीए जाव गब्भत्ताए वक्कंते॥१९१॥

(१९१) काल के उस भाग में गर्मी का चौथा महींना और सातवाँ पक्ष चल रहा था। तेतीस सागरोपम की आयु पूरी कर भावी ऋषभदेव के जीव ने सर्वार्थसिद्ध नाम के देवलोक से आषाढ़ कृष्ण चतुर्थी के दिन प्रयाण किया। वह जीव जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में नाभि नामक कुलकर की भार्या मरुदेवी की कुक्षि में मध्यरात्रि के समय उत्तराषाढ़ा नक्षत्र का योग आने पर अवतरित हुआ। (विस्तृत विवरण पूर्व-सम)

(191) During that time in that age it was the fourth month and the seventh fortnight of the summer season. On the fourth day of the dark half

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

of the month of Ashadh, the soul that was to be Rishabhdev left the Sarvarthasiddha dimension of gods after completing his thirty three Sagaropam years age. This soul descended into the womb of Marudevi, the wife of chief (Kulkar) Nabhi of Bharat area in the Jambu continent, when the moon entered the Uttarashadha lunar mansion at midnight. (details as earlier)

विस्तार :

अन्य सूत्रों तथा टीकाओं के अनुसार ऋषभदेव के जीव ने आत्म-शुद्धि की ओर अपनी विकासयात्रा श्रेष्ठी धनवाह के रूप में आरंभ की थी। अपने अंतिम भव के पूर्व उसके बारह भव इस प्रकार रहे– १. धनश्रेष्ठी, २. उत्तर कुरु क्षेत्र में युगलिक, ३. सौधर्म देवलोक में देवता, ४. महाविदेह क्षेत्र में गंधस्मृति नगर के राजा महाबल, ५. ईशान देवलोक में ललितांग देव, ६. पूर्व विदेह क्षेत्र की पुष्कलावती नगरी के राजा वज्रजंघ, ७. उत्तर कुरुक्षेत्र में युगलिक, ८. सौधर्म देवलोक में देवता, ९. विदेह क्षेत्र के क्षितिप्रतिष्ठित नगर में वैद्य-पुत्र जीवानन्द, १०. अच्युत देवलोक में देवता, ११. पूर्व विदेह क्षेत्र में चक्रवर्ती वज्रनाभ, तथा १२. सर्वार्थसिद्ध देवलोक में देवता।

Elaboration :

According to other scriptures and commentaries the being that was to be Rishabhdev started its ascent towards purity in its birth as merchant Dhana. His twelve incarnations prior to the final birth were—1. The merchant Dhana, 2. A twin in north Kurukshetra, 3. A god in the Saudharma dimension, 4. King Mahabal of Gandhasmriti town in Mahavideh area, 5. The god Lalitanga in the Ishan dimension, 6. King Vajrajangha of Pushkalavati town in the east Videh area, 7. A twin in north Kurukshetra, 8. A god in the Saudharma dimension, 9. The Vaidya (medicine man) Jivanand of Kshitipratishthita town in Videh region, 10. A god in the Achyuta dimension, 11. The Chakravarti Vajranabh in the east Videh area, and 12. A god in the Sarvarthasiddha dimension.

उसभेणं अरहा कोसलिए तिन्नाणोवगए यावि होत्था, तं जहा–चइस्सामि त्ति जाणइ, जाव सुमिणे पासइ; तं जहा–गय वसह. गाहा सव्वं तहेव, नवरं पढमं उसभं मुहेण अइयंतं पासइ, सेसाओ गयं। नाभि-कुलगरस्स साहेइ। सुविण-पाढगा नत्थि। नाभि-कुलगरो सयमेव वागरेइ॥१९२॥

(१९२) कौशलिक अर्हत् ऋषभदेव का च्यवन से स्वप्न देखने तक का समस्त विवरण पूर्व के समान है। अन्तर केवल यह है कि माता मरुदेवी पहले स्वप्न में वृषभ को देखती है और अजितनाथ से पार्श्वनाथ तक बाकी बाईस तीर्थंकरों की माताएँ पहले हाथी देखती हैं। मरुदेवी अपने स्वप्नों का वृत्तान्त नाभि कुलकर से कहती हैं। उस समय स्वप्नपाठक नहीं थे इसलिए स्वप्नों का अर्थ नाभि कुलकर ने ही बताया। (चित्र R-1/1)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(192) All the details about the descent, up to the great dreams, are same as mentioned earlier. The only difference is that Marudevi saw a bull first of all in the sequence of dreams, whereas the mothers of the twenty two Tirthankars from Ajitnath to Parshvanath saw an elephant first. Marudevi related the incident of her dreams to Kulkar Nabhi. As there were no augurs during those days, it was Nabhi who explained the significance of those dreams. (Illustration R-1/1)

तेणं कालेणं तेणं समएणं उसभे अरहा कोसलिए जे से गिम्हाणं पढमे मासे, पढमे पक्खे, चित्त-बहुले, तस्स णं चित्त-बहुलस्स अट्ठमी-पक्खेणं, नवण्हं मासाणं बहु-पडिपुण्णाणं अद्धट्ठमाणं य राइंदियाणं जाव आसाढाहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं आरोग्गा आरोग्गं दारयं पयाया। तं चेव सव्वं जाव देवा देवीओ य वसुहार-वासं वासिंसु। सेसं तहेव चारग-सोहणं, माणुम्माण-वड्ढणं, उस्सुक्कमाइयं ठिइ-पडिय-जूय-वज्जं सव्वं भाणियव्वं ॥१९३॥

(१९३) काल के उस भाग में गर्मी का पहला महीना और पहला पक्ष चल रहा था। चैत्र कृष्ण अष्टमी के दिन गर्भ धारण को नौ महीने और साढ़े सात दिन बीत चुके थे। तब उत्तराषाढ़ा नक्षत्र का योग आने पर स्वस्थ मरुदेवी ने सुखपूर्वक पुत्र-रत्न को जन्म दिया। उस काल में युगलिक और कुलकर व्यवस्था थी, राज्य और समाज का गठन नहीं हुआ था। अतः जन्मोत्सव आदि में राज्य और समाज परिवार की परम्परानुसार कार्य नहीं होते थे। देवी-देवताओं का आना आदि सभी अन्य कार्य पूर्ववत् हुए।

(193) At that time during that period it was the first month and the first fortnight of the summer season. On the eighth day of the dark half of the month of Chaitra, nine nonths and seven and a half days had passed since the conception. When the moon entered the Uttarashadha lunar mansion, healthy Marudevi gave birth to a son normally. In those days, social and political structure did not exist; the prevailing system consisted of twins and clan chiefs. As such, the birth celebrations did not involve any family, social, or state traditions. All the other acts involving gods and goddesses took place as detailed earlier.

विस्तार :

ऋषभदेव के जन्म के बाद दिक्कुमारियों द्वारा आवश्यक सूतिका कर्म किया गया। इसके पश्चात् सौधर्मेन्द्र प्रकट हुए। उन्होंने पाँच शरीर धारण किये। एक शरीर से शिशु ऋषभ को हाथ में सावधानी से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उठा लिया। दूसरे शरीर से बालक के पीछे खड़े होकर उसके ऊपर छाया करने को हाथ में छत्र धारण किया। तीसरे और चौथे शरीर से हाथों में चंवर लिए बालक के दोनों ओर स्थित हो गये। पाँचवें शरीर से हाथ में वज्र धारण कर रक्षक के रूप में बालक के आगे स्थित हो गए। इसी संयोजन से सौधर्मेन्द्र बालक ऋषभ को लिए आकाशमार्ग से मेरु पर्वत पर आए। वहाँ समस्त देवी-देवताओं ने शिशु का उत्सव सहित जन्माभिषेक किया और पुनः माता मरुदेवी के पास लौटा लाए। (चित्र R-1/2)

प्रातःकाल मरुदेवी ने देखा कि बालक की जाँघ पर वृषभ का चिह्न था। उन्हें याद हो आया कि उन्होंने महास्वप्नों में भी सर्वप्रथम वृषभ ही देखा था। इससे प्रेरित हो माता-पिता ने उनका नाम ऋषभ रख दिया। ऋषभ जब एक वर्ष के हुए तो वंश की स्थापना के लिये सौधर्मेन्द्र कुलकर नाभि के पास आए। वे अपने हाथ में एक ईख लिए थे। बालक ऋषभ अपने पिता की गोद में बैठे थे। इन्द्र के हाथ में गन्ना देख वे हाथ बढ़ा उसे लेने को आतुर हो गये। इन्द्र ने ईख बालक के हाथ में दे दी और ईक्षु के प्रति बालक के आकर्षण को देख उनके वंश का नाम 'इक्ष्वाकु' रखकर लौट गये। (चित्र R-1/3)

Elaboration :

The post-birth cleansing rituals of Rishabhdev were performed by the goddesses reigning over the directions. After this, the king of gods, Saudharmendra appeared. He created five look alike bodies of himself. With one body he carefully lifted the baby in his hands. With second body he took an umbrella in his hands and stationed the body behind the baby. With the third and fourth bodies he took whisks and stationed these bodies on both sides of himself. With the fifth body he lifted his divine weapon, Vajra, and stationed the body ahead of the baby as a body guard. In this formation the king of gods airlifted the baby to Meru Mountain. There, all the gods ceremoniously performed the post-birth annointment rituals. After this, the baby was brought back to Marudevi. (Illustration R-1/2)

In the morning when the mother saw on the baby's thigh a birth mark resembling a bull. She recalled that in her great dreams the first thing she saw a glorious bull. This inspired the parents to name the baby as Vrishabh or Rishabh (a bull). When Rishabh was one year old, Saudharmendra came to Kulkar Nabhi for formalising the family name. He carried a sugar-cane in his hand. Baby Rishabh was sitting in his father's lap. When he saw the sugar-cane he eagerly extended his hands to take it. Saudharmendra gave the sugar-cane to the baby and seeing his affinity for sugar-cane (Ikshu) he formally named the family as Ikshvaku and left. (Illustration R-1/3)

उसभे णं अरहा कोसलिए कासव-गोत्तेणं, तस्स णं पंच नामधिज्जा एवमाहिज्जंति, तं जहा–उसभेइ वा, पढमराया इ वा, पढम भिक्खायरेइ वा, पढम जिणेइ वा, पढम तित्थयरेइ वा ॥१९४॥

(१९४) कौशलिक अर्हत् ऋषभ काश्यप गोत्र के थे। उनके पाँच प्रसिद्ध नाम हैं–ऋषभ, आदि राजा, आदि भिक्षाचर, आदि जिन, आदि तीर्थंकर।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

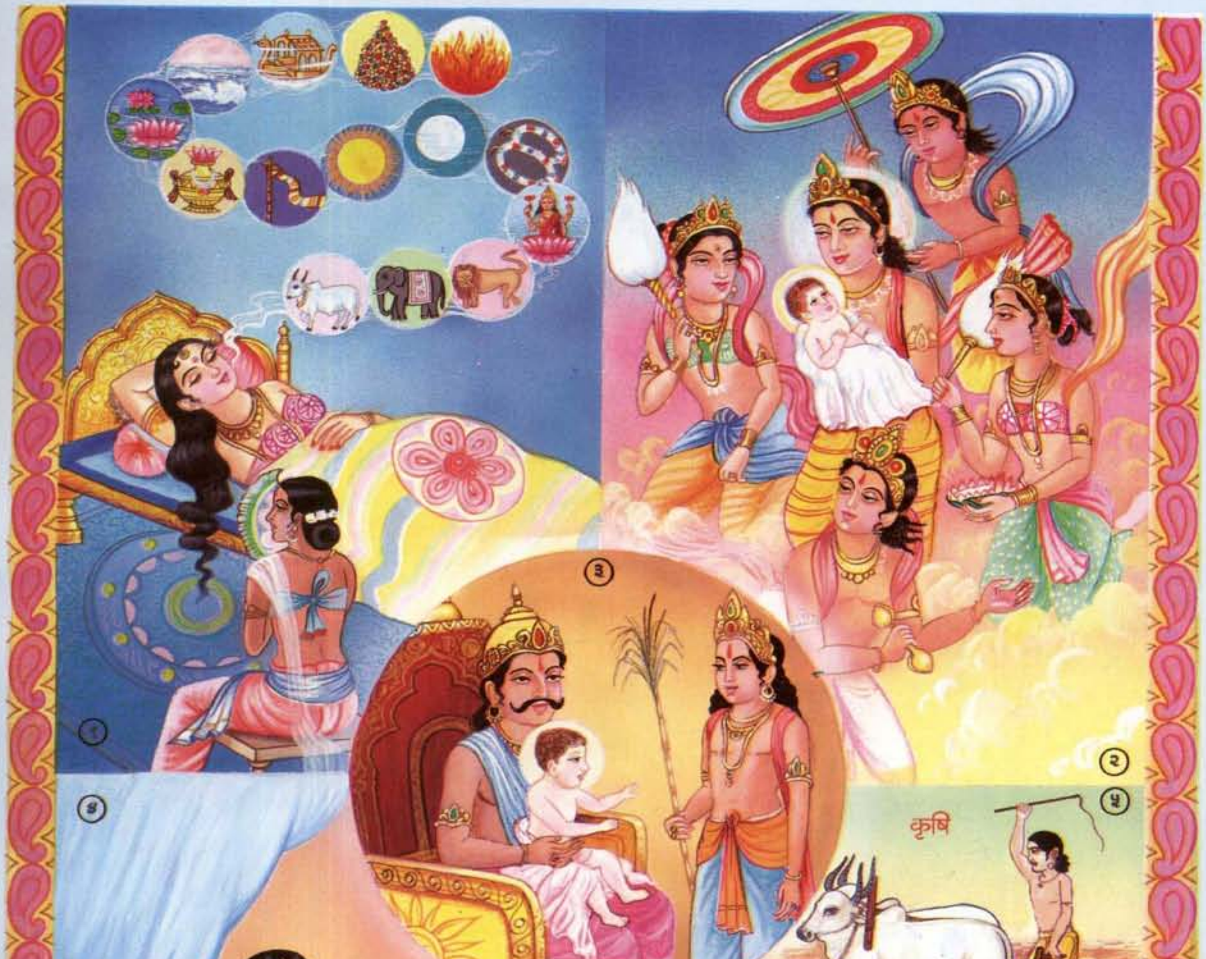

R 1 (अ) माता मरुदेवा का स्वप्न दर्शन (ब) इन्द्र द्वारा जन्म महोत्सव (स) इन्द्र के हाथ से इक्षु लेने के लिए बालक ऋषभ की उत्सुकता (द) सुनन्दा एवं सुमंगला के साथ पाणिग्रहण (प) प्रजा को कृषि कार्य का प्रशिक्षण

(a) Dreams of mother Marudeva. (b) Indra celebrating the birth. (c) Child Rishabh's eagerness to take sugar-cane held in Indra's hand. (d) Marriage with Sunanda and Sumangala. (e) Teaching arts and crafts including farming to the public.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

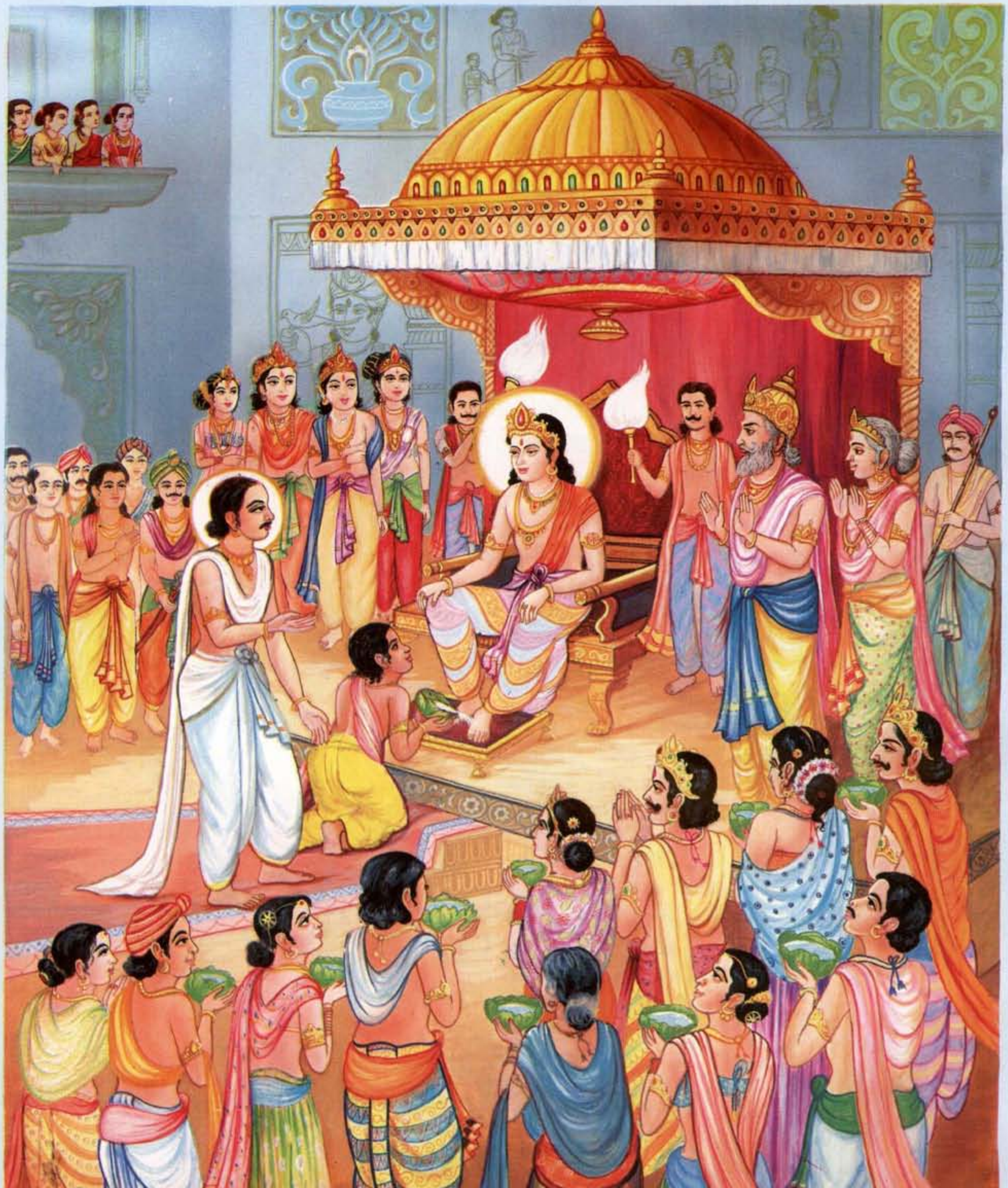

R 2 प्रजांजनों द्वारा कमल पत्रों में जलभर कर ऋषभ का राज्याभिषेक, पीछे खड़े आशीर्वाद देते हैं–नाभिराजा एवं माता मरुदेवा
Citizens annointing Rishabh pouring water from lotus leaves. Standing behind and blessing the first king are Nabhiraja and mother Marudeva.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(194) Kaushalik Arhat Rishabhdev belonged to the Kashyap clan. He became popularly known by five names—Rishabh, Adi-raja (the first king), Adi-bhikshachar (the first mendicant), Adi-jina (the first conqueror of senses), and Adi-tirthankar (the first Tirthankar).

आदि राजा

उसभे णं अरहा कोसलिए दक्खे, दक्ख-पइन्ने, पडिरूवे अल्लीणे, भद्दए, विणीए वीसं पुव्वसय-सहस्साइं कुमारवास-मज्झे वसइ, वसित्ता, तेवट्ठिं पुव्व-सय-सयस्साइं रज्ज-वास-मज्झे वसमाणे, लेहाइयाओ, गणिय-प्पहाणाओ सउणरुय-पज्जवसाणाओ बाहत्तरिं कलाओ, चउसट्ठिं महिलागुणे, सिप्पसयं च, कम्माणं तिन्नि वि पयाहियाए उवदिसइ, उवदिसित्ता पुत्तसयं रज्जसए अभिसिंचइ, अभिसिंचित्ता, पुणरवि लोयंतिएहिं जियकप्पिएहिं देवेहिं, ताहिं इट्ठाहिं जाव वग्गूहिं, सेसं तं चेव सव्वं भाणियव्वं, जाव दाणं दाइयाणं परिभाएत्ता, जे से गिम्हाणं पढमे मासे, पढमे पक्खे, चेत्त-बहुले, तस्स णं चेत्त-बहुलस्स अट्ठमी-पक्खेणं दिवसस्स पच्छिमे-भागे सुदंसणाए सिवियाए सदेव-मणुयासुराए परिसाए समणुगम्ममाण-मग्गे जाव विणीयं रायहाणिं मझं-मज्झेणं निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता जेणेव सिद्धत्थवणे उज्जाणे, जेणेव असोग-वर-पायवे, तेणेव उवागच्छित्ता असोग-वर पायवस्स अहे जाव सयमेव चउमुट्ठियं लोयं करेइ, लोयं करित्ता छट्ठेणं भत्तेणं अपाणएणं आसाढाहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं उग्गाणं भोगाणं राइन्नाणं च खत्तियाणं च चउहिं सहस्सेहिं सद्धिं एगं देवदूस-मादाय मुंडे भवित्ता, आगाराओ अणगारियं पव्वइए॥१९५॥

(१९५) अर्हत् ऋषभ दक्ष थे, दक्ष प्रतिज्ञ थे, असाधारण रूपवान थे, सरल स्वभावी और विनम्र थे तथा आत्मलीन रहते थे। वे बीस लाख पूर्व (परिशिष्ट–1) वर्ष तक कुमार अवस्था में रहे। उसके बाद तिरसठ लाख पूर्व तक महाराजा के रूप में राज्य किया। उन्होंने प्रजा के हित के लिए लेखन, गणित, शकुन विचार आदि बहत्तर कलाएँ, स्त्रियों के चौंसठ गुण और सौ प्रकार के शिल्पों का प्रतिपादन किया और प्रजा को सिखाया। उन्होंने अपने राज्य को सौ भागों में बाँटकर अपने सौ पुत्रों का राज्याभिषेक किया। इसके बाद लोकान्तिक देव उनके पास आए और धर्मप्रवर्त्तन हेतु प्रार्थना की।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गर्मी के पहले महीने और पहले पक्ष में चैत्र कृष्णा अष्टमी के दिन अन्तिम प्रहर में ऋषभदेव सुदर्शना नाम की पालकी में बैठ अयोध्या नगरी के बीच होकर सिद्धार्थ वन नामक उद्यान में गए। उत्तराषाढ़ा नक्षत्र का योग आने पर अशोक वृक्ष के नीचे, चार हजार पुरुषों के साथ, चार मुष्ठि लोच कर वे अनगार बन गए। (महाभिनिष्क्रमणादि का विस्तृत वर्णन पूर्व के समान है।) (चित्र R-3)

The First King

(195) He was a genius, he was .veracious, absolutely introspective, simple, humble and extraordinarily handsome. He remained a prince for two million Purvas (one Purva is eighty four hundred thousand years multiplied by the same number or 7056 x 1010 years). After that he spent sixty three hundred thousand Purvas as a king. For the benefit of the people, he invented and taught seventy two arts including writing, mathematics, augury, etc.; sixty four attributes of women; and one hundred different crafts. He divided his kingdom into one hundred parts and made his one hundred sons rulers of these divisions. After this, the gods from beyond the living worlds approached him for renunciation and propagation of religion.

During the first month and the first fortnight of the summer season on the eighth day of the dark half of the month of Chaitra, around the lst hour of the day, Rishabhdev sat in the palanquin named Sudarshan. Passing through the town of Ayodhya, he arrived in a garden named Siddhartha Vana. When the moon entered the Uttarashadha lunar mansion he became an ascetic under a Ashoka tree, after pulling out four fistsful of hair. With him four thousand other persons also became ascetics (the detailed description of the renunciation is the same as mentioned earlier). (Illustration R-3)

विस्तार :

वह युग युगलियों का था। बालक ऋषभ अपनी युगलिका सुमंगला के साथ तथा देवकुमारों के साथ क्रीड़ा करते विकसित होने लगे और धीरे-धीरे एक रूपवान, शक्तिवान और गुणवान युवक हो गये।

एक दिन एक ताल वृक्ष के नीचे एक अल्पायु युगल क्रीड़ा कर रहे थे। तभी ताल वृक्ष से एक भारी तालफल पुरुष के सिर पर गिरा और उसकी तत्काल मृत्यु हो गई। बालिका अकेली रह गई। कुछ दिनों तक उसके माता-पिता ने उसका लालन-पालन किया और फिर उनकी भी मृत्यु हो गई। उस युवती को अकेली विचरते देख कुछ युगलिक उसे कुलकर नाभि के पास ले गये। नाभि ने उसे ऋषभकुमार की पत्नी बनाने का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निश्चय किया। यथा समय ऋषभदेव का विवाह, देवताओं के सहयोग से, सुमंगला व सुनन्दा से कर दिया गया। (चित्र R-1/4)

ऋषभकुमार का दाम्पत्य जीवन सुखपूर्वक बीतने लगा। काल क्रम से उनके भरत, ब्राह्मी, बाहुबली, सुन्दरी तथा अन्य सन्तानें हुईं। वह युग-परिवर्तन का काल था। सहज स्वभावी युगलियों में भी ईर्ष्या-द्वेष आदि के भाव उत्पन्न होने लगे। वृक्षों से भी आवश्यक सामग्री मिलना कम होने लगा। इन सब कारणों से प्रचलित व्यवस्था बिगड़ने लगी। कुछ युगलिक ऋषभकुमार के पास आये और उनसे यह समस्या बताई। ऋषभकुमार ने कहा, "कुलकर व्यवस्था समाप्त कर राज्य व्यवस्था आरंभ करनी होगी और उसी के साथ दण्ड व्यवस्था भी। आप लोग कुलकर नाभि से प्रार्थना कीजिये कि वे आपको राजा प्रदान करें।"

युगलिक तब नाभि कुलकर के पास गये और प्रार्थना की। नाभि ने कहा, "ऋषभ तुम्हारे राजा हों।" यह सुन युगलिक राज्याभिषेक की तैयारी करने लगे। उसी समय देवताओं ने सोने की वेदी स्थापित की और तीर्थों से लाए जल से ऋषभ का अभिषेक कर उन्हें दिव्य वस्त्राभूषण और मुकुट पहनाये। तब युगलिक भी कमल-पत्रों में जल लेकर आ गये और उन्होंने विनयपूर्वक वह जल राजा ऋषभदेव के चरणों में समर्पित कर दिया। देवराज ने कुबेर को एक नगरी की स्थापना करने की आज्ञा दी। इस सुन्दर और समस्त सुविधापूर्ण नगरी का नाम विनीता (अयोध्या) रखा गया। (चित्र R-2)

अपने दीर्घकालीन राज्यकाल में राजा ऋषभ ने राज्य व दण्ड व्यवस्था स्थापित की। आत्मरक्षा के लिए शस्त्र चलाने की व अन्य युद्ध प्रणालियों का विकास किया। प्रकृति से भोज्य पदार्थ स्वाभाविक रूप से मिलना दिन-प्रतिदिन कम होता जा रहा था, अतः उन्होंने कृषि पद्धति विकसित की। इसी प्रकार मानव समाज की स्थापना करने वाले तथा उसके उपयोग में आने वाली अनेक विद्याओं की शिक्षा के जनक थे राजा ऋषभदेव। उन्होंने अपने बड़े पुत्र भरत को बहत्तर कलाओं की शिक्षा दी, बाहुबली को पशुओं व मनुष्यों के लक्षणों का ज्ञान दिया, ब्राह्मी को लिपियों की और सुन्दरी को गणित की शिक्षा दी। शिल्प, स्थापत्य, वाणिज्य, चिकित्सा आदि अनेक विषयों का ज्ञान-विज्ञान महाराज ऋषभ की ही देन है। (चित्र R-1/5)

अणगार बनने के बाद ऋषभदेव ने मौन धारण कर लिया और अन्य मुनियों के साथ विचरण करने लगे। तपस्या के बाद जब वे पारणे के लिये निकलते तो उन्हें आहार प्राप्त नहीं होता। उस काल के सरल चित्त लोग आहारदान की विधि से अनभिज्ञ थे। भगवान ऋषभदेव के भिक्षा हेतु आने पर वे उन्हें राजा का सा सम्मान देते और बहुमूल्य उपहार आदि भेंट करते। ऋषभदेव बिना कुछ ग्रहण किए ही विहार करने लगते। समय इसी प्रकार बीतने लगा तो उनके साथ रहने वाले मुनियों ने परस्पर परामर्श कर फलादि का आहार करना आरंभ कर दिया। अनेक स्थानों पर विहार करते जब मौन निराहार भगवान ऋषभदेव को एक वर्ष बीत गया तो उन्होंने भिक्षा ग्रहण करने का निश्चय किया और हस्तिनापुर नगर की ओर आए।

हस्तिनापुर में बाहुबलि के पुत्र सोमप्रभ राज्य करते थे। उनके पुत्र श्रेयांसकुमार ने रात्रि को स्वप्न देखा कि सोने का सा चमकता सुवर्णगिरि (मेरुपर्वत) काला पड़ गया है और उन्होंने दूध से भरे कलशों से अभिषेक कर उसे पुनः उज्ज्वल कर दिया है। श्रेयांसकुमार ने अपने स्वप्न की बात मित्रों को सुनाई पर उसका अर्थ कोई नहीं समझ सका। तभी ऋषभदेव के नगर में प्रवेश करने से प्रसन्न प्रजाजनों का कोलाहल उन्हें सुनाई पड़ा। श्रेयांसकुमार ने अपने अनुचर को कोलाहल के कारण का पता लगाने भेजा। उसने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लौटकर कारण बताया तो श्रेयांसकुमार दौड़कर अपने प्रपितामह के दर्शन को गये। वन्दना के बाद जब उन्होंने ऋषभदेव के मुख की ओर देखा तो उन्हें जाति-स्मरण ज्ञान हो आया। वे पूर्वजन्म में वज्रनाभ राजा के सारथी थे। उनके मन में विचार चल ही रहे थे कि ईख के ताजा रस से भरे १०८ कलश उनके वहाँ आये। श्रेयांसकुमार को निर्दोष दान का ज्ञान था। उन्होंने ऋषभदेव से इक्षु रस ग्रहण करने की प्रार्थना की। ऋषभदेव ने अंजलिबद्ध हाथ आगे बढ़ा दिये और श्रेयांस ने कलश से इक्षुरस उनकी अंजली में उँड़ेला। ऋषभदेव ने पारणा किया और आकाश में देव-दुंदुभी गूँज उठी। वैशाख शुक्ला तृतीया के दिन दिया यह दान अक्षय दान के रूप में प्रसिद्ध हुआ और वह दिन अक्षय तृतीया के नाम से। (चित्र R-4)

Elaboration :

That was the age of twins. The child Rishabh grew up gradually into a handsome, strong, and virtuous young man, playing along with his twin Sumangala and other divine boys.

One day an infant couple was playing under a coconut tree. All of a sudden a ripe fruit fell on the head of the male and he died on the spot. The female was left alone. For a few days her parents looked after her, but they too died. Finding her roaming around alone, some twins took her to Kulkar Nabhi. Nabhi decided that she should be married to Rishabh. At an opportune time Rishabh was wedded to Sumangala (his twin) and Sunanda the orphan. The gods made all the arrangements for this first marriage. (Illustration R-1/4)

Prince Rishabh led a happy married life. In due course his wives gave birth to Bharat, Brahmi, Bahubali, Sundari and many other sons and daughters. It was a transitional era. Feelings of envy, aversion, etc. started sprouting even in the simple minded twins. The yield from the wish fulfilling trees also started diminising. Due to these changes the established system started disintegrating. Some wise twins approached Rishabh Kumar and put their problems before him. Prince Rishabh said, "The time has come to abandon the Kulkar system and launch a kingdom with a system of law and order. You should say so to Kulkar Nabhi and request him to provide you with a king."

The twins, then, went to Kulkar Nabhi and put forth their request. Nabhi said, "May Rishabh be your king." The joyous twins started preparations for the coronation ceremonies. When they left, the gods created a golden seat and annointed Rishabh with the water collected from various pilgrimage centers. They attired him in divine dress and ornaments, and formally put the crown on his head. The twins, now arrived with the water for annointment filled in cups of lotus leaves, and, seeing Rishabh already coronated, humbly poured the water on his feet. The king of gods ordered Kuber, the god of wealth, to construct a suitable city. This beautiful city with all facilities was named Vinita (Ayodhya). (Illustration R-2)

During his long reign king Rishabh established the state and the penal systems. He developed martial arts and a disciplined army for self defence. As the sources of effortlessly available food declined with passage of time he evolved the agricultural sciences. Thus Rishabhdev was not only the founder of the social system but also the inventor of a variety of useful arts and crafts along with an education system. To his elder son Bharat he taught

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

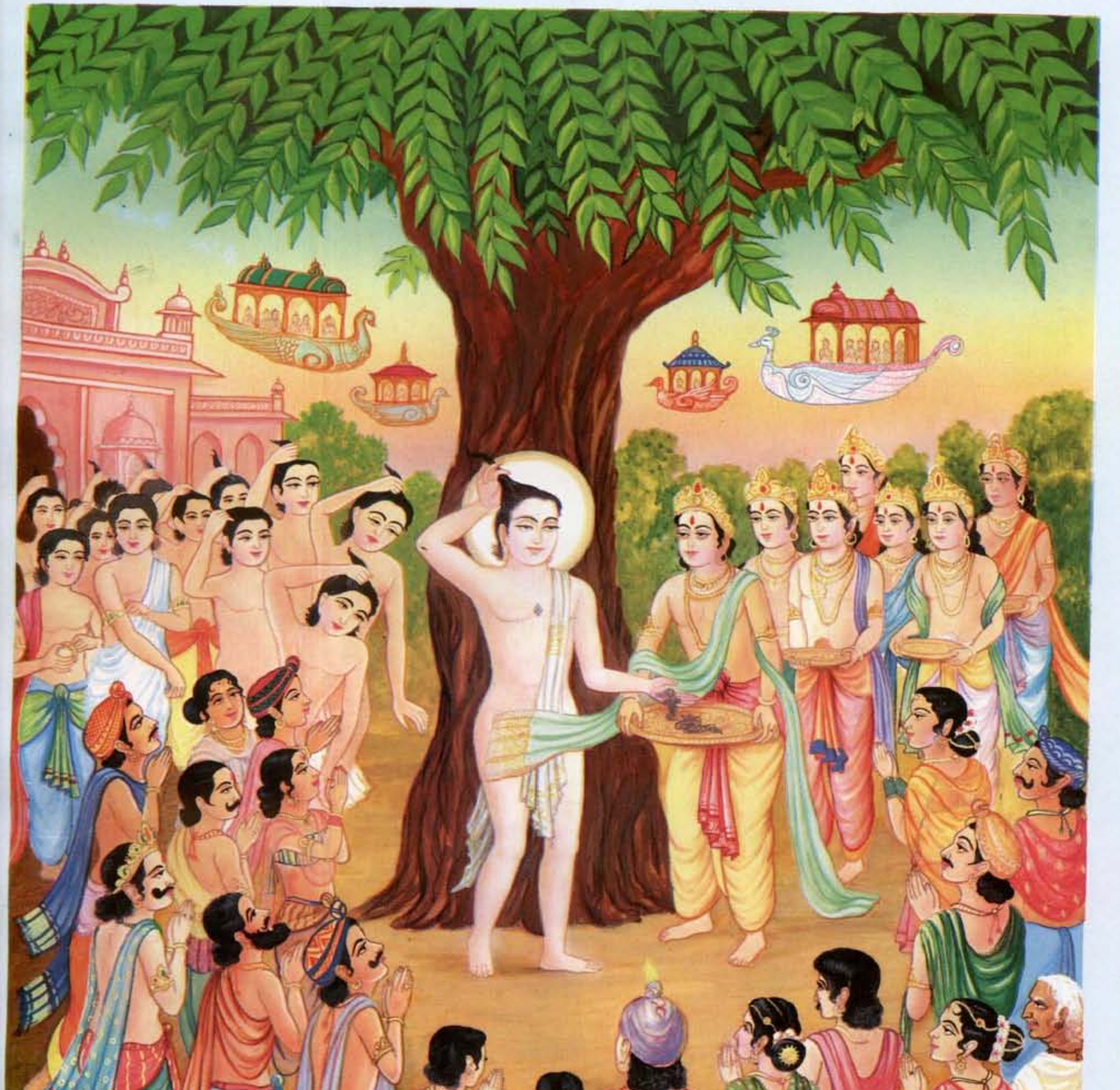

R 3 वस्त्राभूषण उतारकर ऋषभदेव का केश लुंचन, साथ में अनेक राजाओं द्वारा दीक्षा ग्रहण
Rishabh Dev pulling out his hair after shedding his dress and ornaments. Numerous kings following his path of renunciation.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

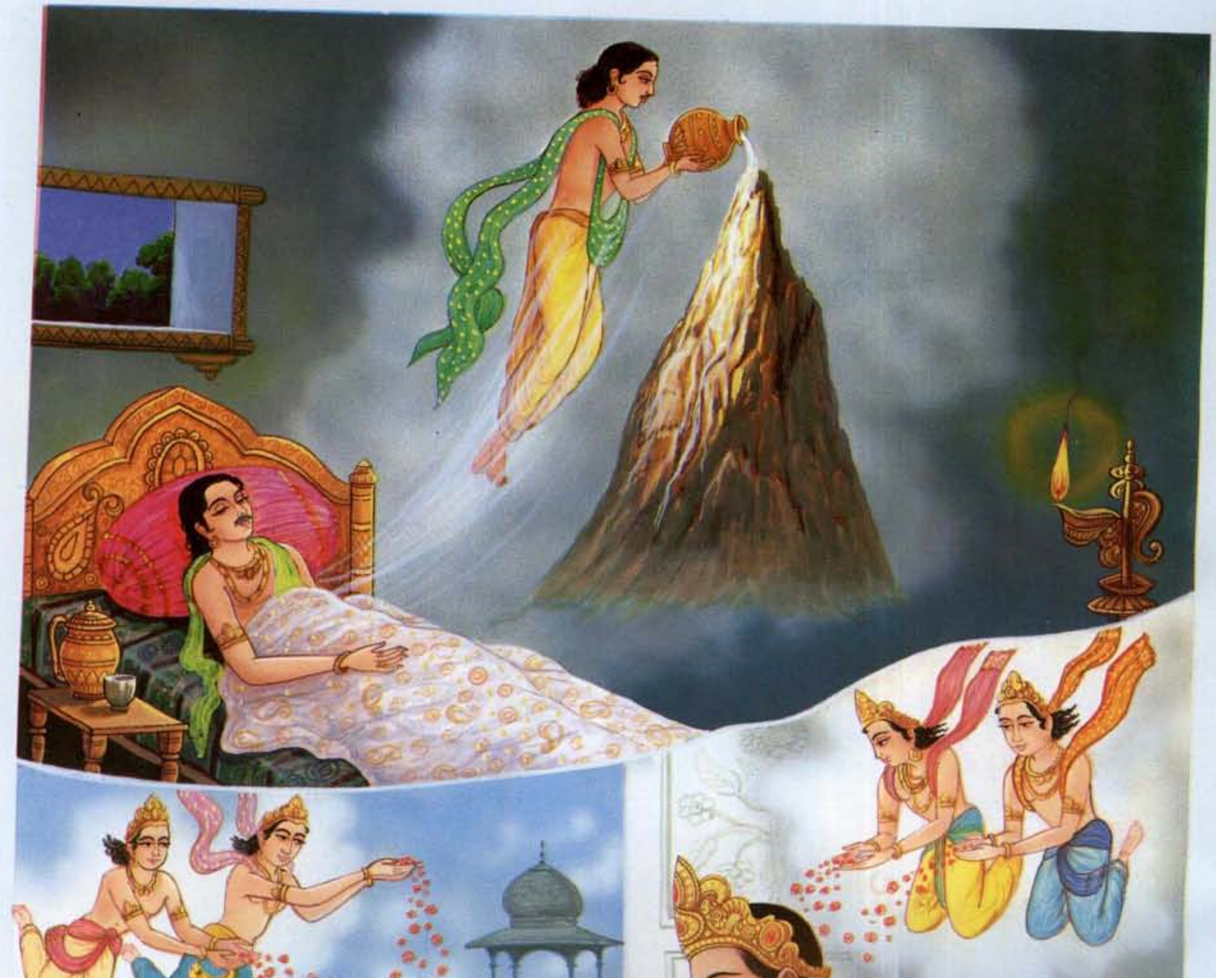

R 4 (अ) श्रेयांस कुमार द्वारा मेरु पर्वत को अमृत से धोने का स्वप्न (ब) भगवान ऋषभदेव को इक्षुरस का दान
(a) Shreyans Kumar dreaming of pouring nectar to clean mount Meru.
(b) Giving sugarcane-juice to Rishabh Dev as alms.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

seventy two arts and to Bahubali the sciences of anthropology and zoology. To Brahmi, his eldest daughter, he taught various scripts and languages, and to Sundari the elaborate subject of mathematics. It was king Rishabhdev who is credited with the invention and methods of imparting education in a variety of subjects, including crafts, architecture, commerce, medicine, etc. (Illustration R-1/5)

After becoming an ascetic, Rishabhdev took the vow of total silence and started wandering accompanied by other ascetics. When, after his penances, he went out to beg for food, he did not get anything to eat. The common people of that age were ignorant about the practice of giving food as alms; they did not even appreciate the need to do so. Whenever Rishabh approached them, they offered him respect and valuable gifts as they would to a king. Rishab would then proceed ahead without accepting anything. As time passed the accompanying ascetics conferred among themselves and decided to eat fruits and vegetables naturally available. After an entire year of wandering from place to place without touching any food, Rishabh decided to go to beg food once again. He came to Hastinapur town.

Bahubali's son, Somprabh, was the king of Hastinapur. His son Shreyansa Kumar saw a dream during the night that Suvarnagiri, the golden mountain, had turned black and he had brought back its golden hue by washing it with pitchers filled with milk. He narrated the dream to his friend but no one could interpret its meaning. Just then he heard the noise caused by happy masses who had seen Rishabhdev entering the town. He asked his attendant to go and find out the reason for the commotion. When the attendant, on his return, told about the incident, Shreyansa rushed to welcome his great grand father. After bowing at his feet, when Shreyansa looked at the face of Rishabhdev he acquired the Jatismaran Jnana (the knowledge of past births). The being that was to become Shreyansa was the charioter of king Vajranabh (the being that had been born as Rishabhdev). While he was contemplating all this citizens brought 108 pitchers full of fresh cane juice Shreyansa was aware of the system of giving pure food as alms. He requested Rishabhdev to accept fresh sugar-cane juice. Rishabhdev extended his cupped palms and Shreyansa poured the cane juice from a pitcher. Rishabhdev broke his fast and the skies reverberated with the sound of divine drums. This charity made on the third day of the bright half of the month of Vaishakha became famous as Akshaya (unhindered, unbroken or incessant) Daan (charity). The particular date also became famous as Akshaya Tritiya. (Illustration R-4)

उसभे णं अरहा कोसलिए एगं वास-सहस्सं निच्चं वोसट्ठकाए चियत्तदेहे जाव अप्पाणं भावेमाणस्स एगं वास-सहस्सं विइक्कंतं; तओ णं जे से हेमंताणं चउत्थे मासे सत्तमे पक्खे फग्गुण-बहुले, तस्स णं फग्गुण-बहुलस्स एक्कारसी-पक्खेणं पुव्वण्ह-काल-समयंसि पुरिमतालस्स नगरस्स बहिया सगडमुहंसि उज्जाणंसि नग्गोह-वर-पायवस्स अहे अट्ठमेणं भत्तेणं अपाणएणं आसाढाहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं झाणंतरियाए वट्टमाणस्स अणंते जाव जाणमाणे पासमाणे विहरइ॥१९६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(१९६) कौशलिक अर्हत् ऋषभ एक हजार वर्ष तक अपने शरीर की ओर से पूरी तरह उदासीन और अनासक्त रहे। हेमन्त ऋतु के चौथे महीने और सातवें पक्ष में फाल्गुन कृष्ण एकादशी के दिन दोपहर से पहले पुरिमताल नगर के बाहर शकटमुख नामक उद्यान में वट वृक्ष के नीचे ऋषभदेव जलरहित अष्टमभक्त (तीन उपवास) तप का पालन करते हुए ध्यानमग्न थे। तब उत्तराषाढ़ नक्षत्र का योग आने पर उन्हें अनन्तादि केवलज्ञान और केवलदर्शन उत्पन्न हुए और वे समस्त लोक के समस्त जीवों के समस्त भावों को जानते-देखते विचरण करने लगे।

(196) For one thousand years Kaushalik Arhat Rishabhdev completely ignored and neglected his body. During the fourth month and the seventh fortnight of the winter season, on the eleventh day of the dark half of the month of Phalgun around forenoon, Rishabhdev was observing a three day fast without water and was meditating under a banyan tree in the Shakatmukh garden outside Purimtal town. At that time when the moon entered the Uttarashadha lunar mansion he attained the infinite etc. (as in para 120) Kewal Jnana and Kewal Darshan. Seeing and knowing everything, he started moving around.

विस्तार :

अर्हत् ऋषभदेव के केवलज्ञान के पश्चात् देवताओं ने उनका समवसरण रचा और ऋषभदेव ने देशना दी। अयोध्या नगरी में महाराज भरत को संदेशवाहकों ने यह सूचना दी। उसी समय भरत को यह समाचार भी मिला कि उनकी आयुधशाला में चक्र-रत्न प्रकट हुआ है। वे चक्र-रत्न की विधिवत् पूजा करने से पूर्व अर्हत् दर्शन के लिए मरुदेवी माता को हाथी पर बैठाकर ले गये। मरुदेवी, जो इससे पूर्व अपने पुत्र की अणगार स्थिति से चिन्तित थीं, समवसरण के निकट पहुँच ऋषभदेव का तेजस्वी मुखमण्डल और उपस्थित देवों का वैभव और हर्ष देखकर चिन्ता मुक्त हुईं। अपने पुत्र के आध्यात्मिक विकास की चरम स्थिति देख उन्हें जो सहज आनन्द मिला वह परमानन्द में परिणत हो गया और उन्हें केवलज्ञान प्राप्त हुआ। उसी समय उनकी आयुष्य पूर्ण हुई और वे सिद्ध बन गईं। मरुदेवी इस काल की प्रथम सिद्ध बनीं। (देखें—समवसरण का चित्र)

अर्हत् ऋषभदेव के समवसरण में उनकी देशना सुन उनकी पुत्री ब्राह्मी, पौत्र ऋषभसेन व मरीचि आदि अनेक व्यक्तियों ने दीक्षा ली और सम्राट् भरत, बाहुबलि, सुन्दरी आदि ने श्रावक धर्म अंगीकार किया। ऋषभदेव तब धर्म प्रभावना हेतु वहाँ से विहार कर गये।

महाराज भरत ने अपने महल में लौटकर चक्र-रत्न की पूजा की और दिग्विजय अभियान आरंभ किया। षट्खण्ड विजय करने के पश्चात् वे अयोध्या लौटे और अर्हत् दर्शन को अपनी बहन सुन्दरी के साथ गए। सुन्दरी ने ऋषभदेव के पास दीक्षा ली और भरत अयोध्या लौट आये। अयोध्या लौटने पर उन्हें ज्ञात हुआ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र सं. ७ तीर्थंकरों की समवसरण-रचना : एक दृश्य

Illustration 7 A birds view of the divine assembly (Samvasarana) of Tirthankars.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कि षट्खण्ड विजय कर लेने पर भी स्वयं उनके भाइयों ने उनकी अधीनता स्वीकार नहीं की थी। उन्होंने सभी भाइयों के पास दूत भेजे और कहलवाया कि "यदि राज्य की इच्छा है तो महाराज भरत की सेवा करें।" इस सन्देश ने बाहुबलि को छोड़ सभी भाइयों के मन में वैराग्य उत्पन्न कर दिया और उन्होंने ऋषभदेव के पास जाकर दीक्षा ले ली।

बाहुबलि ने भरत की अधीनता स्वीकार नहीं की और दोनों में युद्ध ठन गया। युद्ध क्षेत्र में दोनों की विशाल सेनाएँ आमने-सामने डट गईं। देवताओं ने आकर दोनों भाइयों को युद्ध से विमुख होने की मन्त्रणा दी पर वे नहीं माने। इस पर देवताओं ने कहा कि व्यर्थ ही सैन्य नाश न कर वे दोनों द्वन्द्व-युद्ध कर लें। दोनों भाई इस बात पर सहमत हो गये। दोनों भाइयों ने दृष्टि-युद्ध, वाग्-युद्ध, बाहु-युद्ध, मुष्टि-युद्ध तथा दण्ड-युद्ध किये। इन सभी में बाहुबलि ने भरत को पराजित कर दिया। लज्जा और अपमानजनित क्रोध ने भरत को उत्तेजित कर दिया और उन्होंने अपने चक्र को बाहुबलि की ओर छोड़ा। चक्र स्वगोत्रीय पर प्रहार नहीं करता अतः वह बाहुबलि की प्रदक्षिणा कर लौट आया। भरत के इस अनुचित कार्य से बाहुबलि उत्तेजित हो उठे और बंद मुट्ठी हवा में तान भरत का संहार करने आगे बढ़े। भरत के निकट पहुँचकर वे ठिठके और अपने भाई की ओर देखते-देखते उनका हृदय परिवर्तन हो गया। राज्य हेतु सहोदर की हत्या के जघन्य पाप से भी मनुष्य डरता नहीं, ऐसा सोच उन्हें वैराग्य हो आया। भरत से क्षमा माँगकर उन्होंने अपनी उठी हुई मुट्ठी से ही केश लोच किया और उसी स्थल पर खड़े-खड़े ध्यानमग्न हो गये।

उस स्थल पर ध्यानमग्न खड़े बाहुबलि को एक वर्ष बीत गया। वे शिला की भाँति निश्चल खड़े रहे और उनके शरीर पर लताएँ चढ़ गईं, सूक्ष्म जीवों ने उसे क्रीड़ा स्थल बना लिया। ऋषभदेव ने तब ब्राह्मी और सुन्दरी को बुलाकर कहा कि बाहुबलि लगभग अपने सघन कर्मों का क्षय कर साधना के उच्चतम स्तर पर पहुँच गए हैं। उनके केवलज्ञान में बाधा स्वरूप केवल अल्प मान की भावना रह गई है। उनके निकट जाकर इस बात का इंगित कर देने से वे समझ जायेंगे। ब्राह्मी और सुन्दरी ने बाहुबलि के पास जाकर कहा, "हाथी पर चढ़े व्यक्ति को ज्ञान नहीं होता, भाई, आप हाथी से उतरें।"

बाहुबलि को इन शब्दों से आभास हुआ कि उनके मन में एक छोटी-सी ग्रन्थि पल रही थी कि वे अपने छोटे भाइयों को जो उनसे पूर्व श्रमण बन चुके हैं कैसे वन्दना करेंगे? उनके विचारों में तत्काल परिवर्तन आया, "साधना के पथ पर सांसारिक व्यवहार अर्थहीन हो जाते हैं। चलूँ सभी को वन्दन करूँ।" इस परिवर्तन के साथ ही तत्काल उन्हें केवलज्ञान उत्पन्न हो गया।

Elaboration :

After Arhat Rishabh attained omniscience, the gods created a glorious divine assembly and he gave discourses. Messengers gave this information to king Bharat in Ayodhya. At the same time, Bharat was also informed that the divine disc-weapon has appeared in his armoury. Bharat gave priority to visiting Rishabhdev over the ceremonial worship of the divine disc, and, taking his grandmother Marudevi along, he proceeded toward the divine assembly riding an elephant. Apprehensive about the hardships of the ascetic life of her son Marudevi was relieved when she beheld the scintillating face of Rishabhdev sitting in the divine assembly surrounded by happy and gorgeous gods. The vision of her son perched

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

on the spiritual pinnacle triggered the flow of spontaneous joy in the heart of Marudevi. This mundane joy slowly turned into the ultimate bliss and she acquired omniscience. Coincidentally, at the same instant she completed her age and became a liberated soul (Siddha). Marudevi was the first Siddha of this cycle of time.

After listening to the discourse of Arhat Rishabhdev in the divine pavilion his daughter Brahmi, his grandsons including Rishabhsen and Marichi, and many other persons took Diksha and became ascetics. The emperor Bharat, Bahubali, Sundari and many others accepted the Shravak Dharma meant for laity. Rishabhdev, then, left the place to wander and propagate religion.

After returning to his palace, Emperor Bharat performed the ritual worship of the divine disc and launched the march to conquor the six continents. When he returned from this expedition, he went to Rishabhdev for his Darshan alongwith Sundari. Sundari took Diksha, and Bharat returned to Ayodhya. On his return, he came to know that although he had been successful in his mission to conquor the six continents, his own brothers did not accept his sovereignty. He sent his emissaries to all his brothers with a message, "If you want to retain your kingdom come under the flag of emperor Bharat". Except for Bahubali all the brothers were filled with a profound feeling of detachment after getting this message, and they all took Diksha from Rishabhdev.

Bahubali did not accept subjugation to Bharat and consequently both the brothers went to war against each other. Large armies belonging to the brothers arrived at the battlefield facing each other. Gods approached both the brothers and advised them to desist from the impending war, but in vain. At last the gods advised them to opt for a duel and avoid the holocast of the war. The brothers agreed. The brothers fought five types of duels—sight (staring into each other's eyes till one is forced to close the lids), speech (uttering loud sounds), arms (arm wrestling), fist (giving one knockout hit to the opponent), mace (hitting with the mace once on the head). In all these duels Bahubali defeated Bharat. The insult of defeat and the resultant shame gave rise to blind anger within Bharat making him irrational. He lifted his disc weapon and launched it at Bahubali. As this divine weapon does not hurt a relative, it circum-ambulated Bahubali and returned to Bharat. Peeved by this irrational act of Bharat, Bahubali rushed towards Bharat raising his powerful fist to destroy the emperor. As he arrived near Bharat and looked at his brother he had a change of heart. Man does not hesitate to commit the gravest of sins, such as killing his own brother, for territorial gain. This thought gave rise to a feeling of detachment in Bahubali. He sought forgiveness from Bharat, pulled out his hair with the already raised fist, and stood in meditation at the same spot.

For one year Bahubali stood rock still at that spot and continued his meditation. Creepers covered his body and insects made it a place to play around. Rishabhdev summoned Brahmi and Sundari and conveyed to them that Bahubali had destroyed almost all his Karmas and was just a step away from the pinnacle of purification. The only obstruction was the residual ego. A simple suggestion would open his eyes. Brahmi and Sundari went near Bahubali and said, "A man riding an elephant has no chance of getting true knowledge. Please get down."

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

These words made Bahubali ruminate. He found that he was not humble enough to go and bow before his younger brothers who were ascetics senior to him. This was the residual ego that was blocking his passage into the ultimate. The direction of his thoughts changed and he decided, "On the path of spiritual practices the mundane norms become meaningless. Let me go and bow before all." At the instant of this change Bahubali attained omniscience.

शिष्य-संपदा

उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स चउरासीइं गणा, चउरासीइं गणहरा होत्था। उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स उसभसेण-पामोक्खाओ चउरासीइं समणसाहस्सीओ उक्कोसिया समण-संपया होत्था। उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स बंभी-सुंदरी-पामोक्खाणं अज्जियाणं तिन्नि सय-साहस्सीओ उक्कोसिया अज्जिया-संपया होत्था। उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स सेज्जंस-पामोक्खाणं समणोवासगाणं तिन्नि सय-साहस्सीओ पंच-सहस्सा उक्कोसिया समणोवासग-संपया होत्था। उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स सुभद्दा-पामोक्खाणं समणोवासियाणं पंच-सय साहस्सीओ चउप्पन्नं च सहस्सा उक्कोसिया समणोवासियाणं संपया होत्था। उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स चत्तारि सहस्सा सत्त-सया पन्नासा चोद्दस-पुव्वीणं अजिणाणं जिण-संकासाणं उक्कोसिया चोद्दस-पुव्वि संपया होत्था। उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स नवसहस्सा ओहिनाणीणं उक्कोसिया संपया होत्था। उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स वीस-सहस्सा केवलनाणीणं उक्कोसिया संपया होत्था। उसभस्स णं अरहओ वीस-सहस्सा छच्च सया वेउव्वियाणं उक्कोसिया संपया होत्था। उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स बारस-सहस्सा छच्च सया पन्नासा विउलमईणं अड्ढाइज्जेसु दीवेसु दोसु य समुद्देसु सन्नीणं पचिंदियाणं पज्जत्तगाणं मणोगए भावे जाणमाणाणं उक्कोसिया विउलमइ-संपया होत्था। उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स बारस-सहस्सा छच्च सया पन्नासा उक्कोसिया वाईणं संपया होत्था। उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स वीसं अंतेवासि-सहस्सा सिद्धा, चत्तालीसं अज्जिया-साहस्सीओ सिद्धाओ। उसभस्स णं बावीस-सहस्सा नव य सया अणुत्तरोववाइयाणं गति-कल्लाणाणं जाव भद्दाणं उक्कोसिया अणुत्तरोववाइय-संपया होत्था॥१९७॥

(१९७) अर्हत् ऋषभ के चौरासी गण और चौरासी गणधर थे। उनके संघ में चौरासी हजार श्रमण थे जिनमें ऋषभसेन प्रमुख थे। तीन लाख श्रमणियाँ थीं जिनमें ब्राह्मी और सुन्दरी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रमुख थीं। तीन लाख पाँच हजार श्रावक थे जिनमें श्रेयांस प्रमुख थे और पाँच लाख चौपन हजार श्राविकाएँ थीं जिनमें सुभद्रा प्रमुख थीं।

उनके शिष्य समुदाय में चार हजार सात सौ पचास श्रमण चौदह पूर्वधारी, नौ हजार अवधिज्ञानी, बीस हजार केवलज्ञानी, बीस हजार छह सौ वैक्रियलब्धिधारी, बारह हजार छह सौ पचास विपुलमति मनःपर्यवज्ञानी और बारह हजार छह सौ पचास वादी थे।

इनमें से बीस हजार श्रमण और चालीस हजार श्रमणियाँ सिद्ध हुए तथा बाईस हजार नौ सौ अनुत्तरोपपातिक देवलोक में गए।

The Mass of Disciples

(197) Arhat Rishabh had eighty four groups of disciples (Gana) and eighty four chief disciples or group leaders. In the mass of his followers were eighty four thousand male ascetics headed by Rishabhsen; three hundred thousand female ascetics headed by Brahmi and Sundari; three hundred and five thousand male members of laity headed by Shreyanśa; and five hundred and thirty four thousand female members of laity headed by Subhadra.

Among his ascetic disciples were four thousand seven hundred fifty Chaudah-purvadhar ascetics, nine thousand Avadhi Jnanis, twenty thousand Kewal Jnanis, twenty thousand six hundred Vaikriya-labdhidharis, twelve thousand six hundred fifty Manahparyavajnanis, and twelve thousand six hundred fifty Vadis.

Out of these, twenty thousand male ascetics and forty thousand female ascetics got liberated, twenty two thousand nine hundred were reincarnated as gods in the Anutaraupapatic dimension.

उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स दुविहा अंतगडभूमी होत्था; तं जहा—जुगंत-कड-भूमी य, परियायंत-कड-भूमी य। जाव असंखेज्जाओ पुरिस-जुगाओ जुगंत-कड-भूमी; अंतोमुहुत्त-परियाए अंतमकासी॥१९८॥

(१९८) अर्हत् श्री ऋषभ के केवलज्ञान के अन्तर्मुहूर्त्त अर्थात् तत्काल बाद ही प्रथम भव्य जीव को मोक्ष प्राप्त हुआ और मोक्ष गमन का यह क्रम उनके निर्वाण के बाद असंख्य युग-प्रधानों के काल तक चला। यह उनके युग की युगान्तकृत् और पर्यायान्तकृत् दो अन्तकृत् भूमियाँ थीं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(198) *Immediately After Rishabhdev attained omniscience, the first deserving soul got liberated. The sequence of deserving souls getting liberated continued for innumerable numbers of generations of his chief disciples or the leaders of the era. These are known as the Yugantakrit and Paryayantakrit brackets of time of his era.*

तेणं कालेणं तेणं समएणं उसभे अरहा कोसलिए वीसं पुव्व-सय-सहस्साइं कुमार-वास-मज्झे वसित्ता णं, तेवट्ठिं पुव्व-सय-सहस्साइं रज्ज-वास-मज्झे वसित्ता णं, तेसीइं पुव्व-सय-सहस्साइं अगारवास-मज्झे वसित्ता णं, एगं वास-सहस्सं छउमत्थ-परियागं पाउणित्ता, एगं पुव्व-सय-सहस्सं वास-सहस्सूणं केवलि-परियागं पाउणित्ता, पडिपुन्नं (संपुन्नं) पुव्व-सय-सहस्सं सामन्न-परियागं पाउणित्ता; चउरासीइं पुव्वसय-सहस्साइं सव्वाउयं पालइत्ता; खीणे वेयणिज्जाउय-णाम-गोत्ते इमीसे ओसप्पिणीए सुसम-दुस्समाए समाए बहु-विइक्कंताए तिहिं वासेहिं अद्ध-नवमेहिं य मासेहिं सेसेहिं जे से हेमंताणं तच्चे मासे पंचमे पक्खे, माह-बहुले, तस्स णं माह-बहुलस्स तेरसी-पक्खेणं उप्पिं अट्ठावय-सेल-सिहरंसि दसहिं अणगार-सहस्सेहिं सद्धिं चोद्दसमेणं भत्तेणं अपाणएणं अभिइणा नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं पुव्वण्ह-काल-समयंसि संपलियंक-निसन्ने कालगए विइक्कंते जाव सव्व-दुक्ख-पहीणे ॥१९९॥

(१९९) काल के उस भाग में कौशलिक अर्हत् ऋषभ बीस लाख पूर्व वर्ष तक कुमार अवस्था में और त्रेसठ लाख पूर्व वर्षों तक सम्राट् के रूप में, इस प्रकार कुल तियासी लाख पूर्व वर्ष तक गृहस्थाश्रम में रहे। इसके बाद वे एक लाख पूर्व वर्ष तक श्रमण अवस्था में रहे जिसमें एक हजार वर्ष छद्मस्थ और शेष केवलज्ञानी श्रमण अवस्था के थे।

चौरासी लाख पूर्व वर्ष की आयु पूरी होने पर उनके वेदनीय, आयु, नाम और गोत्र-कर्मों का क्षय हो गया। उस समय वर्तमान अवसर्पिणी के सुषम-दुषम नामक तीसरे आरे के बीत जाने में तीन वर्ष साढ़े आठ महीने बाकी बचे थे। हेमन्त ऋतु का तीसरा महीना और पाँचवाँ पक्ष चल रहा था। माघ कृष्ण तेरस के दिन अष्टापद पर्वत के शिखर पर दोपहर से पहले ऋषभदेव दस हजार श्रमणों के साथ जलरहित चतुर्दशभक्त (छह उपवास) तप का पालन करते हुए पर्यंकासन में ध्यानमग्न बैठे थे। तब अभिजित नक्षत्र का योग आने पर वे काल धर्म को प्राप्त हुए। समस्त दुःखों से पूर्णतया मुक्त हो गये।

(199) During that period in that age Kaushalik Arhat Rishabhdev spent two million Purva years as a prince and six million three hundred thousand

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Purva years as a sovereign. Thus he spent a total of eight million three hundred thousand Purva years as a householder. After this he spent one hundred thousand Purva years as an ascetic, out of which one thousand years was as an ordinary ascetic and remaining time as an omniscient ascetic.

At the end of this period of eight million four hundred thousand years since his birth, all his karmas responsible for pain, life span, social, position, and physical constitution were destroyed. At that moment, three years and eight and a half months remained in the end of the third phase, Susham-Dusham, of the current six phase cycle of time. It was the third month and fifth fortnight of the winter season. On the thirteenth day of the dark half of the month of Magh, a little before noon, Rishabhdev, alongwith ten thousand other ascetics, was observing a six day fast without water and sitting in meditation in the Paryanka pose on the Ashtapad mountain. When the moon entered the Abhijit lunar mansion he breathed his last. He was absolutely liberated from all sorrows.

उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स कालगयस्स जाव सव्वदुक्ख-प्पहीणस्स तिन्नि वासा अद्ध-नवमा य मासा विइक्कंता, तओ वि परं एगा सागरोवम-कोडाकोडी तिवास-अद्ध-नवमासाहिय-बायालीसाए वास-सहस्सेहिं ऊणिया विइक्कंता, एयम्मि समए समणे भगवं महावीरे परिनिव्वुडे, तओ वि परं नव-वास-सया विइक्कंता। दसमस्स य वाससयस्स अयं असीइमे संवच्छरे काले गच्छइ ॥२००॥

(२००) अर्हत् ऋषभ के निर्वाण के तीन वर्ष साढ़े आठ महीने बाद तीसरा आरा समाप्त हो गया। इसके बाद एक कोटा-कोटि सागरोपम में बयालीस हजार वर्ष कम के चौथे आरे के समाप्त होने में जब तीन वर्ष और साढ़े आठ महीने बाकी बचे थे तब श्रमण भगवान महावीर का निर्वाण हुआ। अर्थात् ऋषभ के निर्वाण के एक कोटा-कोटि सागरोपम में बयालीस हजार वर्ष कम समय के बाद श्रमण महावीर का निर्वाण हुआ।

(200) The third phase of the current cycle of time ended after three years and eight and a half months of the Nirvana of Arhat Rishabh. After this, when three years and eight and a half months remained in the completion of the fourth phase of forty two thousand years less one Kota-Koti Sagaropam years, Shraman Mahavir attained Nirvana. This means that Arhat Rishabh attained liberation before forty two thousand years less one Kota-Koti Sagaropam years of the liberation of Shraman Mahavir.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थविरावली
(List of the Group Leaders)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थविरावली

गणधर परिवार

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स नव गणा एकारस गणहरा होत्था ॥२०१॥

(२०१) काल के उस भाग में श्रमण भगवान महावीर के नौ गण और ग्यारह गणधर थे।

LIST OF THE GROUP LEADERS

The Lineage of Chief Disciples

(201) During that period in that age Shraman Bhagavan Mahavir had nine groups of monks (Gana) and eleven chief disciples (Ganadhar).

से केणट्ठेणं भंते एवं वुच्चइ समणस्स भगवओ महावीरस्स नव गणा एक्कारस गणहरा होत्था?

समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे इंदभूई अणगारे गोयमे गोत्तेणं पंचसमण-सयाइं वाएइ। मज्झिमे अग्गिभूई नामे णं अणगारे गोयमे गोत्तेणं पंच-समणसयाइं वाएइ। कणीयसे अणगारे वाउभूई नामेणं गोयमे गोत्तेणं पंच-समणसयाइं वाएइ। थेरे अज्ज वियत्ते भारद्दाए गोत्तेणं पंच-समण-सयाइं वाएइ। थेरे अज्ज सुहुमे अग्गिवेसायणे गोत्तेणं पंच-समण-सयाइं वाएइ। थेरे मंडियपुत्ते वासिट्ठे गोत्तेणं अद्धुट्ठाइं समणसयाइं वाएइ। थेरे मोरियपुत्ते कासवगोत्तेणं अद्धुट्ठाइं समण-सयाइं वाएइ। थेरे अकंपिए गोयमे गोत्तेणं, थेरे अचलभाया हारियायणे गोत्तेणं ते दुन्निवि थेरे तिन्नि समण-सयाइं वाएंति। थेरे मेयज्जे, थेरे अज्जपभासे एए दुन्नि वि कोडिन्ना गोत्तेणं तिन्नि तिन्नि समणसयाइं वाएंति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

से एतेणं अट्ठेणं अज्जो एवं वुच्चइ समणस्स भगवओ महावीरस्स नव गणा एक्कारस्स गणहरा होत्था ॥२०२॥

(२०२) ऐसा क्यों कहा? इसका कारण समझाते हुए ग्रन्थकार कहते हैं–श्रमण भगवान महावीर के ग्यारह गणधर इस प्रकार थे–१. उनके ज्येष्ठ शिष्य गौतम गोत्र के इन्द्रभूति अनगार थे, २. मध्यम शिष्य गौतम गोत्र के अग्निभूति थे, ३. कनिष्ट शिष्य गौतम गोत्र के वायुभूति थे। इन तीनों भाइयों के बाद, ४. चौथे गणधर भारद्वाज गोत्र के स्थविर आर्य व्यक्त थे, ५. पाँचवें गणधर अग्निवैशायन गोत्र के स्थविर आर्य सुधर्म थे। इन पाँचों गणधरों ने अपने पाँच-पाँच सौ शिष्य श्रमणों को वाचनाएँ दी थीं। ६. छठे गणधर वशिष्ट गोत्र के स्थविर मण्डितपुत्र थे और ७. सातवें गणधर काश्यप गोत्र के स्थविर मौर्यपुत्र थे। इन दोनों ने अपने साढ़े तीन-तीन सौ शिष्य श्रमणों को वाचनायें दी थीं। ८.आठवें और ९. नौवें गणधर गौतम गोत्र के स्थविर अकम्पित और हारितायान गोत्र के स्थविर अचलभ्राता थे। इन दोनों ने अपने तीन-तीन सौ शिष्य श्रमणों को वाचना दी थी। १०. दसवें और ११. ग्यारहवें गणधर कौंडिन्य गोत्र के स्थविर मेतार्य और स्थविर प्रभास थे। इन दोनों ने भी अपने तीन-तीन सौ शिष्य श्रमणों को वाचनाएँ दी थीं।

अकम्पित और अचलभ्राता की वाचना संयुक्त थी। इसी प्रकार मेतार्य और प्रभास की भी। अतः ग्यारह गणधरों की नौ वाचनाएँ होने के कारण गण नौ ही माने गये हैं।

(202) "Why so?" In explanation of this question the author states—The eleven chief disciples of Shraman Bhagavan Mahavir were—1. His senior most disciple was ascetic Indrabhuti of the Gautam clan. 2. His second disciple was Agnibhuti of the Gautam clan. 3. His third disciple was Vayubhuti of the Gautam clan. 4. After these three brothers the fourth disciple was Sthavir Arya Vyakt of the Bharadvaja clan. 5. His fifth disciple was Sthavir Arya Sudharma belonging to the Agnivaishayan clan. All these five disciples taught their knowledge to five hundred ascetic disciples each. 6. His sixth chief disciple was Sthavir Manditputra of the Vasishtha clan. 7. The seventh was Sthavir Mauryaputra of the Kashyap clan. These two taught their knowledge to three hundred fifty ascetic disciples each. 8. and 9. His eighth and ninth chief disciples were Sthavir Akampit of the Gautam clan and Sthavir Achalbhrata of the Haritiyan clan. These two taught their knowledge to three hundred disciples each. 10. and 11. His tenth and eleventh chief disciples were Sthavir Metarya and Sthavir Prabhas of the Kaundinya clan. These two also gave their knowledge to three hundred disciples each.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

The course taught by Akampit and Achalbhrata was same or joint, and the same was the case with Metarya and Prabhas. As such, although the number of chief disciples was eleven the courses were only nine; thus the number of Ganas (group of ascetics) is also believed to be nine.

सव्वे एए समणस्स भगवओ महावीरस्स एक्कारस वि गणहरा दुवालसंगिणो चउद्दस-पुव्विणो सम्मत्त-गणिपिडग-धारगा रायगिहे नगरे मासिएणं भत्तेणं अपाणएणं कालगया जाव सव्व-दुक्ख-पहीणा। थेरे इंदभूई, थेरे अज्जसुहम्मे य सिद्धिं गए महावीरे पच्छा दोन्नि वि परिनिव्वुया ॥२०३॥

(२०३) श्रमण भगवान महावीर के ये सभी गणधर संपूर्ण गणिपिटक के धारक थे जिसमें चौदह पूर्वों सहित बारह अंग सूत्र सम्मिलित हैं। स्थविर इन्द्रभूति और स्थविर आर्य सुधर्मा का मोक्षगमन भगवान महावीर के निर्वाण के बाद हुआ था। शेष सभी गणधर राजगृह नगर में जलरहित मासिकभक्त तप का पालन कर मोक्ष गए।

(203) All these chief disciples of Shraman Bhagavan Mahavir had the complete knowledge of Ganipitak (the knowledge given by the Tirthankar) that contained the twelve Anga Sutras (the canons), inclusive of the fourteen Purvas (the sublime scriptures/knowledge). Sthavir Indrabhuti and Sthavir Arya Sudharma achieved liberation after the Nirvana of Bhagavan Mahavir. All the other Chief disciples got liberated after observing a one month fast without water in the Rajagriha town.

"जे इमे अज्जताए समणा निग्गंथा विहरंति, एए णं सव्वे अज्ज-सुहम्मस्स अणगारस्स आवच्चिज्जा; अवसेसा गणहरा निरवच्चा वुच्छिन्ना॥२०४॥

(२०४) आज जो भी श्रमण विद्यमान हैं वे सभी आर्य सुधर्मा की परम्परा के (शिष्य-सन्तान) हैं। बाकी सभी गणधरों की शिष्य परम्परा अलग से न चलकर इसमें ही विलीन हो गई।

(204) All the extant ascetics belong to the lineage of Arya Sudharma. The lineage of other chief disciples got amalgamated with this with passage of time.

आचार्य परम्परा

समणे भगवं महावीरे कासव-गोत्तेणं, समणस्स णं भगवओ महावीरस्स कासव-गोत्तस्स अज्ज सुहम्मे थेरे अंतेवासी अग्गिवेसायण-गोत्ते। थेरस्स णं अज्ज-सुहम्मस्स

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अग्गिवेसायण-गोत्तस्स अज्ज-जंबुनामे थेरे अंतेवासी कासव-गोत्ते। थेरस्स णं अज्ज जंबु-नामस्स कासवगोत्तस्स अज्जप्पभवे थेरे अंतेवासी कच्चायण सगोत्ते। थेरस्स णं अज्ज-प्पभवस्स कच्चायण-सगोत्तस्स अज्ज सिज्जंभवे थेरे अंतेवासी मणगपिया वच्छ-सगोत्ते। थेरस्स णं अज्ज सिज्जंभवस्स मणग-पिउणो वच्छ-सगोत्तस्स अज्ज जसभद्दे थेरे अंतेवासी तुंगियायण-सगोत्ते॥२०५॥

(२०५) श्रमण भगवान महावीर काश्यप गोत्र के थे। उनके पट्टधर शिष्य आर्य सुधर्मा अग्निवैशायन गोत्र के थे और उनके पट्टधर आर्य जम्बू काश्यप गोत्र के थे। इनके पट्टधर आर्य प्रभव कात्यायन गोत्र के थे। प्रभव के पट्टधर थे मनक पिता आर्य शय्यम्भव, ये वत्स गोत्र के थे। इनके पट्टधर आर्य यशोभद्र तुंगियायन गोत्र के थे।

The Lineage of Acharyas

(205) Shraman Bhagavan Mahavir belonged to the Kashyap clan. His successor and disciple, Arya Sudharma, belonged to the Agnivaishayan clan, and his successor, Arya Jambu, was from the Kashyap clan. Jambu's successor, Arya Prabhav, was from the Katyayan clan. The successor of Prabhava was Arya Shayyambhav, the father of Manak, who belonged to the Vatsa clan. The successor of Shayyambhav was Arya Yashobhadra of Tungiyayan clan.

विस्तार :

सुधर्मा स्वामी : श्रमण भगवान महावीर के ग्यारह गणधरों में पाँचवें थे सुधर्मा स्वामी। भगवान महावीर के निर्वाण से पूर्व नौ गणधर केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष जा चुके थे। गौतम स्वामी को भगवान महावीर के निर्वाण के तत्काल बाद ही केवलज्ञान प्राप्त हो गया था। सर्वज्ञ कभी परम्परा का वाहक नहीं होता, अतः भगवान महावीर के पश्चात् इस दायित्व का वहन सुधर्मा स्वामी ने किया। ये अपने युग के अनुपम विद्वान् व साधक थे। भगवान महावीर द्वारा प्रतिपादित त्रिपदी के आधार पर उन्होंने द्वादशांगी की रचना की जो जैन परम्परा के आधारभूत आगम ग्रन्थ हैं। इन्हें वीर निर्वाण १२ (४५८ वि. पू., ५१४ ई. पू.) में केवलज्ञान प्राप्त हुआ। इनका निर्वाण वी. नि. २० (वि. पू. ४५०, ५०६ ई. पू.) में हुआ।

Elaboration :

Sudharma Swami : He was the fifth of the eleven chief disciples of Shraman Bhagavan Mahavir. Nine of the chief disciples were liberated before the Nirvana of Mahavir. Gautam Swami became omniscient immediately after the Nirvana of Mahavir. An omniscient, as a rule, is never a carrier of any tradition; as such the responsibility of carrying on the religious tradition established by Mahavir came to Sudharma Swami. He was an exemplary scholar and spiritualist of his times. It was he who created the twelve

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

canons (Dwadashangi) on the basis of the trifacet principle (tripadi) propagated by Mahavir. These canons are the source books of all knowledge for the Jain tradition. He became omniscient 12 years after the nirvana of Mahavir (A.N.M.) or 458 B.V. (before Vikram calendar), or 514 B.C. and got liberated in 20 A.N.M. (450 B.V., 506 B.C.)

जम्बू स्वामी : सुधर्मा स्वामी के पट्टधर शिष्य जम्बू स्वामी थे। भगवान महावीर के निर्वाण से सोलह वर्ष पूर्व राजगृह के एक समृद्ध वैश्य परिवार में इनका जन्म हुआ था। सोलह वर्ष की आयु में सुधर्मा स्वामी का प्रवचन सुनकर इन्हें वैराग्य उत्पन्न हो गया था। माता-पिता के आग्रह से इन्होंने विवाह तो कर लिया किन्तु उसी रात्रि अपनी आठ पत्नियों को धर्मोपदेश दिया। उनके इस उपदेश को उनके यहाँ चोरी करने आया दस्यु प्रभव भी सुन रहा था, उसे भी वैराग्य उत्पन्न हो गया। प्रातःकाल जम्बू ने प्रभव व उसके साथियों सहित सुधर्मा स्वामी के पास दीक्षा ग्रहण कर ली। बारह वर्ष तक उन्होंने सुधर्मा स्वामी के पास समस्त आगमों का तलस्पर्शी ज्ञान प्राप्त किया और उनके केवलज्ञान के बाद उनके पट्ट पर आसीन हुए। उन्हें वी. नि. २० में केवलज्ञान हुआ और वी. नि. ६४ में उनका निर्वाण हुआ। जम्बू स्वामी इस अवसर्पिणी के अन्तिम केवलज्ञानी माने जाते हैं।

Jambu Swami : The successor of Sudharma Swami as the head of the religious order was Jambu Swami. He was born in a merchant family of Rajagriha, sixteen years before the Nirvana of Bhagavan Mahavir. He became detached after listening to a discourse of Sudharma Swami when he was sixteen years old. Although he married—due to intense pressure from his parents—during the first night he gave a spiritual discourse to his eight brides. A notorious thief, Prabhav, who had entered Jambu's house also happened to listen to this discourse. This thief also got detached, and the next morning, when Jambu took Diksha from Sudharma Swami, Prabhav and his fellow thieves joined him and became ascetics. For twelve years Jambu remained under the tutelage of Suharma Swami and acquired profound knowledge of all the canons. After Sudharma Swami became omniscient Jambu succeeded him as the head of the order. Jambu became omniscient, in 20 A.N.M. and got nirvana in 64 A.N.M. (462 B.C.) Jambu Swami is believed to be the last omniscient of this cycle of time.

आर्य प्रभव स्वामी : जम्बू स्वामी के पट्ट पर आए आर्य प्रभव स्वामी। आपकी दीक्षा सुधर्मा स्वामी के पास हुई थी। यद्यपि ये विन्ध्य प्रदेश के एक राजा के ज्येष्ठ पुत्र थे, किन्तु पिता के द्वारा छोटे भाई को उत्तराधिकारी बना देने के कारण ये कुपित होकर दस्यु बन गये थे। जम्बूकुमार के घर में चोरी करते समय उन्हीं के उपदेश से प्रभव का हृदय परिवर्तन हुआ और उन्हीं के साथ दीक्षा ले\ली। वी. नि. ६४ में उन्होंने आचार्य पद ग्रहण किया। उन्हें सभी अंग शास्त्रों का ज्ञान था। भगवान महावीर की परम्परा के वे प्रथम श्रुतकेवली थे। इनका निर्वाण वी. नि. ७५ (वि. पू. ३९५, ४५१ ई. पू.) में हुआ।

Arya Prabhav Swami : Arya Prabhav Swami succeeded Jambu Swami as the head of the order. He had taken Diksha from Sudharma Swami. He was a prince from the Vindhya area in western India, but as his father made the younger son the heir apparent, Prabhav left his kingdom and became a bandit. When he went to the house of Jambu with intention of theft, he listened to the discourse of Jambu and had a change of heart. He then became an ascetic with Jambu. He became the head of the order, Acharya, in the year 64 A.N.M. He had absorbed all the knowledge of the canons. He was the first Shruta Kevali in Mahavir's

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

tradition. (Shruta Kevali is the person who has complete literal knowledge of all the canons including the fourteen sublime ones. He is not proficient enough in practices to become a Kewali or omniscient.) He left his mundane body in the year 75 A.N.M. (395 B.V., 451 B.C.)

आर्य शय्यम्भव स्वामी : इनका जन्म राजगृह के एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। ये वेदों के गहन ज्ञाता थे पर उतने ही अभिमानी भी। आर्य प्रभव स्वामी को जब अपने उत्तराधिकारी पद के उपयुक्त कोई विद्वान् शिष्य नहीं मिला तो उन्होंने श्रमणेतर विद्वानों की खोज की। एक बार यज्ञ करते समय शय्यम्भव ने श्रमणों से सुना कि तत्त्व को कोई नहीं जानता। तो वे यह निश्चित करने कि श्रमण परम्परा के शीर्षस्थ भी तत्त्व को जानते हैं या नहीं, आर्य प्रभव के पास गये। आर्य प्रभव ने उन्हें तत्त्व-बोध दिया और शिष्य बना लिया। शय्यम्भव मेधावी तो थे ही, प्रभव ने उन्हें द्वादशांगी का संपूर्ण ज्ञान दिया और अपना उत्तराधिकारी बनाया। शय्यम्भव के गृहस्थ जीवन त्याग के समय उनकी पत्नी गर्भवती थी। अतः पिता-पुत्र परस्पर अपरिचित थे। बढ़ती आयु के साथ पुत्र के मन में अपने पिता का स्नेह पाने की ललक भी बढ़ती गई। बालक मनक जब प्रथम बार पिता से मिलने गया तो शय्यम्भव ने उसे अपना परिचय नहीं दिया और उसकी अध्यात्म के प्रति रुचि देख उसे प्रतिबोध दिया। बालक मनक आठ वर्ष की अवस्था में ही दीक्षित हो गया। शय्यम्भव को ज्योतिष ज्ञान के आधार पर यह आभास हुआ कि बालक अल्पायु है। यह जानकर उन्होंने अपने पूर्वज्ञान के आधार पर दशवैकालिक सूत्र की रचना की। जैन परम्परा में यह ग्रंथ बहुत प्रचलित हुआ। तेईस वर्ष तक युग प्रधान रहे शय्यम्भव ने वी. नि. ९८ (३७२ वि. पू., ४२८ ई. पू.) में देह त्यागी।

Arya Shayyambhav Swami : He was born in a Brahman family of Rajagriha. He was a profound scholar of the Vedas but a conceited person. When Arya Prabhav did not find a capable and scholarly person suitable to take charge of the order among his disciples, he looked around for someone from other schools. One day while he was busy in Yajna rituals, Shayyambhav heard a comment from some Shramans that no one present there had the knowledge of the fundamentals. This inspired the irked Shayyambhav to go to Arya Prabhav, the then head of the Shramans, and find out if the Shramans had the true knowledge of the fundamentals. Arya Prabhav gave him the knowledge of the fundamentals and made him a disciple. As Shayyambhav was already a brilliant scholar, Arya Prabhav imparted all the knowledge of the twelve canons to him and made him the successor.

At the time of his renunciation, Shayyambhav's wife was pregnant. As such the father and the son were not acquainted with each other. The desire to experience the love of his father grew with age within the son's mind. However, at last when child Manak came to Shayyambhav in search of his father, Shayyambhav did not reveal his identity but gave an impressive religious discourse. Child Manak became an ascetic at the age of eight years. Through his knowledge of astrology it was revealed on Shayyambhav that the child had a very short life span. This inspired him to create the Dashavaikalika Sutra based on his knowledge of the canons. This work became very popular in the later Jain tradition. After remaining head of the order for twenty three years, Shayyambhav expired in the year 98 A. N. M. (379 B. V., 428 B.C.)

आर्य यशोभद्र : पाँचवें पट्टधर आचार्य यशोभद्र का जन्म ब्राह्मण परिवार में वी. नि. ३६ (४३४ वि. पू., ४९० ई. पू.) में हुआ था। वे कर्मकाण्डी वैदिक परम्परा के मूर्धन्य विद्वान् थे। आर्य शय्यम्भव के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रवचन से प्रभावित हो उन्होंने बाईस वर्ष की आयु में दीक्षा ग्रहण की। चौदह वर्ष तक उन्होंने सम्पूर्ण अंग शास्त्रों का पारायण अपने गुरु के निर्देशन में किया। आर्य शय्यम्भव के देहावसान के बाद ये छत्तीस वर्ष की आयु में आचार्य बने। पचास वर्ष तक सफलतापूर्वक संघ संचालन कर वी. नि. १४८ (वि. पू. ३२२, ३७८ ई. पू.) में इनका स्वर्गवास हुआ। इनके समय तक जैन संघ में एक आचार्य की परम्परा थी। यशोभद्र ने प्रथम बार अपने दो शिष्यों को आचार्य पद दिया।

Arya Yashobhadra : The fifth head of the order in Mahavir's tradition, Arya Yashobhadra was born in a Brahman family in the year 36 A.N.M. (434 B.V., 490 B.C.). He was among the top scholars of the ritualistic Vedic tradition. Deeply influenced by the discourses of Arya Shayyambhav, he took Diksha when he was twenty two years old. Under the direction of his guru he absorbed all the knowledge of the canons for fourteen years. He succeeded Arya Shayyambhav as head of the order at the age of thirty six years. After successfully managing the organisation for fifty years he died in the year 148 A.N.M. (322 B.V., 378 B.C.). Till his time the Jain tradition had a system of one Acharya in the order. For the first time Yashobhadra promoted two of his disciples to the position of Acharya.

''संखित्त-वायणाए अज्ज-जसभद्दाओ अग्गओ एवं थेरावली भणिया, तं जहा–

थेरस्स णं अज्ज-जसभद्दस्स तुंगियायण-गोत्तस्स अंतेवासी दुवे थेरा–

थेरे अज्जसंभूइविजए माढर-सगोत्ते, थेरे अज्ज भद्दबाहू पाइण-सगोत्ते।

थेरस्स णं अज्ज संभूइविजयस्स माढर-सगोत्तस्स अंतेवासी थेरे अज्ज थूलभद्दे गोयमसगोत्ते। थेरस्स णं अज्ज-थूलभद्दस्स गोयम-सगोत्तस्स अंतेवासी दुवे थेरा–थेरे अज्ज महागिरी एलावच्च-सगोत्ते, थेरे अज्ज-सुहत्थी वासिट्ठसगोत्ते।

थेरस्स णं अज्ज सुहत्थिस्स वासिट्ठ-सगोत्तस्स दुवे थेरा–सुट्ठिय-सुप्पडिबुद्धा कोडिय-काकंदगा वग्घावच्च-सगोत्ता। थेराणं सुट्ठिय सुप्पडि-बुद्धाणं कोडिय-काकंदगाणं वग्घावच्च-सगोत्ताणं अंतेवासी थेरे अज्ज-इंददिन्ने कोसिय-गोत्ते।

थेरस्स णं अज्ज-इंददिन्नस्स कोसिय-गोत्तस्स अंतेवासी अज्ज-दिन्ने गोयम-सगोत्ते।

थेरस्स णं अज्ज-दिन्नस्स गोयम-सगोत्तस्स अंतेवासी थेरे अज्ज-सीहगिरी जाइस्सरे कोसिय-गोत्ते।

थेरस्स णं अज्ज-सीहगिरीस्स जाइसरस्स कोसिय-गोत्तस्स अंतेवासी थेरे अज्ज-वइरे गोयम-सगोत्ते।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

थेरस्स णं अज्ज-वइरस्स गोयम-सगोत्तस्स अंतेवासी अज्ज-वइरसेणे उक्कोसिय-गोत्ते।

थेरस्स णं अज्ज-वइरसेणस्स उक्कोसिय-गोत्तस्स अंतेवासी चत्तारि थेरा-(१) थेरे अज्ज-नाइले, (२) थेरे अज्ज-पोमिले, (३) थेरे अज्ज-जयंते, (४) थेरे अज्ज-तावसे। थेराओ अज्ज-नाइलाओ अज्ज-नाइला साहा निग्गया। थेराओ अज्ज-पोमिलाओ अज्ज-पोमिला साहा निग्गया। थेराओ अज्ज-जयंताओ अज्ज-जयंती साहा निग्गया। थेराओ अज्ज-तावसाओ अज्ज-तावसी साहा निग्गया इति॥२०६॥

(२०६) आर्य यशोभद्र के बाद की स्थविर परम्परा संक्षिप्त वाचना के अनुसार इस प्रकार है:

आर्य यशोभद्र के दो पट्टधर थे। प्रथम स्थविर आर्य सम्भूतिविजय माढर गोत्र के थे और दूसरे स्थविर आर्य भद्रबाहु प्राचीन गोत्र के। आर्य सम्भूतिविजय के शिष्य गौतम गोत्र के स्थविर आर्य स्थूलभद्र थे। इनके दो शिष्य थे-प्रथम एलापत्य गोत्र के आर्य महागिरि और दूसरे वासिष्ट गोत्र के आर्य सुहस्ति। आर्य सुहस्ति के दो शिष्य थे-सुस्थित और सुप्रतिबुद्ध। ये दोनों व्याघ्रापत्य गोत्र के थे और कोटिक काकन्दक नाम से प्रसिद्ध थे। इन कोटिक काकन्दक के शिष्य कौशिक गोत्र के आर्य इन्द्रदिन्न थे जिनके शिष्य गौतम गोत्र के आर्यदिन्न थे। आर्यदिन्न के शिष्य थे आर्य सिंहगिरि जिन्हें जाति-स्मरण ज्ञान हुआ था। इनके शिष्य गौतम गोत्र के आर्य वज्र थे।

आर्य वज्र के चार शिष्य थे जिनसे चार शाखाएँ निकलीं जो इस प्रकार हैं-(१) स्थविर आर्य नागिल से आर्य नागिला शाखा, (२) स्थविर आर्य पोमिल से पोमिला शाखा, (३) स्थविर आर्य जयन्त से आर्य जयन्ती शाखा, और (४) स्थविर आर्य तापस से आर्य तापसी शाखा।

(206) According to the concise list the chronology of the senior ascetics after Arya Yashobhadra is as follows :

Arya Yashobhadra was followed by two heads of the order. First Sthavir (senior ascetic) Arya Sambhuti Vijaya belonged to the Madhar clan and the second Sthavir Arya Bhadrabahu belonged to the Prachin clan. Arya Sthulabhadra of the Gautam clan was the disciple of Arya Sambhuti Vijay. Sthulbhadra had two disciples, one Arya Mahagiri of Elapatya clan and the other Arya Suhasti of the Vasishta clan. Arya Suhasti had two disciples, Susthit and Supratibaddha, both belonging to the Vyaghrapatya clan. These two were popularly known as Kotik Kakandaka and had a disciple Arya

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Indradinna belonging to the Kaushik clan. Indradinna's disciple was Arya-dinna of the Gautam clan and his disciple was Arya Simhagiri who had acquired Jatismaran Jnana. The disciple of Simhagiri was Arya Vajra of the Gautam clan.

Arya Vajra had four disciples who initiated four branches of the order—Arya Nagila branch by Sthavir Arya Nagil, Pomila branch by Sthavir Arya Pomil, Arya-Jayanti branch by Sthavir Arya Jayant, and Arya Tapasi branch by Sthavir Arya Tapas.

विस्तार :

आर्य सम्भूति विजय : आर्य यशोभद्र के ज्येष्ठ शिष्य और परम्परा के छठे पट्टधर सम्भूतिविजय जन्मना ब्राह्मण थे। उन्होंने अपने गुरु से सम्पूर्ण श्रुतज्ञान प्राप्त किया और यशोभद्र के देहावसान के बाद पट्टधर आचार्य बने। मगध अमात्य शकडाल परिवार इन्हीं का अनुयायी था। चतुर्थ श्रुतकेवली सम्भूतिविजय का देहावसान वी. नि. १५६ (वि. पू. ३१४, ३०० ई. पू.) में हुआ।

Elaboration :

Arya Sambhuti Vijaya : The sixth head of the order in Mahavir's tradition, and the senior disciple of Arya Yashobhadra was Brahman by birth. He absorbed all the knowledge of the canons under the guidance of his teacher, and succeeded Yashobhadra as the head of the order. The famous minister of Magadh kingdom, Amatya Shakadal, and his family were staunch followers of Sambhuti Vijaya. The fourth Shruta Kevali Smabhuti Vijaya died in the year 156 A.N.M. (314 B.V., 370 B.C.)

आचार्य भद्रबाहु : आचार्य यशोभद्र के दूसरे शिष्य आचार्य भद्रबाहु का जन्म प्राचीन गोत्रीय ब्राह्मण परिवार में वी. नि. ९४ (३७६ वि. पू.) में हुआ था। उन्होंने वी. नि. १३९ में दीक्षा ली और सत्रह वर्ष अपने गुरु सान्निध्य में रहकर सम्पूर्ण श्रुतज्ञान प्राप्त किया। सम्भूतिविजय के देहावसान के बाद वी. नि. १५६ में इन्होंने आचार्य बन पट्टधर पद को शोभित किया। भद्रबाहु के समय में भयंकर दुष्काल पड़ा और संघ छिन्न-भिन्न-सा हो गया। भद्रबाहु को छोड़ श्रुतज्ञान सम्पन्न कोई भी मुनि नहीं बचा। वे स्वयं नेपाल की कन्दराओं में जाकर महाप्राण ध्यान में साधनारत थे। संघ के आग्रह पर वे कुछ योग्य पात्रों को अपना श्रुतज्ञान देने को सहमत हो गये। संघ ने पाँच सौ श्रमणों का चयन कर उनके पास भेजा। इस कठोर ज्ञान साधना में केवल स्थूलभद्र पूर्ण काल तक संलग्न रह सके अन्य सभी लौट आये। स्थूलभद्र भी चौदह पूर्वों का अध्ययन तो कर पाये पर अर्थ केवल दस पूर्वों का ही ग्रहण कर सके।

भद्रबाहु ने द्वादशांगों की वाचना के अतिरिक्त छेद सूत्रों की रचना भी की। ये ग्रन्थ हैं–दशाश्रुतस्कन्ध (कल्पसूत्र इसी ग्रन्थ के आठवें अध्ययन का विस्तार है), बृहत्कल्प, व्यवहार सूत्र और निशीथ। इनका देहावसान वी. नि. १७० (वि. पू. ३००, ३५६ ई. पू.) में हुआ।

Acharya Bhadrabahu : The second disciple of Acharya Yashobhadra was Acharya Bhadrabahu. He was born in a Brahaman family of the Prachin clan in the year 94 A.N.M. (376 B.V.). He became an ascetic in the year 139 A.N.M. and studied the canons under

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Acharya Yashobhadra for seventeen years. He succeeded Yashobhadra as the head of the order in the year 156 A.N.M., when Yashobhadra died. During Bhadrabahu's time there was a devastating drought that caused the disintegration of the religious organisation. Besides Bhadrabahu there was no ascetic scholar left who had complete knowledge of the canons. Bhadrabahu was spending his time in seclusion in Nepal busy with spiritual practices. On the request of the religious organisation he agreed to impart all his knowledge to some able students. The organisation selected five hundred brilliant ascetics for this task and sent them to Nepal. Only Sthulabhadra could complete this tough course, all the others returned much earlier. Even Sthulabhadra could not reach the prescribed level of discipline and as such he could absorb only ten of the fourteen sublime canons complete with their meanings; of the remaining four he could memorise text only.

Besides imparting the education of the twelve canons Bhadrabahu also wrote the Chheda Sutras—Dashasrutaskandha (The Kalpasutra is the elaboration of the eighth chapter of this work), Vrihatkalpa, Vyavahara Sutra, and Nisheeth. He died in the year 170 A.N.M. (300 B.V., 356 B.C.)

आचार्य स्थूलभद्र : स्थूलभद्र का जन्म मगध के प्रसिद्ध ब्राह्मण अमात्य शकडाल के घर में हुआ था। इनके सात बहनें थीं जो कालान्तर में श्रमणियाँ बनीं। इनका छोटा भाई श्रीयक भी राज्य सेवा में था। युवावस्था में सांसारिक व्यवहार कुशलता की शिक्षा हेतु अमात्य शकडाल ने स्थूलभद्र को परम सुन्दरी गणिका कोशा के पास भेजा, वे उस पर आसक्त हो वहीं रह गये। बारह वर्ष के पश्चात् शकडाल की किसी षड्यंत्र में मृत्यु के उपरान्त राजा ने उन्हें मन्त्रिपद देने के लिए बुलाया। राजनैतिक कुचक्र में पिता की मृत्यु के समाचार से स्थूलभद्र की विचारधारा की दिशा बदल गई। वे संसार त्याग कर श्रमण बन गये। वी. नि. १४६ (वि. पू. ३२४) में उन्होंने आचार्य संम्भूतिविजय के पास दीक्षा ग्रहण की। अपने संयम की आत्म-परीक्षा हेतु गणिका कोशा के आवास पर पावस व्यतीत करने की घटना जैन इतिहास की प्रसिद्ध घटना है।

बारह वर्षीय अकाल के पश्चात् बिखरे श्रुतज्ञान के संकलन हेतु पाटलीपुत्र में श्रमण-सम्मेलन के आयोजक स्थूलभद्र ही थे। ग्यारह अंगों के संकलन के बाद 'दृष्टिवाद' का ज्ञान प्राप्त करने गये पाँच सौ श्रमणों में स्थूलभद्र के पास ही वह शक्ति और लगन थी कि वे भद्रबाहु से दृष्टिवाद की वाचना पा सकें। इसके चौदह पूर्वों में से दस पूर्वों के वे अर्थ-सहित ज्ञाता थे और शेष चार के केवल पाठ-सहित। सफलतापूर्वक संघ संचालन और श्रुतज्ञान के संकलन को समर्पित स्थूलभद्र का देहावसान वी. नि. २१५ (२५५ वि. पू., ३११ ई. पू.) में हुआ।

Acharya Sthulabhadra : Sthulabhadra was born in the famous Brahman family of Magadh that was the back bone of Magadh politics. He was the son of the illustrious minister Shakadal. He had seven sisters, who later became ascetics, and a younger brother named Shriyaka, who joined the state services. When he was young, Sthulabhadra's father sent him to the divinely beautiful courtesan Kosha to learn various facets of social behaviour. Infatuated with the beauty of Kosha, Sthulabhadra stayed with her. It was only after twelve years that he came out of her house, when the king invited him to accept the post of primeminister, vacated due to the death of Shakadal in a conspiracy. The news of

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

the death of his father, as a result of some political conspiracy brought a marked change in Sthulabhadra. He left his home and became an ascetic. In the year 146 A.N.M. (324 B.V.) he took Diksha from Acharya Sambhuti Vijaya. The story of his spending a monsoon at the residence of Kosha to test his determination and discipline is a popular saga in Jain history.

Sthulabhadra was the organiser of the conference of ascetics called for the compilation of the canonical knowledge scattered due to the twelve year drought. After compiling the eleven canons five hundred ascetics were sent to Bhadrabahu for learning the twelfth—'Drishtivad'. Only Sthulabhadra had the capability and determination to learn Drishtivad. He learned its ten chapters with meaning and remaining four only textually. He successfully acomplished the tasks of organising the religious order and compiling the canonical knowledge. Sthulabhadra died in the year 215 A.N.M. (255 B.V., 311 B.C.).

वित्थर-वायणाए पुण अज्ज-जसभद्दाओ परओ थेरावली एवं पलोइज्जइ, तं जहा–

थेरस्स णं अज्ज-जसभद्दस्स तुंगियायण-सगोत्तस्स इमे दो थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिन्नाया होत्था–

तं जहा–थेरे अज्ज भद्दबाहू पाईण-सगोत्ते, थेरे अज्ज संभूइ-विजए माढर-सगोत्ते। थेरस्स णं अज्ज-भद्दबाहुस्स पाईण-सगोत्तस्स इमे चत्तारि थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिन्नाया होत्था–तं जहा–(१) थेरे गोदासे, (२) थेरे अग्गिदत्ते, (३) थेरे जण्णदत्ते, (४) थेरे सोमदत्ते कासवगोत्तेणं। थेरेहिंतो णं गोदासेहिंतो कासव-गोत्तेहिंतो एत्थ णं गोदासगणे नामं गणे निग्गए। तस्स णं इमाओ चत्तारि साहाओ एवमाहिज्जंति, तं जहा–तामलित्तिया, कोडीवरिसिया, पोंडवद्धणिया दासी-खव्वडिया॥२०७॥

(२०७) विस्तृत वाचना के अनुसार आर्य यशोभद्र के आगे की स्थविर परम्परा इस प्रकार है:

यशोभद्र के पुत्र-सम दो स्थविर शिष्य थे–एक आर्य भद्रबाहु और दूसरे आर्य सम्भूतिविजय। आर्य भद्रबाहु के चार प्रसिद्ध स्थविर शिष्य थे–१. स्थविर गोदास, २. स्थविर अग्निदत्त, ३. स्थविर यज्ञदत्त और ४. स्थविर सोमदत्त। ये चारों काश्यप गोत्र के थे।

काश्यप गोत्र के स्थविर गोदास की परम्परा गोदास गण बना। इस गण की चार शाखाएँ हुईं–१. ताम्रलिप्तिका, २. कोटिवर्षीया, ३. पौण्ड्रवर्द्धनिक और ४. दासी-कर्पटिका।

(207) According to the detailed list, the Sthavir tradition after Arya Yashobhadra is as follows :

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Yashobhadra had two Sthavir disciples who were like his own sons—One was Arya Bhadrabahu and the other Arya Sambhuti Vijaya. Arya Bhadrabahu had four famous Sthavir disciples—1. Sthavir Godas, 2. Sthavir Agnidutt, 3. Sthavir Yajnadutt, and 4. Sthavir Somadutt. These four belonged to the Kashyap clan.

The lineage of Sthavir Godas of the Kashyap clan became popular as the Godas Gana. This Gana evolved into four branches—1. Tamraliptika, 2. Kotivarshiya, 3. Paundravardhanik, and 4. Dasi-karpatika.

थेरस्स णं अज्ज-संभूइविजयस्स माढर-सगोत्तस्स इमे दुवालस थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिण्णाया होत्था, तं जहा–

नंदणभद्दे उवणंदभद्द, तह तीसभद्द-जसभद्दे।
थेरे य सुमिणभद्दे, मणिभद्दे य पुण्णभद्दे य॥१॥
थेरे य थूलभद्दे, उज्जमई जंबु-नामधेज्जे य।
थेरे य दीहभद्दे, थेरे तह पंडुभद्दे य॥२॥

थेरस्स णं अज्ज-संभूइविजयस्स माढर-सगोत्तस्स इमाओ सत्त अंतेवासिणीओ अहावच्चाओ अभिन्नाओ होत्था। तं जहा–

जक्खा य जक्खदिन्ना भूया तह होइ भूयदिन्ना य।
सेणा वेणा रेणा भगिणीओ थूलभद्दस्स॥१॥ ॥२०८॥

(२०८) माढर गोत्र के स्थविर आर्य सम्भूतिविजय के बारह प्रसिद्ध स्थविर शिष्य थे–१. नन्दनभद्र, २. उपनन्द, ३. तिष्यभद्र, ४. यशोभद्र, ५. सुमनोभद्र, ६. मणिभद्र, ७. पूर्णभद्र, ८. स्थूलभद्र, ९. ऋजुमति, १०. जम्बू, ११. दीर्घभद्र और १२. पाण्डुभद्र।

संभूतिविजय की सात प्रसिद्ध शिष्याएँ थीं–१. यक्षा, २. यक्षदत्ता, ३. भूता, ४. भूतदत्ता, ५. सेणा, ६. वेणा और ७. रेणा। ये सातों स्थूलभद्र की बहनें थीं।

(208) Arya Sambhuti Vijaya of the Madhar clan had twelve famous Sthavir disciples—1. Nandanbhadra, 2. Upanand, 3. Tishyabhadra, 4. Yashobhadra, 5. Sumanobhadra, 6. Manibhadra, 7. Purnabhadra, 8. Sthulabhadra, 9. Rijumati, 10. Jambu, 11. Deerghabhadra and 12. Pandubhadra.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Sambhuti Vijaya had seven famous female disciples—1. Yaksha, 2. Yakshadatta, 3. Bhuta, 4. Bhutadatta, 5. Sena, 6. Vena, and 7. Rena. They all were sisters of Sthulabhadra.

थेरस्स णं अज्ज-थूलभद्दस्स गोयम-सगोत्तस्स इमे दो थेरा अहावच्चा अभिन्नाया होत्था, तं जहा–थेरे अज्ज-महागिरी एलावच्च (वच्छ) सगोत्ते, थेरे अज्ज-सुहत्थी वसिट्ठ-सगोत्ते।

थेरस्स णं अज्ज-महागिरिस्स एलावच्च (च्छ)–सगोत्तस्स इमे अट्ठ अंतेवासी अहावच्चा अभिन्नाया होत्था, तं जहा–थेरे उत्तरे, थेरे बलिस्सहे, थेरे धणड्ढे, थेरे सिरिड्ढे, थेरे कोडिन्ने, थेरे नागे, थेरे नागमित्ते, थेरे छलुए रोहगुत्ते कोसिय-गोत्तेणं। थेरेहिंतो णं छलुएहिंतो रोहगुत्तेहिंतो कोसिय-गोत्तेहिंतो तत्थ णं तेरासिया साहा निग्गया।

थेरेहिंतो णं उत्तर-बलिस्सहेहिंतो तत्थ णं उत्तर-बलिस्सह-गणे नामं गणे निग्गए। तस्स णं इमाओ य चत्तारि साहाओ एवमाहिज्जंति, तं जहा–(१) कोसंबिया, (२) सुत्तिवत्तिया (सोइत्तिया), (३) कोडुंबिणी (४) चंदनागरी॥२०९॥

(२०९) आर्य स्थूलभद्र के दो प्रसिद्ध स्थविर शिष्य थे–ऐलापत्य गोत्र के स्थविर आर्य महागिरि और वासिष्ट गोत्र के स्थविर आर्य सुहस्ति।

आर्य महागिरि के प्रख्यात आठ स्थविर शिष्य थे–१. उत्तर, २. बलिस्सह, ३. धनर्द्धि, ४. शिरर्द्धि, ५. कौण्डिन्य, ६. नाग, ७. नागमित्र और ८. षडुलूक रोहगुप्त। रोहगुप्त कौशिक गौत्र के थे और उनसे त्रैराशिक शाखा निकली।

स्थविर उत्तर और स्थविर बलिस्सह से उत्तर-बलिस्सह नामक गण निकला। इस गण की चार शाखाएँ हुईं–कौशाम्बिका, सौमित्रिका, कोटुम्बिनी और चन्द नागरी।

(209) Arya Sthulabhadra had two famous Sthavir disciples—Sthavir Arya Mahagiri of the Elapatya clan and Sthavir Arya Suhasti of the Vasishta clan.

Arya Mahagiri had eight famous Sthavir disciples—1. Uttar, 2. Balissaha, 3. Dhanardhi, 4. Shirardhi, 5. Kaundinya, 6. Naag, 7. Naagmitra, and 8. Shaduluk Rohagupta. Rohagupta was from the Kaushik clan and his lineage became known as Trairashik.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

The lineage of Sthavir Uttar and Sthavir Balissaha became known as Uttar-Balissaha Gana. This Gana further branched out in four branches—Kaushambika, Saumitrika, Kautimbini, and Chand Nagari.

विस्तार :

आर्य महागिरि : वि. पू. ३२५ से २२५ (३८२ से २८२ ई. पू.)।

आर्य सुहस्ती : वि. पू. २७८ से १७९ (३३५ से २३६ ई. पू.)। सम्राट् सम्प्रति के सहयोग से व्यापक धर्म प्रभावना। गणधर वंश, वाचक वंश और युगप्रधान आचार्य परम्परा का आरंभ।

आचार्य बलिस्सह : वि. पू. १४१ (१९८ ई. पू.) (यह अनुमानित पुण्यतिथि है। अन्य सूचना अनुपलब्ध)।

आचार्य गुणसुन्दर : वि. पू. २३५ से १३५ (२९२ से १९२ ई. पू.)।

Elaboration :

Arya Mahagiri : 325 to 225 B.V. (382 to 282 B.C.)

Arya Suhasti : 278 to 179 B.V. (335 to 236 B.C.) He is credited with the wide spread popularisation of Jain culture done with the help of Emperor Samprati. This is also the time of the beginning of the traditions of Ganadhara Vamsha, Vachak Vamsha, and Yugapradhan Acharya or the hierarchical organisation and division of responsibilities.

Acharya Balissaha : Estimated date of demise (141 B.V.) (198 B.C.) Other details not available.

Acharya Gunasunder : 235 to 135 B.V. (292 to 192 B.C.)

थेरस्स णं अज्ज-सुहत्थिस्स वासिट्ठ-सगोत्तस्स इमे दुवालस थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिन्नाया होत्था, तं जहा–

थेरेत्थ अज्ज-रोहण, भद्दजसे मेहगणी य कामिड्ढी।
सुट्ठिय-सुप्पडिबुद्धे, रक्खिय तह रोहगुत्ते य॥१॥
इसिगत्ते सिरिगुत्ते, गणी य बंभे, गणी य तह सोमे।
दस दो य गणहरा, खलु एए सीसा सुहत्थिस्स॥२॥ ॥२१०॥

(२१०) आर्य सुहस्ति के बारह स्थविर शिष्य प्रसिद्ध हुए–१. आर्य रोहण, २. भद्रयश, ३. मेघगणि, ४. कामर्द्धि, ५. सुस्थित, ६. सुप्रतिबुद्ध, ७. रक्षित, ८. रोहगुप्त, ९. ऋषिगुप्त, १०. श्रीगुप्त गणि, ११. ब्रह्म गणि, और १२. सोम गणि। आर्य सुहस्ति के ये शिष्य परम ज्ञानवान थे।

आचार्य सुस्थित : वि. पू. २२७ से १३१ (ई. पू. २८४ से १८८)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(210) Arya Suhasti had twelve famous Sthavir disciples—1. Arya Rohan, 2. Bhadrayash, 3. Megh Gani, 4. Kamardhi, 5. Susthit, 6. Supratibuddha, 7. Rakshit, 8. Rohagupta, 9. Rishigupta, 10. Shrigupta Gani, 11. Brahma Gani, and 12. Som Gani. These disciples of Arya Suhasti were highly accomplished.

Acharya Susthit : 227 to 131 B.V. (282 to 188 B.C.)

थेरेहिंतो णं अज्ज-रोहिणेहिंतो कासवगुत्तेहिंतो तत्थ णं उद्देह गणे नामं गणे निग्गए। तस्सिमाओ चत्तारि साहाओ निग्गयाओ, छच्च कुलाइं एवमाहिज्जंति। से किं तं साहाओ? साहाओ एवमाहिज्जंति, तं जहा–१-उदंबरिज्जिया, २-मासपूरिया, ३-मइपत्तिया, ४-पुण्णपत्तिया। से तं साहाओ।

से किं तं कुलाइं? कुलाइं एवमाहिज्जंति, तं जहा–

पढमं च नागभूयं, बीयं पुण सोमभूइयं होइ।
अह उल्लगच्छ तइयं, चउत्थयं हत्थलिज्जं तु॥१॥
पंचमगं नंदिज्जं, छट्ठं पुण पारिहासियं होइ।
उद्देह-गणस्सेए, छच्च कुला होंति नायव्वा॥२॥ ॥२११॥

(२११) आर्य रोहण काश्यप गोत्रीय थे इनकी परम्परा उद्देहगण के नाम से जानी गई। इस उद्देह गण से चार शाखायें और छह कुल निकले। वे इस प्रकार हैं–शाखाएँ–१. औदुम्बरीया, २. मास-पूरिका, ३. मतिपत्रिका, और ४. पूर्ण-पत्रिका।

कुल कौन-कौन-से हैं ?

कुल इस प्रकार कहे जाते हैं–१. नागभूत, २. सोमभूतिक, ३. आर्द्रकच्छ, ४. हस्तलीय, ५. नान्दिक और ६. परिहासक।

(211) Arya Rohan belonged to the Kashyap clan, his lineage became popularly known as Uddeh Gana. This Uddeh Gana further forked into four branches and six families (Kula). These are—The branches—1. Audumbariya, 2. Masapurika, 3. Matipatrika, and 4. Purnapatrika. The Kulas (families) are said to be—1. Naagabhuta, 2. Somabhutik, 3. Ardrakachha, 4. Hastaliya, 5. Nandika and 6. Parihasak.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

थेरेहिंतो णं सिरिगुत्तेहिंतो हारिय-सगोत्तेहिंतो एत्थ णं चारणगणे नामं गणे निग्गए। तस्स णं इमाओ चत्तारि साहाओ सत्त य कुलाइं एवमाहिज्जंति।

से किं तं साहाओ? साहाओ एवमाहिज्जंति, तं जहा–

हारिय-मालागारी, संकासिया, गवेधूया, वज्जनागरी। से तं साहाओ। से किं तं कुलाइं? कुलाइं एवमाहिज्जंति।

तं जहा–

पढमेत्थ वत्थलिज्जं बीयं पुण पीइधम्मियं होइ।
तइयं पुण हालिज्जं, चउत्थगं पूसमित्तेज्जं॥१॥
पंचमगं मालिज्जं, छट्ठं पुण अज्ज-वेडयं होइ।
सत्तमगं कण्हसहं, सत्त कुला चारणगणस्स॥२॥ ॥२१२॥

(२१२) स्थविर श्रीगुप्त हारित गोत्रीय थे और उनसे चारण गण का प्रादुर्भाव हुआ। इस गण से चार शाखाएँ और सात कुल निकले जो इस प्रकार हैं–शाखाएँ–१. हारित मालागारिक, २. संकाशिका, ३. गवेधुका, और ४. वज्रनागरी।

कुल इस प्रकार हैं–१. वत्सलीय, २. प्रीतिधर्मक, ३. हारिद्रक, ४. पुष्यमित्रक, ५. माल्यक, ६. आर्यचेटक, और ७. कृष्णसखा।

(212) Sthavir Shrigupta was from the Harit clan and he founded the Charan Gana (group). This group forked into four branches and seven families. They are—The Branches—1. Haritamalagarik, 2. Samkashika, 3. Gavedhuka and 4. Vajranagari. Families—1. Vatsaliya, 2. Pritidharmak, 3. Haridrak, 4. Pushyamitrak, 5. Malyak, 6. Aryachetak and 7. Krishnasakha.

थेरेहिंतो भद्दजसेहिंतो भारद्दाय-सगोत्तेहिंतो एत्थ णं उडुवाडिय (उड्डवालिय) गणे नामं गणे निग्गए। तस्स णं इमाओ चत्तारि साहाओ तिन्नि कुलाइं एवमाहिज्जंति।

से किं तं साहाओ? साहाओ एवमाहिज्जंति, तं जहा–

१. चंपिज्जिया, २. भद्दिज्जिया, ३. काकंदिया, ४. मेहलिज्जिया।

से तं साहाओ। से किं तं कुलाइं? कुलाइं एवमाहिज्जंति, तं जहा–

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भद्दजसियं तह भद्दगुत्तियं, तइयं च होइ जसभद्दं।

एयाइं उडुवाडि य-गणस्स, तिन्नेव य कुलाइं॥१॥ ॥२१३॥

(२१३) स्थविर भद्रयश भारद्वाज गोत्र के थे और इनकी परम्परा उडुवाडिय (ऋतुवाटिक) गण के नाम से प्रख्यात हुई। इस गण से चार शाखाएँ और तीन कुल निकले। वे इस प्रकार हैं—शाखाएँ—१. चम्पार्जिका, २. भद्रार्जिका, ३. काकन्दिका, और ४. मेखलार्जिका।

कुल इस प्रकार हैं—१. भद्रयशिक, २. भद्रगौप्तिक, और ३. यशोभद्रीय।

(213) Sthavir Bhadrayash was from the Bharadvaj clan and his lineage became famous as Uduvadiya or Rituvatik group. This group forked out into four branches and three families. They are—Branches—1. Champarjika, 2. Bhadrarjika, 3. Kakandika and 4. Mekhalarjika. Families—1. Bhadrayashik, 2. Bhadragauptik, and 3. Yashobhadriya.

थेरेहितो णं कामिड्ढिहिंतो कुंडिल-सगोत्तेहिंतो एत्थ णं वेसवाडिय-गणे नामं गणे निग्गए। तस्स णं इमाओ चत्तारि साहाओ, चत्तारि कुलाइं एवमाहिज्जंति। से किं तं साहाओ? साहाओ एवमाहिज्जंति, तं जहा—१. सावत्थिया, २. रज्जपालिया, ३. अंतरिज्जिया, ४. खोमलिज्जिया। से तं साहाओ।

से किं तं कुलाइं? कुलाइं एवमाहिज्जंति, तं जहा—

गणियं मेहियं कामड्ढियं च, तह होइ इंदपुरगं च।

एयाइं वेसवाडिय-गणस्स, चत्तारि उ कुलाइं॥१॥ ॥२१४॥

(२१४) स्थविर कामर्द्धि कुण्डलि गोत्र के थे और वे वेषवाटिक गण के संस्थापक थे। इस गण से चार शाखाएँ और चार कुल निकले। वे इस प्रकार हैं—शाखाएँ—१. श्रावस्तिका, २. राजपालिका, ३. अन्तरञ्जिका, और ४. क्षेमलीया। चार कुल इस प्रकार हैं—१. गणिक, २. मेधिक, ३. कामर्द्धिक और ४. इन्द्रपूरक।

(214) Sthavir Kamardhi was from the Kundali clan and was the founder of the Veshavatik group. This group forked out into four branches and four families. They are—Branches—1. Shravastika, 2. Rajapalika, 3. Antaranjika and 4. Kshemaliya. Families—1. Ganik, 2. Medhik, 3. Kamardhik and 4. Indrapurak.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

थेरेहितो णं इसिगोत्तेहिंतो काकंदएहिंतो वासिट्ठगोत्तेहिंतो एत्थ णं माणवगणे नामं गणे निग्गए। तस्स णं इमाओ चत्तारि साहाओ, तिण्णि य कुलाइं एवमाहिज्जंति। से किं तं साहाओ? साहाओ एवमाहिज्जंति, तं जहा–

कासविज्जिया, गोयमिज्जिया, वासिट्ठिया, सोरट्ठिया। से तं साहाओ।

से किं तं कुलाइं? कुलाइं एवमाहिज्जंति, तं जहा–

इसिगोत्तियऽत्थ पढमं, बिइयं इसिदत्तियं मुणेयव्वं।
तइयं च अभिजयंतं, तिन्नि कुला माणवगणस्स॥१॥ ॥२१५॥

(२१५) ऋषिगुप्त स्थविर वाशिष्ट गोत्र के थे और काकंदक (काकंदी के रहने वाले) थे। इनसे मानव गण आरम्भ हुआ। मानव गण से चार शाखाएँ और तीन कुल निकले। वे इस प्रकार हैं–शाखाएँ–१. काश्यवर्जिका, २. गौतमिया (गौमार्जिका), ३. वाशिष्ठिया, और ४. सौराष्ट्रिका।

तीन कुल इस प्रकार हैं–१. ऋषिगोत्रक, २. ऋषि दत्तिक, और ३. अभिजयन्त।

(215) Rishigupta Sthavir belonged to the Vasishta clan and was a Kakandak (hailing from Kakandi town). He was the founder of the Manav group. This group forked out into four branches and three families. They are—Branches—1. Kashyavarjika, 2. Gautamiya or Gaumarjika, 3. Vasishthiya and 4. Saurashtrika. Families—1. Rishigotrak, 2. Rishidattik and 3. Abhijayant.

थेरेहिंतो णं सुट्ठिय-सुप्पडिबुद्धेहिंतो कोडिय-काकंदिएहिंतो वग्घावच्च-सगोत्तेहिंतो एत्थ णं कोडिय-गणे नामं गणे निग्गए। तस्स णं इमाओ चत्तारि साहाओ, चत्तारि कुलाइं एवमाहिज्जंति, तं जहा–

उच्चनागरी विज्जाहरी य; वइरी य मज्झिमिल्ला य।
कोडियगणस्स एया हवंति चत्तारि साहाओ॥१॥

से किं तं कुलाइं? कुलाइं एवमाहिज्जंति, तं जहा–

पढमेत्थ बंभलिज्जं बितियं नामेण वच्छलिज्जं तु।
ततियं पुण वाणिज्जं, चउत्थयं पन्नवाहणयं॥१॥ ॥२१६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२१६) स्थविर सुस्थित और सुप्रतिबुद्ध व्याघ्रापत्य गोत्र के थे और कोटिक-काकन्दिक नाम से प्रसिद्ध थे। उनसे कोटिकगण का आरम्भ हुआ। इस गण की चार शाखाएँ और चार कुल थे। वे इस प्रकार हैं–शाखाएँ–१. उच्च नागरिका, २. विद्याधरी, ३. वज्री, और ४. माध्यमिका। कुल–१. ब्रह्मलिप्तक, २. वत्सलिप्तक, ३. वाणिज्य, और ४. प्रश्नवाहनक।

(216) Sthavir Susthit and Supratibuddha belonged to the Vyaghrapatya clan and were popularly known as Kotik-Kakandak. They founded the Kotik group. This group forked out into four branches and four families. They are—Branches—1. Uchchanagarika, 2. Vidyadhari, 3. Vajri and 4. Madhyamika. Families—1. Brahmaliptak, 2. Vatsaliptak, 3. Vanijya and 4. Prashnavahanak.

थेराणं सुट्ठिय-सुप्पडिबुद्धाणं कोडिय-काकंदगाणं वग्घावच्च-सगोत्ताणं इमे पंच थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिन्नाया होत्था, तं जहा–थेरे अज्ज-इंददिन्ने, थेरे पियगंथे, थेरे विज्जाहर-गोवाले कासवगोत्तेणं, थेरे इसिदत्ते, थेरे अरहदत्ते। थेरेहिंतो णं पियग्गंथेहितो एत्थ णं मज्झिमा साहा निग्गया। थेरेहिंतो णं विज्जाहर-गोवालेहिंतो एत्थ णं विज्जाहरी साहा निग्गया॥२१७॥

(२१७) इन कोटिक काकन्दिक कहलाने वाले स्थविर सुस्थित और सुप्रतिबुद्ध के पाँच स्थविर शिष्य प्रसिद्ध थे–आर्य इन्द्रदिन्न, प्रियग्रन्थ, विद्याधर गोपाल, ऋषिदत्त, और अर्हदत्त। स्थविर प्रियग्रन्थ से माध्यमिका शाखा निकली और काश्यप गोत्र के विद्याधर गोपाल से विद्याधरी शाखा।

(217) Sthavir Susthit and Supratibuddha had five famous Sthavir disciples—Arya Indradinn, Priyagranth, Vidyadhar Gopal, Rishidatt and Arhadatt. Sthavir Priyagranth founded the Madhyamika branch and Vidyadhar Gopal of the Kashyap clan started the Vidyadhari branch.

थेरस्स णं अज्ज-इंददिन्नस्स कासवगोत्तस्स अज्ज दिन्ने थेरे अंतेवासी गोयम-सगोत्ते। थेरस्स णं अज्जदिन्नस्स गोयम-सगोत्तस्स इमे दो थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिन्नाया वि होत्था, तं जहा–थेरे अज्ज संतिसेणिए माढर-सगोत्ते, थेरे अज्ज सीहगिरी जाइस्सरे कोसियगोत्ते। थेरेहिंतो णं अज्ज-संति-सेणिएहिंतो णं माढर-सगोत्तेहिंतो एत्थ णं उच्चनागरी साहा निग्गया॥२१८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२१८) स्थविर आर्य इन्द्रदिन्न काश्यप गोत्र के थे और उनके शिष्य आर्य दिन्न गौतम गोत्र के। आर्य दिन्न के पुत्र समान दो स्थविर शिष्य प्रसिद्ध थे—माढर गोत्रीय स्थविर आर्य शान्तिसेन और कौशिक गोत्र के जाति स्मरण ज्ञानी आर्य सिंहगिरि। आर्य शान्तिसेन से उच्चनागरी शाखा निकली।

(218) Sthavir Arya Indradinna belonged to the Kashyap clan and his disciple Arya Dinna to the Gautam clan. Two of the disciples of Arya Dinna became very famous—Sthavir Arya Shantisen of the Madhar clan and Arya Simhagiri of the Kaushik clan. Arya Shantisen was the founder of the Uchchanagari branch.

विस्तार :

आचार्य इन्द्रदिन्न : मेधावी तथा प्रभावी आचार्य इन्द्रदिन्न ने सुदूर दक्षिण में भी जैन परम्परा की महती प्रभावना की। प्रसिद्ध ग्रन्थ तत्त्वार्थ सूत्र के प्रणेता आचार्य उमास्वाति अथवा उमास्वामी, इन्द्रदिन्न के शिष्य शान्तिसेन से निकली, उच्चनागरी शाखा के ही आचार्य थे। जैन परम्परा पर अपनी छाप छोड़ने वाले इनके समकालीन आचार्यों में से कुछ हैं—आर्य कालक या श्यामाचार्य (प्रज्ञापना सूत्र के रचनाकार, समय २८० से ३७६ वी. सं., २४६ से १५० ई. पू.), वृद्धवादी, सिद्धसेन, आदि।

Elaboration :

Acharya Indradinna : Brilliant and dynamic Arya Indradinna was responsible for strengthening the roots of Jainism in the deep south. The author of the famous Tattvartha Sutra, Acharya Umasvati or Umaswami belonged to the Uchchanagari branch started by Indradinna's disciple Shantisen. Some of his contemporary Acharyas who left their mark on Jain tradition are—Arya Kalak or Shyamacharya (the author of Prajnapana Sutra. Period—280 to 379 A.N.M., 246 to 150 B.C.), Vriddhavadi, Siddhasen, etc.

थेरस्स णं अज्ज-संतिसेणियस्स माढर-सगोत्तस्स इमे चत्तारि थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिन्नाया होत्था। तं जहा—थेरे अज्ज-सेणिए, थेरे अज्ज-तावसे, थेरे अज्ज-कुबेरे, थेरे अज्ज-इसिपालिते।

थेरेहिंतो अज्ज-सेणिएहिंतो एत्थ णं अज्ज-सेणिया साहा निग्गया। थेरेहिंतो णं अज्ज-तावसेहिंतो एत्थ णं अज्ज-तावसी साहा निग्गया। थेरेहिंतो णं अज्ज कुबेरेहिंतो एत्थ णं अज्ज-कुबेरा साहा निग्गया। थेरेहिंतो णं अज्ज-इसिपालिएहिंतो एत्थ णं अज्ज-इसिपालिया साहा निग्गया।।२१९।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२१९) आर्य शान्तिसेन के पुत्र समान चार स्थविर शिष्य प्रसिद्ध थे–आर्य श्रेणिक, आर्य तापस, आर्य कुबेर और आर्य ऋषिपालित।

आर्यश्रेणिक से आर्यश्रेणिका शाखा निकली, आर्य तापस से आर्यतापसी, आर्य कुबेर से आर्य कुबेरा और आर्य ऋषिपालित से ऋषिपालिता।

(219) Arya Shantisen had, among his disciples, four famous ones—Arya Shrenik, Arya Tapas, Arya Kuber, and Arya Rishipalit. These four were the founders of four branches named Aryashrenika, Aryatapasi, Aryakubera, and Rishipalita respectively.

थेरस्स णं अज्ज-सीहगिरिस्स जाईसरस्स कोसियगोत्तस्स इमे चत्तारि थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिण्णाया होत्था, तं जहा–थेरे धणगिरी, थेरे अज्ज-वइरे, थेरे अज्ज-समिए, थेरे अरहदिन्ने। थेरहिंतो णं अज्ज-वइरेहिंतो गोयम-सगोत्तेहिंतो एत्थ णं अज्ज-वइरी साहा निग्गया॥२२०॥

(२२०) कौशिक गोत्र के स्थविर आर्य सिंहगिरि को जाति-स्मरण ज्ञान हो गया था, उनके चार स्थविर शिष्य प्रसिद्ध थे–धनगिरि, आर्य वज्र, आर्य शमित, और आर्य अर्हदिन्न। गौतम गोत्रीय आर्य शमित से ब्रह्मद्वीपिका शाखा निकली और आर्य वज्र से आर्यवज्र शाखा।

(220) Arya Simhagiri of the Kaushik clan acquired the Jatismaran Jnana. Among his disciples four became famous—Dhanagiri, Arya Vajra, Arya Shamit, and Arya Arhadinna. Arya Shamit from the Kaushik clan was the founder of the Brahmadvipika branch and Arya Vajra that of the Aryavajra branch.

विस्तार :

आर्य शमित : ऐसी मान्यता है कि ये अपनी विशिष्ट शक्तियों के प्रभाव से ब्रह्म देश गये और वहाँ पाँच सौ तापसों को अपना शिष्य बनाया। इनके द्वारा आरम्भ की हुई ब्रह्मद्वीपिका शाखा का नाम भी इसी ओर इंगित करता है।

आर्य वज्रस्वामी : ये आचार्य धनगिरि के पुत्र थे। इनकी माता ने धनगिरि के गृहत्याग से क्षुब्ध होकर इन्हें शिशु अवस्था में ही धनगिरि को बहरा दिया था। बालक का भरण-पोषण श्रमणों के स्थान पर आने वाली एक धार्मिक महिला द्वारा किया गया था। इस श्रमण सान्निध्य के कारण युवा होकर दीक्षा लेने के समय तक इन्हें लगभग सभी आगमों का ज्ञान हो चुका था। तब तक माता के द्वारा इन्हें पुनः प्राप्त करने के सभी प्रयत्न राज्य सहयोग से विफल कर दिये गये थे। वज्रस्वामी प्रकाण्ड विद्वान् तथा सुयोग्य संघ संचालक थे। भगवान महावीर की परम्परा के वे अंतिम दस पूर्वधर माने जाते हैं। चीनी यात्री ह्वेनसांग अपनी भारत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यात्रा के समय इनसे मिला था और इनके ज्योतिष ज्ञान से वह प्रभावित हुआ। इस बात की चर्चा उसने अपने यात्रा प्रसंगों में की है। इनका समय था ४९६ से ५८४ वी. नि. (३० ई. पू. से ई. ५८)।

Elaboration :

Arya Shamit : It is believed that he went to Brahmadesh (modern Burma) using his supernatural powers and made five hundred disciples who were earlier Tapas mendicants. This also appears to be the reason behind his lineage becoming famous as Brahmadvipika.

Arya Vajraswami : He was the son of Dhanagiri. He was given as alms to Dhanagiri by his wife, who was vexed due to his renunciation. The child was brought up by a devoted lady closely attached to the ascetic camp. As such, by the time he became a youth and was initiated into the order, he already had the knowledge of almost all important canons. All the attempts of his mother to claim the child back were thwarted by the ascetics with the help of the law and the king. Vajraswami was a great scholar and an able administrator of the order. He is believed to be the last to have the complete knowledge of the ten sublime canons (Dashapurvadhar). The Chinese traveller Huentsang had met Vajraswami during his Indian tour and was impressed by the Acharya's knowledge of astrology. He has mentioned about him in his travelogue. His period was 496 to 584 A.N.M. (30 B.C. to 58 A.D.)

थेरस्स णं अज्ज-वइरस्स गोयम-सगोत्तस्स इमे तिन्नि थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिन्नाया होत्था, तं जहा–थेरे अज्ज-वइरसेणिए, थेरे अज्ज पउमे, थेरे अज्ज रहे। थेरेहिंतो णं अज्ज-वइर-सेणिएहिंतो एत्थ णं अज्ज नाइली साहा निग्गया। थेरेहिंतो अज्ज रहेहिंतो एत्थ णं अज्ज-जयंती साहा निग्गया॥२२१॥

(२२१) गौतम गोत्रीय आर्य वज्र के तीन स्थविर शिष्य प्रख्यात थे–आर्य वज्रसेन, आर्य पद्म और आर्य रथ। इन तीनों से क्रमशः ये तीन शाखाएँ निकलीं–आर्य-नाईली (नागिला), आर्य-पद्मा और आर्य-जयन्ती।

(221) Arya Vajra had among his disciples three famous ones—Arya Vajrasen, Arya Padma, and Arya Rath. Their lineage are known as Arya-Naila (Nagila), Arya-Padma, and Arya-Jayanti branches respectively.

विस्तार :

आर्य वज्रसेन : इन्होंने संघ का दायित्व कठिन समय में सँभाला था। जैनों के प्रभाव क्षेत्र में एक लम्बे समय तक अकाल पड़ा और धर्म संघ लगभग छिन्न-भिन्न हो गया। पर आचार्य वज्रसेन ने बचे हुए श्रमणों को पुनः संगठित कर संघ को पुनः सुस्थापित किया। (वी. नि. ४९२ से ६२०, ई. पू. ३४ से ९४ ई.)

आर्य रक्षित : ये आर्य तोषलीपुत्र के शिष्य थे तथा आर्य वज्रसेन के समकालीन। ये प्रकाण्ड विद्वान् थे तथा नौ से अधिक पूर्वों के धारक। आपने अपने अनुभव से यह समझा कि मानव मस्तिष्क की मेधा का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ह्रास होने लगा है और उनके मेधावी तथा तीव्र बुद्धि शिष्यों के लिए भी उपलब्ध ज्ञान को पूर्ण रूप से धारण कर पाना कठिन होने लगा है। अतः विद्यार्थियों के लिए सुगम व सहज ग्राह्य बनाने के हेतु उन्होंने आगम ग्रन्थों को एक नई प्रणाली में संयोजित किया। उन्होंने आगमों को चार अनुयोगों में विभाजित कर दिया। इन्होंने ही अनुयोगद्वार सूत्र की रचना की। (वी. नि. ५२२ से ५९७, ई. पू. ४ से ७१ ई.)

Elaboration :

Arya Vajrasen **:** He took charge of the order during an adverse period. There was a long drought in the area of Jain influence and the religious organisation almost disintegrated. However, Vajrasen reorganised all the remaining ascetics and re-established the order. (492 to 620 A.N.M., 34 B.C. to 94 A.D.)

Arya Rakshit **:** He was the disciple of Arya Toshaliputra and a contemporary of Arya Vajrasen. He was a great scholar and had the knowledge of more than nine sublime canons. He realized that the mental capacities were on the decline, and even most brilliant of his disciples found it difficult to absorb the available knowledge. As such, he reorganised the canons into a system that was convenient for the students. The four divisions of the canonical literature (the four Anuyogas) were done by him. He was also the author of Anuyogadwara Sutra. (522 to 597 A.N.M., 4 B.C. to 71 A.D.)

अर्वाचीन प्रतियों में अधिक पाठ

थेरस्स णं अज्ज-रहस्स वच्छ-सगोत्तस्स अज्ज-पूसगिरी थेरे अंतेवासी कोसियगोत्ते ॥१॥

थेरस्स णं अज्ज-पूसगिरिस्स कोसिय-गोत्तस्स अज्ज-फग्गुमित्ते थेरे अंतेवासी गोयम-सगुत्ते ॥२॥

थेरस्स णं अज्ज फग्गुमित्तस्स गोयम-सगुत्तस्स, अज्ज-धणगिरी थेरे अंतेवासी वासिट्ठ-सगोत्ते ॥३॥

थेरस्स णं अज्ज-धणगिरिस्स वासिट्ठसगोत्तस्स। अज्ज-सिवभूई थेरे अंतेवासी कुच्छ-सगोत्ते ॥४॥

थेरस्स णं अज्ज-सिवभूइस्स कुच्छ-सगोत्तस्स अज्ज-भद्दे थेरे अंतेवासी कासव-गुत्ते ॥५॥

थेरस्स णं अज्जभद्दस्स कासव-गुत्तस्स, अज्ज-नक्खत्ते थेरे अंतेवासी कासव-गुत्ते ॥६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

थेरस्स णं अज्ज-नक्खत्तस्स कासव-गुत्तस्स अज्ज-रक्खे थेरे अंतेवासी कासव-गोत्ते ॥७॥

थेरस्स णं अज्ज-रक्खस्स कासव-गुत्तस्स अज्ज-नागे थेरे अंतेवासी गोयम-सगोत्ते ॥८॥

थेरस्स णं अज्ज-नागस्स गोयम-सगोत्तस्स, अज्ज-जेहिले थेरे अंतेवासी वासिट्ठ-सगुत्ते ॥९॥

थेरस्स णं अज्ज-जेहिलस्स वासिट्ठ-सगोत्तस्स, अज्ज-विण्हू थेरे अंतेवासी माढर-सगोत्ते ॥१०॥

थेरस्स णं अज्ज-विण्हुस्स माढर-सगोत्तस्स, अज्ज-कालए थेरे अंतेवासी गोयम-सगोत्ते ॥११॥

थेरस्स णं अज्ज-कालगस्स गोयम-सगोत्तस्स इमे दुवे थेरा अंतेवासी गोयम-सगोत्ता-थेरे अज्ज-संपलिए, थेरे अज्ज-भद्दे ॥१२॥

एएसिं दुण्ह वि थेराणं गोयम-सगोत्ताणं, अज्ज-वुड्ढे थेरे अंतेवासी गोयम-सगोत्ते ॥१३॥

थेरस्स णं अज्ज-वुड्ढस्स गोयम-सगोत्तस्स अज्ज-संघपालिए थेरे अंतेवासी गोयम-सगोत्ते ॥१४॥

थेरस्स णं अज्ज-संघपालियस्स गोयम-सगोत्तस्स अज्ज-हत्थी थेरे अंतेवासी कासव-गोत्ते ॥१५॥

थेरस्स णं अज्ज-हत्थिस्स कासव-गोत्तस्स अज्ज-धम्मे थेरे अंतेवासी सुव्वय-गोत्ते ॥१६॥

थेरस्स णं अज्ज-धम्मस्स सुव्वय-गोत्तस्स अज्ज-सीहे थेरे अंतेवासी कासव-गोत्ते ॥१७॥

थेरस्स णं अज्ज-सीहस्स कासव-गोत्तस्स, अज्ज-धम्मे थेरे अंतेवासी कासव-गोत्ते ॥१८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

थेरस्स णं अज्ज-धम्मस्स कासव-गोत्तस्स, अज्ज-संडिल्ले थेरे अंतेवासी॥१९॥॥२२२॥

(२२२) स्थविर आर्य रथ वत्स गोत्र के थे और इनके शिष्य स्थविर आर्य पुष्यगिरि कौशिक गोत्र के॥१॥

पुष्यगिरि के शिष्य स्थविर आर्य फल्गुमित्र गौतम गोत्र के थे॥२॥

गौतम-गोत्रीय स्थविर आर्य फल्गुमित्र के शिष्य धनगिरि हुए॥३॥

वाशिष्ठ-गोत्रीय स्थविर आर्य धनगिरि के अंतेवासी कुच्छ (कौत्स) गोत्रीय स्थविर आर्य शिवभूति थे॥४॥

स्थविर आर्य शिवभूति के शिष्य काश्यप-गोत्रीय स्थविर आर्य भद्रस्वामी थे॥५॥

आर्य भद्रस्वामी के शिष्य स्थविर आर्य नक्षत्रस्वामी हुए॥६॥

काश्यप-गोत्रीय आर्य नक्षत्र के शिष्य आर्य रक्षस्वामी हुए॥७॥

काश्यप-गोत्रीय स्थविर आर्य रक्षस्वामी के शिष्य गौतम-गोत्रीय स्थविर आर्य नागस्वामी हुए॥८॥

आर्य नागस्वामी के शिष्य वाशिष्ठ-गोत्रीय आर्य जेहिलस्वामी हुए॥९॥

आर्य जेहिलस्वामी के शिष्य माढर-गोत्रीय स्थविर आर्य विष्णुस्वामी हुए॥१०॥

आर्य विष्णुस्वामी के शिष्य गौतम-गोत्रीय स्थविर आर्य कालक हुए॥११॥

स्थविर आर्य कालक के ये दो अन्तेवासी थे—१. स्थविर आर्य सम्पलित और २. स्थविर आर्य भद्र॥१२॥

गौतम-गोत्रीय इन दोनों स्थविरों के आर्य वृद्धस्वामी शिष्य हुए॥१३॥

गौतम-गोत्रीय स्थविर आर्य वृद्धस्वामी के शिष्य गौतम-गोत्रीय स्थविर आर्य संघपालित हुए॥१४॥

संघपालित के शिष्य काश्यप-गोत्रीय स्थविर आर्य हस्तिस्वामी हुए॥१५॥

आर्य हस्तिस्वामी के शिष्य सुव्रत (श्रावक)-गोत्रीय स्थविर आर्य धर्मस्वामी हुए॥१६॥

आर्य धर्मस्वामी के शिष्य काश्यप-गोत्रीय स्थविर आर्य सिंहस्वामी हुए॥१७॥

स्थविर आर्य सिंहस्वामी के शिष्य काश्यप-गोत्रीय स्थविर आर्य धर्मस्वामी हुए॥१८॥

आर्य धर्मस्वामी (द्वि.) के शिष्य स्थविर आर्य शाण्डिल्य हुए॥१९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Additional Text in Leter Editions

(222) Sthavir Arya Rath belonged to the Vatsa clan and his disciple Sthavir Arya Pushyagiri to the Kaushik clan. (1)

Pushyagiri's disciple Sthavir Arya Falgumitra was from the Gautam clan. (2)

Dhanagiri was the disciple of Sthavir Arya Falgumitra of the Gautam clan. (3)

Sthavir Arya Shivabhuti of the Kuchha (Kautsa) clan was the disciple of Sthavir Arya Dhanagiri. (4)

Sthavir Arya Bhadraswami of the Kashyap clan was the disciple of Arya Shivabhuti. (5)

Sthavir Arya Nakshatraswami was the disciple of Arya Bhadraswami. (6)

Arya Rakshaswami was the disciple of Arya Nakshatra of Kashyap clan who was the disciple of Arya Bhadraswami. (7)

Sthavir Arya Nagaswami of the Gautam clan was the disciple of Sthavir Arya Rakshaswami of the Kashyap clan. (8)

Arya Jehilswami of the Vashishtha clan was the disciple of Arya Nagaswami. (9)

Sthavir Arya Vishnuswami of the Madhar clan was the disciple of Arya Jehilswami. (10)

Sthavir Arya Kalak of the Gautam clan was the disciple of Arya Vishnuswami. (11)

There were two disciples of Sthavir Arya Kalak—1. Sthavir Arya Sampalit and 2. Sthavir Arya Bhadra. (12)

Arya Vriddhaswami was the disciple of these two Sthavirs belonging to the Gautam clan. (13)

Sthavir Arya Sanghapalit of the Gautam clan was the disciple of Sthavir Arya Vriddhaswami of the Gautam clan. (14)

Sthavir Arya Hastiswami of the Kashyap clan was the disciple of Sanghapalit. (15)

Sthavir Arya Dharmaswami of the Suvrata (Shravak) clan was the disciple of Arya Hastiswami. (16)

Sthavir Arya Simhaswami of the Kashyap clan was the disciple of Arya Dharmaswami. (17)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Sthavir Arya Dharmaswami (II) of the Kashyap clan was the disciple of Arya Simhaswami. (18)

Sthavir Arya Shandilya was the disciple of Arya Dharmaswami (II). (19)

स्थविरों की गाथाबद्ध स्तुति

वंदामि फग्गुमित्तं च गोयमं, धणगिरिं च वासिट्ठं।
कोच्छिं सिवभूइं पि य कोसिय दोज्जंत-कंटे य ॥१॥
तं वंदिऊण सिरसा, चित्तं वंदामि कासवं गोत्तं।
णक्खत्तं कासवगोत्तं, रक्खं पि य कासवं वंदे ॥२॥
वंदामि अज्जनागं च, गोयमं जेहिलं च वासिट्ठं।
विण्हुं माढरगोत्तं, कालगमवि गोयमं वंदे ॥३॥
गोयम-गोत्त-कुमारं संप्पालियं तह य भद्दयं वंदे।
थेरं च संघवालियं, कासवगोत्तं पणिवयामि ॥४॥
[थेरं च अज्जवुड्ढं, गोयम-गोत्तं नमंसामि ॥४॥]
तं वंदिऊण सिरसा थिर-सत्त-चरित्त-णाण-संपन्नं।
थेरं च संघवालियं गोयम (कासव)-गोत्तं पणिवयामि ॥५॥
वंदामि अज्ज हत्थिं च, कासवं खंति-सागरं धीरं।
गिम्हाण पढम-मासे, कालगयं चेत्त-सुद्धस्स ॥६॥
वंदामि अज्जधम्मं च, सुव्वयं सील (सीस) लद्धि-संपन्नं॥
जस्स निक्खमणे देवो, छत्तं वरमुत्तमं वहइ ॥७॥
हत्थिं कासवगोत्तं, धम्मं सिव-साहगं पणिवयामि।
सीहं कासवगोत्तं, धम्मं पि य कासवं वंदे ॥८॥
[तं वंदिऊण सिरसा, थिर-सत्त-चरित्त-नाण-संपन्नं।
थेरं च अज्जजंबुं, गोअम-गोत्तं नमंसामि ॥९॥
मिउ-मद्दव-संपन्नं, उवउत्तं नाण-दंसण-चरित्ते।
थेरं च नंदिअं पि य, कासवगोत्तं पणिवयामि ॥१०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तओ अ थिरचरित्तं, उत्तम-सम्मत्त-सत्त-संजुत्तं।
देसि-गणि खमासमणं, माढर-गोत्तं नमंसामि॥११॥
तत्तो अणुओगधरं, दीरं मइसागरं महासत्तं।
थिर-गुत्त-खमासमणं, वच्छ-सगोत्तं पणिवयामि॥१२॥
तत्तो य नाण-दंसण-चरित्त-तव-सुट्ठिअं गुण-महंतं।
थेरं कुमारधम्मं वंदामि, गणिं गुणोववेयं॥१३॥]
सुत्तत्थ-रयण-भरिए, खम-दम-मद्दव-गुणेहिं संपन्ने।
देवड्ढि-खमासमणे कासवगुत्ते पणिवयामि॥१४॥ ॥२२३॥

(२२३) गौतम गोत्र के फल्गुमित्र, वसिष्ठ गोत्रीय धनगिरि, कोत्स गोत्र के शिवभूति और कौशिक गोत्र के दौष्यन्त कृष्ण को मैं वन्दना करता हूँ॥१॥

सिर नमन कर इन सबको वन्दन करके, फिर वन्दन करता हूँ काश्यप गोत्र के चित्त स्वामी को, काश्यप गोत्र के ही नक्षत्र और रक्षस्वामी को॥२॥

गौतम गोत्र के आर्य नाग और वाशिष्ठ गोत्र के जेहिल को करता मैं वन्दना। माढर गोत्र के विष्णु और कालक गौतम गोत्रीय की भी करता हूँ वन्दना॥३॥

गौतम गोत्रीय कुमार, सम्पालित और भद्रक को मैं करता वन्दन। स्थविर आर्यवृद्ध गौतम गोत्रीय को भी हो मेरा वन्दन॥४॥

इन सबको वन्दन कर, शीश नवाकर करता प्रणाम मैं स्थिर मन वाले, चारित्र और ज्ञान सम्पन्न, काश्यप गोत्रीय स्थविर संघपालित को॥५॥

क्षमासागर (क्षमाश्रमण), धीर आर्य हस्ति काश्यप गोत्रीय को मेरा वन्दन। जो ग्रीष्म ऋतु के प्रथम मास और शुद्ध पक्ष या चैत्र शुक्ल में काल-धर्म को प्राप्त हुए॥६॥

जिनके दीक्षा महोत्सव पर देवों ने धारण किया था उत्तम छत्र, ऐसे सुव्रती शील-लब्धि संपन्न आर्य धर्म को भी मेरा वन्दन हो॥७॥

करता प्रणाम मैं काश्यप गोत्रीय हस्त और शिव-साधक आर्य धर्म स्थविर को, काश्यप गोत्रीय आर्य सिंह और आर्य धर्म काश्यप-गोत्रीय को भी हो मेरा वन्दन॥८॥

पूर्वोक्त स्थविरों को मस्तक झुकाकर वन्दना करके गौतम-गोत्रीय स्थिर-सत्त्व, चारित्र एवं ज्ञान से सम्पन्न, स्थविर आर्य जम्बू को नमस्कार करता हूँ॥९॥

सरलता और मृदुता से सम्पन्न, एवं ज्ञान-दर्शन-चारित्र में उपयोग-युक्त काश्यप-गोत्रीय स्थविर नन्दित को भी मस्तक नवाकर वन्दना करता हूँ॥१०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थिर-चारित्रयुक्त तथा उत्तम सम्यक्त्व एवं सत्त्व से संयुक्त माठर-गोत्रीय देसिगणी क्षमाश्रमण को नमस्कार करता हूँ॥११॥

अनुयोगधारक, धीर, बुद्धि के सागर और महासत्त्वशील वत्सगोत्रीय स्थिरगुप्त क्षमाश्रमण को वन्दना करता हूँ॥१२॥

ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप में सुस्थित, गुणों से महान्, संयम-गुणों से सम्पन्न, स्थविर कुमार धर्मगणि को वन्दन करता हूँ॥१३॥

सूत्र-रत्न और अर्थ-रत्न से भरे लबालब; क्षमा, दम और मार्दवादि गुणों से शोभित; काश्यप-गोत्रीय देवर्द्धिगणी क्षमाश्रमण को भी करता हूँ प्रणाम मैं॥१४॥

Panegyric in Honour of the Leaders of the Order

(223) I bow to Falgumitra the Gautam, Dhanagiri the Vasishtha, Shivabhuti the Kotsa, Daushyant Krishna the Kaushik. (1)

After bowing to all these in reverence I salute to Chitta the Kashyap; Naksha and Raksha also from the Kashyap clan. (2)

I offer my obeisance to Arya Naag the Gautam, Jehil the Vasishtha, Vishnu the Madhar, and Kalak the Gautam. (3)

My salutations also to Kumar the Gautam, and Sampalit and Bhadrak also from the Gautam clan. And I bow also to Arya Vriddha the Gautam. (4)

I further bow reverently to the composed one, the Kashyap named Sanghapalit who was a great scholar and an ardent observer of the code of conduct. (5)

The object of my veneration is also compassionate and tranquil Arya Hasti (Kshamashraman) who left the mundane world during the first month of summer in the bright half of the month, Chaitra. (6)

At the time of his renunciation gods carried the best of the umbrellas, I bow before that Arya Dharma, the disciplined and the upright one. (7)

I bow to Hasta and Arya Dharma Sthavir the spiritualist, both of the Kashyap clan. I also bow to Arya Simha and Arya Dharma of the Kashyap clan. (8)

Bowing my head before all the above said Sthavirs, I offer my salutations to Sthavir Arya Jambu of the Gautam clan who was steadfast in knowledge and conduct. (9)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

I also bow and offer my salutations to Sthavir Nandit of the Kashyap clan who was exceedingly sweet and simple and full of sincerity in his pursuit of knowledge, perception, and conduct. (10)

My obeisance go to Desigani Kshamashraman of the Mathar clan who was immaculate in his indulgence in purity, knowledge and right conduct. (11)

Knower of the Anuyogas, serene, profoundly, intellectual and intensely composed was Sthargupta Kshamashraman of the Vatsa clan. I bow before that great sage. (12)

I also offer my salutations to Sthavir Kumar Dharmagani who was soundly established in pursuits of knowledge, perception, conduct and penance, highly endowed, and perfect in discipline. (13)

My revered salutations also to Devardhi Gani who effused the knowledge of the text and the meaning of the canons, and was the embodiment of kindness, compassion, and discipline. This saint from the Kashyap clan was popularly known as Kshamashraman. (14)

विस्तार :

देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण : आगम ग्रन्थों का जो व्यवस्थित रूप आज उपलब्ध है उसके संकलन और लिपिबद्ध कराने का श्रेय देवर्द्धिगणि को जाता है। इनकी दीक्षा आचार्य लोहित्य, दूष्यगणि अथवा षाण्डिल्य में से किसके पास हुई इस विषय पर सभी विद्वान् एक मत नहीं हैं। किन्तु भयंकर दुष्काल के बाद वी. नि. ९८० (वि. सं. ५१०, ४५३ ई.) में वल्लभी नगरी में इनकी निश्रा में आगमों के संकलन तथा लिपिबद्ध किये जाने का कार्य हुआ था, इसमें कोई संदेह नहीं। सौराष्ट्र के एक क्षत्रिय परिवार में जन्मे देवर्द्धिगणि भगवान महावीर की परम्परा के अंतिम पूर्वधर थे। इन्हें एक पूर्व का अर्थ सहित और दूसरे पूर्व के मूल पाठ का ज्ञान था। इनके स्वर्गवास के पश्चात् वी. नि. १००० में पूर्व ज्ञान का विच्छेद हो गया।

Elaboration :

Devarddhigani Kshamashraman : The credit for the herculean task of compiling and transcribing the vast Agam literature in its presently available organized form goes to Devarddhigani. Scholars continue to debate about the name of the guru who initiated him into the order; the three names mentioned in this regard are—Acharya Lohitya, Dooshyagani, and Shandilya. However, there is not even a trace of doubt about the fact that it was under his guidance that the Agam literature was compiled in Vallabhi town in 980 A.N.M. (510 B. V., 453 A.D.), after a long and devastating drought. Born in a Kshatriya family of Saurashtra, Devarddhi was the last Purvadhar of Mahavir's tradition. He knew the text of two Purvas and the meaning of one only. All the knowledge of the Purvas became extinct after his death in 1000 V.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पर्युषणाकल्प
(The Code of Conduct for an Ascetic)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पर्युषणाकल्प : समाचारी

साधु आचार

वर्षावास का समय

तेणं काले णं तेणं समए णं समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइराए मासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसवेइ॥२२४॥

(२२४) काल के उस भाग में श्रमण भगवान महावीर ने वर्षावास के बीस रात्रि सहित एक मास बीत जाने पर, अर्थात् आषाढ़ी चातुर्मासी से पचास दिन बीत जाने पर, वर्षावास हेतु निवास किया।

THE CODE OF CONDUCT FOR AN ASCETIC

The Period of Monsoon-stay

(224) During that period of time Shraman Bhagavan Mahavir commenced his monsoon-stay when fifty days had passed since the beginning of the monsoon season, or end of the Ashadhi Chaturmasi (four months of the summer).

से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ–समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइराए मासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसवेइ?

जतो णं पाएणं अगारीण अगाराइं कडियाइं उक्कंपियाइं छन्नाइं लित्ताइं घट्ठाइं संपधूमियाइं खाओदगाइं खात-निद्धमणाइं अप्पणो अट्ठाए कडाइं परिभुत्ताइं परिणामियाइं भवंति। से एतेणऽट्ठेण एवं वुच्चइ समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइराए मासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसवेइ॥२२५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२२५) प्रश्न–ऐसा क्यों कहा जाता है कि श्रमण भगवान महावीर ने वर्षावास के पचास दिन बीत जाने पर वर्षावास हेतु निवास किया?

उत्तर–इसका कारण यह है कि उस समय या वर्ष के उस भाग में लगभग सभी गृहस्थों के मकानों के चारों तरफ वर्षा से बचने के लिए चटाइयों आदि की छावन लगी होती है। सभी मकान चूने आदि से सफेदी किये जाते हैं, घास आदि से ढके हुए होते हैं, गोबर आदि से लेपन किये हुए होते हैं, विषम ऊँची-नीची भूमि को घिसाई करके समतल किए हुए होते हैं, शुद्ध व स्निग्ध किए हुए होते हैं और चारों ओर से सुरक्षित किए होते हैं। धूपादि से सुगन्धित किये हुए होते हैं। उनमें छत का पानी निकालने के लिए परनाले बनाये हुए होते हैं और घरों से पानी निकालने के लिए खोदी हुई नालियाँ होती हैं। सभी निवास गृहस्थों के रहने के लिए ठीक किए हुए होते हैं, जीव-जन्तु रहित और साफ किए हुए होते हैं, और वे गृहस्थों के उपयोग में आये हुए होते हैं।

(225) **Q.** Why is it said that Shraman Bhagavan Mahavir commenced his monsoon-stay on the said specific date?

A. The reason for this is that during that part of the year almost every house used to have a protective cover of cane mats and other such coverings for protection from rain water. Most of the house-holders used to get their houses white-washed, properly covered, plastered, levelled, cleaned, and fenced. These houses were also disinfected with fragrant incense-smoke and provided with adequate drainage. All these houses used to be fully prepared for the living of the citizens and free of any or all insects or animals. In fact, these houses used to be already test-lived.

जहा णं समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइराए विइक्कंते वासावासं पज्जोसवेइ, तहा णं गणहरा वि वासाणं सवीसइराए विइक्कंते वासावासं पज्जोसविंति ॥२२६॥

(२२६) जैसे श्रमण भगवान महावीर ने वर्षा ऋतु के पचास दिन बीत जाने पर चातुर्मास किया था उसी प्रकार गणधरों ने भी किया।

(226) Like Shraman Bhagavan Mahavir, his Chief Disciples also commenced their monsoon-stay when fifty days passed since the beginning of the monsoon season.

जहा णं गणहरा वासाणं जाव पज्जोसविंति, तहा णं गणहर-सीसा वि वासाणं जाव पज्जोसविंति ॥२२७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२२७) जैसे गणधरों ने वर्ष के इस भाग विशेष में वर्षावास किया था वैसे ही उनके शिष्यों ने किया।

(227) As the Ganadhars did so did their disciples.

जहा णं गणहर-सीसा वासाणं जाव पज्जोसविंति, तहा णं थेरा वि वासाणं जाव पज्जोसविंति ॥२२८॥

(२२८) जैसे गणधरों के शिष्यों ने आषाढ़ी चातुर्मास से पचास दिन बीतने पर वर्षावास किया था वैसे ही स्थविरों ने भी किया।

(228) As the disciples of the Ganadhars did so the senior ascetics (Sthavirs) also commenced their monsoon-stay fifty days after the end of the four months of the Summer season (Ashadhi Chaturmas).

जहा णं थेरा वासाणं जाव पज्जोसविंति, तहा णं जे अज्जत्ताए समणा निग्गंथा विहरंति, एए वि णं वासाणं जाव पज्जोसविंति ॥२२९॥

(२२९) जिस नियम से स्थविरों ने चातुर्मास किया था उसी नियम से आज के श्रमण निर्ग्रन्थ भी करते हैं।

(229) The present day ascetics also follow the rule that was followed by the Sthavirs for their monsoon-stay.

जहा णं जे इमे अज्जत्ताए समणा निग्गंथा सवीसइराए मासे विइक्कंते वासावास पज्जोसविंति, तहा णं अम्हं पि आयरिय-उवज्झाया वासाणं सवीसइराए मासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसविंति ॥२३०॥

(२३०) वर्ष के जिस भाग में वर्तमान श्रमण निर्ग्रन्थ वर्षावास करते हैं उसी भाग में हमारे आचार्य, उपाध्यायादि भी करते हैं।

(230) Our Acharyas and Upadhyayas too observe monsoon-stay during the same part of the year when the modern Shramans observe.

जहा णं अम्हं आयरिय-उवज्झाया वासाणं जाव पज्जोसवेंति, तहा णं अम्हे वि अज्जो! वासाणं सवीसइराए विइक्कंते वासावासं पज्जोसविंति।

अंतरा वि य से कप्पइ पज्जोसवित्तए, नो से कप्पइ तं रयणिं उवायणावित्तए ॥२३१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२३१) जैसे हमारे आचार्य, उपाध्यायादि चातुर्मास करते हैं वैसे ही हम सभी करते हैं।

उस समय विशेष से पहले वर्षावास आरंभ करना तो कल्पता है–शास्त्र विहित है–किन्तु उस रात्रि विशेष का उल्लंघन करना नहीं कल्पता। अतः आषाढ़ी चातुर्मासी से पचासवीं रात से पहले ही वर्षावास कर लेना चाहिए।

(231) As our Acharyas and Upadhyayas do so we all do. It is according to the scriptures to commence the monsoon-stay before that specific date, but to skip that specific night is not permissible. As such, the monsoon-stay should be commenced before the fiftieth night counted from the last day of the summer season (Ashadhi Chaturmasi).

वर्षावास की क्षेत्र मर्यादा

वासावासं पज्जोसवियाणं कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीण वा सव्वओ समंता सकोसं जोयणं उग्गहं ओगिण्हित्ताणं चिट्ठिउं अहालंदमवि उग्गहे ॥२३२॥

(२३२) वर्षावास हेतु निवास करने वाले साधु-साध्वियों को चारों दिशाओं तथा विदिशा में पाँच कोस लगभग (१६ कि.मी. लगभग) की क्षेत्र मर्यादा को स्वीकार करके (अवग्रह) रहना कल्पता है। पानी से गीला किया हुआ हाथ सूख न जाय तब तक अर्थात् थोड़े से समय के लिए भी सीमा की मर्यादा में रहना कल्पता है और बहुत अधिक समय तक भी सीमा में रहना कल्पता है, किन्तु गृहीत मर्यादा से बाहर अनियत स्थान पर रहना नहीं कल्पता।

Area Limits during Monsoon-stay

(232) The ascetics staying at a place for the monsoon season should limit their area of movement to a distance of approx. five Kosa (approx. 15 km) in all directions. Within these limits they are allowed to stay for a brief or a long period but to stay out of this predetermined limit even for the shortest period is not allowed.

वासावासं पज्जोसवियाणं कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीण वा सव्वओ समंता सकोसं जोयणं भिक्खायरियाए गंतुं पडिनियत्तए।

जत्थ णं नई निच्चोयगा निच्चसंदणा नो से कप्पइ सव्वओ समंता सकोसं जोयणं भिक्खायरियाए गंतु पडिनियत्तए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एरवईए कुणालाए जत्थ चक्किया एगं पायं जले किच्चा एगं पायं थले किच्चा एवं चक्किया एवं णं कप्पइ सव्वओ समंता सकोसं जोयणं भिक्खायरियाए गंत पडिनियत्तए। एवं नो चक्किया, एवं णं नो कप्पइ सव्वओ समंता सकोसं जोयणं गंतुं पडिनियत्तए॥२३३॥

(२३३) वर्षावास में रहे साधु-साध्वियों को अपने नियत निवास से चारों ओर पाँच-पाँच कोस तक गोचरी या भिक्षाटन के लिए जाना और लौटना कल्पता है।

जहाँ कोई नदी सदा पानी से भरी बहती हो वहाँ सभी तरफ पाँच-पाँच कोस तक गोचरी के लिए जाना-आना नियम संगत नहीं है।

जहाँ जल इतना कम हो कि एक पैर पानी में रखकर दूसरा सूखे में रखा जा सके वहाँ चारों ओर पाँच-पाँच कोस गोचरी के लिए जाना-आना कल्पता है; उदाहरणस्वरूप (अल्पजल वाली) कुणाला नगरी की ऐरावती नदी।

(233) During the monsoon stay the ascetics are allowed to go out and bring back alms from upto a limit of five Kosa in all directions.

However, if there is a perennial river flowing within these limits, it is not compulsory to cover the whole distance of five Kosa.

In case there is just a stream that can be crossed by placing just one foot in water, one is allowed to go to the maximum limit, for example, the Eravati river near Kunala town.

आहार-मर्यादा

वासावासं पज्जोसवियाणं अत्थेगइयाणं एवं वुत्तपुव्वं भवइ-'दावे भंते!' एवं से कप्पइ दावित्तए; नो से कप्पइ पडिग्गाहित्तए॥२३४॥

(२३४) वर्षावास में रहे श्रमणों को गुरुजनों द्वारा यह आदेश हो कि "भदन्त! तुम अस्वस्थ या अशक्त श्रमणों के लिए भोजनादि लाकर देना", तो उन्हें वह लाकर देना कल्पता है किन्तु उसमें से स्वयं उपयोग में लाना नहीं कल्पता।

Food Discipline

(234) If there are instructions from senior ascetics for bringing food for weak or sick ascetics and offer it to them then it is allowed to do so. However, it is not allowed to take anything out of the food meant for others.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वासावासं पज्जोसवियाणं अत्थेगइयाणं एवं वुत्त-पुव्वं भवइ–'पडिग्गाहेहि भंते!' एवं से कप्पइ पडिग्गाहित्तए; नो से कप्पइ दावित्तए॥२३५॥

(२३५) उन श्रमणों को यह आदेश हो कि "भदन्त! तुम स्वयं लेना", तो उन्हें वह सामग्री स्वयं ही लेना कल्पता है, दूसरों को देना नहीं कल्पता।

(235) If the instructions are that he should bring food for himself then it is not at all allowed to be given to anyone else.

वासावासं पज्जोसवियाणं अत्थेगइयाणं एवं वुत्तपुव्वं भवइ–'दावे भंते!' 'पडिग्गाहेहि भंते!'; एवं से कप्पइ दावित्तए वि, पडिगाहित्तए वि॥२३६॥

(२३६) श्रमणों को यदि यह आदेश हो कि "भदन्त! तुम देना और स्वयं भी ग्रहण करना", तो उन्हें वह सामग्री स्वयं उपयोग में लेना और दूसरों को देना, दोनों कल्पता है।

(236) If the instructions are that he should bring the food for others as well as himself, then only it is appropriate for him to eat himself as well as give it to others.

वासावासं पज्जोसवियाणं नो कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीण वा हट्ठाणं आरोग्गाणं बलिय-सरीराणं इमाओ विगइओ अभिक्खणं अभिक्खणं आहारित्तए, तं जहा–खीरं, दहिं, नवणीअं, सप्पिं, तिल्लं, गुडाइं वा (गुडं महुं सक्करं वा)॥२३७॥

(२३७) वर्षावास में रहे जो साधु-साध्वी हृष्ट-पुष्ट, निरोग-स्वस्थ व बलिष्ट शरीर वाले हों उन्हें ये नौ रस-विकृतियाँ बार-बार खाना नहीं कल्पता–दूध, दही, मक्खन, घी, तेल, गुड़ (गुड़, मधु, शक्कर) आदि।

(237) Those ascetics, male or female, who are healthy, strong and free of any disease are not allowed to consume frequently the nine savoury things namely—milk, curd, butter, ghee, oil, jaggery, etc.

"वासावासं पज्जोसवियाणं अत्थेगइयाणं एवं वुत्तपुव्वं भवति–अट्ठो भंतें! 'गिलाणस्स?' से य वइज्जा–"अट्ठो; से य पुच्छियव्वे सिया–'केवइएणं अट्ठो?';

से य वइज्जा–"अट्ठो; से य पुच्छियव्वे सिया–'केवइएणं अट्ठो?'; से य वएज्जा–'एवइएण अट्ठो गिलाणस्स।' जं से पमाणं वदति, से पमाणतो घेत्तव्वे। से य विन्नवेज्जा,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

से य विन्नवेमाणे लभेज्जा; से य पमाणपत्ते–'होउ, अलाहि' इति वत्तव्वं सिया। स किमाहु भंते! 'एवइएणं अट्ठो गिलाणस्स।' सिया णं एवं वयंतं परो वएज्जा– 'पडिग्गाहेहि अज्जो।' 'तुमं पच्छा भोक्खसि वा देहिसि वा' एवं से कप्पइ पडिग्गाहित्तए; नो से कप्पइ गिलाण-नीसाए पडिग्गाहित्तए॥२३८॥

(२३८) वर्षावास में रहे साधु को यह कहा जाय कि (इनमें से) कोई अमुक वस्तु बीमार के लिए चाहिए तो उसे पहले निश्चित करना चाहिये कि वास्तव में बीमार के लिए ही चाहिए और कितनी मात्रा में चाहिये। यह निश्चित करने के बाद गोचरी के लिये जाने वाले साधु को उतनी ही मात्रा में वह वस्तु लाने के लिये कहना चाहिए। वह साधु जब गोचरी के लिए जावे तो गृहस्थ को बताकर उतनी ही मात्रा में वह वस्तु ग्रहण करे और कहे कि बस इतनी ही बहुत है। इस पर दाता पूछे कि इतना ही यथेष्ट क्यों है? तो उत्तर में कहे कि बीमार के लिये इतना ही चाहिए। ऐसा कहने पर भी दाता आग्रह कर कहे कि आप ले तो लें, जो मात्रा अधिक हो वह आप स्वयं उपयोग में लेवें। ऐसी परिस्थिति में अधिक मात्रा में वह वस्तु लेना कल्पता है। किन्तु रोगी के नाम से अपने लिये अधिक ग्रहण करना नहीं कल्पता।

(238) If an ascetic is asked to bring something for a sick person it should first be acertained if it is truly required for a sick person, and also that what quantity is required. Once this is done the ascetic who is to go for alms should be told to get only that specific thing in that specific quantity. When this ascetic, in turn, goes for alms he should accept only the specified quantity and tell the doner that it is enough. If the doner asks for the reason he should be told that only the specified quantity is required for a sick ascetic. Even then, if the doner persists to give more with a request that whatever quantity is extra may be used by the taker himself, it is allowed to accept the extra quantity. But in no case it is allowed to take extra quantity on the pretext of the need for the sick, and then use it himself.

वासावासं पज्जोसवियाणं अत्थि णं थेराणं तहप्पगाराइं कुलाइं कडाइं पत्तियाइं थिज्जाइं, वेसासियाइं सम्मयाइं बहुमयाइं अणुमयाइं भवंति, तत्थ से नो कप्पइ अदक्खु वइत्तए–'अत्थि ते आउसो! इमं वा इमं वा?' 'से किमाहु भंते?' 'सड्ढी गिही गिण्हइ वा, तेणियं पि कुज्जा।'॥२३९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२३९) वर्षावास में जिन अच्छे कुलों के गृहस्थों को श्रावक (भक्त) बनाया हो, जो कुल स्नेह भाजन हों, स्थिर और धीर हों, विश्वासपात्र हों, जिन कुलों में साधु वर्ग का स्वागत हो, जो कुल बहुमान करते हों, जिनमें साधु वर्ग को दान देने की अनुमति हो, और जिनमें साधु वर्ग के प्रति भेदभाव से रहित भक्ति हो उन कुलों में स्थविरों को जो पदार्थ चाहिए, पर दिखाई न देता हो उसके लिए—वह वस्तु आपके यहाँ है क्या?—यह पूछना नहीं कल्पता। इसका कारण यह है कि ऐसा प्रश्न करने पर वह गृहस्थ अपनी श्रद्धा से प्रेरित हो वह वस्तु येन-केन-प्रकारेण खरीदकर या चुराकर भी लाकर रख सकता है। अतः ऐसा नहीं करना चाहिए।

(239) It is allowed to accept alms from the citizens who are from good families and have been initiated during the monsoon-stay, the families who are popular, upright and stable, the families which are trustworthy and welcome the ascetics, the families which give due respect to the ascetics, which have tradition to offer alms to ascetics, and which have an unbiased devotion for ascetics. However, it is not allowed to ask for or enquire about a thing that is not directly visible, even from the said types of families. The reason for this rule is that if asked, the citizen may try to arrange for that thing by any means just out of respect and devotion for the ascetic. And that should not be done.

गोचरी संख्या

वासावासं पज्जोसवियाणं निच्चभत्तियस्स भिक्खुस्स कप्पइ एगं गोयरकालं गाहावइ-कुले भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा, नऽन्नत्थ आयरिय-वेयावच्चेण वा, उवज्झाय-वेयावच्चेण वा, तवस्सि-गिलाण-वेयावच्चेण वा, खुड्डएण वा खुड्डियाए वा अव्वंजण-जायएण वा॥२४०॥

(२४०) वर्षावास में रहे नित्य भोजन करने वाले साधु को गोचरी के समय आहार व जल के लिए गृहस्थ के कुल (भवन) की तरफ एक बार प्रवेश करना और एक बार बाहर निकलना कल्पता है। पर यदि आचार्य, उपाध्याय, तपस्वी, अस्वस्थ, तथा बालक (अवयस्क) साधु-साध्वियों की सेवा के लिए आवश्यक हो तो एक से अधिक बार भी उस कुल/घर की तरफ आना-जाना कल्पता है।

Frequency of Alms Collection

(240) For an ascetic who takes meal everyday it is allowed to enter into and come out of a citizens house only once in a day to get food and water at

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

the specified time. However, the frequency can be increased if needed by the Acharya, Upadhyaya, an ascetic indulging in penances, an ailing ascetic, or a child-ascetic.

वासावासं पज्जोसवियाणं चउत्थभत्तियस्स भिक्खुस्स अयं एवइए विसेसे जं से पाओ निक्खम्म पुव्वामेव वियडगं भोच्चा पेच्चा पडिग्गहगं संलिहिय संपमज्जिय से य संथरिज्जा, कप्पइ से तद्दिवसं तेणेव भत्तट्ठेणं पज्जोसवित्तए, से य नो संथरिज्जा एवं से कप्पइ दोच्चं पि गाहावइ-कुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा॥२४१॥

(२४१) वर्षावास में रहे चतुर्थ भक्त तप (एकान्तर उपवास) करने वाले श्रमण के लिए विशेष नियम है। वह पारणे के दिन प्रातः (प्रथम प्रहर में) गोचरी के लिए निकले और पहले निर्दोष आहार व पानी ग्रहण करें। इसके बाद पात्र को धो, पोंछ, साफ करके रख दे और यथा संभव उतने ही भोजन पानी से उस दिन निर्वाह करे। यदि वैसा न हो सके तो उसके लिए दूसरी बार भी गृहस्थ कुल की ओर आहार-पानी ग्रहण करने के लिए जाना-आना कल्पता है।

(241) There is a special rule for the ascetic who is observing a vow of fasting on alternative days. On the day he breaks his fast or the day he takes his meals he should bring the food, eat it, clean the utensils and put them at the proper place. As far as possible, he should be content with this one meal. However, if it is not possible, he may go out for food a second time.

वासावासं पज्जोसवियस्स छट्ठभत्तियस्स भिक्खुस्स कप्पंति दो गोयरकाला गाहावइकुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा॥२४२॥

(२४२) वर्षावास में रहे हुए छह भक्त वेले (वेले = दो उपवास के बाद पारणा और फिर दो उपवास) तप करने वाले साधु को गोचरी के समय भोजन-पानी लेने के लिए गृहस्थ कुल की ओर दो बार जाना-आना कल्पता है।

(242) An ascetic who is observing a Chhatthabhakta penance (fasting for two days, eating one day, fasting for two days, and so on) is allowed to go out to beg for food and water two times on the day of meals at the specified time.

वासावासं पज्जोसवियस्स अट्ठमभत्तियस्स भिक्खुस्स कप्पंति तओ गोयरकाला गाहावइकुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा॥२४३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२४३) अष्टम भक्त (तेला तेला पारणा) तप करने वाले श्रमण को गोचरी के समय आहार-पानी लेने के लिए गृहस्थ की ओर तीन बार जाना-आना कल्पता है।

(243) An ascetic who is observing an Ashtambhakta penance (three day fast, one day meals, three day fast, and so on) is allowed to go out to beg for food and water three times on the day of meals at the specified time.

वासावासं पज्जोसवियस्स विकिट्ठभत्तियस्स भिक्खुस्स कप्पंति सव्वे वि गोयरकाला गाहावइकुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा॥२४४॥

(२४४) विकृष्ट भक्त (तेले से अधिक) तप करने वाले श्रमण को आहार-पानी के लिये जिस समय आवश्यक हो उस समय गृहस्थ कुल की ओर जाना-आना कल्पता है।

(244) An ascetic who is observing a Vikrishtabhakta penance (more than three days fast followed by a day of meals) is allowed to go out to beg for food as and when needed on the day of meals.

जल-विशुद्धि मर्यादा

वासावासं पज्जोसवियस्स निच्चभत्तियस्स भिक्खुस्स कप्पंति सव्वाइं पाणगाइं पडिग्गाहित्तए॥२४५॥

(२४५) वर्षावास में रहे नित्य भोजन करने वाले साधु को सभी प्रकार का प्रासुक पानी (२१ प्रकार का अचित्त जल) लेना कल्पता है।

Purity of Water

(245) An ascetic who takes meal everyday is allowed to accept water that has been made potable (in Jain context it means pure water without any living organisms) by any of the 21 specified processes.

वासावासं पज्जोसवियस्स चउत्थभत्तियस्स भिक्खुस्स कप्पंति तओ पाणगाइं पडिग्गाहित्तए, तं जहा—उस्सेइमं संसेइमं चाउलोदगं॥२४६॥

(२४६) चतुर्थभक्त तप करने वाले साधु को तीन प्रकार का प्रासुक पानी लेना कल्पता है–(१) उत्स्वेदिम–आटा मिला पानी, (२) संस्वेदिम–उबली हुई सब्जी का निथरा हुआ ठंडा जल (धोवन) और (३) चाउलोदक चावल का धोवन।

(246) An ascetic who is observing Chaturbhakta penance (fasting on alternate days) is allowed to accept only three types of potable water—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Utsvedim (water with a pinch of flour), Samsvedim (water left after boiling vegetables, decanted and cooled), and Chaulodaka (water left after cooking rice, decanted and cooled; or wash of rice).

वासावासं पज्जोसवियस्स छट्ठभत्तियस्स भिक्खुस्स कप्पंति तओ पाणगाइ पडिग्गाहित्तए; तं जहा–तिलोदए तुसोदए जवोदए ॥२४७॥

(२४७) षष्ठभक्त तप करने वाले श्रमण को तीन प्रकार का पानी लेना कल्पता है– १. तिलोदक (तिलों का धोवन), २. तुषोदक–तुष सहित चावलों का धोवन, और ३. जवोदक–जौ का धोवन।

(247) An ascetic who is observing Shasthabhakta penace is allowed to accept only three types of water—Tilodak (wash of sesam seed), Tushodak (wash of rice with bran), and Javodak (wash of barley). (Here wash necessarily means the water left after cooking, decanted and cooled)

वासावासं पज्जोसवियस्स अट्ठमभत्तियस्स भिक्खुस्स कप्पंति तओ पाणगाइं पडिग्गाहित्तए, तं जहा–आयामए, सोवीरए, सुद्ध वियडे ॥२४८॥

(२४८) अष्टम भक्त तप करने वाले श्रमण को भी तीन तरह का पानी लेना कल्पता है– १. आयामक–ओसामण का पानी, २. सौवीरक–कांजी का पानी, और ३. शुद्ध विकट–तीन बार उबालकर ठंडा किया पानी।

(248) An ascetic who is observing Ashtambhakt penance is also allowed to accept only three types of water—Ayamak (wash of pulses), Sauvirak (water with Brassica seed powder), and tri-boiled water.

वासावासं पज्जोसवियस्स विकिट्ठभत्तियस्स भिक्खुस्स कप्पंति एगे उसिणोदए वियडे पडिग्गाहित्तए, से वि य णं असित्थे, णो वि य णं ससित्थे ॥२४९॥

(२४९) विकृष्ट भक्त (विविध उत्कृष्ट) तप करने वाले साधु को केवल शुद्ध विकट या तीन बार उबला हुआ पानी लेना ही कल्पता है। वह भी अन्नकण रहित हो, तो अन्यथा नहीं।

(249) An ascetic who is observing Vikrishthabhakta penance is allowed to accept only tri-boiled water and that too if it is free of grain particles, otherwise not.

वासावासं पज्जोसवियस्स भत्त-पडियाइक्खियस्स भिक्खुस्स कप्पइ एगे उसिणोदए पडिग्गाहित्तए, से वि य णं असित्थे, नो चेव णं ससित्थे, से विइय णं परिपूते, नो चेव

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

णं अपरिपूए, से वि य णं परिमिए, नो चेव णं अपरिमिए, से वि य णं बहुसंपण्णे, नो चेव णं अबहुसंपण्णे ॥२५०॥

(२५०) भक्त प्रत्याख्यानी (अनशन संथारा संलेखना) तप वाले साधु को केवल तीन बार उबला पानी लेना ही कल्पता है और वह भी अन्नरहित, कपड़े से छाना हुआ हो, तो अन्यथा नहीं। यह जल केवल उतनी ही मात्रा में होना चाहिये जितना आवश्यक हो, अधिक या कम नहीं।

(250) An ascetic who is observing Bhakta Pratyakhyani penace (continuous fasting) is allowed to take only tri-boiled and filtered water without any grain particles. The quantity of water should be limited to the exact need, neither more nor less.

आहार-प्रमाण

वासावासं पज्जोसवियस्स संखादत्तियस्स भिक्खुस्स कप्पंति पंचदत्तीओ भोयणस्स पडिग्गाहित्ताए, पंच पाणगस्स, अहवा चत्तारि भोयणस्स, पंच पाणगस्स; अहवा पंच भोयणस्स, चत्तारि पाणगस्स। तत्थ णं एगा दत्ती लोणासायण-मित्तमवि पडिग्गाहिया। तत्थ णं एगा दत्ती लोणासायण-मित्तमवि पडिग्गाहिया सिया, कप्पइ से तद्दिवसं तेणेव भत्तट्ठेणं पज्जोसवित्ताए। नो से कप्पइ दोच्चं पि गाहावइ-कुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा॥२५१॥

(२५१) वर्षावास में रहे साधु को जिसने यह अभिग्रह लिया हो कि वह निश्चित संख्या की दत्ति-प्रमाण (एक बार बहराये जाने की मात्रा दत्ति होती है, जैसे एक मुट्ठी या एक चम्मच अथवा एक अखंड धारा आदि) भोजन लेगा, उसे केवल पाँच दत्ति भोजन की और पाँच दत्ति जल की लेना ही कल्पता है। विकल्प स्वरूप पाँच दत्ति भोजन और चार दत्ति जल अथवा चार दत्ति भोजन और पाँच दत्ति जल लेना भी कल्पता है। एक बार में यदि केवल एक चुटकी नमक ही दिया गया हो तो वह पूरी एक दत्ति गिनना चाहिए। एक बार संकल्पित दत्तियाँ ले लेने के बाद उस दिन उतने ही भोजन-पानी से निर्वाह करना कल्पता है। उस साधु को दुबारा आहार पानी के लिये जाना-आना नहीं कल्पता।

Quantity of Food

(251) An ascetic who has resolved to accept only a limited number of Datti (one serve, viz. one fistful, one serving spoon full, etc.) is allowed to

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

accept a maximum of five Datti of food and five Datti of water only. Alternatively he can accept five Datti of food and four Datti of water or four Datti of food and five Datti of water. If in one particular serving he is given only a pinch of salt it is to be counted as one Dutti. Taking once the resolved quantity, he should be content with that much quantity on that particular day. He is not allowed to go out for alms again that day.

वासावासं पज्जोसवियाणं नो कप्पइ निग्गंथाणं वा, निग्गंथीणं वा जाव उवस्सयाओ सत्त-घरंतरं संखडिं सन्नियट्टचारिस्स एत्तए। एगे पुण एवमाहुंसु--नो कप्पइ जाव उवस्सयाओ परंपरेण संखडिं सन्नियट्टचारिस्स एत्तए ॥२५२॥

(२५२) वर्षावास में रहे शुद्ध भिक्षाचर्या करने वाले साधु-साध्वी निषिद्ध घरों से भिक्षा न लेने का नियम लेते हैं। इनके लिए अपने उपाश्रय से सात घरों तक जहाँ भी पंक्तिबद्ध भोज या जीमनवार हो रहा है वहाँ आहार-पानी के लिए जाना नहीं कल्पता। इस नियम में कुछ लोग सात घरों की गिनती में उपाश्रय को भी गिनते हैं, कुछ उपाश्रय को नहीं गिनते और अन्य उपाश्रय के पास वाले घर को भी नहीं गिनते।

(252) The ascetics during a monsoon stay take a vow not to go for alms to some specified houses. Counting from the place of their stay they are not allowed to go for alms upto seven houses, where some feast has been arranged. Some of the followers of this rule start the count including the place of stay, others excluding the place of stay, and some others excluding even the house adjacent to the place of stay.

गमनागमन

वासावासं पज्जोसवियस्स नो कप्पइ पाणि-पडिग्गहियस्स भिक्खुस्स कणग-फुसिय-मित्तमवि वुट्ठिकायंसि निवयमाणंसि गाहावइ-कुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा ॥२५३॥

(२५३) वर्षावास में रहे करपात्री साधु को (जो भोजन-पानी के लिए पात्र नहीं रखता, हाथ ही जिसका पात्र हो) वर्षा की फुहारों, धुंध या कोहरा पड़ने के समय गोचरी के लिए जाना नहीं कल्पता।

Movement

(253) An ascetic who observes the vow of not carrying any alms-pot is

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

not allowed to go for alms when it is drizzling or there is fog or mist in the atmosphere.

वासावासं पज्जोसवियस्स पाणि-पडिग्गहियस्स भिक्खुस्स नो कप्पइ अगिहंसि पिंडवायं पडिग्गाहित्ता पज्जोसवित्तए। पज्जोसवेमाणस्स सहसा वुट्ठिकाए निवडिज्जा, देसं भोच्चा देसमायाय से पाणिणा पाणिं परिपिहित्ता, उरंसि वा णं निलिज्जिज्जा, कक्खंसि वा णं समाहडिज्जा, अहा-छन्नाणि वा लयणाणि उवागच्छिज्जा, रूक्खमूलाणि वा उवागच्छिज्जा, जहा से पाणिंसि दगे वा, दगरए वा, दगफुसिया वा नो परियावज्जइ ॥२५४॥

(२५४) करपात्री साधु को हाथ में गोचरी लेकर खुले स्थान पर या आसमान के नीचे भोजन करना नहीं कल्पता। वह यदि ऐसा कर रहा हो और अचानक वर्षा आरम्भ हो जाए, तो बने हुए भोजन को हाथ से ढके और सीने से चिपकाकर या काँख में छिपाकर सुरक्षित करे, और किसी गृहस्थ के घर में या पेड़ की छाया में चला जाय। जिस हाथ में भोजन हो उससे अपकाय के जीवों की विराधना न हो अर्थात् पानी की बूँदें उस हाथ को न छू सकें ऐसी प्रवृत्ति करे।

(254) The ascetic without alms-pot is not allowed to take the food and eat it in an open area or under the sky. If at the time of bringing the food it starts raining, he should protect the food from the rain drops by hiding it near his chest or under armpits, and proceed to some house or under the shade of a tree. He should ensure that the hand in which he carries the food is not touched by the rain drops.

वासावासं पज्जोसवियस्स पाणि-पडिग्गहियस्स भिक्खुस्स जं किं चि कणग-फुसिय-मित्तं पि निवडइ, नो से कप्पइ भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा ॥२५५॥

(२५५) करपात्री साधु को ऐसी सूक्ष्म फुहार भी पड़ रही हो कि जल का कण मात्र भी स्पर्श करता हो, तब भी आहार-पानी के लिए जाना-आना नहीं कल्पता।

(255) The ascetic without alms-pot is not allowed to go out for begging food even if it is just drizzling or even mist particles touch his body.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वासावासं पज्जोसवियस्स पडिग्गहधारिस्स भिखुस्स नो कप्पइ वग्घारिया-वुट्ठिकायंसि गाहावइ-कुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा॥२५६॥

(२५६) वर्षावास में रहे पात्रधारी साधु को निरन्तर वर्षा बरस रही हो तब भोजन-पानी के लिए जाना-आना नहीं कल्पता। यदि कम वर्षा (रह-रहकर बूँदा-बूँदी) हो रही हो तो सूती वस्त्र के ऊपर ऊनी वस्त्र ओढ़कर, पात्र और रजोहरण को भली प्रकार ढककर जाना-आना कल्पता है।

(कुछ आचार्य अल्पवृष्टि का अर्थ वर्षा का अभाव करते हैं तथा कुछ हलकी बूँदा-बूँदी। आचारांग एवं दशवैकालिक सूत्र में वर्षा बरसते समय भिक्षार्थ जाने का निषेध है।)

(256) An ascetic who carries alms-pot is not allowed to go for food or water if it is raining heavily. If it is just drizzling he is allowed to go out only after properly covering his cotton clad body, alms-pots, and the broom with a woollen cloth.

(Acharang and Dashvaikalik disallow even if it is just drizzling. Among the Acharyas there are followers of both the schools.)

आश्रय-मर्यादा

वासावासं पज्जोसवियस्स निग्गंथस्स निग्गंथीए वा गाहावइ-कुलं पिंडवाय-पडियाए अणुपविट्ठस्स निगिज्झिय निगिज्झिय वुट्ठिकाए निवइज्जा, कप्पइ से अहे आरामंसि वा, अहे उवस्सयंसि वा, अहे वियडगिहंसि वा, अहे रूक्खमूलंसि वा उवागच्छित्तए।

तत्थ से पुव्वागमणेणं पुव्वाउत्ते चाउलोदणे, पच्छाउत्ते भिलिंग-सूवे, कप्पइ से चाउलोदणे पडिग्गाहित्तए, नो से कप्पइ भिलिंग-सूवे पडिग्गाहित्तए। तत्थ से पुव्वागमणेणं पुव्वाउत्ते भिलिंग-सूवे, पच्छाउत्ते चाउलोदणे, कप्पइ से भिलिंग-सूवे पडिग्गाहित्तए, नो से कप्पइ चाउलोदणे पडिग्गाहित्तए। तत्थ से पुव्वागमणेणं दो वि पुव्वाउत्ताइं वट्टंति, कप्पंति से दो वि पडिग्गाहित्तए। तत्थ से पुव्वागमणेणं दो वि पच्छाउत्ताइं, नो से कप्पंति दो वि पडिग्गाहित्तए। जे से तत्थ पुव्वागमणेणं पुव्वाउत्ते से कप्पइ पडिग्गाहित्तए, जे से तत्थ पुव्वागमणेणं पच्छाउत्ते से नो कप्पइ पडिग्गाहित्तए॥२५७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२५७) जब रुक-रुककर वर्षा हो रही हो तब गोचरी के लिए निकले पात्रधारी साधु को बगीचे में पेड़ के नीचे, उपाश्रय के अथवा घर के आश्रय में छायादार स्थान पर जाना कल्पता है। ऐसे स्थान पर साधु के पहुँचने से पहले ही तैयार किया हुआ भात मिले और पहुँचने के बाद तैयार की हुई दाल मिले, तो केवल भात लेना ही कल्पता है, दाल लेना नहीं। इसी प्रकार यदि पहुँचने से पहले दाल बनी है और पहुँचने के बाद भात, तो केवल दाल लेना ही कल्पता है। यदि दोनों वस्तुएँ पहले बनी हों तो दोनों को लेना कल्पता है और यदि दोनों वस्तुएँ बाद में बनी हों तो लेना नहीं कल्पता। आशय यह है कि वहाँ पहुँचने से पूर्व तैयार की हुई कोई भी खाद्य वस्तु लेना कल्पता है, पहुँचने के बाद तैयार की हुई वस्तु लेना नहीं कल्पता।

Rules for Taking Shelter

(257) If the rain is intermittant, an ascetic is allowed to go into a garden under a tree, in a Upashraya or a house, or any other covered place. After reaching there if he finds rice cooked before his reaching there and, pulse cooked after his reaching there, he is allowed to accept only rice and not pulse. Simlilarly if the pulse has been cooked before he reaches and, rice after his reaching, then he is allowed to accept only pulse. In case both the things were cooked before his reaching at the spot, he is allowed to accept both; and if both are cooked after his arrival, he should not accept any of the two. Thus it implies that he is allowed to accept only the things that are already cooked before his arrival and not allowed to accept anything that is cooked after his arrival.

वासावासं पज्जोसवियस्स निग्गंथस्स गाहावइ-कुलं पिंडवाय-पडियाए अणुपविट्ठस्स निगिज्झिय निगिज्झिय वुट्ठिकाए निवएज्जा, कप्पइ से अहे आरामंसि वा, अहे उवस्सयंसि वा, अहे वियडगिहंसि वा, अहे रुक्खमूलंसि वा उवागच्छित्तए, नो से कप्पइ पुव्वगहिएणं भत्तपाणेणं वेलं उवायणावित्तए। कप्पइ से पुव्वामेव वियडगं भोच्चा पिच्चा पडिग्गहगं संलिहिय संपमज्जिय एगायगं भंडगं कट्टु जाव सेसे सूरिए जेणेव उवस्सए तेणेव उवागच्छित्तए। नो से कप्पइ तं रयणिं तत्थेव उवायणावित्तए॥२५८॥

(२५८) पात्रधारी साधु जब वर्षा के कारण उपयुक्त स्थान पर आश्रय ले तो साथ लाई हुई गोचरी को रखकर समय नष्ट करना नहीं कल्पता। आश्रय स्थान में पहुँचते ही भोजन-पानी ग्रहण कर पात्र को साफ कर एक साथ भली प्रकार बाँधकर रखना और संध्या सूर्यास्त से पूर्व उपाश्रय की ओर जाना कल्पता है। उस स्थान पर रात बिताना नहीं कल्पता।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(258) An ascetic carrying alms-pot should not waste time at the place of shelter by putting away the food he has brought. He should eat the food as soon as he takes shelter, clean his alms-pots, properly wrap them, and return to his staying place, Upashraya, before the evening. He is not allowed to spend the night at the place of shelter.

वासावासं पज्जोसवियस्स निग्गंथस्स गाहावइकुलं पिंडवाय-पडियाए अणुप्पविट्ठस्स निगिज्झिय निगिज्झिय वुट्ठिकाए निवइज्जा, कप्पइ से अहे आरामंसि वा, अहे उवस्सयंसि वा, जाव उवागच्छित्तए। तत्थ नो कप्पइ एगस्स य निग्गंथस्स एगाए निग्गंथीए एगयओ चिट्ठित्तए १; तत्थ नो कप्पइ एगस्स निग्गंथस्स दोण्ह य निग्गंथीणं एगयओ चिट्ठित्तए २; तत्थ नो कप्पइ दोण्ह य निग्गंथाणं एगाए य निग्गंथीणं एगयओ चिट्ठित्तए ३; तत्थ कप्पइ दोण्हं य निग्गत्थाणं दोण्ह य निग्गंथीण एगयओ चिट्ठित्तए ४। अत्थि य इत्थ केइ पंचमए खुड्डए वा, खुड्डिया वा, अन्नेसिं वा संलोए सपडिदुवारे एवं ण्हं कप्पइ एगयओ चिट्ठित्तए॥२५९॥

(२५९) पात्रधारी साधु-साध्वियों को रह-रहकर वर्षा होते समय उद्यान या उपाश्रय में आश्रय लेना कल्पता है किन्तु–(१) वहाँ पर अकेले साधु को अकेली साध्वी के साथ एक स्थान पर रहना नहीं कल्पता। (२) अकेले एक श्रमण को दो श्रमणियों के साथ एक स्थान पर रहना नहीं कल्पता। (३) दो साधुओं को अकेली साध्वी के साथ एक स्थान पर रहना नहीं कल्पता। (४) दो साधुओं को दो साध्वियों के साथ एक स्थान पर रहना नहीं कल्पता। किन्तु यदि उस स्थान पर कोई पाँचवाँ व्यक्ति हो, चाहे वह क्षुल्लक (छोटा) या क्षुल्लिका ही हो, या अन्य लोग उन्हें देख सकते हों, या आश्रय स्थान चारों ओर से खुला हो तो दो साधु और दो साध्वियों का एक स्थान पर रहना कल्पता है।

(259) An ascetic carrying alms-pot is allowed to take shelter in a garden or a Upashraya while it rains intermittently provided, (1) a male ascetic is not alone with a female ascetic, (2) a male ascetic is not alone with two female ascetics, (3) two male ascetics are not alone with one female ascetic, and (4) two male ascetics are not alone with two female ascetics. However, in case of the fourth condition two male and two female ascetics are allowed to stay at a place of shelter if there is also a fifth person staying at that place, irrespective of his or her being a child. They can also stay if the place of shelter is open on all sides and others can observe them freely.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वासावासं पज्जोसवियस्स निग्गंथस्स गाहावइ-कुलं पिंडवाय-पडियाए अणुप्पविट्ठस्स निगिज्झिय निगिज्झिय वुट्ठिकाए निवएज्जा, कप्पइ से अहे आरामंसि वा, अहे उवस्सयंसि वा जाव उवागच्छित्तए। तत्थ नो कप्पइ एगस्स निग्गंथस्स एगाए य अगारीए एगयओ चिट्ठित्तए, एवं चउभंगो। अत्थि य इत्थ केइ पंचमए थेरे वा, थेरिया वा, अन्नेसिं वा संलोए सपडिदुवारे एवं कप्पइ एगयओ चिट्ठित्तए॥२६०॥

(२६०) ऐसी ही उक्त परिस्थिति में साधु और श्राविका (महिला) के एक साथ रह सकने के संबंध में भी उपरोक्त नियम के चारों अंग (चारों भंग) लागू होते हैं।

(260) The above said four rules are also applicable for a male ascetic and a lay female under the said circumstances.

एवं चेव निग्गंथीए अगारस्स य भाणियव्वं॥२६१॥

(२६१) ऐसी ही परिस्थिति में साध्वी और श्रावक (पुरुष) के एक साथ रह सकने के संबंध में भी उपरोक्त नियम के चारों अंग लागू होते हैं।

(261) The above said four rules are also applicable for a female ascetic and a lay male under the said circumstances.

वासावासं पज्जोसवियाणं नो कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीण वा अपरिन्नएणं अपरिन्नयस्स अट्ठाए असणं वा १, पाणं वा २, खाइमं वा ३, साइमं वा ४, पडिग्गाहित्तए। से किमाहु भंते? 'इच्छा य परो अपरिन्नए भुंजिज्जा, इच्छा य परो न भुंजिज्जा'॥२६२॥

(२६२) वर्षावास में रहे साधु-साध्वी को अन्य साधु-साध्वी के कहे बिना या उन्हें पूर्व सूचना दिये बिना उनके लिए चारों प्रकार के अशन, पान, खाद्य व स्वाद्य पदार्थों को लेना नहीं कल्पता। क्योंकि इस प्रकार बिना पूछे लाए हुए पदार्थ को खाना या न खाना उनकी अपनी इच्छा पर निर्भर करता है।

(262) It is not allowed for a monk to accept food for other ascetics without a prior information from or to them. This is because it is only their option to eat or not such unasked for food.

वासावासं पज्जोसवियाणं नो कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा उदउल्लेण वा ससणिद्धेण वा काएणं असणं वा, पाणं वा, खाइमं वा, साइमं वा आहारित्तए॥२६३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२६३) वर्षावास में रहे साधु-साध्वियों को यदि उनके शरीर पर पानी टपकता हो या उनका शरीर गीला हो तो उन्हें किसी भी प्रकार का खाद्य आदि पदार्थ खाना, लेना नहीं कल्पता।

(263) An ascetic who is wet and/or water is dripping from his body is not allowed to eat anything.

से किमाहु भंते! सत्त सिणेहाययणा पन्नत्ता, तं जहा–पाणी, पाणीलेहा, नहा, नहसिहा, भमुहा, अहरोट्ठा, उत्तरोट्ठा। अह पुण एवं जाणिज्जा विगओदए मे काए, छिन्न-सिणेहे, एवं से कप्पइ असणं वा, पाणं वा, खाइमं वा, साइमं वा आहारित्तए॥२६४॥

प्रश्न–भन्ते ! ऐसा क्यों कहा ?

(२६४) उत्तर–इसका कारण यह है कि शरीर में सात स्थान ऐसे हैं जहाँ पानी टिक सकता है–१. दोनों हाथ, २. दोनों हाथ की रेखाएँ, ३. नाखून, ४. नाखून का अग्र भाग, ५. भौंहें, ६. दाढ़ी, और ७. मूँछ। जब साधु-साध्वी को यह आभास हो जाये कि उनका शरीर जल या आर्द्रतारहित हो गया है तभी उन्हें खाना कल्पता है।

(264) "Why so, Sire!" The reason for this is that in the human body there are seven such spots where water can stay and accumulate—1. both the hands, 2. lines on both palms, 3. nails, 4. tips of nails, 5. eye brows, 6. beard, and 7. moustache. The ascetics are allowed to eat when they are sure that the body is dry and free of any moisture.

आठ सूक्ष्म

वासावासं पज्जोसवियाणं इह खलु निग्गंथाण वा इमाइं अट्ठ-सुहुमाइं, जाइ छउमत्थेणं निग्गंथेण वा निग्गंथीए वा अभिक्खणं अभिक्खणं जाणियव्वाइं पासियव्वाइं पडिलेहियव्वाइं भवंति, तं जहा–पाणसुहुमं पणगसुहुमं बीयसुहुमं हरियसुहुमं पुप्फसुहुमं अंडसुहुमं लेणसुहुमं सिणेहसुहुमं॥२६५॥

(२६५) वर्षावास में रहे साधु-साध्वी को आठ सूक्ष्म अवश्य जानने चाहिये। प्रत्येक छद्मस्थ साधु-साध्वी को ये आठ सूक्ष्म बार-बार जानने-देखने-समझने चाहिए। ये आठ सूक्ष्म हैं–१. प्राण-सूक्ष्म, २. पनक-सूक्ष्म, ३. बीज-सूक्ष्म, ४. हरित-सूक्ष्म, ५. पुष्प-सूक्ष्म, ६. अण्ड-सूक्ष्म, ७. लयन-सूक्ष्म, और ८. स्नेह-सूक्ष्म।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Eight Micro-things

(265) Every ascetic should know about the eight micro-things. Every common ascetic should know, see, and understand again and again these eight micro-things. The eight micro-things are—1. micro-beings, 2. micro-fungi, 3. micro-seeds, 4. micro-vegetation, 5. micro-flowers, 6. micro-eggs, 7. micro-dwellings, and 8. micro-moisture.

से किं तं पाण-सुहुमे?

पाण-सुहुमे पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा–किण्हे, नीले, लोहिए हालिद्दे, सुक्किले। अत्थि कुंथु अणूद्धरी नामं जा ठिया अचलमाणा छउमत्थाणं निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा नो चक्खुफासं हव्वमागच्छइ। जा छउमत्थेणं निग्गंथेण वा निग्गंथीए वा अभिक्खणं अभिक्खणं जाणियव्वा पडिलेहियव्वा भवइ। से तं पाणसुहुमे॥१॥ ॥२६६॥

(२६६) प्रश्न–पहला सूक्ष्म–प्राण-सूक्ष्म क्या है ?

उत्तर–प्राण-सूक्ष्म वे त्रस जीव हैं जो इतने सूक्ष्म होते हैं कि सामान्यतया आँखों से दिखाई नहीं देते। ये पाँच प्रकार के बताए गए हैं–१. काले रंग के, २. नीले रंग के, ३. लाल रंग के, ४. पीले रंग के, और ५. सफेद रंग के। कुन्थुआ नामक एक सूक्ष्म जीव है जो स्थिर रहने पर साधारण साधु-साध्वी को दिखाई नहीं पड़ता। जब वह हिलने-डुलने या चलने लगता है तब दिखाई देने लगता है। इस कारण साधु-साध्वियों को ऐसे जीवों के विषय में जानना चाहिये, उन्हें देखने का प्रयत्न करना चाहिए और निरीक्षण कर उनके विषय की जानकारी को आत्मसात करना चाहिए।

(266) **First micro-thing**—Micro beings are those living beings which are so small that they are ordinarily invisible to the human eye. These are said to be of five types—1. black, 2. blue, 3. red, 4. yellow, and 5. white in colour. Kunthua or Anuddhari is a micro being that is invisible to the naked eye of an ascetic when it is stationary or unmoving. It is visible only when it stirs or moves. As such, the ascetics should know about such beings. They should try to observe them and gather and understand all information about them.

से किं तं पणग-सुहुमे?

पणग-सुहुमे पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा–किण्हे, नीले, लोहिए, हालिद्दे, सुक्किले। अत्थि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पणग-सुहुमे तद्दव-समाण-वन्नए नामं पण्णत्ते; जे छउमत्थेणं निग्गंथेण वा निग्गंथीए वा जाव पडिलेहियव्वे भवइ। से तं पणग-सुहुमे॥२॥ ॥२६७॥

(२६७) दूसरा सूक्ष्म–पनक सूक्ष्म–यह लीलन, फूलन, फफूँद, आदि सूक्ष्म जीव हैं। ये भी पाँच प्रकार के होते हैं–काले, नीले, लाल, पीले और, सफेद। अनेक पनक सूक्ष्म होने के साथ ही जिस पदार्थ पर उगते हैं उसी के समान रंग के होते हैं–इसलिये सामान्यतया आँखों से दिखाई नहीं देते। अतः साधु-साध्वियों को इनके विषय में जानना, देखना, समझना चाहिये।

(267) **Second micro-thing**—These are fungal growth of different types on various grains and other things. These are live micro-organisms. These are also of five types—black, blue, red, yellow, and white in colour. Besides being minute many of these fungi are of the same colour as the grains over which they grow. That is why they are normally invisible. As such, ascetics should see, know, and understand these.

से किं तं बीय-सुहुमे?

बीय-सुहुमे पंचवण्णे पण्णत्ते; तं जहा–किण्हे जाव सुक्किले। अत्थि बीय-सुहुमे कण्णिया-समाण-वन्नए नामं पण्णत्ते; जे छउमत्थेणं निग्गंथेण वा निग्गंथीए वा जाव पडिलेहियव्वे भवइ। से तं बीय-सुहुमे॥३॥ ॥२६८॥

(२६८) तीसरा सूक्ष्म–बीज सूक्ष्म–धूल के कण से भी छोटे गेहूँ, चावल, मूँग आदि धान्य कणों के बीजों को जो सामान्यतया आँखों से दिखाई नहीं देते बीज सूक्ष्म कहते हैं। ये भी पाँच प्रकार के बताए हैं–काले से सफेद तक पूर्ववत्। साधु-साध्वियों को इनके विषय में बार-बार जानना, देखना, समझना चाहिए।

(268) **Third micro-thing**—The tiny seeds that are smaller even as compared with sand particles are called micro-seeds. These are normally invisible. They are also of five types—black, blue, etc. As such, ascetics should see, know and understand these.

से किं तं हरिय-सुहुमे?

हरिय-सुहमे पंचविहे पण्णत्ते; तं जहा–किण्हे जाव सुक्किले। अत्थि हरिय-सुहुमे पुढवी-समाण-वन्नए; जे छउमत्थेणं निग्गंथेण वा निग्गंथीए वा अभिक्खणं अभिक्खणं जाणियव्वे जाव पडिलेहियव्वे भवइ। से तं हरिय-सुहुमे ॥४॥ ॥२६९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२६९) चौथा सूक्ष्म–हरित सूक्ष्म–ये सूक्ष्म वनस्पतियाँ होती हैं जो अपने आस-पास की चीजों के रंग से मेल खाते रंग की होने के कारण सामान्यतया दिखाई नहीं देतीं। ये भी काले से सफेद तक पाँच प्रकार की होती हैं। साधु-साध्वियों को इनके विषय में बार-बार जानना-देखना-समझना चाहिए।

(269) **Fourth micro-thing—**The tiny vegetation that are camouflaged due to similarity of colour and texture with the surrounding vegetation and is difficult to see is known as micro-vegetation. These are also of the above mentioned five types. Ascetics should see, know and understand these.

से किं तं पुप्फ-सुहुमे?

पुप्फ-सुहुमे पंचविहे पन्नत्ते, तं जहा–किण्हे जाव सुक्किले। अत्थि पुप्फ-सुहुमे रुक्ख-समाण-वन्ने नाम पण्णत्ते, जे छउमत्थेण निग्गंथेण वा निग्गंथीए वा अभिक्खणं अभिक्खणं जाणियव्वे जाव पडिलेहियव्वे भवइ। से तं पुप्फ-सुहुमे ॥५॥ ॥२७०॥

(२७०) पाँचवा सूक्ष्म–पुष्प सूक्ष्म–ये सूक्ष्म फूल होते हैं जो अपने आस-पास की चीजों के रंग से मेल खाते हुए रंग के होने के कारण सामान्यतया दिखाई नहीं देते। ये भी काले से सफेद तक पाँच रंग के होते हैं। श्रमण-श्रमणियों को इनके विषय में बार-बार जानना-देखना-समझना चाहिए।

(270) **Fifth micro-thing—**The tiny flowers that are camouflaged due to similarity of colour and texture with the surroundings and are difficult to see are known as micro-flowers. They are also of said five types. Ascetics should see, know and understand these.

से किं तं अंड-सुहुमे?

अंड-सुहुमे पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा–उद्दंसंडे, उक्कलियंडे, पिपीलियंडे, हलियंडे, हल्लोहलियंडे; जे छउमत्थेणं निग्गंथेण वा निग्गंथीए वा जाव पडिलेहियव्वे भवइ। से तं अंड-सुहुमे ॥६॥ ॥२७१॥

(२७१) छठा सूक्ष्म–अण्ड सूक्ष्म–ये छोटे जीवों के छोटे तथा ऐसे अण्डे होते हैं जो अपने आकार व रंग के कारण अपने परिवेश में घुले-मिले रहते हैं और सामान्यतया दिखाई नहीं पड़ते। ये पाँच प्रकार के कहे हैं–१. मधुमक्खी, खटमल आदि के अण्डे, २. मकड़ी के अण्डे,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३. चींटियों के अण्डे, ४. छिपकली के अण्डे, और ५. गिरगिट के अण्डे। श्रमण-श्रमणियों को इनके विषय में बार-बार जानना-देखना-समझना चाहिए।

(271) **Sixth micro-thing**—The tiny eggs of mini and micro beings that are camouflaged due to their miniscule size and similarity of colour with the surroundings and are difficult to see are know as micro eggs. These are of five types—1. of honey-bee, bed-bug, and other such insects, 2. of various spiders, 3. of various ants, 4. of small reptiles like domestic lizard, 5. of larger reptiles like chameleon. Ascetics should see, know and understand these.

से किं तं लेण-सुहुमे?

लेण-सुहुमे पंचविहे पन्नत्ते, तं जहा—उत्तिंग-लेणे, भिंगु-लेणे, उज्जुए, तालमूलए, संबोकावट्टे नामं पंचमे, जे छउमत्थेणं निग्गंथेण वा निग्गंथीए वा अभिक्खणं अभिक्खणं जाणियव्वे जाव पडिलेहियव्वे भवइ। से तं लेण-सुहुमे॥ ७॥ ॥२७२॥

(२७२) **सातवाँ सूक्ष्म—लयन सूक्ष्म**—ये छोटे प्राणियों के ऐसे बिल, घरौंदे, या आवास होते हैं जो छोटे तथा गोपन होने के कारण अकस्मात् दिखाई नहीं पड़ते। ये पाँच प्रकार के होते हैं—१. चींटी आदि के मिट्टी के ढेर के समान बिल (भिंगु लेणे), २. पानी सूखने पर धरती की सतह पर दरारें पड़ जाती हैं उनमें बनाए हुए बिल, ३. सामान्य सीधे छेद की तरह बनाए बिल, ४. ताड़ के पेड़ के समान मुँह पर छोटे और भीतर चौड़े बिल, ४. शंख की आकृति के बिल। साधु-साध्वियों को इनके विषय में जानना-देखना-समझना चाहिए।

(272) **Seventh micro-thing**—The small holes, nests and other such abodes of small creatures that are hidden and cannot be seen at a glance are known as micro-dwellings. These are of five types—1. with appearance like a heap of sand (ants, etc.), 2. made within the fractures in the dried soil, 3. cylindrical shaped, 4. cone shaped with an opening at the smaller end. 5. conch like irregular shaped. Ascetics should see, know and understand these.

से किं तं सिणेह-सुहुमे?

सिणेह-सुहुमे पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा—उस्सा हिमए महिया करए हरतणुए। जे छउमत्थेणं निग्गंथेण वा निग्गंथीए वा जाव पडिलेहियव्वे भवइ। से तं सिणेह-सुहुमे॥८॥ ॥२७३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२७३) आठवाँ सूक्ष्म–स्नेह सूक्ष्म–यह सूक्ष्म वह गीलापन है जो सामान्यतया आँखों से दिखाई नहीं देता। यह भी पाँच प्रकार का कहा है–१. ओस, २. हिम, ३. कुहरा, ४. ओले, और ५. हरतनुक (पसीने की तरह भूमि के भीतर से निकलने वाली बूँद या सीलन)। साधु-साध्वियों को इनके विषय में जानना-देखना-समझना चाहिए।

(273) **Eighth micro-thing—**The wetness that can not be observed with naked eye is known as micro-moisture. This is also of five types—1. dew, 2. snow, 3. fog or mist, 4. hail stones, 5. moisture oozing from walls and floors. Ascetics should see, know and understand these.

आज्ञा–अनुमति

वासावासं पज्जोसविए भिक्खु इच्छिज्जा गाहावइ-कुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा, नो से कप्पइ अणापुच्छित्ता आयरियं वा उवज्झायं वा थेरं वा पवत्तिं वा गणिं वा गणहरं वा गणावच्छेययं वा, जं वा पुरओ काउं विहरइ। कप्पइ से आपुच्छिउं आयरियं जाव जं वा पुरओ काउं विहरइ–इच्छामि णं भंते! तब्भेहिं अब्भुणुण्णाए समाणे गाहावइकुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा।

ते य से वियरेज्जा, एवं से कप्पइ गाहावइ-कुलं भत्ताए वा जाव पविसित्तए वा।

ते य से नो वियरेज्जा, एवं से नो कप्पइ गाहावइ-कुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा।

से किमाहु भंते? आयरिया पच्चवायं जाणंति॥२७४॥

(२७४) वर्षावास में रहे साधु-साध्वियों को आहार-पानी के लिए गृहस्थ कुलों की ओर जाने की इच्छा हो तो आचार्य, उपाध्याय, स्थविर, प्रवर्त्तक, गणि, गणमुख्य, गणावच्छेदक अथवा अन्य गुरुजन, जिनकी आज्ञा में वे चल रहे हों, उनसे आज्ञा, अनुमति लेकर जाना ही कल्पता है अन्यथा नहीं।

साधु गुरुजन से इस प्रकार पूछे, "हे भन्ते! आपकी आज्ञा मिले तो मैं आहार-पानी के लिए गृहस्थों के घरों की ओर जाने की इच्छा रखता हूँ।" इस पर यदि वे गुरुजन आज्ञा दें तो जाना-आना कल्पता है, अन्यथा नहीं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसका कारण यह है कि आचार्यादि गुरुजन बाहर आने-जाने में विघ्नादि (प्रत्यवाय) एवं उनके निवारण के उपाय के जानकार होते हैं।

Seeking Permission

(274) When they want to go to residential areas of citizens to collect eatables, the ascetics in monsoon-stay should seek permission of their leader, be it an Acharya, Upadhyaya, Sthavir, Pravartak, Gani, Ganamukhya, Ganavachchedak, or any other senior ascetic. It is not allowed to go for alms without permission. The ascetics who want to go for alms should say, "Sire! I want to go out for alms if you permit me." If the senior ascetic gives permission, he may go out otherwise not. This is because senior ascetics like Acharya, etc. have the knowledge of the possible hurdles while wandering out, and the means to overcome.

एवं विहारभूमिं वा, वियारभूमिं वा, अन्नं वा जं किं चि पओयणं एवं गामाणुगामं दुइज्जित्तए॥२७५॥

(२७५) इसी प्रकार विहार-स्थान, विचार-स्थान (स्थंडिल भूमि), स्थान परिवर्तन, यात्रा तथा अन्य प्रत्येक प्रयोजन के लिये उपरोक्त विधि से गुरुजनों की अनुमति प्राप्त करनी चाहिए।

(275) The ascetics should seek permission in the same manner when they want to go out for any other purpose viz. to study, to ease one self, to shift to another place of stay, etc.

वासावासं पज्जोसविए भिक्खु य इच्छिज्जा अन्नयरिं विगइं आहारित्तए नो से कप्पइ अणापुच्छित्ता आयरियं वा जाव गणावच्छेययं वा, जं वा पुरओ काउं विहरइ। कप्पइ से आपुच्छित्ता णं तं चेव–इच्छामि णं भंते! तुब्भेहिं अब्भणुन्नाए समाणे अन्नयरिं विगइं आहारित्तए, तं एवइयं वा एवं तिक्खुत्तो वा, ते य से वियरेज्जा एवं से कप्पइ अन्नयरिं विगइं आहारित्तए। ते य से नो वियरेज्जा एवं से नो कप्पइ अन्नयरिं विगइं आहारित्तए। से किमाहु भंते? आयरिया पच्चवायं जाणंति॥२७६॥

(२७६) साधु यदि किसी प्रकार की एक विगय सामान्य रूप में (निषिद्ध भोजन सामग्री) लेना चाहे तो आचार्यादि गुरुजन से पूछे, "हे भन्ते! आपकी आज्ञा मिले तो मैं कोई भी एक विगय को इतने प्रमाण में इतनी बार ग्रहण करना चाहता हूँ।" इस पर यदि स्वीकृति मिल जाए

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तो उस साधु को एक विगय उतनी ही मात्रा में लेना और खाना कल्पता है, अन्यथा नहीं। इसका कारण यह है कि आचार्यादि गुरुजन तत्संबंधी हानि-लाभ के जानकार होते हैं।

(276) If an asceitc desires to eat any specific prohibited item of food he should ask his senior, "Sire! if you permit me I would like to eat any one of the prohibited things in a specific quantity and frequency." If he gets permission he can eat one prohibited thing in permitted quantity and number of times. If he does not get permission he is not allowed to eat that or any other prohibited thing. This is because the seniors are aware of the good and bad consequences in this regard.

वासावासं पज्जोसविए भिक्खु य इच्छिज्जा अन्नयरियं तेइच्छं आउट्टित्तए तं चेव सव्वं ॥२७७॥

(२७७) साधु-साध्वी रुग्ण होने पर जब किसी भी प्रकार की चिकित्सा करवाने की इच्छा रखता हो तो उसे उपर्युक्त विधि से गुरुजनों की आज्ञा लेनी चाहिए।

(277) When sick and needing treatment, ascetics should seek permission of the seniors in the manner detailed above before taking any treatment.

वासावासं पज्जोसविए भिक्खु य इच्छिज्जा अन्नयरं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए, तं चेव सव्वं ॥२७८॥

(२७८) साधु-साध्वी जब किसी प्रकार का तप स्वीकार करना चाहे तो उसे उपर्युक्त विधि से गुरुजनों की आज्ञा लेना चाहिए।

(278) Ascetics should also seek permission from the seniors in the above mentioned manner before commencing any penance or other religious practics.

वासावासं पज्जोसविए भिक्खु य इच्छिज्जा अपच्छिम-मारणंतिय-संलेहणा-जूसणा-झूसिए भत्त-पाण-पडिआइक्खिए पाओवगए कालं अणवकंखमाणं विहरित्तए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा आहारित्तए वा, उच्चार-पासवणं वा परिट्ठावित्तए, सज्झायं वा करित्तए, धम्म-जागरणं वा जागरित्तए नो से कप्पइ अणापुच्छित्ता तं चेव ॥२७९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२७९) साधु-साध्वी जब मृत्यु की आकांक्षा रखे बिना अन्तिम मारणांतिक संलेखना (समाधिमरण) द्वारा शरीर को त्यागने की इच्छा से आहार-पानी त्यागकर पेड़ की तरह (पादपोपगम) निश्चल होकर रहना चाहे, इस हेतु कहीं आना-जाना चाहे, या उससे पहले आहार-पानी की इच्छा करे या मल-मूत्रादि का त्याग करना चाहे या स्वाध्याय करना चाहे या धार्मिक जागरणा करना चाहे तो उसे ये सभी काम पूर्वोक्त विधि से आचार्यादि गुरुजनों की आज्ञा लेकर करना ही कल्पता है, अन्यथा नहीं।

(279) When an ascetic wants to abandon food and drink, and become as immobile as a tree, in order to observe the Samlekhana-vow (fasting till death) without a death-wish, he must seek permission from the seniors in the manner detailed above. If for this purpose he wants to move out, wants to have food or water before the vow, wants to go out for defecation, wants to read or ponder, wants to keep awake during night for contemplation or other religious activities, he should seek permission from the seniors. Without permission it is not allowed to indulge in any of these activities.

वासावासं पज्जोसविए भिक्खु य इच्छिज्जा वत्थं वा पडिग्गहं वा कंबलं वा पायपुंछणं वा, अन्नयरिं वा उवहिं आयावित्तए वा पयावित्तए वा, नो से कप्पइ एगं वा अणेगं वा अपडिण्णवित्ता गाहावइ-कुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा। असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा आहारित्तए, बहिया विहारभूमिं वा वियारभूमिं वा, सज्झायं वा करित्तए, काउसग्गं वा ठाणं वा ठाइत्तए। अत्थि य इत्थ केइं अभिसमण्णागएज्ज अहासन्निहिए एगे वा अणेगे वा, कप्पइ से एवं वदित्तए--इमं ता अज्जो! तुमं मुहुत्तगं जाणाहि जाव ताव अहं गाहावइ-कुलं जाव काउसग्गं वा ठाणं वा ठाइत्तए। से य से पडिसुणिज्जा, एवं से कप्पइ, गाहावइ-कुलं तं चेव (सव्वं भाणियव्वं), से य से नो पडिसुणिज्जा, एवं से नो कप्पइ गाहावइ-कुलं जाव काउसग्गं वा ठाणं वा ठाइत्तए॥२८०॥

(२८०) साधु-साध्वी को अपने कोई वस्त्र, पात्र, कम्बल, पाद-पोंछन या अन्य कोई उपाधि को धूप में एक या अनेक बार तपाना हो, और उस काम के बीच ही आहार-पानी के लिए जाना हो, स्वाध्याय या कायोत्सर्ग या ध्यान करना हो तो साथ रहे एक या अधिक साधुओं से कहे, "हे आर्यो! आप यदि कुछ समय तक इन वस्तुओं पर ध्यान रखें तो मैं स्वाध्यायादि कर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लूँ अथवा गोचरी ले आऊँ या आहार कर लूँ आदि।'' यदि वे इस प्रार्थना को स्वीकार कर लें तो उसे वे उक्त सब काम करना कल्पता है, यदि वे स्वीकार नहीं करें तो वहाँ से जाना नहीं कल्पता है।

(280) When an ascetic wants to dry his cloths, alms-pots, blankets, napkins or any other such belongings by putting them in sun, once or many a time, and in between he wants to take leave for collecting alms, eating food, going out to defecate, study, do penance, or meditation, he should request to one or more of his fellow ascetics, "Brethern, if you will kindly keep an eye on these belongings of mine, I may do this specific work (mentioning the desired work)." If the fellow ascetics accept the request he may proceed for the specific work otherwise not.

अन्य नियम

वासावासं पज्जोसवियाणं नो कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा अणभिग्गहि सेज्जासणियं होत्तए। आयाणमेयं। अणभिग्गहिय-सेज्जासणियस्स अणुच्चाकुइयस्स अणट्ठाबंधिस्स अभियासणियस्स अणातावियस्स असमियस्स अभिक्खणं अभिक्खणं अप्पडिलेहणा-सीलस्स अप्पमज्जणा-सीलस्स तहा तहा णं संजमे दुराराहए भवइ। अणायाणमेयं अभिग्गहिय-सेज्जासणियस्स उच्चाकुवियस्स अट्ठाबंधिस्स मियासणियस्स आयाविस्स समियस्स अभिक्खणं अभिक्खणं पडिलेहणा-सीलस्स पमज्जणा-सीलस्स तहा तहा णं संजमे सुआराहए भवइ॥२८१॥

(२८१) साधु-साध्वियों को शय्या और आसन अपने अवग्रह–अधिकार में लेकर उनकी उचित देख-रेख किये बिना उपयोग में लाना नहीं कल्पता। शय्या और आसन को स्वीकार न करना; जमीन से ऊँचा नहीं रखना, स्थिर नहीं रखना, अकारण बार-बार बाँधना-खोलना, बिना सही नाप के ले रखना, समय-समय पर धूप नहीं दिखाना, निरीक्षण नहीं करना और साफ नहीं करना–ये सब काम दोषपूर्ण (आदान-कर्मबन्ध के कारण) हैं और इनसे संयम-नियम का पालन कठिन हो जाता है।

इनके विपरीत शय्यादि को अपने अवग्रह अधिकार में रखना आदि सावधानियों को निभाना निर्दोष है और उससे संयम नियम का पालन/आराधन सुगम होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Other Rules

(281) The ascetics are not allowed to use the mattress and seat-spread given to their care without proper upkeep. Proper upkeep includes—to keep these in ones own possession, to place them at a height when not in use, to keep them in orderly manner, not to pack or unpack them again and again, to accept them only after proper measurement, to put them in sun from time to time, to check them and clean regularly. If proper care is taken it is helpful in observing discipline and following rules. If not, it is detrimental to the observation of rules and discipline.

वासावासं पज्जोसवियाणं निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा तओ उच्चार-पासवण-भूमीओ पडिलेहित्तए, न तहा हेमंत-गिम्हासु, जहा णं वासावासेसु। से किमाहु भंते? वासावासएसु णं ओसन्नं पाणा य तणा य बीया य पणगा य, हरियायणा य भवंति॥२८२॥

(२८२) साधु-साध्वियों को तीन उच्छिष्ट (थूक, लघुशंका, शौच) त्यागने के लिए उचित स्थानों का निरीक्षण कर चुनना चाहिए। सर्दी और गर्मी में जितनी सावधानी की आवश्यकता नहीं होती उतनी सावधानी बरसात में करनी चाहिए। क्योंकि वर्षाकाल में पूर्व लिखित सूक्ष्म जीव व्यापक रूप से और बार-बार उत्पन्न होते हैं।

(282) The ascetics should inspect and select a suitable place for the three acts of releasing body waste (throwing phlegm or spit, urination, and defecation). More care should be taken during the monsoon season as compared to summer and winter. Because during the monsoons there is an abundance of micro-organisms detailed earlier and the atmosphere is conducive to their creation and growth.

वासावासं पज्जोसवियाणं कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा तओ मत्तगाइ गिण्हित्तए। तं जहा–उच्चार-मत्तए, पासवण-मत्तए, खेल-मत्तए॥२८३॥

(२८३) साधु-साध्वियों को थूकने, लघुशंका–मूत्र त्यागने, और शौच–मल त्यागने के लिए तीन प्रकार के पात्रों को लेना, रखना कल्पता है।

(283) The ascetics are allowed to take and keep three different types of pots for spitting, urinating and defecating.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वासावासं पज्जोसवियाणं नो कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा परं पज्जोसवणाओ गो-लोम-पमाणमित्ते वि केसे तं रयणिं उवायणावित्तए॥२८४॥

(२८४) साधु-साध्वियों को पर्युषण अर्थात् आषाढ़ी चातुर्मास के पचासवें दिन की रात्रि के बाद शरीर (मस्तक) पर केश नहीं रहने देना चाहिए। गाय के रोम जितने केश हों तो भी उन्हें नहीं रहने देना चाहिए। इस तिथि से पहले ही मुण्डन, लोच कर लेना चाहिए।

(284) During the Paryushan or after the fiftieth day since the end of the Ashadhi Chaturmas (the four months of summer) the ascetics should ensure that there is no hair on their bodies. Even if the hair are as small as the hair on a cows body, they should be removed. They should pluck or shave the hair before this date.

उपशमनकल्प

वासावासं पज्जोसवियाणं नो कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गंथीण वा परं पज्जोसवणाओ अहिगरणं वदित्तए, जो णं निग्गंथो वा निग्गंथी वा परं पज्जोसवणाओ अहिगरणं वयइ, से णं अकप्पेणं अज्जो वयसीति वत्तव्वे सिया। जो णं निग्गंथो वा निग्गंथी वा परं पज्जोसवणाओ अहिगरणं वयइ, से णं निज्जूहियव्वे सिया॥२८५॥

(२८५) साधु-साध्वियों को पर्युषण के बाद अधिकरण (हिंसा, कलह, असत्य आदि से युक्त) वाणी बोलना नहीं कल्पता। जो साधु-साध्वी इस प्रकार की असंयत वाणी बोलता है उससे कहना चाहिए, "हे आर्य! इस प्रकार की वाणी बोलना आचार-विरुद्ध है अतः आपका कथन उचित नहीं है, अकल्प्य है।" जो साधु-साध्वी पर्युषण के बाद दोषपूर्ण वाणी बोलता है वह अपने गण या समूह से निकाल देने योग्य होता है।

Self-discipline

(285) The ascetics should avoid indisciplined language during the monsoon stay, this includes violent, harsh, false, and other offending tones and insinuations. If some ascetic is found to use such a language he should be told, "Arya! This type of language is against the codes of conduct, you are violating the rule. It is not allowed." The ascetic who uses such faulty language during the monsoon stay is subject to removal from his group.

वासावासं पज्जोसवियाणं इह खलु निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा अज्जेवं कक्खडे कडुए वुग्गहे समुपज्जिज्जा सेहे राइणियं खामिज्जा, राइणिए वि सेहं खामिज्जा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

खामियव्वं खमावियव्वं, उवसमियव्वं उवसमावियव्वं, सम्मइ-संपुच्छणा-बहुलेणं होयव्वं। जो उवसमइ तस्स अत्थि आराहणा; जो न उवसमइ, तस्स नत्थि आराहणा। तम्हा अप्पणा चेव उवसमियव्वं। से किमाहु भंते? उवसमसारं खु सामण्णं॥२८६॥

(२८६) साधु-साध्वियों में परस्पर कोई भी कर्कश व कटु-क्लेश की भावना मन में उठी हो तो संवत्सरी के दिन लघुसाधु-साध्वियों को पूज्य गुरुजनों से क्षमा-याचना कर लेनी चाहिए। गुरुजनों को भी छोटे श्रमणों से क्षमा-याचना कर लेनी चाहिए। क्षमा-याचना करना, क्षमा प्रदान करना, शान्ति रखना और शान्ति के लिए प्रेरित करना चाहिए। साधु-साध्वियों को सन्मति रखकर विनयपूर्वक शास्त्र-सूत्र आदि के संबंध में परस्पर प्रश्न करने का अभ्यास रखना चाहिए। जो उपशम अथवा शान्ति धारण करता है उसकी आराधना होती है। जो कषाय भावों का त्याग नहीं करता उसकी आराधना नहीं होती। अतः अपने आप ही कषाय भावों का त्यागकर शान्ति धारण करनी चाहिए। क्योंकि श्रमण धर्म का सार ही क्षमा है।

(286) If there is any offending or hard or ill feeling in the mind of an ascetic he should on the day of Samvatsari seek forgiveness from his seniors. The seniors should also seek forgiveness from the juniors. Forgiveness should be sought and offered, peace should be kept and promoted. The ascetics should indulge in discussions about texts and aphorisms with mutual goodwill and humility. Those who keep discipline and are tranquil are successful in their practices. Those who do not give up passions do not succeed in their practices. As such, one should get rid of passions and become serene; because to forgive is the essence of Shraman Dharma.

वासावासं पज्जोसवियाणं कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीणं वा तओ उवस्सया गिण्हित्तए तं जहा—वेउव्विया पडिलेहा साइज्जिया पमज्जणा॥२८७॥

(२८७) साधु-साध्वियों को वर्षावास में तीन उपाश्रय ग्रहण करना कल्पता है। इनमें से दो उपाश्रयों का समय-समय पर निरीक्षण-परीक्षण करते रहना चाहिए और तीसरा, जो उपयोग में आ रहा हो, उसकी बार-बार देखभाल करते रहना चाहिए।

(287) The ascetics should accept three different places of stay (Upashraya) during the monsoon stay. Out of these, two should be inspected and examined from time to time and the third, the one in use, should be regularly looked after.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वासावासं पज्जोसवियाणं कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा अन्नयरिं दिसं वा अणुदिसं वा अवगिज्झिय भत्तपाणं गवेसित्तए। से किमाहु भंते? ओसन्नं समणा भगवंतो वासासु तप-संपउत्ता भवंति। तवस्सी दुब्बले किलंते मुच्छिज्ज वा पवडिज्ज वा तामेव दिसं वा अणुदिसं वा समणा भगवंतो पडिजागरंति॥२८८॥

(२८८) साधु-साध्वियों को किसी एक दिशा या विदिशा की ओर पहले से लक्ष्य करके गुरुजनों की आज्ञा लेकर आहार-पानी के लिए जाना कल्पता है। इसका कारण यह है कि वर्षावास में साधु-साध्वी विशेष रूप से तपस्या में लगे रहते हैं। तपस्वी का शरीर दुर्बल तथा थका हुआ होता है। वे आहार-पानी के लिए जाते समय राह में गिर सकते हैं, बेहोश हो सकते हैं। ऐसा कुछ हो जाय और उनके जाने की दिशा पहले से ज्ञात हो तो अन्य साधुगण उनकी खोज-खबर ले सकते हैं।

(288) The Ascetics should predetermine the direction in which to go to collect alms and proceed after taking permission from the elders. This is because during the monsoon stay the ascetics indulge in penances more often and they get weak and tired. While going out to collect alms they may fall down or become unconscious on the way. In such cases if the direction in which they have gone is known, other ascetics may proceed to help them.

वासावासं पज्जोसवियाणं कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीणं वा चत्तारि पंच जोयणाइं गंतुं पडियत्तए। अंतरा वि से कप्पइ वत्थवए; नो से कप्पइ तं रयणिं तत्थेव उवायणावित्तए॥२८९॥

(२८९) साधु-साध्वियों को बीमार की सेवा या औषधि आदि के लिये अधिकतम चार-पाँच योजन (50-60 किमी.) तक जाकर वापस आना कल्पता है। इसी सीमा में आवश्यक होने पर वहाँ ठहरना भी कल्पता है। परन्तु सेवा कार्य पूरा हो जाने पर एक रात भी वहाँ बिताना नहीं कल्पता।

(289) For the purpose of nursing an ailing ascetic or to get the required medicine the ascetics are allowed to go to a maximum distance of 4 to 5 Yojanas (approx 50 to 60 kms.) and return. If need be they can stay overnight upto this distance. However, they are not allowed to extend the stay, even for a night, once the work is concluded.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपसंहार

इच्चेयं संवच्छरियं थेरकप्पं अहासुत्तं अहाकप्पं अहामग्गं अहातच्चं सम्मं काएण फासित्ता पालित्ता सोभित्ता तीरित्ता किट्टित्ता आराहित्ता आणाए अणुपालित्ता अत्थेगइया समणा निग्गंथा तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झंति, बुज्झंति, मुच्चंति, परिनिव्वायंति, सव्वदुक्खाणमंतं करेंति। अत्थेगइया दोच्चेणं भवग्गहणेणं सिज्झंति जाव सव्वदुक्खाणमंतं करेंति। अत्थेगइया तच्चेणं भवग्गहणेणं जाव अंतं करेंति; सत्तट्ठ-भवग्गहणाइं पुण नावक्कमंति॥२९०॥

(२९०) इस तरह से साम्वत्सरिक स्थविरकल्प के सूत्र, आचार-शास्त्र के नियम और धर्म मार्ग के अनुसार प्राप्त उपदेश को भली प्रकार से मन, वचन, काया से आचरण कर, पालन कर, शुद्ध कर या शोभित हो इस तरह से जीवन भर पालन कर, दूसरों के सामने प्रतिपादन कर, पूर्ण रूप से आराधना कर और भगवान की आज्ञा के अनुसार चलकर कितने ही श्रमण उसी भव में सिद्ध-बुद्ध-मुक्त हो, परिनिर्वाण को प्राप्त कर, सभी दुःखों का अन्त करते हैं। कितने ही दूसरे भव में, कितने ही तीसरे भव में सिद्ध होते हैं और कितने ही अधिक से अधिक सात या आठ भवों में सिद्ध हो जाते हैं।

Conclusion

(290) These rules of the Sthavirkalpa (the code of conduct for the ascetics) and the Canons relating to conduct, and discourses conforming to the spiritual path, if followed and acted upon with mind, speech and body throughout the life by an ascetic help his endeavour for liberation. After perfecting them fully, and by following the tenets of the Jina many ascetics during this life, many after one, two or at the most eight reincarnations end all their sorrows and get liberated.

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे रायगिहे नयरे गुणसिलए चेइए बहूणं समणाणं बहूणं समणीणं बहुणं सावयाणं बहुणं सावियाणं बहूणं देवाणं बहूणं देवीणं मज्झगए चेव एवमाइक्खइ, एवं भासइ, एवं पण्णवेइ एवं परूवेइ पज्जोवासणाकप्पो नामऽज्झयणं सअट्ठं सहेउयं सकारणं ससुत्तं सअत्थं सउभय सवागरणं भुज्जो भुज्जो उवदंसेइ; त्ति बेमि॥२९१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२९१) उस काल उस समय में राजगृह नगर के गुणशीलक नाम के चैत्य में बहुत से श्रमण-श्रमणियों, श्रावक-श्राविकाओं और देव-देवियों के बीच बैठे श्रमण भगवान महावीर इस प्रकार बोलते हैं, प्रतिपादन करते हैं, और प्ररूपण करते हैं। वे पज्जोसवणाकल्प (पर्युपशमन या क्षमा प्रधान कल्प) नामक अध्ययन को अर्थ, हेतु कारण व सूत्रार्थ सहित और विवेचनापूर्वक बार-बार वर्णन करते हैं–ऐसा मैं कहता हूँ।

(291) During that period of time Shraman Bahagvan Mahavir, sitting in the assembly of numerous ascetics, common people, and gods and goddesses, thus spoke, propagated and established. He repeated the Pajjosavankalpa Chapter with its import, its mode of observation, its proper rationale, its causes, its text and meaning alongwith elaborations and explanations. So I state.

卐 पज्जोवासणा-कप्पो समत्तो 卐

卐 अट्ठमऽज्झयणं समत्तं 卐

卐 पर्युषणाकल्प समाप्त 卐

दशाश्रुतस्कंध सूत्र का आठवाँ अध्ययन समाप्त हुआ।

Thus ends the Paryushankalpa

Thus ends the eighth chapter of Dashashrutskandha

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिशिष्ट
(Appendix)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिशिष्ट १

तीर्थंकरों के पंच कल्याणक

तीर्थंकर की आत्मा संसार में परम विशिष्ट लोकोत्तम आत्मा होती है। उनका जन्म केवल स्वयं के कल्याण हेतु नहीं, किन्तु सम्पूर्ण विश्व के कल्याण का कारण होता है, इसलिए तीर्थंकर देव का जन्म 'जन्म कल्याणक' कहलाता है। इसी प्रकार उनका गृह-त्याग कर प्रव्रजित होना, केवलज्ञान प्राप्त करना और संसार से मुक्त होकर निर्वाण प्राप्त करना भी 'कल्याणक' (कल्याणकारी) कहा जाता है।

जैन सूत्रों में सभी तीर्थंकरों के पंच कल्याणक का उल्लेख मिलता है :

१. च्यवन कल्याणक–मनुष्य जन्म धारण करने हेतु स्वर्ग (आदि) से आत्मा का प्रस्थान 'च्यवन कल्याणक' कहलाता है। इसी समय उनकी माता चौदह शुभ स्वप्न देखती हैं। त्रिशला क्षत्रियाणी के गर्भ-प्रत्यारोपण की घटना का सम्बन्ध सिर्फ भगवान महावीर के जीवन से ही है।

२. जन्म कल्याणक–माता के गर्भ से जन्म ग्रहण करना। जन्म के समय छप्पन दिशाकुमारियाँ आकर सूतिका कर्म करती हैं। सौधर्मेन्द्र अपनी देह के पाँच रूप बनाकर तीर्थंकर शिशु को मेरु पर्वत पर ले जाकर उनका जन्म अभिषेक जन्मोत्सव मनाते हैं।

३. दीक्षा कल्याणक–तीर्थंकर जब गृह त्याग कर दीक्षा ग्रहण करते हैं तब देव मनुष्य सभी उत्सव के रूप में उनकी विशाल शोभा यात्रा निकालते हैं। और फिर तीर्थंकर भगवान सर्व आभूषण आदि सांसारिक वस्तुओं का परित्याग कर स्वयं के हाथ से अपने केशों का लुंचन (पंचमुष्टि लोच) करते हैं।

४. केवलज्ञान कल्याणक–तप-ध्यान संयम की उत्कृष्ट साधना द्वारा चार घातिया कर्म का क्षय करके लोकालोक प्रकाशी निराबाध केवलज्ञान, केवलदर्शन की प्राप्ति होने पर देव, देवेन्द्र, मानव सभी भगवान के दर्शन करने आते हैं। समवसरण की रचना कर भगवान का केवल महोत्सव मनाया जाता है।

५. निर्वाण कल्याणक–समस्त कर्मों का नाश कर तीर्थंकर देव देह-मुक्त होकर मोक्ष को प्राप्त होते हैं। तब वह देह विसर्जन 'निर्वाण कल्याणक' के रूप में मनाया जाता है। (देखो चित्र)

APPENDIX 1

THE FIVE AUSPICIOUS EVENTS IN THE LIFE OF THE TIRTHANKAR

A Tirthankar is a highly elevated and supremely perfect soul. His life is not only for purification and elevation of his own soul, but also the source of inspiration for development and consequent welfare of humanity. As such, the birth of a Tirthankar is termed as 'Janma Kalyanak' or the auspicious birth. Same is true for other such important events in his life including renunciation and liberation.

In the Jain scriptures there is mention of five such auspicious events in the life of every Tirthankar:

1. Chyavan Kalyanak (the auspicious descent)—To take birth as a human being, the soul descends from various dimensions of gods. This event is known as the auspicious descent. At this moment of descent the conceiving mother dreams of fourteen auspicious things. The incident of transplanting of foetus in the womb of Trishla Kshatriyani is an incident unique to Bhagavan Mahavir's life.

2. Janma Kalyanak (the auspicious birth)—This is the event of taking birth. After the birth fifty six goddesses of directions arrive and do the post birth cleaning and other rituals. The king of gods creates his five look-alike bodies and takes the new born Tirthankar to the Meru Mountain for the ritual celebrations of post birth annointing.

3. Diksha Kalyanak (the auspicious renunciation)—When a Tirthankar renounces his mundane abode and life-style and proceeds to accept Diksha (initiation into the ascetic way of life), gods and humans assemble and take out a procession heading toward the spot of initiation. After arriving there the Tirthankar gives away all his possessions including ornaments and apparels, and pulls out five fistful of hair with his own hands.

4. Kewalajnana Kalyanak (the auspicious omniscience)—Destroying the four vitiating karmas with the help of his superlative practices of discipline, penance, and meditation, the Tirthankar acquires the all enlightening and unhindered knowledge and perception and becomes an omniscient. At this time gods and humans come to behold him and be blessed. The gods create a divine pavilion (Samavasaran) and celebrate the event.

5. Nirvana Kalyanak (the auspicious liberation)—Destroying all the karmas the Tirthankar leaves his mundane body and gets liberated. This event of the disintegration of the physical body is celebrated as the Nirvana Kalyanak or the auspicious liberation. (Illustrations overleaf).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिशिष्ट २ APPENDIX 2

तीर्थंकर परिचय
DETAILS ABOUT TIRTHANKARS

संख्या No.	नाम Name	लांछन Symbcl	वंश नाम Family Name	पिता Father	माता Mother
1.	ऋषभदेव Rishabhdev	वृषभ Bull	इक्ष्वाकु Ikshvaku	नाभि Nabhi	मरुदेवी Marudevi
2.	अजितनाथ Ajitnath	गज Elephant	इक्ष्वाकु Ikshvaku	जितशत्रु Jitshatru	विजया Vijaya
3.	संभवनाथ Sambhavnath	अश्व Horse	इक्ष्वाकु Ikshvaku	जितारि Jitari	सेना Sena
4.	अभिनन्दन Abhinandan	बंदर Monkey	इक्ष्वाकु Ikshvaku	संवर Samvar	सिद्धार्था Siddhartha
5.	सुमतिनाथ Sumatinath	क्रौंच-पक्षी Kraunch-bird	इक्ष्वाकु Ikshvaku	मेघरथ Meghrath	सुमंगला Sumangala
6.	पद्मप्रभ Padmaprabh	पद्म Lotus	इक्ष्वाकु Ikshvaku	श्रीधर Shridhar	सुसीमा Susima
7.	सुपार्श्वनाथ Suparshvanath	स्वस्तिक Swastika	इक्ष्वाकु Ikshvaku	प्रतिष्ठ Pratishtha	पृथ्वी Prithvi
8.	चन्द्रप्रभ Chandraprabh	चन्द्र The Moon	इक्ष्वाकु Ikshvaku	महसेन Mahasen	लक्ष्मणा Laxmana
9.	सुविधिनाथ Suvidhinath	मकर Crocodile	इक्ष्वाकु Ikshvaku	सुग्रीव Sugriv	रामा Rama
10.	शीतलनाथ Shitalnath	श्रीवत्स Shrivatsa	इक्ष्वाकु Ikshvaku	दृढ़रथ Dridhrath	नंदा Nanda
11.	श्रेयांसनाथ Shreyansanath	गेंडा Rhinocerous	इक्ष्वाकु Ikshvaku	विष्णु Vishnu	विष्णु Vishnu

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

12.	वासुपूज्य Vasupujya	महिष Buffalo	इक्ष्वाकु Ikshvaku	वासुपूज्य Vasupujya	जया Jaya
13.	विमलनाथ Vimalnath	शूकर Boar	इक्ष्वाकु Ikshvaku	कृतवर्म Kritvarm	स्यामा Syama
14.	अनन्तनाथ Anantnath	बाजपक्षी Falcon	इक्ष्वाकु Ikshvaku	सिंहसेन Simhasen	सुयशा Suyasha
15.	धर्मनाथ Dharmnath	वज्र Vajra	इक्ष्वाकु Ikshvaku	भानु Bhanu	सुव्रता Suvrata
16.	शान्तिनाथ Shantinath	मृग Deer	इक्ष्वाकु Ikshvaku	विश्वसेन Vishvasen	अचिरा Achira
17.	कुन्थुनाथ Kunthunath	बकरा Goat	इक्ष्वाकु Ikshvaku	सूर Sur	श्री Shri
18.	अरनाथ Arnath	नन्दावर्त Nandavart	इक्ष्वाकु Ikshvaku	सुदर्शन Sudarshan	देवी Devi
19.	मल्लिनाथ Mallinath	कुम्भ Urn	इक्ष्वाकु Ikshvaku	कुम्भ Kumbh	प्रभावती Prabhavati
20.	मुनिसुव्रत Munisuvrat	कछुवा Turtle	हरिवंश Harivamsh	सुमित्र Sumitra	पद्मावती Padmavati
21.	नमिनाथ Naminath	नील कमल Blue Lotus	इक्ष्वाकु Ikshvaku	विजय Vijaya	वप्रा Vapra
22.	अरिष्टनेमि Arishtanemi	शंख Conchshell	हरिवंश Harivamsh	समुद्रविजय Samudravijaya	शिवादेवी Shivadevi
23.	पार्श्वनाथ Parshvanath	सर्प Snake	इक्ष्वाकु Ikshvaku	अश्वसेन Ashvasen	वामादेवी Vamadevi
24.	महावीर Mahavir	सिंह Lion	इक्ष्वाकु Ikshvaku	सिद्धार्थ Siddhartha	त्रिशला Trishala

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संख्या No.	च्यवन स्थान Source of Descent	च्यवन तिथि Date of Descent	जन्म भूमि Place of Birth	जन्म तिथि Date of Birth	दीक्षा तिथि Date of Renunciation	ज्ञान स्थान Place of Enlightenment	ज्ञान तिथि Date of Enlightenment
1.	सर्वार्थसिद्ध Sarvarthasiddha	4—II—4	विनीता Vinita	1—II—8	1—II—8	पुरिमताल Purimtal	12—II—11
2.	विजय Vijaya	2—I—13	विनीता Vinita	11—I—8	11—II—9	अयोध्या Ayodhya	10—II—11
3.	सप्तम ग्रैवेयक Seventh Graiveyak	12—I—8	सावत्थी Savathi	9—I—14	9—I—15	सावत्थी Savathi	8—II—5
4.	जयंत Jayant	2—I—4	विनीता Vinita	11—I—2	11—I—2	अयोध्या Ayodhya	10—II—14
5.	जयंत Jayant	5—I—2	विनीता Vinita	2—I—8	2—I—9	अयोध्या Ayodhya	1—II—11
6.	नवम ग्रैवेयक Ninth Graiveyak	11—II—8	कौशांबी Kaushambi	8—II—12	8—II—13	कौशांबी Kaushambi	1—I—15
7.	षष्ठ ग्रैवेयक Sixth Graiveyak	6—II—8	वाराणसी Varanasi	3—I—12	3—I—13	वाराणसी Varanasi	12—II—6
8.	वैजयन्त Vaijayant	1—II—5	चन्द्रपुरी Chandrapuri	10—II—12	10—II—13	चन्द्रपुरी Chandrapuri	12—II—7
9.	आनत Anat	12—II—9	काकंदी Kakandi	9—II—5	9—II—6	काकंदी Kakandi	8—I—3
10.	प्राणत Pranat	2—II—6	भद्दिलपुर Bhaddilpur	11—II—12	11—II—12	भद्दिलपुर Bhaddilpur	10—II—14
11.	अच्युत Achyut	3—II—6	सिंहपुरी Simhapuri	12—II—12	12—II—13	सिंहपुरी Simhapuri	11—II—15
12.	प्राणत Pranat	3—I—9	चम्पापुरी Champapuri	12—II—14	12—I—14	चम्पापुरी Champapuri	11—I—2

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

13.	सहस्रार Sahasrar	2—I—12	कम्पिलपुर Kampilpur	11—I—3	11—I—4	कम्पिलपुर Kampilpur	10—I—6
14.	प्राणत Pranat	5—II—7	विनीता Vinita	2—II—13	2—II—14	अयोध्या Ayodhya	2—II—14
15.	विजय Vijaya	2—I—7	रत्नपुरी Ratnapuri	11—I—3	11—I—13	रत्नपुरी Ratnapuri	10—I—15
16.	सर्वार्थसिद्ध Sarvarthasiddha	6—II—7	हस्तिनापुर Hastinapur	3—II—13	3—II—14	हस्तिनापुर Hastinapur	10—I—9
17.	सर्वार्थसिद्ध Sarvarthasiddha	5—II—9	हस्तिनापुर Hastinapur	2—II—14	1—II—5	हस्तिनापुर Hastinapur	1—I—3
18.	सर्वार्थसिद्ध Sarvarthasiddha	12—I—2	हस्तिनापुर Hastinapur	9—I—10	9—I—11	मिथिला Mithila	8—I—12
19.	जयंत Jayant	12—I—4	मिथिला Mithila	9—I—11	9—I—11	मथुरा Mathura	9—I—11
20.	अपराजित Aparajit	5—I—15	राजगृह Rajagriha	3—II—8	12—I—12	राजगृह Rajagriha	12—II—12
21.	प्राणत Pranat	4—I—15	मथुरा Mathura	5—II—8	4—II—9	मथुरा Mathura	9—I—11
22.	अपराजित Aparajit	8—II—12	सौरिपुर Sauripur	5—I—5	5—I—6	गिरनार Girnar	7—II—15
23.	प्राणत Pranat	1—II—4	वाराणसी Varanasi	10—II—10	10—II—11	वाराणसी Varanasi	1—II—4
24.	प्राणत Pranat	4—I—6	क्षत्रियकुण्ड Kshatriyakund	1—II—13	9—II—10	ऋजुबालुका नदी Rijubaluka River	2—II—10

नोट : तिथियों के उल्लेख में प्रथम संख्या माह की है-1= चैत्र, 2 = वैशाख, 3 = ज्येष्ठ, 4 = आषाढ़, 5 = श्रावण, 6 = भाद्रपद, 7 = आसोज, 8 = कार्तिक, 9 = मंगसर, 10 = पौष, 11 = माघ, 12 = फाल्गुन।
दूसरी संख्या पक्ष की है-शुक्ल पक्ष = I, कृष्ण पक्ष = II ।
तीसरी संख्या 1 से 15 तिथियों की है।

Note : In the mention of dates the first number indicates month—1 = Chaitra, 2 = Vaishakh, 3 = Jyeshtha, 4 = Ashadh, 5 = Shravan, 6 = Bhadrapada, 7 = Asoj, 8 = Kartik, 9 = Mangsar, 10 = Paush, 11 = Magh, 12 = Falgun.
The second number indicates the fortnight—Bright half of the month = I, Dark half of the month = II.
The third number indicates the dates from 1 to 15.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संख्या No.	निर्वाण स्थान Place of Nirvana	निर्वाण तिथि Date of Nirvana	छद्मस्थ काल Period of Practices	आयुष्य Age	प्रधान गणधर Chief Disciple	गणधरों की संख्या Number of Disciples	साधु संख्या Number of Ascetics
1.	अष्टापद गिरि Ashtapad Mount	11—II—13	1,000 वर्ष 1,000 Years	84 लाख पूर्व 84 Lac Purva	पुण्डरीक Pundarik	84	84 हजार 84 Thousand
2.	सम्मेत शिखर Sammet Shikhar	1—I—5	12 वर्ष 12 Years	72 लाख पूर्व 72 Lac Purva	सिंहसेन Simhasen	95	1 लाख 1 Lac
3.	सम्मेत शिखर Sammet Shikhar	1—I—5	14 वर्ष 14 Years	60 लाख पूर्व 60 Lac Purva	चारु Charu	102	2 लाख 2 Lac
4.	सम्मेत शिखर Sammet Shikhar	2—I—8	18 वर्ष 18 Years	50 लाख पूर्व 50 Lac Purva	वज्रनाभ Vajranabh	116	3 लाख 3 Lac
5.	सम्मेत शिखर Sammet Shikhar	1—I—9	20 वर्ष 20 Years	40 लाख पूर्व 40 Lac Purva	चमर Chamar	100	3.2 लाख 3.2 Lac
6.	सम्मेत शिखर Sammet Shikhar	9—II—11	6 माह 6 Months	30 लाख पूर्व 30 Lac Purva	सुव्रत Suvrat	107	3.3 लाख 3.3 Lac
7.	सम्मेत शिखर Sammet Shikhar	12—II—7	9 माह 9 Months	20 लाख पूर्व 20 Lac Purva	विदर्भ Vidarbha	95	3 लाख 3 Lac
8.	सम्मेत शिखर Sammet Shikhar	6—II—7	3 माह 3 Months	10 लाख पूर्व 10 Lac Purva	दत्त Datta	93	2.5 लाख 2.5 Lac
9.	सम्मेत शिखर Sammet Shikhar	6—I—9	4 माह 4 Months	2 लाख पूर्व 2 Lac Purva	वराहक Varahak	88	2 लाख 2 Lac
10.	सम्मेत शिखर Sammet Shikhar	2—II—2	3 माह 3 Months	1 लाख पूर्व 1 Lac Purva	आनन्द Anand	81	1 लाख 1 Lac
11.	सम्मेत शिखर Sammet Shikhar	5—II—3	2 माह 2 Months	84 लाख वर्ष 84 Lac Years	गोशुभ Goshubh	76	84 हजार 84 Thousand

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

12.	चम्पापुरी Champapuri	4—I—14	1 माह 1 Month	72 लाख वर्ष 72 Lac Years	सुभूम Subhum	66	72 हजार 72 Thousand
13.	सम्मेत शिखर Sammet Shikhar	4—II—7	2 माह 2 Months	60 लाख वर्ष 60 Lac Years	मन्दर Mandar	57	68 हजार 68 Thousand
14.	सम्मेत शिखर Sammet Shikhar	1—I—5	3 वर्ष 3 Years	30 लाख वर्ष 30 Lac Years	यशोधर Yashodhar	50	66 हजार 66 Thousand
15.	सम्मेत शिखर Sammet Shikhar	3—I—5	2 वर्ष 2 Years	10 लाख वर्ष 10 Lac Years	अरिष्ट Arishta	43	64 हजार 64 Thousand
16.	सम्मेत शिखर Sammet Shikhar	3—II—13	1 वर्ष 1 Year	1 लाख वर्ष 1 Lac Years	चक्रायुध Chakrayudh	36	62 हजार 62 Thousand
17.	सम्मेत शिखर Sammet Shikhar	2—II—1	16 वर्ष 16 Years	95 हजार वर्ष 95 Thousand Years	स्वयंभू Swayambhu	35	60 हजार 60 Thousand
18.	सम्मेत शिखर Sammet Shikhar	9—I—10	3 वर्ष 3 Years	84 हजार वर्ष 84 Thousand Years	कुंभ Kumbh	33	50 हजार 50 Thousand
19.	सम्मेत शिखर Sammet Shikhar	12—I—12	1 दिन 1 Day	55 हजार वर्ष 55 Thousand Years	अभीक्षक Abhikshak	28	40 हजार 40 Thousand
20.	सम्मेत शिखर Sammet Shikhar	3—II—9	11 माह 11 Months	30 हजार वर्ष 30 Thousand Years	इन्द्र Indra	18	30 हजार 30 Thousand
21.	सम्मेत शिखर Sammet Shikhar	2—II—10	9 माह 9 Months	10 हजार वर्ष 10 Thousand Years	शुभ Shubh	17	20 हजार 20 Thousand
22.	गिरनार Girnar	4—I—8	54 दिन 54 Days	1 हजार वर्ष 1 Thousand Years	वरदत्त Varadatta	11	18 हजार 18 Thousand
23.	सम्मेत शिखर Sammet Shikhar	5—I—8	84 दिन 84 Days	100 वर्ष 100 Years	दिन्न Dinna	10	16 हजार 16 Thousand
24.	पावापुरी Pavapuri	8—II—15	1/2 वर्ष 1/2 Year	72 वर्ष 72 Years	इन्द्रभूति Indrabhuti	11	14 हजार 14 Thousand

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संख्या No.	प्रधान साध्वी Head of Female Ascetics	साध्वी संख्या Number of Female Ascetics	श्रावक संख्या Male Laity	श्राविका संख्या Female Laity	शरीर वर्ण Body Colour	शासन देव God of Organisation	शासन देवी Goddess of Organisation
1.	ब्राह्मी Brahmi	3 लाख 3 Lac	3.5 लाख 3.5 Lac	5.54 लाख 5.54 Lac	सुवर्ण Golden	गोमुख Gomukh	चक्रेश्वरी Chakreshwari
2.	फाल्गु Phalgu	3.3 लाख 3.3 Lac	2.98 लाख 2.98 Lac	5.45 लाख 5.45 Lac	सुवर्ण Golden	महायक्ष Mahayaksha	अजितबाला Ajitbala
3.	श्यामा Shyama	3.36 लाख 3.36 Lac	9.93 लाख 9.93 Lac	6.36 लाख 6.36 Lac	सुवर्ण Golden	त्रिमुख Trimukh	दुरितारि Duritari
4.	अजिता Ajita	6.3 लाख 6.3 Lac	2.88 लाख 2.88 Lac	5.27 लाख 5.27 Lac	सुवर्ण Golden	यक्षनायक Yakshanayak	काली Kali
5.	काश्यपी Kashyapi	5.3 लाख 5.3 Lac	2.81 लाख 2.81 Lac	5.16 लाख 5.16 Lac	सुवर्ण Golden	तुंबुरू Tumburu	महाकाली Mahakali
6.	रति Rati	4.2 लाख 4.2 Lac	2.76 लाख 2.76 Lac	5.05 लाख 5.05 Lac	रक्त Red	कुसुम Kusum	श्यामा Shyama
7.	सोमा Soma	4.3 लाख 4.3 Lac	2.57 लाख 2.57 Lac	4.93 लाख 4.93 Lac	सुवर्ण Golden	मातंग Matang	शान्ता Shanta
8.	सुमना Sumana	3.8 लाख 3.8 Lac	2.5 लाख 2.5 Lac	4.99 लाख 4.99 Lac	श्वेत White	विजय Vijaya	भृकुटि Bhrikuti
9.	वारुणि Varuni	1.2 लाख 1.2 Lac	2.29 लाख 2.29 Lac	4.71 लाख 4.71 Lac	श्वेत White	अजित Ajit	सुतारका Sutaraka
10.	सुयशा Suyasha	1 लाख 1 Lac	2.89 लाख 2.89 Lac	4.58 लाख 4.58 Lac	श्वेत White	ब्रह्मा Brahma	अशोका Ashoka
11.	धारिणी Dharini	1.03 लाख 1.03 Lac	2.79 लाख 2.79 Lac	4.48 लाख 4.48 Lac	सुवर्ण Golden	यक्षराज Yaksharaj	मानवी Manavi
12.	धरणी Dharani	1 लाख 1 Lac	2.15 लाख 2.15 Lac	4.36 लाख 4.36 Lac	रक्त Red	कुमार Kumar	चंडा Chanda

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

13.	धरा Dhara	1.008 लाख 1.008 Lac	2.08 लाख 2.08 Lac	4.24 लाख 4.24 Lac	सुवर्ण Golden	षण्मुख Shanmukh	विदिता Vidita
14.	पद्मा Padma	62 हजार 62 Thousand	2.06 लाख 2.06 Lac	4.14 लाख 4.14 Lac	सुवर्ण Golden	पाताल Patal	अंकुशा Ankusha
15.	शिवा Shiva	62.4 लाख 62.4 Lac	2.04 लाख 2.04 Lac	4.13 लाख 4.13 Lac	सुवर्ण Golden	किन्नर Kinnar	कंदर्पा Kandarpa
16.	शुचि Shuchi	61.6 लाख 61.6 Lac	1.9 लाख 1.9 Lac	3.93 लाख 3.93 Lac	सुवर्ण Golden	गरुड़ Garuda	निर्वाणी Nirvani
17.	दामिनी Damini	60.6 लाख 60.6 Lac	1.79 लाख 1.79 Lac	3.8 लाख 3.8 Lac	सुवर्ण Golden	गंधर्व Gandharva	बला Bala
18.	रक्षिता Rakshita	60 लाख 60 Lac	1.84 लाख 1.84 Lac	3.72 लाख 3.72 Lac	सुवर्ण Golden	यक्षराज Yaksharaj	धारिणी Dharini
19.	बंधुमती Bandhumati	55 लाख 55 Lac	1.83 लाख 1.83 Lac	3.7 लाख 3.7 Lac	नील Blue	कुबेर Kuber	धरणप्रिया Dharanpriya
20.	पुष्पवती Pushpavati	30 लाख 30 Lac	1.72 लाख 1.72 Lac	3.5 लाख 3.5 Lac	कृष्ण Black	वरुण Varuna	नरदत्ता Naradatta
21.	अनिला Anila	41 लाख 41 Lac	1.7 लाख 1.7 Lac	3.48 लाख 3.48 Lac	सुवर्ण Golden	भृकुटि Bhrikuti	गांधारी Gandhari
22.	यक्ष दिन्ना Yaksha Dinna	40 लाख 40 Lac	1.69 लाख 1.69 Lac	3.36 लाख 3.36 Lac	कृष्ण Black	गोमेध Gomedh	अम्बिका Ambika
23.	पुष्पचूला Pushpachula	38 लाख 38 Lac	1.64 लाख 1.64 Lac	3.39 लाख 3.39 Lac	नील Blue	— —	पद्मावती Padmavati
24.	चन्दनबाला Chandanbala	36 लाख 36 Lac	1.59 लाख 1.59 Lac	3.18 लाख 3.18 Lac	सुवर्ण Golden	ब्रह्मशांति Brahmashanti	सिद्धायिका Siddhayika

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रमण भगवान महावीर के ग्यारह गणधर
ELEVEN CHIEF DISCIPLES OF SHRAMAN BHAGAVAN MAHAVIR

क्र. सं.	नाम	माता	पिता	गोत्र	जन्म-स्थान	आयु				निर्वाण काल	निर्वाण स्थल	शिष्य संख्या
						गृहस्थ	छद्मस्थ	केवली	सर्वायु			
1.	इन्द्रभूति Indrabhuti	पृथ्वी Prithvi	वसुभूति Vasubhuti	गौतम Gautam	गोबर ग्राम (मगध) Gobar Village	50	30	12	92 A. N.M.	1 वी. नि.	वैभारगिरि (राजगृह) Vaibhargiri	500
2.	अग्निभूति Agnibhuti	पृथ्वी Prithvi	वसुभूति Vasubhuti	गौतम Gautam	गोबर ग्राम (मगध) Gobar Village	46	12	16	74 B. V. N.	14 वी. नि. पू.	वैभारगिरि (राजगृह) Vaibhargiri	500
3.	वायुभूति Vayubhuti	पृथ्वी Prithvi	वसुभूति Vasubhuti	गौतम Gautam	गोबर ग्राम (मगध) Gobar Village	42	10	18	70 B. V. N.	14 वी. नि. पू.	वैभारगिरि (राजगृह) Vaibhargiri	500
4.	व्यक्त Vyakta	वारुणी Varuni	धनमित्र Dhanmitra	भारद्वाज Bhardwaj	कोल्लाग सन्निवेश Kollaga Sannivesh	50	12	18	80 B. V. N.	12 वी. नि. पू.	वैभारगिरि (राजगृह) Vaibhargiri	500
5.	सुधर्मा Sudharma	भद्दिला Bhaddila	धम्मिल Dhammil	अग्नि वैश्यायन Agni Vaishyayan	कोल्लाग सन्निवेश Kollaga Sannivesh	50	42	8	100 A. N. M.	8 वी. नि.	वैभारगिरि (राजगृह) Vaibhargiri	350
6.	मंडिक Mandik	विजया देवी Vijaya Devi	धनदेव Dhandev	मौर्य सन्निवेश Maurya Sannivesh	वाशिष्ठ Vashishtha	53	14	16	83 B. V. N.	12 वी. नि. पू.	वैभारगिरि (राजगृह) Vaibhargiri	350
7.	मौर्य पुत्र Maurya Putra	विजया देवी Vijaya Devi	मौर्य Maurya	काश्यप Kashyap	मौर्य सन्निवेश Maurya Sannivesh	65	14	16	95 B. V. N.	12 वी. नि. पू.	वैभारगिरि (राजगृह) Vaibhargiri	350

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

8.	अकम्पित Akampit	नन्दा Nanda	वसु Vasu	हारीत Harit	मिथिला Mithila	46	12	14	72 B. V. N.	12 वी. नि. पू.	वैभारगिरि (राजगृह) Vaibhargiri	300
9.	अचल भ्राता Achal Bhrata	जयन्ती Jayanti	देव Dev	गौतम Gautam	कोसल Koshal	48	9	21	78 B. V. N.	16 वी. नि. पू.	वैभारगिरि (राजगृह) Vaibhargiri	300
10.	मेतार्य Metarya	वरुणा देवी Varuna Devi	दत्ता Datta	कौंडिन्य Kaundinya	तुंगिय सन्निवेश (कौशाम्बी) Tungiya Sannivesh (Kaushambi)	36	10	16	62 B. V. N.	16 वी. नि. पू.	वैभारगिरि (राजगृह) Vaibhargiri	300
11.	प्रभास Prabhas	अतिभद्रा Atibhadra	बल Bala	कौंडिन्य Kaundinya	राजगृह Rajagriha	16	8	16	40 B. V. N.	18 वी. नि. पू.	वैभारगिरि (राजगृह) Vaibhargiri	300

Note : B. V. N. = Before Vir Nirvana, A. N. M. = After the Nirvana of Mahavir.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिशिष्ट ४

काल-क्रम

जैन दर्शन के अनुसार यह जगत् (संसार) अनादि-अनन्त है। इस जगत् के घटकों में एक है आकाश। आकाश में स्थित हैं लोक। लोक में निरन्तर प्रवहमान/गतिमान हैं जीव (आत्मा) और जड़ की विभिन्न गतिविधियाँ। इन गतिविधियों के अन्तराल को नापता है समय अथवा काल। जड़ और जीव के संयोग-वियोग एवं उत्पत्ति, स्थिति और विनाश के सतत खेले जाने वाले नाटक के मंच को 'भूमि' कहते हैं। इसके दो विभाजन हैं–भोग-भूमि और कर्म-भूमि। कर्म-भूमि ही वह मंच है जिससे समस्त मानव समाज व प्राणि जगत् जुड़ा है। इसी कर्म-भूमि का एक अंश हमारी यह पृथ्वी है। कर्म-भूमि के काल प्रवाह को एक निरन्तर गतिमय चक्र की उपमा दी है। चक्र की परिधि पर रहा एक बिन्दु जैसे चक्र की गति के साथ धीरे-धीरे ऊपर चढ़ता है और फिर धीरे-धीरे नीचे उतरता है उसी प्रकार कर्म-भूमि में उपलब्धताओं का ह्रास और विकास होता है। ह्रास-विकास के इस क्रमिक परिवर्तन के आधार पर काल-चक्र के दो विभाजन होते हैं–(१) अवसर्पिणी काल, जिसमें क्रमिक ह्रास होता है, और (२) उत्सर्पिणी काल, जिसमें क्रमिक विकास होता है।

अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी, प्रत्येक के छह-छह विभाजन होते हैं। इन्हें आरा कहते हैं–(१) सुषम-सुषम (अति सुख का काल), (२) सुषम (सुख का काल), (३) सुषम-दुषम (अधिक सुख और अल्प दुःख का काल), (४) दुषम-सुषम (अधिक दुःख और अल्प सुख का काल), (५) दुषम (दुःख का काल), और (६) दुषम-दुषम (अति दुःख का काल)।

सुषम-सुषम आरे में मनुष्य दीर्घायु और विशालकाय होते हैं और स्वभाव से शान्त। समय के साथ धीरे-धीरे उनकी आयु, काया और गुणों का ह्रास होता है। दुषम-दुषम आरा आने तक वे अत्यन्त अल्पायु, क्षीणकाय और पूर्णतया उग्र स्वभावी हो जाते हैं। अवसर्पिणी के बीतने पर उत्सर्पिणी आरम्भ होती है और ये छह आरे उल्टे क्रम से आते हैं। काल का यह क्रम निरन्तर इसी प्रकार चलता रहता है।

APPENDIX 4

The Cycle of Time

According to the Jain belief our universe is without a beginning or an end. One of the constituents of this universe is space; the worlds are situated in that space. The worlds are filled with unending activities of matter and life. The thing that measures the gap between these activities in the temporal dimension is time or period. The stage where this eternal drama of origin, existence, and destruction as well as the interaction between matter and soul is enacted is termed as Bhumi (dimension). There are two divisions of Bhumi—Bhog Bhumi (the resultant dimension) and Karma Bhumi (the dimension of action). The Karma Bhumi is the stage where all the activities of the animal kingdom take place. Our planet is a part of this Karma Bhumi. The passage of time in the Karma Bhumi has been explained by the metaphor of an ever moving wheel. As a point on the periphery of a wheel slowly ascends and then descends with the circular motion of the wheel, the conditions and circumstances in the Karma Bhumi progressively evolve and degenerate or regress. On the basis of this progressive change the cycle of time has two divisions—(1) Avasarpini or the descending cycle, when there is a gradual regression in the conditions, and (2) Utsarpini or the ascending cycle, when there is a gradual progress.

Each descending and ascending cycle of time is divided into six Ara (spoke) or epochs—(1) Susham-Susham (epoch of extreme happiness), (2) Susham (epoch of happiness),

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(3) Susham-Dusham (epoch of more happiness than sorrow), (4) Dusham-Susham (epoch of more sorrow than happiness), (5) Dusham (epoch of sorrow), and (6) Dusham-Dusham (epoch of extreme sorrow).

In the Susham-Susham epoch human beings have very large life span, physical, dimensions, and peaceful attitude. With the passage of time there is a gradual decline in these parameters and during the Dusham-Dusham epoch they have very short life span, tiny size and violent temperament. When the descending cycle ends, the ascending cycle begins and these epochs occur in the reverse order. This cyclic flow of time is perennial.

काल-गणना

काल के इस स्थूल विभाजन के साथ ही जैन ग्रन्थों में काल का अति सूक्ष्म, विस्तृत और वैज्ञानिक विभाजन भी उपलब्ध है। इस विभाजन के दो अंग हैं–प्रथम संख्यात काल तथा दूसरा औपमिक काल।

The Measurement of Time

Besides this gross division of time, Jains have also worked out the minute, detailed and scientific division of time. This has two sections—one is the countable time and the other is the metaphoric time.

संख्यात काल (Numerical Time)

सूक्ष्मतम निर्विभाज्य काल (Indivisible unit of time)	= १ समय (1 Samay)
असंख्यात समय (Innumerable Samay)	= १ आवलिका (1 Avalika)
संख्यात आवलिका	= १ उच्छवास अथवा १ निश्वास
(Numerical Avalika)	= (1 Exhalation or 1 Inhalation)
१ उच्छवास + १ निश्वास	= १ प्राण
(1 Inhalation + 1 Exhalation)	= (1 Pran)
७ प्राण (Pran)	= १ स्तोक (Stok)
७ स्तोक (Stok)	= १ लव (Lav)
७७ लव (Lav)	= १ मुहूर्त (Muhurt)
३० मुहूर्त (Muhurt)	= १ अहोरात्र (Day and Night) (24 hours)
१५ अहोरात्र (Day and Night)	= १ पक्ष (Fortnight)
२ पक्ष (Fortnight)	= १ मास (Month)
२ मास (Month)	= १ ऋतु (Season)
३ ऋतु (Season)	= १ अयन (Ayan) (1/2 year)
२ अयन (Ayan)	= १ संवत्सर (Year)
५ संवत्सर (Year)	= १ युग (Yug) (half a decade)
२० युग (Yug)	= १ शताब्दी (Century) 10^2 years
१० शताब्दी (Century)	= १ सहस्राब्दी (Millennium) 10^3 years
१०० सहस्राब्दी (Millennium)	= १ लक्षाब्दी (Lakshabdi) 10^5 years
८४ लक्षाब्दी (Lakshabdi)	= १ पूर्वांग (Purvang) 84×10^5 years
८४ लक्ष पूर्वांग (Lac Purvang)	= १ पूर्व (Purva) 7056×10^{10} years

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'पूर्व' के बाद पच्चीस इकाइयाँ और हैं जो प्रत्येक पूर्ववती इकाई से ८४ लाख गुणा अधिक हैं। अंतिम इकाई का नाम शीर्ष प्रहेलिका है जिसमें ५४ अंकों के बाद १४० शून्य होते हैं। यह लगभग $7{\cdot}582 \times 10^{193}$ के बराबर होती है।

After the 'Purva' there are twenty five units more. Each unit is a multiple of 84,00,000 and the previous unit. The last such unit of the finite number in this series is known as Sheersh Prahelika. It contains 54 numbers and 140 zeros. In mathametical terms it is approximately $7{\cdot}582 \times 10^{193}$.

औपमिक काल

यह वह काल है जिसे संख्याओं या गणित से नहीं मापा जा सकता। अतः इसे समझने के लिए उपमा की आवश्यकता होती है। इसकी सबसे छोटी इकाई का नाम है पल्योपम। पल्योपम का परिमाण समझने के लिए शास्त्रोक्त परिभाषा है : एक योजन लम्बा-चौड़ा-गहरा प्याले के आकार का गड्ढा खोदा जाए जिसकी परिधि तीन योजन हो। उसे उत्तर कुरु के मनुष्य के एक दिन से सात दिनों तक के बालाग्र (अत्यन्त सूक्ष्म बाल का अग्रभाग) से ऐसे ठसाठस भर दिया जाए कि जल और वायु भी प्रवेश न पा सके। फिर उसमें से एक-एक बालाग्र प्रत्येक १०० वर्ष के बाद निकाला जाए। इस प्रकार जितने समय में वह पल्य (गड्ढा) खाली हो जाए उस काल को पल्योपम कहते हैं।

१० कोटा-कोटि पल्योपम = १ सागरोपम

१० कोटा-कोटि सागरोपम = १ उत्सर्पिणी अथवा १ अवसर्पिणी

२० कोटा-कोटि सागरोपम = १ काल-चक्र

Metaphoric Time Scale

This is the period of time beyond the scope of numbers or mathematics. As such, it is measured metaphorically. Its smallest unit is Palyopam. The definition of Palyopam available in Jain scriptures is as follows : Dig a cup shape ditch measuring 1 yojan (approx. 8 miles) on all sides. Fill it with the miniscule hair of man from Uttar Kuru. It would be so tightly packed that air or water may not find a passage within. Now start taking out one hair every hundred years. The time taken in emptying this ditch is termed as Palyopam.

1 thousand trillion Palyopam = 1 Sagaropam

1 thousand trillion Sagaropam = 1 Utsarpini or 1 Avasarpini

2 thousand trillion Sagaropam = 1 time cycle

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिशिष्ट ५

त्रिषष्टिशलाका पुरुष

जैन मान्यता में प्रत्येक उत्सर्पिणी या अवसर्पिणी काल में त्रेसठ शलाका पुरुषों के होने का विधान है। ये अपने काल व क्षेत्र के श्रेष्ठतम महापुरुष होते हैं। अपने विशिष्ट गुणों से ये समस्त लोक को प्रभावित करते हैं। इनका विवरण निम्न प्रकार है :

तीर्थंकर–ये ज्ञान-दर्शन-चारित्रधारी परम ज्ञानी महापुरुष धर्म-प्रवर्त्तक होते हैं तथा धर्म-चक्रवर्ती कहलाते हैं। इनकी संख्या २४ होती है।

चक्रवर्ती–ये महान् समृद्धिशाली महापुरुष षट्खण्ड पृथ्वी को अपनी अपार शक्ति से जीतकर उसके एक छत्र सम्राट् बनते हैं। इनकी संख्या १२ होती है।

प्रतिवासुदेव–ये महान् शक्तिशाली महापुरुष अहंकारी और दुष्ट प्रकृति के होते हैं। ये मानव जाति को त्रास देने के लिए अपना दमन चक्र चलाते हैं। इनकी संख्या ९ होती है।

वासुदेव–ये महान् बलशाली महापुरुष अपनी शक्ति और बलदेव के सहयोग से प्रतिवासुदेव का दमन कर मानव जाति को उसके त्रास से मुक्त करते हैं। ये तीन खण्ड पृथ्वी पर अपना आधिपत्य करते हैं तथा अर्ध-चक्रवर्ती कहलाते हैं। इनकी संख्या ९ होती है।

बलदेव–ये महापुरुष वासुदेव के सहयोगी सहोदर और समान गुण वाले होते हैं। इनकी संख्या भी ९ होती है।

APPENDIX 5

Sixty Three Great Men

According to Jain belief every half cycle of time has its sixty three great men. These are highly endowed individuals of their times and they leave lasting impression on the living world. They are :

Tirthankar—These great men, who acquire omniscience through right perception, knowledge and conduct are the propagators of religion and are also known as Dharma Chakravarti (Emperor of religion). They are 24 in number during one half cycle of time.

Chakravarti—These great and glorious men conquer the six continents with the help of their unlimited power and prowess and become sovereign emperors. They are twelve in number.

Prativasudev—These powerful great men are highly concieted and evil. These evil kings spread their reign of terror and torment human race. There number is nine.

Vasudev—These highly powerful great men defeat the Prativasudevs with the help of Baldevs. In this process they conquer three continents and are also known as Ardha-Chakravartis (Semi-emperor). They are nine in number.

Baldev—These great men are brothers and associates of Vasudevs and are equally endowed. They are also nine in number.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस अवसर्पिणी काल के त्रिषष्टिशलाका पुरुषों की तालिका
(The list of sixty three great men of this descending cycle of time)

काल-क्रम Chronological Order	तीर्थंकर Tirthankar	चक्रवर्ती Chakravarti	प्रतिवासुदेव Prativasudev	वासुदेव Vasudev	बलदेव Baldev
1.	ऋषभदेव (१)	भरत (१)	–	–	–
	Rishabhdev (1)	Bharat (1)	–	–	–
2.	अजितनाथ (२)	सगर (२)	–	–	–
	Ajitnath (2)	Sagar (2)	–	–	–
3.	संभवनाथ (३)	–	–	–	–
	Sambhavnath (3)	–	–	–	–
4.	अभिनंदन (४)	–	–	–	–
	Abhinandan (4)	–	–	–	–
5.	सुमतिनाथ (५)	–	–	–	–
	Sumatinath (5)	–	–	–	–
6.	पद्मप्रभ (६)	–	–	–	–
	Padmaprabh (6)	–	–	–	–
7.	सुपार्श्वनाथ (७)	–	–	–	–
	Suparshvanath (7)	–	–	–	–
8.	चन्द्रप्रभ (८)	–	–	–	–
	Chandraprabh (8)	–	–	–	–
9.	सुविधिनाथ (९)	–	–	–	–
	Suvidhinath (9)	–	–	–	–
10.	शीतलनाथ (१०)	–	–	–	–
	Shitalnath (10)	–	–	–	–
11.	श्रेयांसनाथ (११)	–	अश्वग्रीव (१)	त्रिपृष्ट (१)	अचल (१)
	Shreyansanath (11)	–	Ashvagriva (1)	Triprishta (1)	Achal (1)
12.	वासुपूज्य (१२)	–	तारक (२)	द्विपृष्ट (२)	विजय (२)
	Vasupujya (12)	–	Tarak (2)	Dviprishta (2)	Vijaya (2)
13,	विमलनाथ (१३)	–	मेदक (३)	स्वयंभू (२)	भद्र (३)
	Vimalnath (13)	–	Medak (3)	Swayambhu (3)	Bhadra (3)
14.	अनंतनाथ (१४)	–	मधुकैटभ (४)	पुरुषोत्तम (४)	सुप्रभ (४)
	Anantnath (14)	–	Madhukaitabh (4)	Purushottam (4)	Suprabh (4)
15.	धर्मनाथ (१५)	–	निशुंभ (५)	पुरुषसिंह (५)	सुदर्शन (५)
	Dharmnath (15)	–	Nishumbh (5)	Purushsimha (5)	Sudarshan (5)
16.	–	मघवा (३)	–	–	–
	–	Maghava (3)	–	–	–

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

काल क्रम Chronological Order	तीर्थंकर Tirthankar	चक्रवर्ती Chakravarti	प्रतिवासुदेव Prativasudev	वासुदेव Vasudev	बलदेव Baldev
17.	–	सनत्कुमार (४)	–	–	–
	–	Sanatkumar (4)	–	–	–
18.	शांतिनाथ (१६)	शांतिनाथ (५)	–	–	–
	Shantinath (16)	Shantinath (5)	–	–	–
19.	कुंथुनाथ (१७)	कुंथुनाथ (६)	–	–	–
	Kunthunath (17)	Kunthunath (6)	–	–	–
20.	अरनाथ (१८)	अरनाथ (७)	–	–	–
	Arnath (18)	Arnath (7)	–	–	–
21.	–	–	बलि (६)	पुरुष पुंडरीक (६)	आनंद (६)
	–	–	Bali (6)	Purush Pundarik (6)	Anand (6)
22.	–	सुभूम (८)	–	–	–
	–	Subhum (8)	–	–	–
23.	–	–	प्रह्लाद (७)	दत्त (७)	नंद (७)
	–	–	Prahlad (7)	Datta (7)	Nand (7)
24.	मल्लिनाथ (१९)	–	–	–	–
	Mallinath (19)	–	–	–	–
25.	मुनिसुव्रत (२०)	महापद्म (9)	–	–	–
	Munisuvrat (20)	Mahapadma (9)	–	–	–
26.	–	–	रावण (८)	लक्ष्मण (८)	रामचंद्र (८)
	–	–	Ravan (8)	Laxman (8)	Ramchandra (8)
27.	नमिनाथ (२१)	हरिषेण (१०)	–	–	–
	Naminath (21)	Harishen (10)	–	–	–
28.	–	जय (११)	–	–	–
	–	Jai (11)	–	–	–
29.	अरिष्टनेमि (२२)	–	जरासंध (९)	कृष्ण (९)	बलभद्र (९)
	Arishtanemi (22)	–	Jarasandh (9)	Krishna (9)	Balbhadra (9)
30.	–	ब्रह्मदत्त (12)	–	–	–
	–	Brahmadatta (12)	–	–	–
31.	पार्श्वनाथ (२३)	–	–	–	–
	Parshvanth (23)	–	–	–	–
32.	महावीर (२४)	–	–	–	–
	Mahavir (24)	–	–	–	–

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रमण भगवान महावीर के साधना काल के विहार स्थानों की तालिका

The list of places visited by Shraman Bhagavan Mahavir during the period of Spiritual Practices

कोष्ठक में दिये स्थान चातुर्मास-स्थल हैं
The places in box are the places of monsoon-stay

प्रथम वर्ष

१. कुण्ड ग्राम
२. ज्ञातखण्ड वन
३. कूर्मार ग्राम
४. कोल्लाग सन्निवेश
५. मोराक सन्निवेश
६. दूईज्जंतग आश्रम
7. [अस्थिक ग्राम (वर्धमान)]

द्वितीय वर्ष

१. मोराक सन्निवेश
२. वाचाला
३. दक्षिण वाचाला
४. सुवर्ण-बालुका (नदी तट)
५. रुप्य-बालुका (नदी तट)
६. कनकखल आश्रम पद
७. उत्तर वाचाला
८. श्वेताम्बी
९. सुरभिपुर
१०. गंगा (नदी तट)
११. थूणाक सन्निवेश
१२. राजगृह
१३. [नालन्दा सन्निवेश]

तृतीय वर्ष

१. कोल्लाग सन्निवेश
२. सुवर्ण खल
३. ब्राह्मण ग्राम
४. [चम्पा नगरी]

FIRST YEAR

1. Kund Village
2. Jnatakhand Jungle
3. Kurmar Village
4. Kollag Sannivesh
5. Morak Sannivesh
6. Duijjantag Hermitage
7. [Asthik Village (Vardhaman)]

SECOND YEAR

1. Morak Sannivesh
2. Vachala
3. South Vachala
4. Suvarna-Baluka (River Bank)
5. Rupya-Baluka (River Bank)
6. Kanakakhal Hermitage Complex
7. North Vachala
8. Shvetambi
9. Surabhipur
10. The Ganges (River Bank)
11. Thunak Sannivesh
12. Rajagriha
13. [Nalanda Sannivesh]

THIRD YEAR

1. Kollag Sannivesh
2. Suvarna Khal
3. Brahman Village
4. [Champa City]

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चतुर्थ वर्ष	**FOURTH YEAR**
१. कालाय सन्निवेश	1. Kalaya Sannivesh
२. पत्त कालाय	2. Patta Kalaya
३. कुमारक सन्निवेश	3. Kumarak Sannivesh
४. चौराक सन्निवेश	4. Chaurak Sannivesh
५. पृष्ठ चम्पा	5. Prishtha Champa
पंचम वर्ष	**FIFTH YEAR**
१. कयंगला सन्निवेश	1. Kayangala Sannivesh
२. श्रावस्ती	2. Shravasti
३. हलिद्दुय	3. Halidduya
४. नंगला	4. Nangala
५. आवत्ता	5. Aavatta
६. चोराय सन्निवेश	6. Choraya Sannivesh
७. कलंबुका सन्निवेश	7. Kalambuka Sannivesh
८. राढ देश (अनार्य भूमि)	8. Radha Country (Uncivilized Area)
९. पूर्ण कलश (अनार्य ग्राम)	9. Purna Kalash (Uncivilized Village)
१०. मलय प्रदेश	10. Malaya Area
११. भद्दिल नगर	11. Bhaddil Sannivesh
छठा वर्ष	**SIXTH YEAR**
१. कयली समागम	1. Kayali Village
२. जम्बू संड	2. Jambu Sand
३. तंबाय सन्निवेश	3. Tambaya Sannivesh
४. कूपिय सन्निवेश	4. Kupiya Sannivesh
५. वैशाली	5. Vaishali
६. ग्रामाक सन्निवेश	6. Gramak Sannivesh
७. शाली शीर्ष	7. Shali Shirsha
८. भद्दिया	8. Bhaddiya
सातवाँ वर्ष	**SEVENTH YEAR**
१. मगध भूमि	1. Magadh Area
२. आलंभिया	2. Alambhiya
आठवाँ वर्ष	**EIGHTH YEAR**
१. कुण्डाक सन्निवेश	1. Kundak Sannivesh
२. मद्दन सन्निवेश	2. Maddan Sannivesh

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३. बहुसालग
४. शाल वन
५. लोहार्गला
६. पुरिमताल
७. शकटमुख उद्यान
८. उन्नाग (तुन्नाक)
९. गोभूमि

१०. राजगृह

नौवाँ वर्ष

१. लाढ (वज्रभूमि, सुम्हभूमि)

दसवाँ वर्ष

१. सिद्धार्थपुर
२. कूर्म ग्राम
३. सिद्धार्थपुर
४. वैशाली
५. गंडकी (नदी तट)
६. वाणिज्य ग्राम

७. श्रावस्ती

ग्यारहवाँ वर्ष

१. सानुलट्ठिय सन्निवेश
२. दृढ़भूमि (पोलाश चैत्य)
३. बालुका
४. सुभोग
५. सुच्छेत्ता
६. मलय
७. हत्थिसीस
८. तोसलि
९. मोसलि
१०. तोसलि
११. सिद्धार्थपुर
१२. वज्र ग्राम
१३. आलंभिया
१४. सेयंविया

3. Bahusalag
4. Shal Jungle
5. Lohargala
6. Purimatal
7. Shakatmukh Garden
8. Unnag (Tunnak)
9. Gobhumi

10. Rajagriha City

NINTH YEAR

1. Ladh (Vajrabhumi, Sumhabhumi)

TENTH YEAR

1. Siddharthapur
2. Kurma Village
3. Siddharthapur
4. Vaishali City
5. Gandaki (River Bank)
6. Vanijya Village

7. Shravasti

ELEVENTH YEAR

1. Sanulatthiya Sannivesh
2. Dridhabhumi (Polash Temple)
3. Baluka
4. Subhog
5. Suchchheta
6. Malaya
7. Hatthisisa
8. Tosali
9. Mosali
10. Tosali
11. Siddharthapur
12. Vajra Village
13. Alambhiya
14. Seyaviya

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५. श्रावस्ती
१६. कौशाम्बी
१७. वाराणसी
१८. राजगृह
१९. मिथिला
२०. वैशाली

बारहवाँ वर्ष

१. सुंसुमारपुर
२. भोगपुर
३. नन्दि ग्राम
४. मेंढिय ग्राम
५. कौशाम्बी
६. सुमंगल
७. सुच्छेत्ता
८. पालक
९. चम्पा

तेरहवाँ वर्ष

१. जंभिय ग्राम
२. मेंढिय
३. छम्माणि
४. मध्यम पावा
५. जंभिय ग्राम
६. ऋजुबालुका (नदी तट) (केवलज्ञान)

15. Shravasti City
16. Kaushambi City
17. Varanasi
18. Rajagriha City
19. Mithila City
20. Vaishali City

TWELTH YEAR

1. Sumsumarpur
2. Bhogpur
3. Nandi Village
4. Mendhiya Village
5. Kaushambi City
6. Sumangal
7. Suchchheta
8. Palak
9. Champa City

THIRTEENTH YEAR

1. Jambhiya Village
2. Mendhiya Village
3. Chhammani
4. Madhyam Pava
5. Jambhiya Village
6. Rijubaluka (River Bank) (Kewal Jnana)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पारिभाषिक शब्दावली

अनगार	–	घर छोड़कर, पंच महाव्रत धारण करने वाला जैन साधु। श्रमण, मुनि, निर्ग्रन्थ।
अनशन	–	आहार, पानी, खाद्य व स्वाद्य पदार्थों का त्याग करना।
अभिग्रह	–	नियम, निश्चय, दृढ़-संकल्प।
अरहंत	–	अर्हत्, पूजा के योग्य, पूज्य, सर्वज्ञ। चार घाती कर्मरूपी शत्रु का नाश करने वाला।
अवग्रह	–	चातुर्मास में एक स्थान पर रहने के बाद आस-पास के क्षेत्रों में आने-जाने की मर्यादा का निर्धारण करना।
अवसर्पिणी	–	अर्ध-कालचक्र, अपकर्ष का युग। (परिशिष्ट-३)
अवस्वापिनी-निद्रा	–	प्रगाढ़ निद्रा।
अष्टमभक्त	–	लगातार आठ समय (वक्त) तक आहार (भोजन), पानी, खाद्य और स्वाद्य पदार्थों का त्याग, किंवा ३ दिन का उपवास (तेला)।
अष्टांग महानिमित्त	–	१. अंग विद्या, २. स्वप्न विद्या, ३. स्वर विद्या, ४. भू-विद्या, ५. लक्षण विद्या, ६. रेखा विज्ञान, ७. आकाश विज्ञान, और ८. नक्षत्र विज्ञान। उपरोक्त आठ निमित्त-विद्याओं द्वारा शुभाशुभ, लाभ-अलाभ ज्ञान को प्रदर्शित करने वाला शास्त्र।
आदानभाण्डमात्र-निक्षेपणा समिति	–	देखिये, 'समिति'।
आरा	–	चक्र की धुरी से परिधि को जोड़ने वाले दण्ड। यहाँ कालचक्र के बारह आरे। (परिशिष्ट-३)
आर्त्तध्यान	–	आर्त्त अर्थात् अप्रिय एवं प्रतिकूल संयोगों में पीड़ा से उत्पन्न होने वाला ध्यान अर्थात् विकल्प, कुविकल्पादि विचार।
आस्वादन	–	सूक्ष्मतम मात्रा में कोई पदार्थ चखना, स्वाद लेना।
उत्सर्पिणी	–	अर्ध-कालचक्र, उत्कर्ष का युग। (परिशिष्ट-३)
उपपात	–	देव-योनि अथवा नरक-योनि में जन्म ग्रहण करना।
ऋजुमति	–	सीमित शक्ति का अस्थाई मनःपर्यवज्ञान।
कर्म	–	आत्मा के ज्ञान आदि मूल स्वरूप को आच्छादित करने वाले सूक्ष्म पौद्गलिक कण कर्म कहलाते हैं। कर्म के आठ भेद हैं–१. ज्ञानावरण–ज्ञान शक्ति को आच्छादित करने वाला २. दर्शनावरण–दर्शन अर्थात् सामान्य बोध को आच्छादित करने वाला, ३. मोहनीय–आत्मबोध को रोककर मोहपाश में फँसाने वाला, ४. अन्तराय–पुरुषार्थ, दान, लाभ, भोग आदि में बाधा डालने वाला, ५. वेदनीय–सुख और दुःख का निमित्त बनने वाला, ६. आयुष्य–आयु सीमा निर्धारण का निमित्त, ७. नाम–गति, स्थिति, जाति, यश, अपयश आदि का निमित्त, ८. गोत्र–उच्चता नीचता आदि का बोधक। प्रारम्भ के चार कर्म 'घाती' और शेष चार 'अघाती' कर्म कहलाते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

काउसग्ग – देहाध्यास व संकल्प-विकल्पों से मुक्त होकर, स्थिर एवं खड़े रहकर ध्यान करने क एक प्रकार का आसन।

कुलकर – कुल की व्यवस्था करने वाला। युग के प्रारम्भ में जब मानव-प्रजा कुल एवं समूह के रूप में व्यवस्थित नहीं थी, उस समय में सर्वप्रथम कुल-व्यवस्था का प्रारम्भ करने वाले कुलकर कहलाए। इस अवसर्पिणी में सात कुलकर हुए हैं।

केवलज्ञान – अखिल विश्व के जड़ और चेतन के भूत, भविष्य और वर्तमानकालीन समस्त भावो को जानने वाला सर्वश्रेष्ठ अप्रतिहत ज्ञान।

कौशलिक – कौशल देश में उत्पन्न। भगवान ऋषभदेव का विशेषण।

क्षुल्लक – छोटी अवस्था में दीक्षित साधु।

खादिम – फल आदि खाद्य पदार्थ।

गणधर – तीर्थंकर के मुख्य-शिष्य जो गण की व्यवस्था करते हैं।

गणावच्छेदक – गण (गच्छ) की सुरक्षा और विकास के लिए मुनि-वृन्द को संयम आदि की दृष्टि से सम्भालने वाला प्रमुख।

गणिपिटक – द्वादशांगी (बारह अंगों का वाचक)। जिनवाणी रूप शास्त्र।

गणी – गण (मुनिसमूह) की व्यवस्था करने वाला अथवा आचार्यों को शास्त्राभ्यास कराने वाला व्यवस्थापक आचार्य।

गन्धहस्ती – श्रेष्ठ जाति का हाथी, जिसके शरीर से एक विशिष्ट प्रकार की गन्ध (मद) निकलती है, उस गन्ध से अन्य हाथी भय खाते हैं।

गुप्ति – विवेकपूर्वक आत्म-संयम, नियमन करना गुप्ति है। गुप्ति के तीन भेद हैं– १. मनोगुप्ति–मन का संयम, २. वचनगुप्ति–वाणी का संयम, और ३. कायगुप्ति– शरीर का संयम।

गोदोहासन – गाय को दोहते समय ग्वाला जिस आसन (प्रकार) से बैठता है, उस आसन को गोदोहासन कहते हैं।

चक्रवर्ती – छह खण्डों का सार्वभौम सम्राट्। (परिशिष्ट-२)

चतुर्थभक्त – लगातार चार वक्त तक आहार आदि का त्याग, किंवा एक दिन का उपवास।

चतुर्दशभक्त – लगातार चौदह समय तक आहार आदि का त्याग, किंवा छह दिन का उपवास।

च्यवन – देवता एवं नारक के आयुक्षय को च्यवन कहते हैं अर्थात् देव और नारक की मृत्यु।

च्युत – देव एवं नरक गति में मृत्यु प्राप्त करना।

चतुर्दश पूर्व – जैन परम्परा के मूल अंग-शास्त्र बारह हैं। बारहवाँ अंग दृष्टिवाद है। दृष्टिवाद के अन्तर्गत चौदह पूर्व आते हैं। चौदह पूर्वों के नाम इस प्रकार हैं–१. उत्पाद पूर्व, २. अग्रायणी पूर्व, ३. वीर्यानुवाद पूर्व, ४. अस्तिनास्तिप्रवाद पूर्व, ५. ज्ञानप्रवाद पूर्व, ६. सत्यप्रवाद पूर्व, ७. आत्म-प्रवाद पूर्व, ८. कर्मप्रवाद पूर्व, ९. प्रत्याख्यान पूर्व, १०. विद्यानुवाद पूर्व, ११. कल्याणवाद पूर्व, १२. प्राणावाय पूर्व, १३. क्रियाविशाल पूर्व, १४. लोकबिन्दुसार पूर्व।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चतुर्दश पूर्वधर	–	चौदह पूर्वों का जिसे पूरा ज्ञान हो, उसे चतुर्दश पूर्वधर अथवा चौदहपूर्वी कहते हैं।
छट्ठ भक्त	–	लगातार छह समय (वक्त) के आहारादि का त्याग, किंवा दो दिन का उपवास (बेला)।
जातिस्मरण ज्ञान	–	पूर्वजन्म का ज्ञान।
ज्योतिषिक	–	सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र, तारा आदि ज्योतिषिक देव कहलाते हैं।
दर्शन	–	किसी भी पदार्थ का सामान्य बोध।
द्वादशांगी	–	जैनागमों में बारह अंग (शास्त्र) मुख्य हैं–आचार, सूत्रकृत, स्थानांग, समवाय, भगवती, ज्ञाताधर्मकथा, उपासकदशा, अन्तकृद्दशा, अनुत्तरोपपातिकदशा, प्रश्नव्याकरण, विपाक और दृष्टिवाद।
पडिलेहणा	–	उपयोग में आने वाले वस्त्र, पात्र आदि उपकरणों को समय-समय पर देखना।
पर्याप्ति	–	शरीर, इन्द्रिय आदि की पूर्ण रचना।
पल्योपम	–	विशेष प्रकार का समय (काल) सूचक माप। (परिशिष्ट-३)
पादपोपगमन	–	अनशन ग्रहण करने के पश्चात् मरण-पर्यन्त वृक्ष की तरह शरीर को स्थिर रखते हुए समाधिस्थ रहना।
पुरुषादानीय	–	पुरुषों में आदरणीय एवं श्रेष्ठ। भगवान पार्श्वनाथ का विशेषण।
पौरुषी	–	जिस समय अपनी प्रतिच्छाया पुरुष प्रमाण हो वह समय, समय का भाग विशेष, सामान्यतया ३ घंटे का समय, एक प्रहर।
प्रतिमा	–	साधु एवं श्रावक के सामान्य नियमों के अतिरिक्त विशिष्ट प्रकार के कठोर नियम तथा तपश्चर्या। साधु की बारह तथा श्रावक की ग्यारह प्रतिमाएँ हैं।
प्रवर्त्तक	–	संयम की शुद्धि तथा शास्त्राभ्यास में प्रेरणा देने वाला अधिकारी श्रमण।
प्रहर	–	३ घंटे का समय, दिन-रात (२४ घन्टे) के आठ प्रहर माने जाते हैं।
बलदेव	–	त्रिखण्ड के अधिपति वासुदेव का बड़ा भाई। (परिशिष्ट-२)
भक्त-प्रत्याख्यान	–	भोजन एवं पानी अथवा भोजन मात्र का त्याग।
भवनपति	–	एक विशेष प्रकार की देवजाति, जो अधोलोक के भवनों में रहती है।
मडम्ब	–	ग्राम-स्थल विशेष, जिसके चारों ओर एक योजन तक कोई गाँव न हो।
मण्डलीक	–	एक देश का अधिपति, राजा।
मनःपर्यवज्ञान	–	दूसरे के मन की अवस्था तथा भावों को जानने वाला ज्ञान।
मनोगुप्ति	–	देखें, 'गुप्ति'।
मारणान्तिक संलेखना	–	मरण पर्यन्त अनशन ग्रहण कर, शरीर, इन्द्रिय और कषायों को क्षीण करना।
मुष्टि लोच	–	मुट्ठी भरकर सिर के बालों को उखाड़ना, लोच करना।
रस-विकृति	–	जिन सरस खाद्यों एवं पेय-पदार्थों के सेवन से विकृति-विकार उत्पन्न होते हों उसे रस-विकृति (विगय) कहते हैं। विगय नौ प्रकार की हैं–दूध, दही, मक्खन, घी, तेल गुड़, मद्य, मधु और माँस।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लोकान्तिक	–	एक विशेष देव जाति। इस जाति के देव ब्रह्मलोक के अन्त में रहते हैं और तीर्थंकर के दीक्षा-ग्रहण के समय आकर जन-कल्याण के लिये उनसे प्रार्थना करते हैं।
वाणव्यन्तर	–	एक प्रकार के देव जो भूत-पिशाच के नाम से पुकारे जाते हैं।
वासुदेव	–	तीन खण्ड का अधिपति, सम्राट्। (परिशिष्ट-२)
विकट	–	निर्दोष आहार-पानी।
विगय	–	देखें, 'रस-विकृति'।
विचार-भूमि	–	शौचादि के लिये निर्वद्य स्थान।
विपुलमति	–	मनःपर्यवज्ञान का भेद। इस ज्ञान से मन के भाव-विचार जाने जाते हैं। यह विशेष विशुद्ध होता है तथा कैवल्य-प्राप्ति तक स्थिर रहता है।
विहार-भूमि	–	चैत्य, मन्दिर आदि का पवित्र स्थान।
वृष्टिकाय	–	वर्षा, बूँदें या फुहारें।
वैक्रियलब्धि	–	शरीर को छोटे-बड़े आदि विभिन्न रूपों में बदलने वाली शक्ति विशेष।
वैक्रिय समुद्घात	–	शरीर को तथा शरीर-परमाणुओं को विशेष रूपों में बदलने के लिए की जाने वाली विशिष्ट प्रकार की प्रक्रिया।
वैमानिकदेव	–	श्रेष्ठ विमानों में उत्पन्न होने वाले देव विशेष।
श्रुतकेवली	–	चौदह पूर्वों का जानकार विद्वान् श्रमण।
षष्टितन्त्र	–	सांख्य तत्वज्ञान का ग्रन्थ, जिसमें साठ तत्त्वों का निरूपण हुआ है।
संखडी	–	मिष्ट-पक्वान्न, मिठाई आदि जिस स्थान पर बन रही हो, अथवा भोज आदि का स्थान।
संस्वेदिम	–	वृक्ष के पत्ते आदि को उबालकर, उन पर छिटका जाने वाला ठंडा पानी।
सन्धिपाल	–	राज्यों के बीच विग्रह आदि को सुलझाकर सन्धि कराने वाला अधिकारी, राजदूत।
समिति	–	मुनि जीवन में विवेक, सावधानी तथा यतनापूर्वक गति करने को समिति कहते हैं। यह समिति पाँच प्रकार की है–१. ईर्या समिति–सावधानी व यतनापूर्वक चलना। २. भाषा समिति–विवेक व यतनापूर्वक बोलना। ३. एषणा समिति–मुनि जीवन में खाने-पीने योग्य पदार्थ, पहनने योग्य उपकरण तथा उपयोग में आने योग्य अन्य आवश्यक, शुद्ध एवं निर्दोष वस्तुओं को सावधानी व यतनापूर्वक ग्रहण करना। ४. आदान भाण्डमात्र निक्षेपणा समिति–वस्त्र, पात्रादि उपकरणों को यतनापूर्वक उठाना व रखना। ५. पारिष्ठापनिका समिति–फेंकने योग्य व त्यागने योग्य बाल, नख, थूक, कफ, मूत्रादि को जीव-रहित निर्दोष तथा निर्जन स्थान में सावधानी तथा विवेकपूर्वक छोड़ना, त्यागना।
सागरोपम	–	असंख्य पल्योपम जितना काल सागर कहलाता है। सागर से उपमित किया जाने वाला काल सागरोपम कहलाता है। (परिशिष्ट-३)
सौवीर	–	कांजी।
स्थविर	–	ज्ञान, तप, चारित्र, अवस्था आदि में अनुभवी वृद्ध मुनि।
स्वादिम	–	स्वाद्य खाद्य पदार्थ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

A SELECT GLOSSARY

Anga : The main corpus of the Jain canon. This consists of twelve treatises, eleven of which are extant according to Śvetāmbara tradition.

Arhat : A great religious leader, deserving supreme veneration. An Arhat is one who has become free of desire, attachment and worldly possession. He is a great soul who has destroyed the bonds of *karma*, washing away the stains that cause endless rebirth.

Bhavanapati : A specific group of gods who reside in the nether regions.

Gana : A specific group or congregation of monks.

Karma : This, according to Jain belief, consists of particles subtler than the sub-atomic particles, that stick to the soul, veiling its true nature. *Karmas* are of eight kinds :

1. *Jnānāvaraṇa : Karma* that veils true knowledge.
2. *Darśanāvaraṇa : Karma* that veils true perception.
3. *Mohaniya : Karma* that tempts the soul towards fondness for things.
4. *Antarāya : Karma* that acts as an impediment to a man's pursuits including realisation of his human, moral and spiritual goals.
5. *Vedaniya : Karma* that causes feelings of happiness or pain.
6. *Āyuṣya : Karma* which is responsible for defining life-span in any specific existence as a living being.
7. *Nāma : Karma* which causes beings to move or rest. This is the *Karma* which gives a man a good or a bad name. *Nāma* is also responsible for the state one is born in.
8. *Gotra : Karma* responsible for the higher or lower status of a person.

Kauśalik : Hailing from the kaushal area. An epithet used for Bhagavan Rishavhdev.

Kāyotsarga : A posture for meditation, in which the Yogi remains standing, free of thoughts and desires.

Lokāntika : A class of gods that dwell at the extremes of *Brahmaloka*.

Puruśādāniya : The best and revered among man. An epithet used for Bhagavan Parshvanath.

Pūrva-treatises : Perhaps the oldest part of the Jain canon. *Pūrvas* are fourteen in number. They are said to have formed the twelfth *Aṅga* named *Dṛṣṭivāda* which is not extant.

Sthavira : An elderly monk, respected due to his deep knowledge as well as his ascetic and moral qualities.

Sruta-kevalin : One who knows the fourteen *Pūrva*-treatises.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि जी द्वारा सम्पादित सचित्र जैन आगम साहित्य

प्राकृत मूल, हिन्दी व अंग्रेजी अनुवाद एवं विवेचन के साथ

जैन संस्कृति का मूल आधार है आगम। आगमों के कठिन विषय को सुरम्य रंगीन चित्रों के द्वारा सुबोध शैली में प्रस्तुत करने का ऐतिहासिक प्रयत्न।

- **सचित्र उत्तराध्ययन सूत्र** — **मूल्य 500.00**
  भगवान महावीर की अन्तिम वाणी। आदर्श जीवन विज्ञान तथा तत्त्वज्ञान से युक्त मोक्षमार्ग के सम्पूर्ण अंगों का सारपूर्ण वर्णन। एक ही सूत्र में सम्पूर्ण जैन आचार, दर्शन और सिद्धान्तों का समग्र सद्बोध।

- **सचित्र दशवैकालिक सूत्र** — **मूल्य 600.00**
  जैन श्रमण की अहिंसा व यतनायुक्त आचार संहिता : जीवन में पद-पद पर काम आने वाले विवेकयुक्त, संयत व्यवहार, भोजन, भाषा, विनय आदि की मार्गदर्शक सूचनाएँ। आचार विधि को रंगीन चित्रों के माध्यम से आकर्षक और सुबोध बनाया गया है।

- **सचित्र नन्दी सूत्र** — **मूल्य 600.00**
  ज्ञान के विविध स्वरूपों का अनेक युक्ति एवं दृष्टान्तों के साथ रोचक वर्णन। चित्रों द्वारा ज्ञान के सूक्ष्म स्वरूपों को जीवंत रूप में प्रस्तुत किया गया है।

- **सचित्र अनुयोगद्वार सूत्र (भाग 1, 2)** (प्रत्येक भाग का मूल्य 600.00) — **मूल्य 1,200.00**
  यह शास्त्र जैनदर्शन और तत्वज्ञान को समझने की कुंजी है। नय, निक्षेप, प्रमाण जैसे दार्शनिक विषयों के साथ ही गणि, ज्योतिष, संगीतशास्त्र, काव्यशास्त्र, प्राचीन लिपि, नाप-तौल आदि सैंकड़ों विषयों का वर्णन है।

- **सचित्र आचारांग सूत्र (भाग 1, 2)** (प्रत्येक भाग का मूल्य 500.00) — **मूल्य 1,000.00**
  यह ग्यारह अंगों में प्रथम अंग है। भगवान महावीर द्वारा प्रतिपादित अहिंसा, सम्यक्त्व, संयम, तितिक्षा आदि आधारभूत तत्त्वों का बहुत ही सुन्दर वर्णन है। दोनों भाग विविध ऐतिहासिक व सांस्कृतिक चित्रों से युक्त।

- **सचित्र भगवती सूत्र (भाग 1, 2)** (प्रत्येक भाग का मूल्य 600.00) — **मूल्य 1,200**
  इसमें जीव, द्रव्य, पुद्गल, परमाणु, लोक आदि चारों अनुयोगों से सम्बन्धित हजारों प्रश्नोत्तर हैं। यह विशाल आगम जैन तत्व विद्या का महासागर है।

- **सचित्र स्थानांग सूत्र (भाग 1, 2)** (प्रत्येक भाग का मूल्य 600.00) — **मूल्य 1,200.00**
  अपनी खास संख्या प्रधान शैली में संकलित यह शास्त्र ज्ञान, विज्ञान, ज्योतिष, भूगोल-गणित, नीति-आचार, आदि सैंकड़ों प्रकार के विषयों का ज्ञान देने वाला बहुत ही विशालकाय शास्त्र है।

- **सचित्र ज्ञाताधर्मकथांगसूत्र (भाग 1, 2)** (प्रत्येक भाग का मूल्य 500.00) — **मूल्य 1,000.00**
  भगवान महावीर द्वारा कथित बोधप्रद दृष्टान्त एवं रूपकों आदि को सुरम्य चित्रों द्वारा सरल सुबोध शैली में प्रस्तुत किया गया है।

- **सचित्र उपासकदशा एवं अनुत्तरौपपातिक दशा सूत्र** — **मूल्य 600.00**
  सप्तम अंग उपासकदशा में भगवान महावीर के प्रमुख १० श्रावकों का जीवन-चरित्र तथा उनके श्रावक धर्म का रोचक वर्णन है। उत्कृष्ट तपःसाधना करने वाले ३३ श्रमणों की तप-ध्यान साधना का रोमांचक वर्णन है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

- **सचित्र निरयावलिका एवं विपाक सूत्र** **मूल्य 600.00**
  निरयावलिका में तीन तीर्थंकरों के युग की घटनायें तथा विपाक सूत्र में पाप-पुण्य के फल विपाक का रोमांचक वर्णन है।
- **सचित्र अन्तकृद्दशासूत्र** **मूल्य 500.00**
  आठवें अंग अन्तकृद्दशा सूत्र में मोक्षगामी ९० महान् आत्म-साधक श्रमण-श्रमणियों के तपोमय साधना जीवन का प्रेरक वर्णन है। यह सूत्र पर्युषण में विशेष रूप में पठनीय है।
- **सचित्र औपपातिक सूत्र** **मूल्य 600.00**
  यह प्रथम उपांग है। इस सूत्र में कौणिक राजा द्वारा भगवान महावीर की दर्शन यात्रा तथा अनेक परिव्राजकों की चर्चा है।
- **सचित्र रायपसेणिय सूत्र** **मूल्य 600.00**
  यह द्वितीय उपांग है। धर्मद्वेषी प्रदेशी राजा को धर्मबोध देकर परम धार्मिक बनाने वाले महान् ज्ञानी आचार्य केशीकुमार श्रमण के साथ आत्मा, परलोक, पुनर्जन्म आदि विषयों पर हुई तर्कयुक्त अध्यात्म-चर्चा प्रत्येक जिज्ञासु के लिए पठनीय ज्ञानवर्द्धक है।
- **सचित्र कल्पसूत्र** **मूल्य 600.00**
  पर्युषण पर्व में पठनीय 24 तीर्थंकरों का जीवन-चरित्र व स्थविरावली आदि का वर्णन। रंगीन चित्रमय।
- **सचित्र छेद सूत्र (दशा-कल्प-व्यवहार)** **मूल्य 600.00**
  छेद सूत्र में आचार शुद्धि के सूक्ष्म से सूक्ष्म नियमों का वर्णन है। तीन छेद सूत्रों का भाष्य के आधार पर विवेचन।
- **सचित्र जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति सूत्र** **मूल्य 600.00**
  यह छठा उपांग है। इस सूत्र का मुख्य विषय जम्बूद्वीप का विस्तृत वर्णन है।
- **सचित्र प्रश्नव्याकरण सूत्र** **मूल्य 600.00**
  यह दसवाँ अंगसूत्र है। इसमें दो द्वारों के माध्यम से आश्रव व संवर का स्वरूप बताया गया है। प्रथम आश्रव द्वार में पाँच आश्रव—हिंसा, मृषावाद, स्तेयचौर्य, अब्रह्मचर्य और परिग्रह का एवं दूसरे संवर द्वार में पाँच संवर—अहिंसा, सत्य, अस्तेय-अचौर्य, ब्रह्मचर्य एवं अपरिग्रह का वर्णन है। रंगीन सुरम्य चित्रों के माध्यम से सभी विषयों को सरलतापूर्वक समझाया गया है। प्रत्येक श्रावक के लिए पठनीय है।

प्रकाशक एवं प्राप्ति-स्थान :

पद्म प्रकाशन

पद्म धाम, नरेला मण्डी, दिल्ली-११० ०४०

श्री दिवाकर प्रकाशन, आगरा

ए-७, अवागढ हाउस, अंजना सिनेमा के सामने, एम. जी. रोड, आगरा-282 002

फोन : (0562) 2851165, E-mail : sansuman21@rediffmail.com

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि जी म.

प्रस्तुत सूत्र के सम्पादक प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि जी, श्री वर्द्धमान स्थानकवासी जैन श्रमणसंघ के एक तेजस्वी संत हैं।

जिनवाणी के परम उपासक गुरुभक्त श्री अमर मुनि जी का जन्म वि. सं. १९९३ भादवा सुदि ५ (सन् १९३६), क्वेटा (बलूचिस्तान) के मल्होत्रा परिवार में हुआ।

११ वर्ष की लघुवय में आप जैनागम रत्नाकर आचार्यसम्राट् श्री आत्माराम जी महाराज की चरण-शरण में आये और आचार्यदेव ने अपने प्रिय शिष्यानुशिष्य भण्डारी श्री पद्मचन्द्र जी महाराज को इस रत्न को तराशने/सँवारने का दायित्व सौंपा। गुरुदेव श्री भण्डारी जी महाराज ने अमर मुनि जी को सचमुच अमरता के पथ पर बढ़ा दिया। आपने संस्कृत-प्राकृत-आगम-व्याकरण-साहित्य आदि का अध्ययन करके एक ओजस्वी प्रवचनकार, तेजस्वी धर्म-प्रचारक तथा जैन आगम साहित्य के अध्येता और व्याख्याता के रूप में जैन समाज में प्रसिद्धि प्राप्त की।

आपश्री ने भगवती सूत्र (४ भाग), प्रश्नव्याकरण सूत्र (२ भाग), सूत्रकृतांग सूत्र (२ भाग) आदि आगमों की सुन्दर विस्तृत व्याख्याएँ की हैं।

Pravartak Shri Amar Muni Ji M.

The editor-in-chief of this Sutra, is a brilliant ascetic affliated with Shri Vardhaman Sthanakvasi Jain Shraman Sangh.

A great worshiper of the tenets of Jina and a devotee of his Guru, Shri Amar Muni Ji was born in a Malhotra family of Queta (Baluchistan) on Bhadva Sudi 5th in the year 1993 V.

He took refuge with Jainagam Ratnakar Acharya Samrat Shri Atmaram Ji M. at an immature age of eleven years. Acharya Samrat entrusted his dear grand-disciple, Bhandari Shri Padmachandra Ji M. with the responsibility of cutting and polishing this raw gem. Gurudev Shri Bhandari Ji M. indeed, put Amar (immortal) on the path of immortality. He studied Sanskrit, Prakrit, Agams, Grammar and Literature to gain fame in the Jain society as an eloquent orator, an effective religions preacher and a scholar and interpreter of Jain Agam literature.

He has written nice and detailed commentaries of Bhagavati Sutra (in four parts), Prahsnavyakaran Sutra (in two parts), Sutrakritanga Sutra (in two parts) and some other Agams.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सचित्र आगम साहित्य

ISBN : 978-81-89698-29-4

PUBLISHERS & DISTRIBUTORS :

Padma Prakashan
Padma Dham, Narela Mandi, Delhi - 110 040
website : http/jainvision.com
e-mail : padamparkashan@gmail.com

Shree Diwakar Prakashan
A-7, Awagarh House, M. G. Road, Agra - 282 002
Phone : 0562-2851165, 9319203291
e-mail : sansuman21@rediffmail.com
Website : jainbooks.co.in

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org